आधुनिक संस्कृत महिला नाटककार

डॉ० मीरा द्विवेदी

आधुनिक संस्कृत महिला नाटककार

डॉ० मीरा द्विवेदी
प्राध्यापिका, संस्कृत एवं वेदविज्ञान विभाग
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राजस्थान)

परिमल पब्लिकेशन्स
दिल्ली

प्रकाशक :
परिमल पब्लिकेशन्स
27/28, शक्ति नगर
दिल्ली 110007
दूरभाष : 7127209

प्रथम संस्करण 1996

मूल्य : 300 रुपये

मुद्रक :
हिमांशु लेज़र सिस्टम
46, संस्कृत नगर
रोहिणी सेक्टर 14
दिल्ली 110085
दूरभाष : 7862183

समर्पण

वाल्यकाल से माँ का स्नेह देकर संस्कृत अध्ययन, मनन एवं लेखन की

अजस्त्र सुविधा तथा प्रेरणा प्रदान करने वाले परम पूज्य पिता

श्रद्धेय पं० प्रयाग नारायण दीक्षित, वैद्य,

के करकमलों में सादर समर्पित।

– मीरा द्विवेदी

प्राक्कथन

आधुनिक काल में संस्कृत भाषा के विरोधी संस्कृत को लैटिन भाषा के समान मृत मानते हैं। वस्तुतः पुरातन काल से ही संस्कृत साहित्य संरचना गद्य, पद्य, चम्पू तथा नाट्यादि की सर्जना के रूप में संचरणशील रही है। अद्यावधि इसमें पठन-पाठन के अतिरिक्त सर्जन का कार्य भी अनवरत चल रहा है। सत्रहवीं शताब्दी से इसका समुचित मूल्यांकन न हो पाने के कारण जन सामान्य उससे अपरिचित ही है। उनमें भी महिला रचनाकार तो पूर्णतः आज्ञानान्धकार में छिपी हैं। ये बहुविध व्यस्तताओं के उपरान्त भी गद्य, पद्य, चम्पू व नाट्य आदि विधाओं के प्रणयन में संलग्न हैं, लेकिन उनके ग्रन्थ अप्रकाशित तथा दुर्लभ हैं। महिलाओं की इसी सर्जनात्मक प्रतिभा के प्रकाशनार्थ श्रद्धेय डॉ० चन्द्रकिशोर गोस्वामी द्वारा सुझाए गए "आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों का संस्कृत में अवदान" विषय को मैंने शोध हेतु स्वीकार किया। ऐसे शोध कार्य में रचनाओं की खोज का कार्य ही मुख्य और महत्त्वपूर्ण होता है, उन पर अध्ययन व समीक्षा तो किसी भी अनुसन्धित्सु के द्वारा हो सकती है। मुझे सन्तोष है कि आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों की प्रायः सभी नाट्य-रचनाएँ अनुसन्धान में प्राप्त हो गई। कुछ रचनाएँ तो पृथक् ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित हो चुकी हैं तथा कुछ विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। डॉ० वनमाला भवालकर ने 'सीताहरणम्' की जीरोक्स प्रति तथा 'अन्नदेवता' की हस्तलिखित प्रति मुझे प्रेषित की, तदर्थ उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। डॉ० नलिनी शुक्ला से मिलने पर 'राधानुनयः' पूर्ण तथा 'पार्वतीतपश्चर्या' एवं 'मुक्तिमहोत्सवः' के कतिपय अंश अध्ययन के लिए उपलब्ध हो सके। उनके प्रति भी मैं आभार मानती हूँ। लीलाराव के समस्त रूपक 'मंजूषा', 'विश्वसंस्कृतम्' तथा 'दिव्यज्योतिः' पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं लेकिन पुस्तकालय में अनुपलब्ध पत्र-पत्रिकाओं की प्रतियाँ एवं पुनर्मुद्रित अंश (Reprint) मुझे लीलाराव से ही प्राप्त हुए। कुछ अनुपलब्ध नाट्यकृतियाँ मुझे अपने गुरुवर्य डॉ० चन्द्रकिशोर गोस्वामी, पूज्य श्वशुर डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी एवं डॉ० देवेन्द्र नाथ पाण्डेय के समृद्ध व्यक्तिगत पुस्तकालय में से उपलब्ध हो सकीं। अतः इन नाट्यकर्त्रियों तथा सुधी गुरुवरों के प्रति सश्रद्ध कृतज्ञता ज्ञापन करती हूँ। डॉ० रमा चौधुरी से सम्पर्क करने पर भी पच्चीस में से नौ नाट्य कृतियाँ ही उपलब्ध हो सकीं। अथक प्रयत्न के उपरान्त भी शेष का अत्यल्प परिचय ही प्राप्त हो सका है।

अपने शोध कार्य के प्रेरकों में सर्व प्रथम मैं अपने पिता श्री प्रयागनारायण दीक्षित एवं बाल्यावस्था के गुरु स्व० श्री विश्वनाथ लाल श्रीवास्तव 'बाबूजी' को सश्रद्ध विनयांजलि देती हूँ, जिन्होंने मेरे बालमन में पीएच० डी० का संप्रत्यय बोया था। तदुपरान्त मैं अपने श्रद्धेय, मनीषी, सूक्ष्मेक्षिकाया सम्पन्न गुरुवर एवं

शोध निर्देशक डॉ० चन्द्रकिशोर गोस्वामी जी के प्रति सश्रद्ध अवनत हूँ जिन्होंने अनेकविध व्यस्तताओं के उपरान्त भी अपना विद्वत्तापूर्ण कुशल निर्देशन प्रदान किया। उनके अनवरत मार्ग-दर्शन तथा समर्थ निर्देशन से ही मेरा यह प्रयास पूर्ण हो सका। वनस्थली विद्यापीठ के भूतपूर्व मानद आचार्य, राष्ट्रपति पुरस्कार से पुरस्कृत मेरे गुरुदेव पं० श्री जगदीश शर्मा ने आत्मीयतापूर्वक बहुविध गुत्थियों को सुलझाने में मेरी मदद की, उनके प्रति भी मैं अपना श्रद्धासंवलित आभार प्रकट करती हूँ। पूज्य श्वसुर प्रतिष्ठित कवि, संस्कृतविद्वान् डॉ० कैलाश नाथ द्विवेदी के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने पदे-पदे अपने सुझावों तथा निर्देशनों से मेरा मार्ग प्रशस्त किया। अपने कार्य की अवधि में मैं अनेक बार हतोत्साहित हुई हूँ, अधीरता के इन क्षणों में मुझ में धैर्य, साहस एवं विश्वास का संचार करने वाले अपने पति डॉ० कपिल देव द्विवेदी—पुलिस उपाधीक्षक, भारत तिब्बत सीमा पुलिस के सौजन्य के लिए भी आभारी हूँ। मेरे देवर चि० अरुण व चि० प्रणव ने भी नाट्यकृतियों के संकलन में पर्याप्त दौड़-धूप करके मेरी सहायता की तथा ननद विभा एवं मधु ने शोधकार्य के अन्तिम चक्र में नन्हें 'वसु' का दायित्व सँभाला, अतः इन सभी के प्रति आभारी हूँ।

मैं उन सभी ग्रन्थों एवं ग्रन्थकारों के प्रति भी आभार प्रदर्शित करती हूँ जिनसे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में लाभान्वित हुई हूँ। वनस्थली विद्यापीठ के समृद्ध पुस्तकालय के उपयोगी ग्रन्थों का अध्ययन करके मैंने अपना यह कार्य सम्पन्न किया।

अध्यापन कार्य एवं अन्य विविध व्यस्तताओं के कारण यद्यपि प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण में अनेक कमियाँ और दोष रह गए होंगे परन्तु विद्वान् समालोचक अपने नीर-क्षीर-विवेक से उन्हें पहचान कर निर्देश करें एवं अपनी महानुभावता से इस अज्ञजन को क्षमा करें। अन्त में डॉ० नलिनी शुक्ला के शब्दों में यही कामना करती हूँ कि—

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।

प्रीतिभावं पुरस्कृत्य समाधास्यन्ति सज्जनाः॥

संस्कृत एवं वेदविज्ञान विभाग
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली (राज०)
दिनाङ्क ३०-११-१९९५

मीरा द्विवेदी

विषय सूची

आमुख

महिलाओं ने अपनी अप्रतिम प्रतिभा तथा कलात्मक अन्तःप्रवृत्तियों से, अनेक सामाजिक एवं पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए भी संगीत, चित्रकला आदि में अपना वैशिष्ट्य प्रतिपादित किया है। साहित्य रचना के क्षेत्र में भी वह पुरुषों से किसी प्रकार पीछे नहीं रही हैं। इस सम्बन्ध में राजशेखर की यह उक्ति समीचीन ही है—

"पुरुषवद् योषितोऽपि कविभवेयुः। संस्कारो ह्यात्मनि समवैति न स्त्रैणं पौरुषं वा विभागमपेक्षते। श्रूयन्ते दृश्यन्ते च राजपुत्र्यो महामात्यदुहितरोगणिकाः कौतुकिभार्याश्च शास्त्राप्रहतबुद्धयः कवयश्च।

—काव्यमीमांसा, पृ० ५३.

वस्तुतः कवियों के समान कवयित्रियों की भी एक सुदीर्घ परम्परा रही है। महिलाएँ अतिप्राचीनकाल से ही गद्य, पद्य, चम्पू एवं नाट्यादि की सर्जना में अपना योगदान देती रही हैं। वैदिक काल में अपाला, गोधा, घोषा, विश्ववारा, सूर्या, सावित्री, वागाम्भृणी, लोपामुद्रा, रोमशा, उर्वशी आदि अनेक ऋषिकाओं ने मन्त्रों का दर्शन किया था। बौद्धकाल में उत्पलवर्णा, वासिष्ठी आम्रपाली आदि सैंतीस स्थविराओं की कवित्वपूर्ण सरस काव्य-रचनाएँ व जीवन-गाथाएँ 'खुद्दक निकाय' नामक ग्रन्थ में संगृहीत हैं। लौकिक संस्कृत साहित्य में भी विज्जका, मारुला, मोरिका, विकटनितम्बा, शीलाभट्टारिका, अवन्तिसुन्दरी, गंगादेवी, रामभद्राम्बा, तिरूमलाम्बा, विश्वासदेवी, बीनाबाई, वैजयन्ती आदि प्राचीन एवं मध्यकालिक कवयित्रियों और विदुषियों का उल्लेख प्राप्त होता है। वर्तमान में कहाँ तक यह परम्परा अविच्छिन्न रूप से दृष्टिगोचर होती है। अर्वाचीन महिला कवियों ने भी पद्य, गद्य, नाट्य, तथा चम्पू आदि विविध विधाओं में रचना करके संस्कृत-साहित्य को समृद्ध किया है। इस शोधप्रबन्ध में मुख्यतः वर्तमान शताब्दी की नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं का सर्वेक्षण, परिचय प्रस्तुत किया गया है तथा उनकी प्रतिभा एवं गुणवत्ता का आकलन किया गया है। इस प्रयास के पूर्व भी महिलाओं के सम्बन्ध में विविध शोधकार्य हो चुके हैं, जिनमें मुख्यतः महिलाओं की समाज व साहित्य में स्थिति को प्रस्तुत किया गया है। इस विषय में किए गए निम्नलिखित शोध-कार्य उल्लेखनीय हैं:—

प्राचीन भारतीय स्त्री शिक्षा का आलोचनात्मक अध्ययन—प्रभा पाण्डेय (सागर, सन् १९७८)। महाभारत में नारी-वनमाला—भवालकर (सागर, सन् १९६१)। श्रीमद्भागवत में नारी चित्रण—कुमुम शर्मा (कुरुक्षेत्र, सन् १९७८) आदि। Women of Epic Society–P.N. Kothari (Bombay, 1953),

The Moral Codes as prescribed for women in the Smṛtis. Ramnika Jalani (Jammu, 1980), Women in Sangam age–P.B. Rajeswari (Madras, 1970), Women in Smṛti–Manju Shree (Patna, 1975) etc.

इनके अतिरिक्त लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वानों द्वारा लिखे गए अन्य तथ्य-पूर्ण प्रामाणिक ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं, यथा—वैदिक नारी—प्रशान्त कुमार। वैदिक एवं धर्मशास्त्रीय समाज में नारी—स्कालिटका कुजूर। शिक्षित हिन्दू महिलाएँ एवं धर्म—रमा सिंह आदि। Women in Vedic age–R.S. Shastri, Women in Ṛgveda–B.S. Upadhyaya, Women in Vedic Rituals–J.B. Chaudhary etc.

संस्कृत साहित्य में नारी पात्रों के चरित्र की अध्ययन-परम्परा भी रही है। इस प्रकार के शोध-प्रबन्ध हैं—कालिदास के नारी पात्र-ब्रह्मवती नारंग (मेरठ सन् १९६३)। भवभूति के नारी पात्र-पुष्पा पोखार (मेरठ, सन् १९७३)। कालिदास एवं भवभूति के नारीपात्र, डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी (कानपुर, १९९४) महाभारत में कुन्ती—शारदा रंज (कुरुक्षेत्र, सन् १९८३)। भास एवं हर्ष के उदयन चरितात्मक रूपकों में नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन—प्रज्ञा (कानपुर, सन् १९९२) आदि। Minor female Character in the Drama of Kalidas–Nirmala Dalela, (Aligharh, 1976), Women in Sanskrit Dramas–Ratnamai Devi Dixit (Delhi) etc.

संस्कृत-साहित्य की महिला कवियों की कृतियों के सम्पादन एवं समीक्षण की प्रवृत्ति भी इस शताब्दी के चिन्तकों में रही है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित कृतियाँ प्रकाश में आई हैं—मधुराविजय, गंगादेवी, सम्पादक हरिहर शास्त्री तथा श्रीनिवास शास्त्री (१९१६), मधुराविजय—गंगादेवी, सम्पा० पोतुकुच्चि सुब्रह्मण्य शास्त्री (१९६९), कौमुदीमहोत्सव—विजयाभट्टारिका, सम्पा० रामकृष्ण कवि तथा ए० के० रामनाथ शास्त्री (१९२९), कौमुदीमहोत्सव—विजयाभट्टारिका, सम्पा० शकुन्तला राव शास्त्री (१९५२), रघुनाथाभ्युदयम्—रामभद्राम्बा, सम्पा० टी० चिन्तामणि स्वामी (१९३५), वरदाम्बिका परिणयचम्पू—तिरूमलाम्बा, सम्पा० सूर्यकान्त शास्त्री (१९७०) संस्कृत कवयित्रियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व—डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी लखनऊ (१९९४) आदि।

इसके अतिरिक्त महिलाओं की रचनाओं पर कुछ समीक्षात्मक ग्रन्थ एवं शोध-प्रबन्ध भी लिखे गए हैं। यथा—Contribution of women to Sanskrit-Literature, Volume I to VII J.B. Choudhary, गंगादेवी कृत मधुराविजय एक अध्ययन—रेणु मिश्रा (लखनऊ विश्वविद्यालय, १९७६), तिरुमलाम्बा रचित वरदाम्बिकापरिणयचम्पू एक आलोचनात्मक अध्ययन—

करनसिंह राणा (हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, १९८२), संस्कृत साहित्य को महिलाओं का योगदान, सर्वेक्षण व समीक्षात्मक अध्ययन (वैदिक काल से लेकर १७वीं शती तक)—शिवानी मिश्रा (वनस्थली विद्यापीठ, १९८९)।

इतना होते हुए भी महिला साहित्यकारों की रचनात्मक काव्य प्रतिभा के विविध क्षेत्र अभी अनुसन्धान की दृष्टि से उपेक्षित ही हैं। यहाँ तक कि समस्त आधुनिक महिला रचनाकारों की कृतियाँ ही प्रकाश में नहीं आ पाई हैं। अतः इस विस्तृत विषय के विविध पक्षों पर अनेक शोधकार्य किए जा सकते हैं। इसी विचार से अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के नाट्य-साहित्य में अवदान की दिशा में किया जा रहा यह प्रथम मौलिक प्रयास है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में आधुनिक महिला नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन करने का प्रयत्न किया गया है। बीसवीं शती के नवम दशक तक की नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं का सर्वेक्षण, अध्ययन तथा उसकी गुणवत्ता का निर्धारण करना ही प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रमुख उद्देश्य है। विषय-विवेचन की दृष्टि से इसे दस प्रकाशों में विभक्त किया गया है। आमुख के अन्तर्गत प्रस्तुत शोध विषय से सम्बद्ध अन्य कार्यों का विहंगावलोकन एवं शोधकार्य का प्रयोजन, शोध विषय का सीमा व दिशा का निर्धारण किया गया है। साथ ही शोधकार्य की मौलिकता तथा उपयोगिता को भी प्रकाशित किया गया है। प्रथम प्रकाश में प्राचीन नाट्य परम्परा के संक्षिप्त वर्णन के साथ आधुनिक नाट्यकर्त्रियों एवं उनकी रचनाओं का विस्तार से परिचय दिया गया है। द्वितीय प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं की कथावस्तु के स्रोत को पौराणिक, ऐतिहासिक, लोक-कथापरक एवं उत्पाद्य कोटि में वर्गीकृत कर अंकानुसार/दृश्यानुसार संक्षिप्त कथा प्रस्तुत की गई है।

तृतीय प्रकाश में प्राचीन व आधुनिक नाट्यशास्त्र के आधार पर आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं की कथावस्तु का मूल्यांकन आधिकारिक व प्रासंगिक कथावस्तुओं, अर्थप्रकृति, अवस्था, सन्धि, नाट्यधर्म-जनान्तिक/अपवारित, नैतिकता, मनोवैज्ञानिकता तथा अन्तर्द्वन्द्व आदि की दृष्टि से किया गया है। चतुर्थ प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यवस्तु में प्रवृत्तियों तथा आधुनिक जीवन के प्रभाव को परिलक्षित करने का प्रयत्न किया गया है। पंचम प्रकाश के द्वारा आधुनिक नाट्य-कर्त्रियों की नाट्यरचनाओं में संवादतत्त्व, भाषा, सम्बोधन प्रयोग एवं गीत विधान का समीक्षण किया गया है। षष्ठ प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों के आकार, मंच-सज्जा एवं अन्वितित्रय का समाकलन किया गया है।

सप्तम प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में पुरुष पात्रों के चरित्र की समीक्षा की गई है। अष्टम प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचनाओं में स्त्री-पात्रों के चरित्र का अध्ययन किया गया है। नवम प्रकाश में

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में रस व नाट्यवृत्तियों के प्रयोग तथा दशम प्रकाश में नाट्यों का उद्देश्य व उनके शीर्षकों के समालोचन का प्रयत्न किया गया है। उपसंहार में प्रस्तुत ग्रन्थ के निष्कर्ष, उषलब्धि एवं प्राप्त्याशा को प्रकट किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की उपयोगिता और महत्ता अनुसन्धान के क्षेत्र में निम्नांकित नवीन आयामों को विकसित करने में है—

१. शोधकर्त्ताओं में बीसवीं शती से पूर्व की नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचनाओं के भी अन्वेषण एवं अध्ययन की रुचि उत्पन्न होगी।

२. परवर्ती महिला नाट्यकारों की रचनाओं का भी विश्लेषण तथा अनुसन्धान करने का मार्ग प्रशस्त होगा।

३. महिला रचनाकारों में भी काव्य-नाट्य आदि रचनाओं को करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होगी।

४. नाट्य रचनाओं से नाट्यकर्त्रियों के व्यक्तित्व का अध्ययन हो सकेगा।

५. नाट्यशास्त्रीय अध्ययन के साथ-साथ महिलाओं की नाट्य रचनाओं के सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक पक्षों के अध्ययन को दिशा मिलेगी।

६. तुलनात्मक दृष्टि से महिला एवं पुरुष कवियों की रचनाओं में उनको मानसिकता के भेद का भी अध्ययन किया जा सकेगा।

७. महिला नाट्यकर्त्रियों पर पूर्व नाट्यकारों के प्रभाव का परिशीलन किया जा सकेगा।

८. प्रस्तुत शोधप्रबन्ध से साहित्य ही अन्य विधाओं में भी महिलाओं की योग्यता व क्षमताओं का आकलन किया जा सकेगा।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध से यदि अनुसन्धान के क्षेत्र को उपर्युक्त गति एवं दिशा प्राप्त होती है तो यह प्रयास सार्थक होगा।

प्रथम प्रकाश

आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियाँ एवं उनकी रचनाओं का परिचय

नाट्यविद्या का महत्व

साहित्य की समस्त विधाएँ मानव मन को तरंगायित करती हुई उसके रंजन एवं उत्कर्ष में समान रूप से उपादेय हैं किन्तु नाट्य में जीवन और समाज के विविध रूपों एवं भावों की यथार्थ एवं सजीव अभिव्यक्ति अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट होती है। नाट्य को अन्य साहित्यिक रूपों से विविक्त करने वाला मूलतत्व उसका दृश्यत्व है।[१] नाट्य का दृश्य-श्रव्यत्व सार्वजनीनता एवं साधारणीकरण द्वारा रसास्वादन का प्रबल कारक है। नाट्य में काव्य के प्रायः सभी तत्व न्यूनाधिक रूप में पाये जाते हैं। संगीत, अभिनय आदि का तत्व साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा पृथक् और विशेष हैं।[२] दृश्य काव्य में कल्पना पर अधिक बल नहीं देना पड़ता। दर्शक को यही प्रतीत होता है कि वह वास्तविकता को देख रहे हैं। यहाँ मूर्त का प्रभाव होता है।[३] नाट्यकार की भाषा में जो कमी रहती है, वह नटों की भावभंगिमा से पूरी हो जाती है।[४] इसीलिए नाट्य में प्रभावोत्पादकता अधिक होती है। दृश्यत्व के कारण नाट्य को रूप तथा नटादि पर रामादि पात्रों की अवस्था का आरोप होने से रूपक भी कहते हैं।[५] नाट्य वाचिक, आंगिक सात्विक व आहार्य अभिनय के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, जिसमें आंगिक अभिनय का विशेष महत्व है।[६] नाट्य भिन्न-भिन्न रुचि रखने वाले व्यक्तियों के लिए भी समान रूप से आनन्ददायी है।[७] वस्तुतः यह जन कला है। अपने सामूहिक प्रदर्शन, सामूहिक आस्वादन, अनेक कलाओं के समन्वय तथा शिक्षित-अशिक्षित सभी स्तर के लोगों के लिए आस्वाद्य होने के कारण सर्व-जन सामान्य होने से सार्ववर्णिक है।[८] 'सन्दर्भेषु दशरूपकं श्रेयः'[९] कहते हुए आचार्य वामन नाट्य की श्रेष्ठता स्वीकार करते हैं तथा चित्रपट के सदृश उसकी मनोरम दृश्यता की प्रशंसा करते हैं।[१०]

पाश्चात्य नाट्यशास्त्री ए० निकॉल ने साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाट्य को अति विशिष्ट और मोहक विधा कहा है। नाट्य ऐसा दर्पण है जिसमें स्वाभाविकता प्रतिबिम्बित होती है। यह प्राकृतिक शक्तियों के विरुद्ध मानव के संकल्पनिष्ठ संघर्ष की कहानी है, जिसमें मनुष्य को अपनी सीमा और प्रतिबद्धता का आभास होता है।[११] जे० पी० प्रीस्टले तथा ऐशेल ड्यूक इसे सामाजिक कला मानते हैं।[१२] रोनाल्ड पीकॉक इसे काल्पनिक भाव मानते हुए इसमें अभिव्यक्ति और प्रस्तुतीकरण को महत्व देते हैं। कीथ कहते हैं कि संस्कृत-नाट्य, वास्तव में, भारतीय काव्य की उत्कृष्टतम सिद्धि है। इसमें

भारतीय साहित्य के स्रष्टाओं द्वारा उपलब्ध साहित्यिक कला की चरम संकल्पना का सार है।[१३] डॉ० रघुवंश ने पश्चिमी आलोचक सार्स का उद्धरण देते हुए स्पष्ट किया है कि नाट्यकला उन सम्पूर्ण वस्तुओं के योग का नाम है जिनके द्वारा रंगमंच पर जीवन्त अभिनय करके दर्शकों को भ्रम में डाला जाता है।[१४] डॉ० गोविन्द चातक के अनुसार नाट्य वह कला है जो देश काल को प्रेक्षकों के सामने उतारती है और उन अनुभवों का साक्षात्कार कराती है जिनके बीच हम रात-दिन जीते हैं इसीलिए यह मूर्त कला भी है अमूर्त भी है ; अनुकरण भी है; दृश्य भी है और श्रव्य भी है; सत्याभास भी है और सत्याभास को तोड़ने वाली भी है।[१५] इस प्रकार नाट्यकला सर्जनात्मक अभिव्यक्ति का वह रूप है जिसमें मुख्यतः किसी संवाद मूलक आलेख या कथा को अभिनेताओं द्वारा अन्य रंग शिल्पियों की सहायता से किसी रंगमंच पर दर्शक समूह के सामने प्रदर्शित किया जाता है। यह प्रदर्शन कभी संवादमूलक होता है, कभी नृत्यमूलक तथा कभी इनका समन्वित रूप।

संस्कृतनाट्य परम्परा

संस्कृत-नाट्य रचना का आरम्भ उपलब्ध नाट्यकृतियों के आधार पर भास के संस्कृत-नाट्यों से माना जाता है। भास के पूर्व भी भारतीय समाज में नाट्यों का प्रचलन था, इसका स्पष्ट संकेत अनेक ग्रन्थों से प्राप्त होता है। नाट्य के प्रमुख अंग संवाद, गीत, नृत्य एवं अभिनय का वेदों में किसी न किसी रूप में अस्तित्व है।[१६] संवाद सूक्त भी वेदों में नाट्य के अस्तित्त्व को प्रमाणित करते हैं।[१७] रामायण में भी नृत्य, गायन तथा अभिनय के संकेत मिलते हैं। नट, नर्तक, नाटक, रंग आदि शब्दों का प्रयोग अनेक स्थलों पर मिलता है।[१८] महाभारत में भी नट, नर्तक रंगशाला आदि शब्दों का उल्लेख है।[१९] ४०० ई० पू० में महर्षि पाणिनि ने नट सूत्रों का स्पष्ट उल्लेख किया है। शिलालिन् तथा कृशाश्व नामक दो नाट्यशास्त्र-प्रणेताओं का भी एक स्थान पर वर्णन हुआ है।[२०] इन्होंने जाम्बवती जय नामक नाटक की रचना भी की थी। पतंजलि के महाभाष्य में कंसवध तथा बालिवध नामक नाटकों का उल्लेख प्राप्त है।[२१] आचार्य कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में कुशीलव शब्द का प्रयोग किया है।[२२] आचार्य वात्स्यायन (२०० ई०) ने भी कामसूत्र में चौंसठ कलाओं में नाटक का तथा अन्यत्र कुशीलव का स्पष्टतः कथन किया है।[२३] इस प्रकार संस्कृत नाट्यकला ईसा पूर्व की शताब्दियों में ही उद्भूत और विकसित हो गई थी। भास के पूर्व भी सुबन्धु विरचित वत्सराजचरित्र तथा देवलप्रणीत इन्द्रविजय आदि नाटकों का उल्लेख मिलता है, जो सम्प्रति उपलब्ध नहीं है।

प्राप्त सूचनाओं के आधार पर नाट्यकार भास की नाट्यरचनाएँ ही सबसे प्राचीन हैं। प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्, स्वप्नवासवदत्तम् उरुभङ्गः, दूतवाक्यम्, पंचरात्रम्, बालचरितम्, दूतघटोत्कचम्, कर्णभारम्, मध्यम-व्यायोगः,

प्रतिमानाटकम्, अभिषेकनाटकम् अविमारकम् तथा चारुदत्तम् नामक तेरह रूपकों की रचना की। तत्पश्चात् शूद्रक विरचित मृच्छकटिकम्, अश्वघोष रचित शारिपुत्रप्रकरणम्, कालिदासविरचित मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम् तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम्, हर्षवर्धन प्रणीत रत्नावली, प्रियदर्शिका तथा नागानन्दम्, भवभूति-कृत महावीरचरितम्, मालतीमाधवम् तथा उत्तररामचरितम् विशाखदत्त प्रणीत मुद्राराक्षसम्, भट्टनारायण-कृत वेणीसंहारम्, मुरारि-कृत अनर्घराघवम्, शक्तिभद्र-रचित आश्चर्यचूडामणिः, दामोदर कृत हनुमन्नाटकम्, राजशेखर कृत कर्पूरमंजरी, विद्धशालभंजिका, बालरामायणम् तथा बालभारतम्, दिङ्नाग की कुन्दमाला, कृष्णमित्र कृत प्रबोधचन्द्रोदयम् जयदेव रचित प्रसन्नराघवम् आदि अनेकानेक नाटक संस्कृत नाट्य परम्परा के विकास की श्रेष्ठ कड़ियाँ हैं। यह परम्परा वर्तमान काल में भी अविच्छिन्न दिखाई पड़ती है। सुन्दरवीररघूद्वह, वल्लीसहाय नरसिंहाचार्य, सुन्दरराज, शंकरलाल, हरिदास-सिद्धान्तवागीश, लक्ष्मणसूरि, पंचानन तर्करत्न, कालीपद, जीवन्यायतीर्थ, महालिंगशास्त्री, जग्गू वकुलभूषण, मथुराप्रसाद दीक्षित, बी० राघवन्, विश्वेश्वर, यतीन्द्र विमल चौधरी, वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य श्रीरामवेलणकर, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, ऑगेटि परीक्षित शर्मा आदि सैकड़ों नाट्यकारों ने इस नाट्य परम्परा को और अधिक समृद्ध किया। इनका संकलन रामजी उपाध्याय ने आधुनिक संस्कृत नाटक ग्रन्थ के दो भागों में किया है।

पुरुष नाट्यकारों के समान महिला नाट्यकर्त्रियाँ भी अपनी नाट्यरचनाओं द्वारा संस्कृतसाहित्य को समृद्ध करती रही हैं। संस्कृत नाट्यक्षेत्र में सर्वाधिक प्राचीन ज्ञात महिला नाटककार विजयाभट्टारिका हैं, जिन्होंने 'कौमुदी-महोत्सवम्' नाटक की रचना की है।[२४] संस्कृत साहित्येतिहास में विज्जका विज्जिका, विजयांका, विज्जा तथा विद्या आदि अनेक नामों से इनका उल्लेख हुआ है।[२५] मुकुलभट्ट,[२६] धनिक[२७] तथा मम्मट[२८] आदि ने विजया के पद्यों को अपने लक्षण ग्रन्थों में उद्धृत किया है। अतः नाट्यकर्त्री विज्जा का काल इनसे पूर्व ही किन्तु दण्डी के कुछ पश्चात् माना जाता है। दण्डी रचित काव्यादर्श के मंगलश्लोक में वर्णित सर्वशुक्लासरस्वती का अपने साथ साम्य बतला कर नीलवर्णा कहती यह दण्डी का उपहास करती है।[२९] अतः विज्जका का काल ७१० ई० से ८६० ई० के मध्य माना जा सकता है। कौमुदीमहोत्सव के नाट्य वैशिष्ट्य से प्रभावित विश्वनाथ भट्टाचार्य तो विजया को भवभूति से अधिक महत्व प्रदान करते हैं।[३०]

'आनन्दलतिका' नामक रूपक की रचना जयन्ती अथवा वैजयन्ती ने अपने पति श्री कृष्णनाथ के साथ मिलकर की थी।[३१] जयन्ती देवी विक्रमपुर के धानुका ग्राम के सुप्रसिद्ध पण्डितवंश में उत्पन्न मुरारभट्ट की पुत्री थीं।[३२] इनका काल १७ वीं शती का उत्तरार्द्ध निश्चित किया गया है।[३३]

आनन्दलतिका पद्य प्रधान रचना है। अतः कृष्णमाचार्य, यतीन्द्र विमल चौधुरी, श्रीधरभास्कर वर्णेकर आदि विद्वान् इसे 'चम्पू' मानते हैं[३४] लेकिन इसमें नाटक की भाँति नान्दीपाठ, स्थापना, ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार का परिचय देने, पात्रों के परस्पर संवाद आदि से यह पद्य-प्रधान नाट्य सिद्ध होता है।[३५]

डॉ० कृष्णमाचार्य ने शारदादेवी के 'रामाभ्युदय' नाटक का उल्लेख किया है। कहा जाता है कि उन्होंने १८ अन्य रूपकों की रचना भी की थी किन्तु इनका समय एवं परिचय अज्ञात है।[३६]

उपेन्द्रपुर निवासी विद्वान् अनन्ताचार्य की पुत्री त्रिवेणी थीं, जिनका विवाह पेरम्बटूर निवासी प्रसिद्ध विद्वान् प्रतिवादि भयंकर वैंकटाचार्य के साथ हुआ था। वैधव्य प्राप्ति के पश्चात् यह पेन्शन से जीवन निर्वाह करती थीं। इनका समय १८१७ से १८८३ के मध्य माना गया है।[३७]

इन्होंने अनेक काव्यरचनाओं के अतिरिक्त 'रंगाभ्युदयम्', 'सम्पत् कुमारविजयम्', 'रंगराट्समुदयम्' तथा 'तत्वमुद्राभद्रोद्रयम्' नामक प्रतीक नाटकों की रचना की थी।

श्रीदेवीकुट्टितम्बूराटी का नाट्यविलास १९वीं शती के उत्तरार्द्ध में सामने आया। दक्षिण मालाबार में कोटिक्कोट सामूदरि राजकुटुम्ब की एकशाखा तिरूवन्नूर पुदीयकोविल में इनका जन्म हुआ था। इनके पिता जेरी वासुदेवन् नम्बूदरी तथा माता तम्ब्राटी तम्बुराटी थीं। इनका अधिकांश समय लेखन एवं अध्यापन में व्यतीत होता था।[३८] इन्होंने मधुरापुरी विलास नामक, खण्डकाव्य, भाषा परिणय व चम्पू भागवत नामक रचनाओं के अतिरिक्त 'नैषधनाटकम्' की रचना की थी।[३९]

अमरावती विदर्भनिवासिनी डॉ० मणिक पाटिल ने 'कन्यादानम्' नामक एकांकी में एक राजपूत महिला कृष्णा कुमारी का चरित्र निबद्ध किया था।[४०]

इस प्रकार प्राचीनकाल से ही महिलाएँ संस्कृतनाट्य साहित्य में अपना योगदान देती रही हैं। यह परम्परा आज भी अविच्छिन्न रूप में विद्यमान है। आगे अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विवेचना एवं विश्लेषण करेंगे।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में **डॉ० रमा चौधुरी** का विशिष्ट स्थान है। आपका जन्म ८ फरवरी १९१२ में कलकत्ता में हुआ। इनकी माता का नाम रोमोला था तथा पिता श्री सुधांशुमोहन बोस पश्चिमी बंगाल विधानसभा के सदस्य, लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा बैरिस्टर थे। आपके पितामह श्री आनन्दमोहन बोस भी साधारण-ब्रह्मसमाज के संस्थापक, भारतीय-राष्ट्रीय-काँग्रेस के अध्यक्ष होने के साथ उच्चकोटि के विद्वान् तथा बैरिस्टर थे। प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीशचन्द्र वसु की आप भानजी हैं। इस प्रकार ये

पश्चिमी बंगाल के सुविख्यात एवं प्रतिभाशाली सुसंस्कृत विद्वान् परिवार से सम्बद्ध हैं। इनके पति बंगाल के सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान संस्कृत कॉलेज, कलकत्ता के प्राचार्य, पश्चिमी बंगाल सरकार के सचिव तथा आधुनिक संस्कृत साहित्य के प्रतिष्ठित कवि व नाट्यकार थे। संस्कृत के लेखन के प्रति अपने पति से इन्हें दिशा व प्रेरणा मिली।

अभिजातकुलोत्पन्ना रमा बाल्यावस्था से प्रतिभाशाली रही हैं। प्रारम्भिक कथाओं से लेकर एम० ए० तक सदैव आपने प्रथम श्रेणी प्राप्त करने का गौरव प्राप्त किया। कलकत्ता विश्वविद्यालय की एम० ए० (दर्शनशास्त्र) की परीक्षा में विगत वर्षों की अपेक्षा सर्वाधिक अंक प्राप्त किए। तदुपरान्त आपने निम्बार्क दर्शन पर ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, लन्दन से डी० फिल् की उपाधि प्राप्त की, जिसे पाने वाली, इस विश्वविद्यालय की आप प्रथम भारतीय महिला हैं। कलकत्ता से प्रसिद्ध लेडी ब्रैबोर्न कॉलेज में प्राध्यापिका, प्रोफेसर तथा अध्यक्ष रहने के बाद आप तीस वर्षों तक प्राचार्या रहीं। १९६९ में रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, कलकत्ता के उपकुलपति पद का कुशलता से निर्वाह करने वाली, सहशिक्षा की व्यवस्था वाले विश्वविद्यालयों में यह पद संभालने वाली भी आप प्रथम भारतीय महिला हैं।

डॉ० रमा चौधुरी ने १९४३ में अपने पति के सहयोग से कलकत्ता से संस्कृत शोध संस्थान 'प्राच्यवाणी' की स्थापना की। इस संस्था की शाखाएँ दिल्ली, चटगाँव तथा लन्दन में भी थी। इस संस्था का प्रमुख कार्य संस्कृत में नाटक, नृत्य तथा बैले के प्रस्तुतीकरण के साथ-साथ संस्कृत साहित्य में शोध को प्रोत्साहन देना था। यह अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं की सदस्या रहीं। जर्मन सरकार ने इन्हें १९७० में सम्मानित किया। १९७१ में तीन उपकुलपतियों के दल में सम्मिलित होकर रूस सरकार के निमन्त्रण पर रूस गईं। १९७३ में उपकुलपतियों के ग्यारहवें कामन वैल्थ सम्मेलन में एडिनवर्ग गईं। १९७४ में यह बंगाली विद्वानों के अन्तर्राष्ट्रिय सम्मेलन में ढाका गईं। साहित्य अकादमी की साधारण सभा तथा संस्कृत मण्डल की यह सदस्या भी रही हैं। नवम्बर १९७४ में प्राचीन कला केन्द्र ने आपको 'सर्वशास्त्र-पारंगमा' की उपाधि प्रदान की।

डॉ० रमा चौधुरी बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं। संस्कृत नाटकों के लेखन के साथ-साथ उन्होनें उनका मंच व निर्देशन अपने पति के साथ भारत में तथा विदेशों में किया।

आप सादगी एवं नम्रता की मूर्ति हैं। विद्वत्ता एवं मानवीय गुणों का आप में अद्भुत समन्वय है। सम्प्रति जरावस्था के कारण अशक्त होने पर भी आप स्वाध्याय एवं लेखन में अहर्निश संलग्न रहती हैं।

आपने संस्कृत के साथ-साथ बंगाली एवं अंग्रेजी भाषाओं में भी रचना कार्य किया है। आपकी बंगाली कृतियाँ निम्नांकित हैं—

दशवेदान्त सम्प्रदाय ओ बंग देश, साहित्यकण, संस्कृतातंकरोग, निम्बार्क दर्शन, वेदान्तदर्शन, सूफी दर्शन ओवेदान्त।

अंग्रेजी भाषा में आपने लगभग ८ कृतियों की सर्जना की है—

(1) Doctrine of Nimbarka and his followers, (2) Sufism and Vedant, (3) An Indo Islamic Synthetic Philosophy, (4) Doctrine of Srikantha, (5) Sanskrit and Prakrit Poetesses, (6) Philosophical Essays, (7) Ten Schools of Vedant, (9) Aspects of Indian life.

संस्कृत भाषा में आपने २५ रूपकों का प्रणयन किया है। ये सभी रूपक प्राच्यवाणी संस्था कलकत्ता से प्रकाशित हो चुके हैं। समय समय पर आपने इनका मंचन भी कराया है। 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' आपका पहला नाटक है। १९६४ में पति की मृत्यु के बाद उनके जीवन के प्रमुख आध्यात्मिक पक्ष तथा संस्कृत के उत्थान के प्रयासों को बारह दृश्यों में निबद्ध किया है। प्राच्यवाणी के कलाकारों द्वारा इसको अभिनीत भी कराया। 'शंकरशंकरम्' का प्रथम प्रयोग प्राच्यवाणी के २२ वें प्रतिष्ठा दिवस के उपलक्ष्य में १९६५ में हुआ। नेपाल नरेश महाराज महेन्द्र के मुख्य आतिथ्य में, भारतीय दूतावास के तत्वावधान में इसका अभिनय आप ने कराया था। चौदह दृश्यों के इस नाटक में शंकराचार्य का जीवन चरित तथा उनके द्वारा वेदान्त के प्रसार के लिए किए गए प्रयासों को सरस रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'देशदीपम्' के आठ दृश्यों में बंगाल के ग्रामीण परिवार के युवक चम्पक वदन का देश के लिए आत्मोत्सर्ग करने की घटना प्रस्तुत है। डॉ० यतीन्द्र विमल चौधुरी के जन्मोत्सव के उपलक्ष में प्राच्यवाणी के कलाकारों द्वारा इसका अभिनय भी हो चुका है। 'पल्लीकमलम्' नौ दृश्यों का रूपक है। इसमें नायिका कमलकलिका तथा नायक रूप कुमार के प्रेम व विवाह की कथा पूर्णतः नाटकीय उतार चढ़ावों के साथ प्रदर्शित की गई है। 'कविकुलकोकिलम्' में महाकवि कालिदास के जीवन की चारुचरितावली को दस दृश्यों में प्रस्तुत किया गया है।

१९६७ में उज्जयिनी के कालिदास समारोह में इसके अभिनय पर स्वर्णकलश पुरस्कार मिला था। नौ दृश्यों के 'मेघमेदुरमेदनीयम्' नाटक में मेघदूत की कथा के पूर्व की घटना विस्तार से प्रस्तुत है और बाद में नायक और नायिका का विमुक्त होना, नायक द्वारा मेघ से सन्देश भेजना तथा यक्ष-यक्षिणी के मिलन का प्रसंग संक्षेप में उपस्थापित किया गया है। उज्जयिनी के कालिदास-समारोह में इसका भी मंचन हो चुका है। 'कविकुलकमलम्' कालिदास की उत्तरकालीन जीवन-गाथा को आठ दृश्यों में प्रस्तुत करता है। घटकर्पर, विद्यावारिधि आदि से उनकी प्रतिद्वन्द्विता, विरोध तथा पश्चाताप आदि

की घटनाएँ यहाँ वर्णित हैं। 'युगजीवनम्' के दस दृश्यों में स्वामी रामकृष्ण परमहंस की जीवन-गाथा प्रदर्शित है । इसका प्रथम अभिनय १९६७ में हुआ। 'निवेदित-निवेदितम्' के १२ दृश्यों में स्वामी विवेकानन्द से प्रभावित मार्गरेट् (बाद में भगिनी निवेदिता के नाम से प्रसिद्ध) के भारत आने तथा भारत के लिए अपना जीवन समर्पण करने की घटनाएँ रूपायित हैं। 'भारताचार्यम्' के १२ दृश्यों में भारत के द्वितीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के जीवन की प्रमुख घटनाएँ प्रदर्शित की गई हैं। १९६६ में राष्ट्रपति भवन में राधाकृष्णन् के समक्ष डॉ० रमा ने अपने निर्देशन में इसका अभिनय कराया था। 'भारततातम्' छह दृश्यों में महात्मा गान्धी के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है। 'भारतपथिकम्' में पाँच दृश्य हैं, जिनमें राजाराममोहनराय की जीवन गाथा चित्रित है। पाँच दृश्यों के 'चैतन्य चैतन्यम्' में महाप्रभु चैतन्य के आविर्भाव से लेकर समाधिस्थ होने तक की प्रमुख घटनाएँ नाट्यीकृत की गई है। 'नगरनूपुरम्' में मेखला नामक अपूर्व सुन्दरी गणिका के भोग एवं ऐश्वर्य सम्पन्न जीवन को तथा अन्त में संन्यासिनी बनने की घटना को दस दृश्यों में निबद्ध किया है। 'रसमयरासमणिः' में आठ दृश्य हैं, इसमें विधवा रानी रासमणि के आदर्श कार्य एवं महासमाधि की घटनाएँ प्रमुख हैं। 'संसारामृतम्' के सात दृश्यों में केलिनामक दरिद्र परिवार की कन्या पर आई विपत्तियों की कथा है। 'अभेदानन्दम्' में बारह दृश्य हैं। इनमें स्वामी रामकृष्ण परमहंस के प्रमुख शिष्य अभेदानन्द की आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को प्रदर्शित किया गया है। 'रामचरितमानसम्' गोस्वामी तुलसीदास की इसी नाम की प्रसिद्ध रचना के नाम पर तुलसीदास की चरित-गाथा को बारह दृश्यों में रूपायित करता है। 'प्रसन्नप्रसादम्' के दस दृश्यों में बंगाल के विश्रुतगायक श्री रामप्रसाद के जीवन की प्रमुख घटनाओं का निरूपण हुआ है।

इन बीस नाटकों के अतिरिक्त प्राच्यवाणी से प्रकाशित इन रूपकों में से कुछ के अन्तिम पृष्ठ पर डॉ० रमा चौधुरी द्वारा रचित 'लेनिनविजयम्', 'भारतवीरम्', 'तानतनुः' तथा 'गणदेवतानाटकम्' का भी उल्लेख हुआ है।

श्रीमती लीलारावदयाल महापण्डिता, साहित्य-चन्द्रिका आदि विरुदों से भूषित संस्कृत-विदुषी स्वर्गीय श्रीमती क्षमाराव की पुत्री हैं। इनका जन्म १९ दिसम्बर १९१३ को बम्बई में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा पेरिस में सम्पन्न हुई। वहीं से आपने मैट्रिक पास किया और शेष ज्ञानार्जन अपनी माता से अनौपचारिक रूप से प्राप्त किया। संस्कृत का ज्ञान भी आपको अपनी माता से ही मिला है। संस्कृत के अतिरिक्त आप हिन्दी, मराठी, जर्मन, फ्रेंच, इटेलियन आदि देशी-विदेशी भाषाओं की भी ज्ञाता हैं। आपका विवाह श्री हरीश्वर दयाल के साथ हुआ।

श्री दयाल आई० सी० एस० अधिकारी थे, जो १९४४ में नेपाल में भारतीय राजदूत नियुक्त किए गए थे । उस समय प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० शिव मंगल सिंह 'सुमन' हरीश्वरदयाल के सांस्कृतिक सचिव थे। जून १९५९ में श्री हरीश्वर दयाल भारत सरकार की विशेष अनुमति से पर्वतारोहण हेतु काराकोरम गए थे, जहाँ विमान दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई। हरीश्वर दयाल नेपाल के अतिरिक्त अमेरिका, भूटान, तिब्बत आदि देशों में भी राजदूत एवं अनेक उच्च पदों पर रहे थे।

श्रीमती लीला राव को अपनी माता से अपार स्नेह था, जिससे आज तक उनके नाम के साथ उनकी माता का उपनाम 'राव' भी जुड़ा हुआ है। श्रीमती लीलाराव का व्यक्तित्व अनेक विरोधाभासों का आकर है। इनकी वेशभूषा आज तक पश्चिमी है किन्तु मानस सर्वथा भारतीय। पाश्चात्य पद्धति से शिक्षित होते हुए भी माता के संस्कार उन्हें सदा आकृष्ट करते रहे हैं। १९५४ में क्षमाराव की मृत्यु के पश्चात् उनके ग्रन्थों का इन्होंने प्रकाशन कराया तथा कुछ काव्यों का अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। १० अप्रैल १९७९ को माताजी की स्मृति में आपने क्षमा संस्कृत पुस्तकालय की बम्बई में स्थापना भी की।

श्रीमती लीलाराव बहुमुखी प्रतिभा की धनी हैं। आप टेनिस की अच्छी खिलाड़ी हैं। वह भारत की प्रथम एवं एकमात्र महिला खिलाड़ी हैं, जिन्हें विम्बलण्डन क्वार्टर फाइनल तक पहुंचने का अवसर प्राप्त हुआ है। संगीत, नृत्य, चित्रकला, पर्वतारोहण आदि में आपकी प्रचुर रुचि है।

संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए आप सतत संलग्न रहती हैं। संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए आपने नृत्य एवं नाट्यों को माध्यम बनाया। इसके लिए आपने अपनी माता की रचनाओं की कथाओं का संस्कृत में नाट्य रूपान्तरण किया तथा उद्यान-रूपकों के रूप में नेपाल, अमेरिका आदि विदेशों में उनको प्रस्तुत किया। भारत में बम्बई, पूना, नागपुर आदि नगरों से इनका आकाशवाणी द्वारा प्रसारण भी हो चुका है। १९५३ से १९७९ तक आपने स्वयं अपने तथा वी० राघवन् आदि द्वारा रचित नाटकों में विविध पात्रों का अभिनय किया। आपका जीवन बहुत उच्च, साहित्यमय रहा है। बम्बई स्थित आपका निवास स्थान एक छोटा मोटा संग्रहालय जैसा हो गया है। वयोवृद्ध एवं पक्षाघात से ग्रस्त होने पर भी आप संस्कृत की सेवा में अनवरत संलग्न हैं। वर्तमान में आप 'क्षमाचरितम्' तथा 'नाट्यचन्द्रिका' लिखने में व्यस्त हैं। आपका ग्रीष्मकालीन निवास रानीखेत (अल्मोड़ा) में होता हैं। शेष समय प्रायः बम्बई में व्यतीत होता है। रानीखेत में आप 'ग्राम-ज्योति' नीम से एक संस्कृत पाठशाला का आरम्भ करना चाहती हैं। संस्कृत के उत्थान के विषय में पूछे जाने पर आपने इन पंक्तियों की लेखिका को बताया कि संस्कृत-शालाओं की वृद्धि से ही संस्कृत का

विकास सम्भव है। इन्होंने २४ रूपकों का प्रणयन किया है, जो सभी संस्कृत पत्रिका मंजूषा, दिव्यज्योतिः तथा विश्वसंस्कृतम् में प्रकाशित हुए हैं।

अक्टूबर १९५५ की मंजूषा पत्रिका में प्रकाशित 'होलिकोत्सवम्' एकांकी के तीन दृश्यों में होली के दिन सुरापान से एक मत्स्यजीवी परिवार की दुर्दशा का भावुकतापूर्ण प्रस्तुतीकरण हुआ है। दिसम्बर १९५५ की मंजूषा के अंक में प्रकाशित 'कटुविपाकः' गान्धी जी के सत्याग्रह से प्रभावित रेवा एवं वीरभा द्वारा देश के लिए सर्वस्वत्याग की कहानी को तीन दृश्यों में प्रस्तुत करता है। 'मिथ्याग्रहणम्', 'क्षणिकविभ्रमः' तथा 'तुकारामचिरतम्' फरवरी १९५६ की मंजूषा पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। 'मिथ्याग्रहणम्' के दो दृश्यों में दो सखियों के मध्य उत्पन्न भ्रान्ति का निवारण मनोरंजक रूप में प्रस्तुत है। 'तुकारामचिरतम्' के ग्यारह दृश्यों में मराठी सन्त तुकाराम की जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त प्रधान-प्रधान घटनाएँ वर्णित हैं। 'क्षणिक-विभ्रमः' के एक दृश्य में ग्रामीण अध्यापक की दरिद्रता एवं दुर्दशा की त्रासदी को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। मंजूषा में १९५६ के अप्रैल अंक में प्रकाशित 'गणेश चतुर्थी' के दो दृश्यों में गणेश चौथ के दिन चन्द्र-दर्शन से होने वाले मिथ्याकलंक के प्रति अन्ध-विश्वास का निराकरण सफलतापूर्वक किया गया है। 'कपोतालयः' १९५६ जून की मंजूषा अंक में प्रकाशित हुआ है। दो दृश्यों के इस प्रहसन में जीवन-बीमा के महत्व को स्पष्ट किया गया है। १९६१ दिसम्बर की मंजूषा में प्रकाशित १४ दृश्यों के पद्यात्मक रूपक 'श्री ज्ञानेश्वर-चरितम्' में महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त श्री ज्ञानेश्वर के जीवन की प्रधान घटनाओं को निबद्ध किया गया है। 'असूयिनी' जुलाई १९५८ की मंजूषा में प्रकशित रूपक है। इसमें चार दृश्यों में एक मछुआरे की सन्तानहीन पत्नी की असूया तथा पश्चात्ताप की भावना को दर्शाया गया है। 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' मंजूषा के १९५७ अप्रैल अंक में प्रकाशित हुआ है। यहाँ तीन दृश्यों में यूरोपीय रीति-नीति पर एक दामाद का अपनी सास से प्रेम, दुर्घटना में स्मृतिभ्रंश तथा त्यागीबाबा के रूप में एक विधवा से प्रेम को प्रदर्शित किया गया है। 'वीरभा' फरवरी १९६१ में मंजूषा के प्रकाशित तीन दृश्यों का रूपक है जिसमें वीरभा नामक नारी के द्वारा सत्याग्रह का नेतृत्व करने तथा ओजस्विता से क्रूर ग्रामाधिप के हृदय का परिवर्तन करने की कथा प्रस्तुत की गई है। 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' मंजूषा के १९५८ के फरवरी के अंक में प्रकाशित रूपक है। गान्धीवाद से प्रभावित नायिका रेवा के नेतृत्व में स्वर्णपुर के किसानों द्वारा भूमिकर न देने का निर्णय करके ग्राम छोड़ना तथा ग्रामाधिप के अत्याचारों को यहाँ दो दृश्यों में प्रस्तुत किया गया है। मंजूषा के फरवरी १९५६ के अंक में राजस्थानी भक्त कवयित्री मीरा के बाल्यावस्था से अन्त समय तक की कथा को १३ दृश्यों में 'मीराचरितम्' में प्रस्तुत किया गया है। १९५५ जून के अंक में प्रकाशित तीन दृश्यों वाले 'बील विधवा' रूपक में

एव बाल विधवा की दीन-हीन दशा को निरूपित किया गया है। 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' भी १९५५ के मई अंक में प्रकाशित रूपक है जिसके एव दृश्य में गिरिजानामक एक वृद्धा द्वारा अपने पुत्र के हत्यारे के शरण में आने पर दयावश छोड़ देने का आदर्श प्रस्तुत किया गया है। 'जयन्तुकुमाउनीयाः' १९६७-६८ के विश्वसंस्कृतम् के दो अंकों में प्रकाशित है, जिसके तीन दृश्यों में भारतीय सेना के कुमाउ रेजीमेण्ट की शौर्य गाथा ओजस्वी रूप में प्रस्तुत है। 'तुलाचलाधिरोहणम्' १९७२ में विश्वसंस्कृतम् के मई-अगस्त मे प्रकाशित हुआ है। इसमें हिमालय की महिमा का गुणगान किया गया है। विश्वसंस्कृतम् के १९७४ में फरवरी-मई-अगस्त अंक में प्रकाशित 'मायाजाल ' में बांग्ला देश के विभाजन के समय अपने परिवार से वियुक्त चार महिलाओं की त्रासदी वर्णित है। 'हरिसिंहः' विश्वसंस्कृतम् के १९८१ के सितम्बर अंक में प्रकाशित हुआ रूपक है, जिसमें एक क्रान्तिकारी युवक द्वारा अत्याचारी राजा मानसिंह की हत्या करके प्रजा को प्रसन्न करने की कथा पाँच दृश्यों में प्रस्तुत की गई है। 'परमभक्तशिवाजिराट्' सितम्बर १९९० में विश्व संस्कृत में प्रकाशित हुआ है पद्य-प्रधान इस रूपक के सात दृश्यों में मराठा वीर शिवाजी के जीवन की प्रमुख-प्रमुख घटनाओं को अभिनीत किया गया है। दिव्यज्योतिः द्वारा प्रकाश में आए 'अनूपः' रूपक में युवक अनूप के द्वारा अपनी कुष्ठव्याधि के लिए अपने परिवार का परित्याग करने की कथा तथा उसकी पत्नी के आक्रोश एवं पश्चात्ताप का प्रस्तुतीकरण कियां गया है। अक्टूबर १९७५ की दिव्यज्योति द्वारा प्रकाशित 'कृपाणिका' में पति के मरणासन्न होने पर पत्नी की कातरता तथा पातिव्रत के प्रभाव से प्रसन्न संन्यासी द्वारा पति को प्राणदान दिए जाने की घटना को रूपायित किया गया है। अक्टूबर १९८० की दिव्यज्योति में कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक की कथा को किंचित् नवीनता के साथ प्रस्तुत किया गया है। 'विठालाचरितम्' अप्रकाशित एकांकी है। ज्ञानेश्वर के पिता विठ्ठल की गाथा का यहाँ वर्णन हुआ है।

ये सभी रूपक अल्प साधनों की अपेक्षा रखने वाले अव्यावासायिक मंचों के अनुरूप हैं तथा प्रचुर ध्वनि प्रभावों से युक्त होने के कारण आकाशवाणी के सर्वथा उपयुक्त हैं।

विशिष्ट संस्कृत सेवी तथा कालिदास एव रामायण को विदेशों में लोकप्रिय बनाने में प्रमुख भूमिका निभाने वाली **श्रीमती कमलारत्नम्** का जन्म उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद में १९१४ में हुआ था। लखनऊ विश्वविद्यालय से १९३७ में एम० ए० परीक्षा उत्तीर्ण कर इन्होंने अनेक पदक प्राप्त किए। इस परीक्षा में इन्होनें केवल प्रथम श्रेणी ही नहीं प्राप्त की अपितु पुराने सारे प्रतिमान भी तोड़ दिए थे। आप हिन्दी, मराठी, गुजराती, तेलगु, उर्दू आदि भारतीय भाषाओं के साथ अंग्रेजी, जर्मन, फ्रैंच, रशियन, स्पैनिश, जापानी आदि विदेशी

भाषाओं में वार्तालाप करने एवं लेखन कार्य करने में समर्थ थीं।[४१] लन्दन विश्वविद्यालय से आपने शिक्षा मनोविज्ञान में विशेष योग्यता के साथ १९३९ में टी०डी० परीक्षा उत्तीर्ण की थी। १९४० से १९४७ तक आगरा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत ग्वालियर के कमला तेजा महाविद्यालय में आप संस्कृत विभागाध्यक्ष तथा उपप्रधानाचार्य पद को अलंकृत करती रहीं।

श्री पेरालारत्नम् इनके पति थे। इन्होंने भारतीय विदेश सेवा के अन्तर्गत मैक्सिको, क्यूबा, पनामा, जापान, अरबदेश, आस्ट्रेलिया, रूस, लाओस, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, चिली, पेरू, कोलम्बिया आदि देशों में राजदूत आदि अनेक उच्च पदों पर काम किया। इनके साथ श्रीमती कमलारत्नम् को भी इन सभी देशों में रहने तथा वहाँ संस्कृत के प्रचार-प्रसार करने का अवसर मिला।[४२] आस्ट्रेलिया, टोकियो, मेक्सिको व मास्को विश्वविद्यालयों में आपने संस्कृत एवं हिन्दी में अध्यापन कार्य भी किया। तीन वर्ष तक आप दिल्ली के रामजस कॉलेज की प्राचार्या तथा दिल्ली स्थित भारतीय-विज्ञान-भवन में भारतीय संस्कृति की प्राध्यापिका रहीं। इस प्रकार आपने देश-विदेश के हजारों छात्रों में भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न की ।

श्रीमती कमलारत्नम् के तेरह भाई बहिन थे। इनके एक पुत्र अशोक तथा एक पुत्री माधवी है, जो सम्प्रति विदेश में कार्यरत हैं। इनके पति पेरालारत्नम् का १९८८ में निधन हुआ। श्रीमती रत्नम् ने भी अपनी इहलीला का संवरण ४ जुलाई १९९१ को किया। इनके निधन से एक अहर्निश कर्मण्य संस्कृतसेवी व्यक्तित्व का अवसान हुआ।

श्रीमती कमलारत्नम् भारतीय पत्र पत्रिकाओं से सर्वदा जुड़ी रहीं। संस्कृतपारिजातम् (कानपुर) मासिक पत्रिका की वह संरक्षक मण्डल की सदस्या थीं तथा संस्कृत की कवयित्री एवं नाट्यकर्त्री के रूप में विख्यात थीं। कालिदास, भवभूति तथा रामायण से सम्बद्ध आपके अनेक लेख पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहते थे। कालिदास पर विशेष शोध कर आपने कालिदास की जन्मस्थली हिमालय में सिद्ध की है। स्पैनिश भाषा में भी आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। कालिदास और तत्कालीन महिलाओं की समस्याएँ, लुज् औस्कुरा (स्पेनिश में हिन्दी कविताओं का अनुवाद), हिमालया यात्रो समीप माज् (दिनकर की कविताओं का स्पेनिश अनुवाद) आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। अक्षरगीतम् संस्कृत भाषा के मधुर गीतों की रचना है।

श्रीमती रत्नम् ने १९६३ में अखिल भारतीय कालिदास परिषद् की स्थापना की थी। इसके प्रतिनिधि के रूप में १९६० और १९६७ में आपने भारत का प्रतिनिधित्व किया तथा प्राच्य-विद्या पर शोधपूर्ण निबन्धों का वाचन किया। मैक्सिको में आयोजित महिला पत्रकारों के सम्मेलन में भी आप भारत की प्रतिनिधि रहीं। १९७१ में वाशिंगटन में पुनः आयोजित इस संगठन की

उपाध्यक्षा चुनी गईं। १९७३ में विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के कालिदास साहित्य पर शोध पूर्ण लेख लिखने के लिए आपको सम्मानित किया तथा 'कालिदास विद्वान्' की उपाधि प्रदान की। १९७७-७८ में आपने एक सम्मानित अतिथि के रूप में नागपुर एवं मारीशस में आयोजित विश्व-हिन्दी-सम्मेलन में भाग लिया था । वह आजीवन संस्कृत साहित्य की सेवा में संलग्न रहीं।

संस्कृत नाट्यों के प्रति आपकी विशेष रुचि थी। उनके मंचन के लिए आपने संस्कृत रंगमंच की स्थापना भी की थी। आपके पाँच सस्कृत रूपक उपलब्ध हैं।

'गणयंछागः' १९७६में दिव्यज्योति के जुलाई अंक में प्रकाशित दो दृश्यों का बाल-रूपक है। इस प्रतीकात्मक एकांकी में एक गणना करने में निपुणछाग निरक्षरों को साक्षरता की प्रेरणा देता है। 'नचिकेतो यम संवादम्' पारिजातम् के १९८४ के अगस्त-सितम्बर अंक में प्रकाशित हुआ है । इसके तीन दृश्यों में कठोपनिषद् के प्रसिद्ध नचिकेता व यम के प्रसंग के आध्यात्मिक पक्ष का प्रस्तुतीकरण है। 'विवेकानन्दविजयम्' जुलाई १९८६ के पारिजातम् में प्रकाशित हुआ है। यहाँ तीन अंकों में विवेकानन्द के जीवन की प्रमुख घटनाएँ उपनिबद्ध हैं। नवम्बर १९८४ के संविद् में प्रकाशित 'विवेकानन्द स्मृतिः' एक रेडियो वृत्तचित्र है। यहाँ वाचक-वाचिकाओं के स्वर के प्रभावी उतार चढ़ाव द्वारा विवेकानन्द की जन्म से मृत्यु पर्यन्त प्रमुख घटनाओं की सूचना दी गई है।'विक्रमवेतालनाटिका' पारिजातम् में दिसम्बर १९८२ तथा जनवरी, मार्च, अप्रैल १९८३ में प्रकाशित हुई है। यहाँ वेतालपंचविंशतिः की एक कथा का नाट्य-रूपान्तरण कुशलतापूर्वक किया गया है। कमलारत्नम् के सभी रूपकों का आकाशवाणी दिल्ली से प्रसारण हो चुका है। समय-समय पर दिल्ली दूरदर्शन एवं आकाशवाणी पर आपने संस्कृत नृत्यनाटिकाओं और अन्य नाट्यों का प्रसारण भी करवाया था।

डॉ० वनमालाभवालकर का जन्म ८ फरवरी १९१४ में बेलगाँव (कर्नाटक) में हुआ । आपकी मातृभाषा कन्नड़ है, परन्तु शिक्षा-दीक्षा मराठी में हुई। आपके पिता मुंबई प्रान्त में 'डिस्ट्रिक्ट सैशन्स' जज थे और बाद में मुंबई उच्चन्यायालय के न्यायाधीश रहे। अतः इनका अधिकतर निवास महाराष्ट्र में रहा। पिता कानून के ज्ञाता होने के साथ-साथ संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। शास्त्रीय संगीत और नाट्य में भी उनकी रुचि थी। अतः संस्कृत भाषा से प्रेम तथा काव्य नाट्य रचना के संस्कार इन्हें अपने पिता से विरासत में मिले।

डॉ० वनमाला बाल्यावस्था से ही प्रतिभाशाली थीं। कॉलेज में इन्होंने टेनिस, बैडमिण्टन की प्रतियोगिताओं में अनेक पुरस्कार जीते। मैट्रिक से [illegible]कर एम० ए० तक समस्त परीक्षाएँ आपने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। १९[illegible] में कलकत्ता विश्वविद्यालय से प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विष[illegible] से

एम० ए० में प्रथम योग्यता स्थान पाने पर आपने स्वर्ण पदक तथा छात्रवृत्ति प्राप्त की। १९४६ में सागर विश्वविद्यालय की स्थापना के दिन से ही यह वहाँ प्रवक्ता नियुक्त हुई, साथ ही महिला छात्रावास की व्यस्थापिका भी बनीं। १९५२ में आपने नागपुर विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम० ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की, तत्पश्चात् सागर विश्वविद्यालय (आजकल श्री हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय) के संस्कृत विभाग में आपकी स्थायी सेवा आरम्भ हुई। १९६१ में 'महाभारत में नारी' विषय पर आपने शोध-कार्य कर पी० एच० डी० उपाधि प्राप्त की।

१९३५ में आपका विवाह डॉ० दे० र० भवालकर के साथ हुआ। श्री भवालकर भी १९४६ में सागर विश्वविद्यालय में भौतिक विज्ञान विभाग में प्रवक्ता नियुक्त हुए । इससे पूर्व वह सरकारी रिसर्च ब्यूरो में वैज्ञानिक थे। डॉ० वनमाला की बाल्यावस्था से ही नाट्य-लेखन एवं अभिनय में रुचि थी। कलकत्ता में महाराष्ट्र समाज के कार्यक्रमों के लिए प्रतिवर्ष आप मराठी में नाटक लिख कर उन्हें मंचित कराती रही थीं। विविध अवसरों जन्मदिवस, स्वर्णजयन्ती, हीरक जयन्ती, तथा विवाह आदि की शुभकामना के रूप में आपने अनेक पद्यों की रचना की । काव्य गोष्ठियों में आप अपनी काव्यरचनाएँ सुनाकर श्रोताओं को मुग्ध बनाती रही हैं।

१९५४ में आपके द्वारा लिखे गये मराठी नाटक को स्वातन्त्र्योत्तर नाटकों में उत्तम नाटक होने का शासन-साहित्य-परिषद् का प्रथम पुरस्कार मिला। उसका हिन्दी रूपान्तरण 'उधार का पति' भारत तथा अण्डमान द्वीप में खेला भी गया। सागर विश्वविद्यालय के छात्रावास में प्रति वर्ष होने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिए आपने सीताहरण, शकुन्तला आदि बैले हिन्दी में लिखे। दिल्ली के युवा महोत्सव के लिए आपने 'बैसाखी' नामक रेडियो एकांकी लिखा। उसी का संस्कृत रूपान्तरण 'पाद-दण्डः' मुंबई व दिल्ली आकाशवाणी केन्द्रों से प्रसारित कराया, जो उत्तर-प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हुआ। 'रामवनगमन' एवं 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' संगीतिकाएँ उज्जैन के कालिदास समारोह में मंचित हो चुकी है। संस्कृत में ऑपेरा रचना का श्रेय वनमाला भवालकर को है।[४३] आपने सतसाईं बाबा के ऊपर एक संस्कृत पद्यरचना के अतिरिक्त 'गीर्वाण गद्य प्रदीप' तथा 'गौतमधर्मसूत्राणि' का सम्पादन भी किया है।

संगीत-नाट्य के अतिरिक्त योगासन, बागवानी तथा ज्योतिष में भी आपकी रुचि है । हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, कन्नड़ व मराठी के अतिरिक्त आप जर्मन भाषा की भी वेत्ता हैं। जब तक आप सेवा में रहीं, विश्वविद्यालय की अनेक समितियों की सदस्या रहीं। भोपाल रेडियो की परामर्शदात्री समिति तथा केन्द्रीय विद्यालय की कार्यकारिणी की भी आप सदस्या रही हैं। संस्कृत त्रैमासिक पत्रिका

सागरिका के सम्पादक मण्डल में भी आप रह चुकी हैं। छात्रावास की लड़कियों को आप मातृवत् स्नेह देती थीं। छात्राएँ भी इन्हें काकू (चाची) कहती थीं। सेवा अवधि में दो वर्ष की वृद्धि के बाद अब आप सागर विश्वविद्यालय से सेवा निवृत्त होकर सागर में ही निवास कर रही हैं। नौ छात्राओं ने आपके निर्देशन में पी०एच०डी० उपाधि प्राप्त की है।

आपके दो पुत्र तथा तीन पुत्रियाँ हैं। बड़ा पुत्र वैज्ञानिक है तथा तीनों पुत्रियाँ साहित्य लेखन में रुचि रखती हैं। सेवा निवृत्ति के बाद श्रीमती भवालकर धार्मिक एवं आध्यात्मिक ग्रन्थों के अध्ययन-मनन में तथा प्रभु के भजन-पूजन व विद्यादान में अपना समय व्यतीत करती हैं।

आपकी पाँच संस्कृत नाट्य रचनाएँ उपलब्ध हैं। 'रामवनगमनं' का प्रकाशन सागर विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग द्वारा हुआ है। इस संगीतिका के तीन दृश्यों के अन्तर्गत रामायण की प्रसिद्ध कथा के आधार पर कैकेयी द्वारा राम को वनवास दिलाने का प्रसंग रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' नामक ऑपेरा में भी तीन दृश्य हैं। यहाँ कुमारसम्भव की प्रसिद्ध कथा-पार्वती द्वारा शिव की उपासना, मदन दहन, रति विलाप तथा पार्वती की तपस्या की वटुकरूपधारी शिव के द्वारा परीक्षा के प्रसंगों को संगीत व नृत्य के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है। 'पाददण्डः' एकांकी रूपक है। इसका प्रकाशन संस्कृत पत्रिका सागरिका के वर्ष ४ अंक २ में हुआ है। भावात्मक सम्बन्धों पर आधारित छह दृश्यों के इस एकांकी में ललिता पंगु सुधीर को अपनाकर उसका पाददण्ड (बैसाखी) बन जाती है। 'सीताहरणम्' तथा 'अन्नदेवता' अप्रकाशित नाट्य रचनाएँ हैं। सीताहरणम् बैले है। इसका हिन्दी एवं मराठी रूपान्तर भी साथ ही दिया गया है। माया-मृग से मुग्ध सीता का भिक्षु रूप धारी रावण के द्वारा अपहरण करने की मार्मिक कथा यहाँ प्रस्तुत की गई है। 'अन्नदेवता' बाल-एकांकी है। आठवर्षीया बालालीला को नायिका बनाकर यहाँ अन्न के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। इन रूपकों की विशेषता इनका अभिनेयत्व है। संगीतिकाओं के स्वर एवं तालों का निश्चितीकरण स्वयं नाट्यकर्त्री ने किया है।

श्रीमती देवकी मेनन् अथवा अम्बाडि देवकी मेनन् भी मूलतः अध्यापन क्षेत्र को अलंकृत करती रही हैं। आप मद्रास के क्वीनमेरी महाविद्यालय में संस्कृत विभाग की अध्यक्षा रहीं। सेवा-निवृत्ति के पश्चात् आप केरल प्रान्त के एर्णाकुलम् में वास कर रही हैं।

नवसर्गात्मक संस्कृत महाकाव्य 'शारदादेवी चरित संग्रहः' के अतिरिक्त आपकी चार संस्कृत नाट्य-रचनाएँ हैं। 'कुचेलवृत्तम्' संस्कृत साहित्य अकादमी की संस्कृत पत्रिका संस्कृत प्रतिभा के १९६१ के अक्टूबर अंक में प्रकाशित संगीत नाट्य (opera) है। इसके सात दृश्यों में सुदामा का कृष्ण के यहाँ

द्वारिका गमन तथा कृष्ण द्वारा अतुल ऐश्वर्य प्रदान करने की घटना दक्षिण भारतीय रागों व तालों में निबद्ध करके प्रस्तुत की गई है। 'सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम्' का प्रकाशन भी संस्कृत प्रतिभा के १९६३ के अक्टूबर अंक में हो चुका है। दो दृश्यों के इस रूपक में ब्रज की एक कुब्जा सैरन्ध्री पर कृष्ण की कृपा तथा उसे अपूर्व सुन्दरी बनाने की घटना को प्रदर्शित किया गया है। 'कालीदर्शनम् एकांकी' १९७० में संस्कृत प्रतिभा के अक्टूबर के अंक में प्रकाशित हुई थी जो श्री रामकृष्ण परमहंस की सहधर्मचारिणी श्री शारदादेवी के उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत करती है। पृथङ्मुष्टिः भाणशैली का रूपक है। कुंजन्नी राजा 'सन्तान-गोपाल' नामक रेडियो रूपक का उल्लेख भी आपके कर्तृत्व के रूप में करते हैं।[४४]

कुचेलवृत्तम् तथा सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम् का अभिनय क्वीनमैरी महाविद्यालय, मद्रास की छात्राओं द्वारा किया गया था।

श्रीमती (डॉ०) रत्नमयी देवी दीक्षित का जन्म केरल प्रान्त में तथा शिक्षा-दीक्षा मद्रास में हुई। आप संस्कृत हिन्दी, मराठी व मलयालम भाषा की प्रतिष्ठित विदुषी थीं। अध्ययनोपरान्त आपने कुछ समय तक वर्धा के महिलाश्रम में अध्यापन कार्य भी किया। तदुपरान्त दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध मिराण्डा कॉलेज के संस्कृत-विभाग में रीडर व अध्यक्ष के पद पर कार्य किया। १९९१ में आपका देहावसान हो गया ।

Women in Sanskrit Dramas विषय पर आपको पी०एच०डी० की उपाधि मिली थी। आप अपने जीवन में काका कालेलकर से बहुत प्रभावित थीं। उन्हीं की प्रेरणा एवं प्रयासों से वर्धा में रहकर आपने हिन्दी भाषा सीखी। आपने काका कालेलकर के 'सप्तसरिता' का हिन्दी से मलयालम में अनुवाद किया। मलयालम भाषा के कवि वल्लतोल की कविताओं का भी आपने हिन्दी में अनुवाद किया है, जो 'वल्लोत्तोल की कविताएँ' शीर्षक से साहित्य अकादमी नई दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। हिन्दी भाषा में लिखे गए 'केरली साहित्यदर्शनम्' नामक ग्रन्थ में आपने केरल के कवि एवं कवयित्रियों का संक्षिप्त लेकिन सर्वांगीण विवेचन ऐतिहासिक दृष्टि से किया है। १९६६ में आपने मामा श्री विट्ठलवरेस्कर के मराठी भाषा में रचित 'भूमिकन्यासीता' नाटक का संस्कृत में रूपान्तरण किया। 'भूमिकन्या' पाँच अंकों का नाटक है। इसमें राज्याभिषेक के पश्चात् लोकापवाद के कारण राम द्वारा सीता परित्याग तथा सीता के भूमि में समा जाने की कथा प्रस्तुत की गई है। इस रूपक का प्रकाशन दिल्ली से हुआ है।

श्रीमती (डॉ०) वीणापाणि पाटनी उदीयमान संस्कृत नाट्यकर्त्री है। इनका जन्म १९३२ में हल्द्वानी (उत्तर प्रदेश) में हुआ। शिक्षा लखनऊ के ईसाबैल थोबर्न कॉलेज एवं लखनऊ विश्वविद्यालय में हुई। पिताजी संस्कृत के

अनुरागी थे, घर में पाठशाला-पद्धति से संस्कृत के अध्ययन का वातावरण था, इसलिए बाल्यकाल से ही आपकी संस्कृत की ओर अभिरुचि हुई। १९५३ में 'हरिवंशपुराण का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन' विषय पर पी०एच०डी० की उपाधि प्राप्त की। सन् १९६० में पी०एच०डी० के शोध ग्रन्थ का एक भाग 'हरिवंशपुराण का सांस्कृतिक विवेचन' शीर्षक से हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रकाशित हुआ है।

१९६०-६१ तक आपने लखनऊ विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में प्राध्यापन कार्य किया। १९६७ से अब तक आप जानकी देवी महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय) में अध्यापनरत हैं।

आपको सन् १९६५ में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की वरिष्ठ छात्रवृत्ति पी०एच० डी० के उपरान्त शोध कार्य के लिए प्राप्त हुई। इससे आपने शिवपुराण का विस्तृत साहित्यिक अध्ययन किया, जो १९८० में "Śiva Purāṇa—A Poetic Analysis" शीर्षक से अजन्ता इण्टरनेशनल जवाहर नगर, दिल्ली द्वारा प्रकाशित किया गया है।

आपके एक पुत्र तथा एक पुत्री हैं। पुत्री विदेश मन्त्रालय में अपर सचिव है तथा पुत्र निजी व्यवसाय-कार्य में संलग्न है।

वीणा पाटनी संस्कृत की एक उत्तम रचनाकार हैं। अपराजिता आपकी नवीनतम गद्यरचना है। इसमें सात कथाएँ हैं। इनमें से पाँच-अपराजिता, कुलीना, शंखनाद, अनुगृहीता एवं वातायन नारी समस्या से सम्बद्ध है। शेष दो कहानियाँ 'जागरित' और 'एकोऽन्यः शिविः' क्रमशः समाज के दलित वर्ग श्रमिकों के जीवन और दो मित्रों की पारस्परिक ईमानदारी एवं सौहार्द्र पर आधारित हैं।

आपका 'मधुराम्लम्' नामक पाँच एकांकियों का संग्रह नाग प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली द्वारा प्रकाशित है। संस्कृत अकादमी उत्तर प्रदेश ने १९८७ में इस पुस्तक को विशिष्ट पुरस्कार से पुरस्कृत किया है। अब तक आपके २० से अधिक शोध-निबन्ध विविध संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

'मधुराम्लम्' का हिन्दी अनुवाद है 'खट्टा-मीठा'। यहाँ निम्बपत्राणि, अतिबुद्धा, याथार्थ्यगरलम्, नारददौत्यम् तथा कविकालिदासीयम् एकांकी जीवन के खट्टे-मीठे अनुभवों से पूर्ण है। 'निम्बपत्राणि' हास्य व्यंग्य प्रधान एकांकी है। इसमें गुरुकुल से स्नातक उपाधि प्राप्त सैद्धान्तिक ज्ञानयुक्त परन्तु व्यावहारिक ज्ञान से रहित चार ब्रह्मचारियों की कथा प्रदर्शित की गई है। 'प्रतिबुद्धा' नामक एकांकी में नौकरी करने वाली महिला की गृहकार्य एवं कार्यालय के कार्य में संलग्न रहने से प्रारम्भ में दुरवस्था दिखाई गई है किन्तु अन्त में दोनों कार्यों में समन्वय करने से उसका प्रतिबुद्धत्व सिद्ध किया गया है। 'याथार्थ्यगरलम्' में एक महत्वाकांक्षी दरिद्र ब्राह्मण की धनार्जन के लिए नानाविषयगत प्रवृत्ति पर

कटाक्ष किया गया है। 'नारददौत्यम्' में पृथिवी पर हो रहे ग्रह-उपग्रह के अनुसन्धान पर स्वर्गस्थ देवताओं का सम्भ्रम तथा भारतवासियों के पारस्परिक राग-द्वेष आदि समस्याओं से ग्रस्त होने के कारण विकलता प्रदर्शित की गई है। 'कविकालिदासीयम्' में राजाभोज के दरबार में महाकवि कालिदास के वाग्वैदग्ध्य, सौजन्य आदि गुणों को प्रकाशित किया गया है।

इन पाँचों एकांकियों का समय-समय पर मंचन भी हुआ है। निम्बपत्राणि एकांकी को महाविद्यालय में एवं फिरोजशाह कोटला मैदान, दिल्ली में तीन बार अभिनीत किया गया है। संस्कृत अकादमी, दिल्ली के तत्वावधान में १९९० में प्रतिबुद्धा एकांकी का मंचन हुआ। १९९२ में इसी अकादमी के सौजन्य से यथार्थ्यगरलम् एकांकी लिटिलथियेटर ग्रुप मण्डी हाउस में अभिनीत हुआ।[४५] इस प्रकार लेखन के साथ-साथ उनके प्रयोग में भी डॉ० वीणापाणि की रुचि रही है।

श्रीमती (डॉ०) नलिनी शुक्ला का जन्म उत्तर प्रदेश के इटावा जनपद में कंघेसी ग्राम में ८ जून १९४० में हुआ । इनके पिता का नाम पं० इन्द्रदत्त तथा माता का नाम पद्मावती था। धार्मिक, सहृदय, सहिष्णु तथा विद्वान् इनके पिता का निधन बाल्यावस्था में ही हो गया था। पितृविहीना इनका माता के संरक्षण में ही विकास हुआ। इनका जीवन शैशव से ही सहिष्णु तथा संवेदनशील था। अनेक दैविक तथा भौतिक कष्ट सहकर भी यह अपने पथ से भ्रष्ट तथा कर्तव्यविमुख नहीं हुईं। आपके पति श्री राम स्वरूप शुक्ल चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर में निदेशक निर्माण अभियन्ता (सिविल इन्जिनीयर) हैं। आपका पुत्र भी अभियन्ता है तथा पुत्री कुशल चित्रकार है।

आप से साक्षात्कार के बाद ज्ञात हुआ कि इण्टरमीडियट तक आप विज्ञान की छात्रा रही थीं । बी०ए० में आपने प्रथम बार संस्कृत पढ़ी। संस्कृत साहित्य मे एम०ए० परीक्षा उत्तीर्ण कर स्वर्ण पदक भी प्राप्त किया। 'पातंजलयोगसूत्र का विवेचनात्मक अध्ययन' विषय पर आपने पीएच०डी० की उपाधि प्राप्त की। सम्प्रति 'यौगिक विभूतियों का स्वरूप निरूपण एवं भागवत पुराण में उनका निदर्शन—एक अध्ययन' (वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में) विषय पर आप डी० लिट् उपाधि हेतु शोधकार्यरत हैं।

डॉ० नलिनी का व्यक्तित्व विविध प्रतिभाओं से सम्पन्न एवं बहुआयामी है। बात-चीत में मृदुल, हँसमुख तथा सहयोगी प्रकृति की आप एक घरेलू महिला दिखाई देती हैं। बैठक की सज्जा देखकर आपकी सुरुचिपूर्ण एवं कलाप्रियता का सहज परिचय हो जाता है। पारिवारिक दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वहण करती हुई आप संस्कृत साहित्य की सेवा में अहर्निश संलग्न रहती हैं। संस्कृत की विशिष्ट सेवाओं के लिए आपको अनेक मानद्

उपाधियाँ तथा सम्मान प्राप्त हुए हैं। उत्तर प्रदेश शासन तथा उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी से आपको अपनी रचनाओं पर सन् १९७५, १९७६, १९७७, १९८०, १९८१ में पुरस्कार मिले हैं। उद्‌बोधन समिति, कानपुर द्वारा १९८० में 'संस्कृत भारती' उपाधि, १९८१ में संस्कृत अध्यापक परिषद, पूना तथा मध्यप्रदेश विद्वत्परिषद् द्वारा एवं १९८२ में जबलपुर द्वारा आपको सम्मानित किया गया है। डॉ० नलिनी अनेक शैक्षिक सभा-समितियों की सदस्य भी रही हैं। १९८३-१९८९ तक केन्द्रीय साहित्य अकादमी में संस्कृत परामर्शदात्री समिति की सदस्या रहीं। १९८३ से १९८८ तक इण्डियन राइटर्स यूनियन, केरल की ओर से कन्ट्रीब्यूशन ऑफ राइटर्स टू इण्डियन मूवमेण्ट के प्रकाशन हेतु निदेशक, सम्पादक तथा लेखिका नियुक्त की गई। अप्रैल १९९० से आनररी मैम्बर ऑफ बायोग्राफिकल सेण्टर, एडवाइजरी काउन्सिल, कैम्ब्रिज, इंग्लैण्ड की सदस्या हैं। संस्कृत प्रचार मंच कानपुर की उपाध्यक्ष, संस्कृत दैनिक पत्र नवप्रभातम्, शारदानगर कानपुर की वरिष्ठ प्रबन्ध सम्पादिका हैं। संस्कृत पत्रिका 'पारिजातम्' (कानपुर) की परामर्शदात्री समिति की सदस्या हैं तथा कानपुर विश्वविद्यालय संस्कृत-पाठ्यक्रम निर्धारण समिति की सदस्या हैं। **डॉ० नलिनी शुक्ला** संस्कृत की एक प्रतिभाशाली कवयित्री लेखिका एवं नाट्यकर्त्री हैं। पचास से अधिक आपके लेख संस्कृत प्रचारकम्, संस्कृत रत्नाकर, सारस्वतीसुषमा, ऋतम्भरा, पारिजातम् आदि में प्रकाशित हुए हैं। अखिल भारतीय प्राच्यविद्या परिषद् के विविध अधिवेशनों में आपने शोध पत्रों का वाचन किया है। संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी व अंग्रेजी की लगभग ४० कविताएँ नन्दन, सरस्वती (हिन्दी), दूर्वा, स्वरमंगला, विश्व भाषा परिषद् तथा आचार्य नरेन्द्र देव कॉलेज की पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

आप १५ से अधिक परिषदों एवं समितियों की अंशकालिक अथवा आजीवन सदस्या हैं। १९७८ में सम्पूर्ण भारत में आयोजित संस्कृत के सांस्कृतिक कार्यक्रमों की शृंखला में कानपुर के जिलास्तरीय संस्कृत सम्मेलन में आप सांस्कृतिक मन्त्री व संयोजिका रहीं। उस अवधि में आपने प्रारम्भिक कक्षाओं से लेकर विश्वविद्यालयीय कक्षाओं तक छात्र छात्राओं द्वारा अनेक मनोरंजक सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये। महाविद्यालय परिसर में भी आप समय-समय पर स्वरचित संस्कृत गीतों, कव्वालियों एवं संगीत रूपकों का मंचन कराती रहती हैं। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के विविध कार्यक्रमों में भी आप भाग लेती रहती हैं। राष्ट्रिय स्तर के संस्कृत के हिन्दी भाषा के कवि-सम्मेलनों में आपने अनेकशः काव्यपाठ तथा समस्यापूर्ति प्रस्तुत की है। सम्प्रति आप 'संस्कृतमन्दारः' पत्रिका का स्वतन्त्र सम्पादन कर रही हैं। उच्च शिक्षा में गुणात्मक सुधार तथा विकास के कार्यक्रमों में भी आप रुचि रखती हैं।

हिन्दी में प्रकाशित आपकी रचनाएँ हैं— (१) नीरवगान (गीतिकाव्य), (२) कल्लोलिनी (गीतिकाव्य), (३) भारतरत्न जवाहर (खण्डकाव्य), (४) पातञ्जल योग सूत्र का विवेचनात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन (शोध ग्रन्थ)।

अंग्रेजी भाषा में— (१) Contribution of writers to Indian freedom movement (2) Sanskrit as a Cohesive force of national intigration and its International value. प्रकाशित हो चुकी हैं।

संस्कृत में प्रकाशित रचनाएँ हैं— (१) प्रकीर्णम्, (२) भावांजलिः, (३) वाणीशतकम्, (४) कथासप्तकम्, (५) निर्झरिणी, (६) संस्कृत पत्रिकासु राष्ट्रिय-भावना ।

इनके अतिरिक्त आपके द्वारा रचित साहित्य का बहुत बड़ा भाग अप्रकाशित है— (१) भौगोलिक विभूतियों का स्वरूप निरूपण एवं पुराण साहित्य में उनका निदर्शन, (२) तर्क भाषा समीक्षण (संस्कृत), (३) योग्य भाष्यालोक, (४) स्वरूप लहरी (संस्कृत पद्य रचना), (५) कथाम्बरा (आधुनिक संस्कृत कहानियों का संग्रह), (६) यज्ञात्मभारतवीणा (संस्कृतगीतिकाव्य), (७) राष्ट्रभारती (संस्कृत गीत), (८) मनमधुप (हिन्दी खण्डकाव्य), (९) उन्मेषः (संस्कृत गीत संग्रह), (१०) चाण्डालकन्या (हिन्दी नृत्यनाटिका), (११) वन्दनवार (हिन्दी गीत संग्रह), (१२) प्रथम रश्मि (हिन्दी गीत संग्रह), (१३) नज़राना (गज़ल नज़्मों का संग्रह), (१४) Feelings of heart (अंग्रेजी कविता संग्रह), (१५) सांख्य तत्वमीमांसा।

आपकी संस्कृत नाट्यकृतियाँ तीन हैं—

राधानुनयः आधुनिक संगीतनाट्य (ऑपेरा) है। इसके चार दृश्यों में कृष्ण का गोपियों के साथ नृत्य, राधा का मान तथा कृष्ण के द्वारा अनुनय संगीत व नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रकाशन शारदा पत्रिका में पूना से हुआ है।

पार्वतीतपश्चर्या तीन दृश्यों का संगीत प्रधान रूपक है। इसमें शिव द्वारा मदन दहन, रति का विलाप, शिव की प्राप्ति के लिए पार्वती की घोर तपस्या तथा शिव का प्रसन्न होना आदि प्रसंग रूपायित हैं।

मुक्तिमहोत्सवः तीन दृश्यों में विभक्त आधुनिक एकांकी है। इसमें स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित ध्वजारोहण के अवसर पर महिलाओं की स्वतन्त्रता के प्रश्न को उठाया गया है। यह रूपक अभी तक अप्रकाशित है। पार्वतीतपश्चर्या तथा मुक्तिमहोत्सव का कुछ 'अंश' स्वयं नाट्यकर्त्री से इन पंक्तियों की लेखिका को जीरोक्स प्रति के रूप में उपलब्ध हुआ है।

श्रीमती (डॉ०) मिथिलेश कुमारी मिश्रा का जन्म दिसम्बर १९५३ में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद जनपद में हुआ। आप अपने सादगीपूर्ण किन्तु कर्मठ व्यक्तित्व से सहज ही दूसरों के आकर्षण की क्षमता रखती हैं। आप हिन्दी (१९७३) व अंग्रेजी साहित्य तथा प्राकृत एवं जैन शास्त्र में एम०ए० हैं। १९८० में प्राकृत एवं जैन शास्त्र में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के कारण आपको स्वर्णपदक प्राप्त हुआ है। वाराणसी विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य तथा पुराणेतिहास में आपने 'आचार्य' उपाधि प्राप्त की है। साहित्यरत्न, साहित्य-रत्नकोविद तथा सम्पादन-कला-विशारद आदि उपाधियाँ भी आपने प्राप्त की हैं। 'विद्यापति का काव्यशिल्प' विषय पर पीएच०डी० की उपाधि तथा 'जयशंकर प्रसाद व रवीन्द्रनाथ ठाकुर के काव्य में सौन्दर्यबोध' विषय पर डी०लिट्० की उपाधि प्राप्त की है। संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी एवं प्राकृत भाषाओं के अतिरिक्त आप बंगला, तमिल एवं गुजराती का भी अच्छा ज्ञान रखती हैं। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त आपने कुछ वर्षों तक फर्रूखाबाद, इण्टर कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। सम्प्रति आप बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के अनुसन्धान विभाग में कार्यरत हैं।

डॉ० मिथिलेश कुमारी हिन्दी एवं अंग्रेजी के अतिरिक्त संस्कृत भाषा की एक प्रतिष्ठित कवयित्री हैं। १९६१ से आपकी स्फुट रचनाएँ संस्कृत की प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में छपती रही हैं। १९७२ से आकाशवाणी पर काव्य पाठ, वार्ता, साक्षात्कार आदि के द्वारा तथा संस्कृत सम्मेलनों में शोध-पत्रों के प्रस्तुतीकरण द्वारा आप अपनी प्रतिभा का परिचय देती रही हैं।

डॉ० मिथिलेश कुमारी मिश्रा बाल्यावस्था से ही अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न तथा उद्यमी रही हैं। आठ वर्ष की अल्पायु से ही आपने काव्य रचना प्रारम्भ कर दी थीं। विद्यालय तथा महाविद्यालय में प्राप्त पुरस्कारों के अतिरिक्त राजभाषा विभाग, बिहार सरकार, हिन्दी संस्थान, लखनऊ तथा उत्तर प्रदेश, संस्कृत अकादमी द्वारा विशेष पुरस्कारों से पुरस्कृत व सम्मानित की गई हैं। आप साहित्य सम्मेलन प्रयाग की स्थायी समिति की मनोनीत सदस्या हैं तथा अखिल भारतीय प्राच्य विद्यासम्मेलन की आजीवन सदस्या हैं। विद्वत्ता के कारण आपको अनेक मानद उपाधियों से अलंकृत किया गया है, जिनमें साहित्यसरस्वती, काव्यश्री, साहित्यकला विद्यालंकार, साहित्यकोविद प्रमुख हैं। आपने अनेक हिन्दी व संस्कृत की पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया है। वर्तमान में आप 'संस्कृत संजीवनम्' नाम की एक संस्कृत पत्रिका का सम्पादन कर रही हैं। हिन्दी व संस्कृत में आपने अनेक खण्डकाव्य, कहानी, उपन्यास तथा शोध लेख लिखे हैं, जिनमें से कुछ प्रकाशित हो चुके हैं तथा कुछ शीघ्र प्रकाश्य हैं।

आपने हिन्दी में— कीचकवध (हिन्दी नाटक), धनंजय विजय (हिन्दी नाट्क), श्रद्धांजलि (हिन्दी खण्डकाव्य), देवयानी (हिन्दी महाकाव्य), दाक्षायणी

(हिन्दी महाकाव्य), सुजान (हिन्दी उपन्यास), अस्थिदान (हिन्दी उपन्यास), वैरागिन (हिन्दी उपन्यास), शीलाभट्टारिका (हिन्दी उपन्यास), नाटककार रामकुमार वर्मा (हिन्दी समीक्षात्मक ग्रन्थ) की रचना की है। इनमें से धनंजय विजय, आन्ध्रप्रदेश के तथा वैरागिन उपन्यास मध्यप्रदेश के बी०ए० पाठ्यक्रम में निर्धारित है।

योगी, इण्डिया आपका अंग्रेजी काव्य है तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के स्नातक पाठ्यक्रम में निर्धारित है।

गउडवहो (हिन्दी अनुवाद), पउमचरिय (जैन रामायण का हिन्दी अनुवाद), जयशंकर प्रसाद व रवीन्द्र के काव्य में सौन्दर्य बोध, प्रेममोहिनीरणधीर नाटक (हिन्दी नाटक) आपकी अप्रकाशित कृतियाँ हैं।

संस्कृत कविता रचनाओं में सुभाषितसुमनोऽञ्जलिः तथा व्यासशतकम् हैं एवं जिगीषा उपन्यास है। आपने 'आम्रपाली' नामक एक सरस नाटिका तथा दस एकांकियों की रचना भी की है। 'आम्रपाली' पाँच अंकों की बौद्धकालीन सांस्कृतिक नाटिका है। इसमें वैशाली की नगर वधू आम्रपाली की जीवन गाथा अत्यन्त सरस रूप में प्रस्तुत की गई है। इसका प्रकाशन वाणीवाटिका पटना से हुआ है।

दशमस्त्वमसि में दस एकांकियों का संग्रह है। 'चराचरसंचित-कर्मयन्त्रितम्', 'भक्तराज' तथा 'सचाप्यस्तिरजक एव' भक्ति की महिमा को प्रतिपादित करते हैं। भगवान् स्वयं अपने भक्तों के योग-क्षेम व कल्याण की चिन्ता करते हैं। 'माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः', 'न मुनिपुनरायातो न चासौ वर्धतेगिरिः' तथा 'सत्यमेव जयते' गान्धीजी के सत्याग्रह आन्दोलन से सम्बद्ध देशहित के लिए स्वार्थ के परित्याग की प्रेरणा देते हैं। 'अलक्ष्यं दूरदर्शनम्', 'उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्', 'ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः' तथा'दशमस्त्वमसि' हास्य व्यंग्य परक रूपक हैं। इनमें 'अलक्ष्यं दूरदर्शनम्' कंचन के मूर्खतापूर्ण कृत्यों के दुष्परिणाम को प्रदर्शित करता है। उच्चासन 'स्थस्य विकल्पनाफलम्' एवं भोले-भाले ग्रामीण की निरर्थक कल्पना के कारण उत्पन्न विकट परिस्थिति को प्रस्तुत करता है। 'ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः' में एक व्यक्ति तथा उसके तीन पुत्रों की, ज्ञानहीनता के कारण पशुवत् दशा प्रदर्शित की गई है। 'दशमस्त्वमसि' में व्यावहारिक ज्ञान से रहित दश मुनियों के सैद्धान्तिक ज्ञान पर कटाक्ष किया गया है। इस संग्रह का प्रकाशन शिक्षक-प्रकाशन, कानपुर से हो चुका है। परिजातम् नामक संस्कृत मासिक पत्रिका में भी ये प्रकाशित हो चुके हैं।

ब्रह्मचारिणी वेलादेवी संस्कृत में एम०ए० तथा तर्क-वेदान्त व्याकरण में तीर्थ उपाधियों से अलंकृत हैं। सम्प्रति आप दक्षिणेश्वर के रामकृष्ण संघ द्वारा परिचालित आद्यापीठ, कलकत्ता की संचालिका हैं। समय-समय पर आप विविध नाट्यों की रचना करके आद्यापीठ द्वारा संचालित बालिकाश्रम की

छात्राओं द्वारा उन्हें अभिनीत कराती रहती हैं। वर्तमान में वृद्धावस्था एवं गठिया बात से पीडित होने पर भी आप बालिकाश्रम की व्यवस्था कुशलता से संचालन कर रही हैं। कलकत्ता से प्रकाशित मासिक संस्कृत पत्रिका 'सत्यानन्दम्' की परामर्शदात्री मण्डली की आप सदस्या हैं।

द्वादशभाषण नामक रचना में कथा सेविका के छद्म नाम से आपने पण्डित केदारनाथराय काव्य व्याकरण पुराण तीर्थ महोदय के भाषणों का संकलन किया है। 'गोपीगीतम्' हाल ही में प्रकाशित संस्कृत पद्य रचना है। 'रामकृष्णमनः शिक्षा' आद्यापीठ संघ के संस्थापक श्री मदन्नदाठाकुर कृत 'रामकृष्णमनः शिक्षा' ग्रन्थ के कतिपय पद्यों का संस्कृत श्लोकों में रूपान्तर है।

आपकी तीन संस्कृत नाट्यरचनाएँ एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित है। 'नचिकेतश्चरितम्' आठ दृश्यों में यम एवं नचिकेता से सम्बद्ध कठोपनिषद् के आध्यात्मिक आख्यान को बालोचित रूप में प्रस्तुत करता है। १४ मार्च १९७७ को आकाशवाणी महिला महल (कलकत्ता) द्वारा भी इसके कुछ अंश का अभिनय प्रस्तुत किया जा चुका है। 'महीयसी गार्गी' के पाँच दृश्यों में ब्रह्मवादिनी गार्गी का राजा जनक की सभा में याज्ञवल्क्य के साथ शास्त्रार्थ का नाट्य रूपान्तरण प्रस्तुत किया गया है। शिक्षिका-शिक्षण-महाविद्यालय की अध्यक्षा शान्तिदत्त महोदया के प्रयास से विक्टोरिया महाविद्यालय, कलकत्ता में इसका मंचन हो चुका है। 'विराड्गृहम्' में पाँच दृश्य हैं। अज्ञातवास के समय पाण्डवों एवं द्रौपदी द्वारा छद्म रूप में राजा विराट् के घर सेवा करने की कथा को रोचक ढंग से प्रदर्शित किया गया है। तीनों ही रूपकों को बालोचित रूप देने में नाट्यकर्त्री को सफलता मिली है।

सुश्री भगवती देवी ने पाण्डिचेरी में साध्वीरूप में जीवनयापन किया। आप माताजी के नाम से विख्यात थीं। १८७८ की २१ फरवरी को आपका जन्म पैरिस में हुआ था। आपका जन्म फ्रांस में अवश्य हुआ था लेकिन आपके पूर्वज मिश्र के निवासी थे।[४६] २९ मार्च १९१४ में आप योगिराज अरविन्द से मिलीं तथा उनसे प्रभावित होकर आश्रम में रहने लगीं। आपने श्री अरविन्द आश्रम में ही संस्कृत और बंगला का ज्ञान ग्रहण किया। बचपन से ही आपकी प्रवृत्ति आध्यात्मिक थी। आपका बचपन का नाम मीरा था। बारह वर्ष की अल्पायु में अकेले घूमने निकली हुई आप किसी पेड़ के नीचे बैठकर घण्टों तक ध्यान-मग्न हो जाती थीं।[४७] भाषा तथा साहित्य के अतिरिक्त संगीत व चित्रकला में भी आप पारंगत थी। १७ नवम्बर १९७३ को शाम सात बजकर पच्चीस मिनट पर हृदयगति रुक जाने से आपका देहावसान हुआ था।[४८]

'भविष्य की ओर' आपके द्वारा रचित तीन नाटकों का संग्रह है। इसमें भविष्य की ओर, महान् रहस्य तथा सत्यारोहण तीन नाटक हैं। ये नाटक मूलतः फ्रांसिस भाषा में लिखे गए थे।

रामजी उपाध्याय ने[४९] 'सत्यारोहणम्' नामक रूपक रचना का उल्लेख श्रीमाता के कृतित्व रूप में तथा दिव्यज्योति में भगवतीदेवी के नाम से किया गया है।[५०] वस्तुतः बहुत प्रयास के उपरान्त श्री अरविन्द आश्रम में संस्कृत वेत्ताओं से सम्पर्क करने पर भी श्रीमाता की रचना के रूप में सत्यारोहणम् की जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी है। यदि श्रीमाता संस्कृत भाषा में काव्य-नाट्य आदि की रचना में समर्थ होती तो स्वयं के मूल फ्रांसिसी रूपक का संस्कृत रूपान्तरण करने के स्थान पर नवीन साहित्य सर्जना करती। अस्तु, इस सम्बन्ध में विशेष सामग्री उपलब्ध न हो सकने से हमने आगे इसे अपने अध्ययन का विषय नहीं बनाया है। इस सम्बन्ध में अभी और अधिक शोध की आवश्यकता है।

इन नाट्यकर्त्रियों के अतिरिक्त अरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी में संस्कृत विभाग की प्राध्यापिका **डॉ० चिन्मयी माहेश्वरी** का 'रसगंगाधर का समीक्षात्मक अध्ययन' पी०एच०डी० का प्रकाशित शोधप्रबन्ध है। रागात्मिकाभक्तिः आदि शोध-निबन्धों के अतिरिक्त 'चौरस्यचातुर्यम्' 'भारविः' तथा 'सखा सुदामा' ये तीन बालनाटिकाएँ भी प्रकाश में आयी हैं। 'चौरस्यचातुर्यम्' लोक संस्कृतम् में कार्तिक २०४२ वि०सं० में प्रकाशित हुई है। इसमें एक चोर अपनी सत्यवादिता एवं विलक्षण सूझबूझ के कारण फाँसी के दण्ड से मुक्त कर दिया जाता है। 'भारविः' का प्रकाशन लोकसंस्कृतम् नामक पत्रिका में श्रावण २०४६ वि०सं० को हुआ। भारवि द्वारा क्रोध में पिता की हत्या का विचार तथा पश्चात्ताप से सम्बन्धित एक किंवदन्ती के आधार पर रूपक की कथावस्तु का चयन दो दृश्यों में किया गया है। 'सखा सुदामा' भी लोक संस्कृतम् के फाल्गुन २०४५ के अंक में प्रकाशित हुआ है। इसमें सान्दीपनि गुरु के आश्रम में अध्ययनरत सुदामा एवं कृष्ण के सख्यत्व की कथा से लेकर कृष्ण के द्वारकापुरी के राजा बनने पर सुदामा को ऐश्वर्य प्रदान करने तक की घटनाएँ छः दृश्यों में प्रदर्शित हैं।

पाण्डिचेरी के अरविन्द आश्रम में ही संस्कृत प्राध्यापिका **सुश्री आशा** भी संस्कृत भाषा की उत्कृष्ट गद्यकार एवं नाट्यकार है। अश्रुमुक्ता, कस्त्वम्, हीरकोज्ज्वलबाल्यकालः, शेफाली आदि प्रौढ़ निबन्ध एवं साहित्यिक लघु कथाओं के अतिरिक्त आपकी दो बाल-नाट्य रचनाएँ उपलब्ध हैं। 'महामुनिः दधीचिः' लोक संस्कृतम् के श्रावण २०४५ वि०सं० के अंक में प्रकाशित हुआ है। इसके तीन दृश्यों में इन्द्र द्वारा दधीचि के पास शस्त्रों को न्यास रूप में रखने तथा उनकी अस्थियों से पुनः शस्त्रनिर्माण की कथा को प्रदर्शित किया गया है।

'शठेशाठ्यं समाचरेत्' भी लोकसंस्कृतम् में २०४३ वि० सं० को मार्गशीर्ष माह में प्रकाशित हुआ है। यहाँ भोले ब्राह्मण द्वारा सिंह को पिंजरे से

मुक्त करने, सिंह द्वारा उसका भक्षण करने को तत्पर होने पर शृगाल की चतुरता से पुनः पिंजरे में बन्द करने की कथा नाट्यीकृत की गई है।

पाण्डिचेरी के ही अरविन्दाश्रम की एक अन्य प्राध्यापिका **सुश्री अर्चना** की एक रूपक रचना 'को भेदः' भी लोकसंस्कृतम् में २०४२ वि०सं० के कार्तिक माह में प्रकाशित हुई है। यहाँ दो दृश्यों में देवताओं की उदारता एवं दानवों की स्वार्थपरता प्रदर्शित करके भेद दिखाया गया है। तीनों ही नाट्यकर्त्रियों ने रूपकरचनाएँ बच्चों की संस्कृत-शिक्षा के लिए रची हैं।

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय की सेवानिवृत्त प्रवक्ता श्रीमती भक्तिसुधा मुखोपाध्याय द्वारा रचित 'सुकन्या' एवं 'मदनदहन' दो रूपक रचनाएँ प्रकाशित हैं। इनका प्रकाशन विश्वभाषा नामक संस्कृत पत्रिका के वर्ष ५ तथा ६ अंकों में हुआ है। हैदराबाद की श्रीमती भारती वरखेड़कर द्वारा रचित 'वनदेवता' नामक अतिलघुनाट्य ३० जून १९८५ को संस्कृत साकेत नामक पत्र में प्रकाशित हुआ है। कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली की श्रीमती सुधा सहाय विरचित 'परशुराम प्रतिज्ञा' फरवरी १९८६ के भारतोदयः पत्रिका में प्रकाशित हुई है। इनके अतिरिक्त लखीमपुरखीरी की निर्मला शुक्ला का पारिजातम् के अक्टूबर १९८४ अंक में प्रकाशित यौतुकं पातकं परम्, आचार्य नरेन्द्र देव कन्या महाविद्यालय , कानपुर की संस्कृत विभाग की अध्यक्षा श्रीमती विजयलक्ष्मी त्रिवेदी का 'नचिकेताः कुत्रगतोऽसि' भी स्फुट नाट्य रचनाएँ हैं। इन रूपकों को बालकों को ग्राह्य बनाने में नाट्य कर्त्रियों को पूर्ण सफलता मिली है। इस प्रकार समसामयिक विषयों को लेकर तथा पौराणिक इतिवृत्तों का कायाकल्प करके नाट्यकर्त्रियों ने संस्कृत-प्रसार-प्रचार का कार्य किया है।'

संदर्भ

१. दृश्यश्रव्यत्वभेदेन पुनः काव्यं द्विधामतम्।
दृश्यं तत्राभिनेयम्, तद्रूपारोपात्तु रूपकम्॥ — साहित्यदर्पणः, ६/१

२. नाट्यनिर्णय, पृ० १०८.

३. काव्य के रूप, पृ० १६.

४. रंगदर्शन, पृ० १८७.

५. (क) रूप्यन्ते, अभिनीयन्ते इति रूपाणि नाटकादीनि — नाट्यदर्पण, पृ० २३.
(ख) दशरूपकम्, १/७.

६. This physical action is absolutely demanded on the stage and it will be found that those plays which most frankly embrace the physical action are likely to be most popular.
– The Theory of Drama, P. 72

७. मालविकाग्निमित्रम् १/४.

८. नाट्यशास्त्रम् १/११.
९. काव्यालंकारसूत्रवृत्तिः १/२/३०-३२.
१०. तद्विचित्रं चित्रपटवद् विशेष साकल्यात्_। १/२/३०-३२ का वृत्ति भाग
११. The Theory of Drama, P. 7. 25, 29.
१२. (A) The Art of Dramatist, P.7.
(B) Drama, P.29.
(C) The Art of Drama, P. 157-58.
१३. The Sanskrit drama may legilimately be regarded as the highest product of Indian poetry and as summing up in it self the final conception of literary art achieved by the very self concious creators of Indian literature.

— The Sanskrit Drama, P. 276.

१४. नाट्यकला, पृ० ६.
१५. रंगमंचकला और दृष्टि, पृ० ३८.
१६. जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेवच।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानथर्वणादपि॥ — ना० शा० १/१७.
१७. The Sanskrit Drama, P.13, 15.
१८. नाराजके जनपदे प्रहृष्टनटनर्तकाः — वा० रा० २/९७/१५.
१९. आनर्ताश्च तथा सर्वे नटनर्तक गायिकाः — महाभारत वन पर्व० /१२/१३.
२०. पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः — अष्टाध्यायी, ४/३/११०.
नाटककर्मन्द कृशाश्वादिभिः — वही, ४/३/१११.
२१. महाभाष्य, ३/२/१११.
२२. अर्थशास्त्र, १/४/२८-३१.
२३. पक्षस्य मासस्य वा प्रज्ञाते हनि सरस्वत्याभवने नियुक्तानां नित्यं समाजः। कुशीलवाः चागन्तवः प्रेक्षकमेषां दवुः — कामसूत्र ४/१५.
नाटकाख्यायिकादर्शनम्, कामसूत्र, ३/१५.
२४. संस्कृत के ऐतिहासिक नाटक, पृ० ३८९-३९१.
२५. शीलाविज्जामारुलामोरिकाद्याः काव्यं कर्तुं सन्ति विज्ञाः स्त्रियोऽपि।

— शार्ङ्गधरपद्धति, खण्ड १६३, पृ० २७.

२६. दृष्टिं हे प्रतिवेशिनि क्षणमिहाप्यस्मद् गृहे दास्यसि।
— अभिधावृत्तमातृका, लक्षणावृत्तमूला, पृ० ८१.
२७. दशरूपकावलोक, २/ पृ० १४८.
२८. काव्यप्रकाश, ४/६१.
२९. नीलोत्पलदलश्यामां विज्जकामामजानता।
वृथैव दण्डिना प्रोक्ता सर्वशुक्ला सरस्वती॥
— शार्ङ्गधरपद्धति, खण्ड १८०, पृ० २९.
३०. Sanskrit Drama and Dramaturgy, P. 276.
३१. श्रीदुर्गादास चक्रवर्तितनयेन पत्नीसहायेन श्रीकृष्णनाथकविना विरचितमानन्दलतिका ग्रन्थमधीतवानस्मि। — आनन्दलतिका, १/ पृ० २.

३२. वही।

३३. History of classical Sanskrit Literature, P. 394.

३४. (क) संस्कृत वाङ्मय कोश, पृ० २७.

(ख) History of classical Sanskrit Literature, P. 394.

३५. आधुनिक संस्कृत नाटकः नये तथ्य नया इतिहास, भाग १, पृ० ३२५-२६.

३६. Sharda is mentioned by Salava Narasimha as the authoress of eighteen plays and several poems in Sanskrit and Prakrit.

गद्यपद्यमयैः काव्यैस्साष्टादशनाटकैः।

साकं प्राकृतकाव्यैश्च साहित्यं शारदाभ्यधात्॥

—History of classical sanskrit Literature, P. 705.

३७. आधुनिक संस्कृत साहित्य, पृ० ११७.

३८. वही, पृ० ४३०.

३९. वही, पृ० ४३०.

४०. संस्कृतवाङ्मय कोश, भाग २, पृ० ४९.

४१. Chronicle of Great Women (Indian Literature), May-June-1992, P. 151-164.

४२. दिव्य ज्योति (जनवरी १९८८), पृ० १३, १४.

४३. वनमाला भवालकर के २८.१०.९२ पत्र के आधार पर। यह पत्र इन पंक्तियों की लेखिका के पास उपलब्ध है।

४४. Ambadi Devaki Amma of Queen Mary's College Madras has recently product a musical Radio play Santangopala.

—The Contribution of Kerala to Sanskrit Literature, P. 274.

४५. वीणापाणि का पत्र (१९, अगस्त १९९२) जो शोधकर्त्री के पास उपलब्ध है।

४६. माताजी एक झलक, पृ० ११.

४७. वही, पृ० १२, १९.

४८. वही, पृ० ८९.

४९. आधुनिक संस्कृत नाटक, भाग २, पृ० १२१०.

५० दिव्यज्योतिः (जनवरी १९८८), पृ० १०, ११.

द्वितीय प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं की कथावस्तु का वर्गीकरण व विवरण

विषयगत विशेषताओं के आधार पर हम समस्त नाट्यसाहित्य को चार भागों में विभक्त कर सकते हैं— पौराणिक नाट्य, ऐतिहासिक नाट्य, लोककथापरक तथा उत्पाद्य अथवा कविकल्पनाप्रसूत नाट्य। पौराणिक नाट्य से तात्पर्य उन नाट्यों से है, जिनमें पुरा-कथात्मक इतिवृत्त को उपजीव्य बनाया जाता है किन्तु जिनकी सत्यता के लिए ऐतिहासिक तिथियाँ साक्ष्य रूप से प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है। इसके अतिरिक्त रामायण, महाभारत को भारतीय परम्पराओं में यद्यपि पुराण नहीं माना जाता है, तथापि इनमें पौराणिक तत्त्व के व्याप्त होने से इनसे गृहीत कथाओं को भी पौराणिक कहा जाता है। इसी प्रकार वैदिक आख्यानों व उपाख्यानों पर आधारित रूपकों को भी पौराणिक नाट्य कहना उपयुक्त है।

ऐतिहासिक रूपकों से तात्पर्य उन रूपकों से है, जिनका सम्बन्ध इतिहास पर आधारित इतिवृत्त से है किन्तु इनमें इतिहास के समान न तो तथ्यों एवं आँकड़ों का संग्रह होता है, न विशुद्ध साहित्यिक कृति के समान काल्पनिकता का निवेश। अतः जिनकी कथावस्तु प्रासंगिक या आधिकारिक रूप से ऐतिहासिक होती है; प्रधान या गौणपात्र ऐतिहासिक होते हैं, जैसे —मुद्राराक्षसम् आदि। ऐसे रूपक ऐतिहासिक कहलाते हैं।

लोक कथापरक रूपक वे हैं जिनकी कथाएँ एक के बाद एक पारम्परिक रूप से लोक में सन्तरण करती हुई आश्चर्यात्मक तथा लोकप्रिय तत्वों से अभिवृद्ध होती हैं। इस प्रकार के दन्त कथाओं के रूप में प्रसिद्ध इतिवृत्त को आधार बनाकर प्रणीत रूपक लोककथा परक कहलाते हैं।

काल्पनिक रूपक वे हैं जिनमें वस्तु, पात्र, परिस्थिति आदि प्रायः नाट्यकार की कल्पना द्वारा रचे जाते हैं। आजकल लिखे जा रहे सामाजिक रूपकों को इनके अन्तर्गत रखा जा सकता है क्योंकि ऐसे रूपकों में अधिकतर समकालीन धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि समस्याओं पर आधारित कथानक को प्रदर्शित किया जाता है।

प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्र में प्रख्यात, उत्पाद्य तथा मिश्र भेद से इतिवृत्त को तीन प्रकार का बताया गया है।[१] इतिहास आदि से लिया गया इतिवृत्त प्रख्यात कहलाता है। उपर्युक्त पौराणिक तथा ऐतिहासिक नाट्यों को इसी श्रेणी में रखा जा सकता है।

कविकल्पना से सृष्ट इतिवृत्त को उत्पाद्य कहा गया है। प्रख्यात व उत्पाद्य के मिश्रण से युक्त कथावस्तु को मिश्र कहते हैं।

इस प्रकाश में अर्वाचीन संस्कृत नाट्यकर्त्रियों की नाट्यवस्तु का विशद परिचय देते हुए उसका उपर्युक्त आधार पर विश्लेषण-वर्गीकरण किया जायेगा।

डॉ० रमा चौधुरी ने पच्चीस रूपकों की रचना की है। स्रोत की दृष्टि से रमा चौधुरी के रूपकों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है - उत्पाद्य एवं प्रख्यात। देशदीपम्, पल्लीकमलम्, मेघमेदुरमेदनीयम्, संसारामृतम् तथा नगरनूपुरम् नामक नाट्यरचनाएँ कविकल्पना प्रसूत होने से उत्पाद्य कोटि की हैं। अवशिष्ट रचनाएँ प्रख्यात कोटि की हैं जो ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन को आधार बनाकर लिखी गई हैं। इनमें यतीन्द्र -यतीन्द्रम्, निवेदित - निवेदितम्, युगजीवनम्, भारतपथिकम्, भारतार्चायम्, अग्निवीणानाटकम्, गणदेवतानाटकम्, भारततातम्, प्रसन्नप्रसादम् तथां लेनिनविजयम् - उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी के नेताओं, कवियों एवं युगपुरुषों के जीवन-चरित्र पर आधारित हैं। रूपकों में स्थान-स्थान पर तिथियों के साक्ष्य भी हैं जो इनकी ऐतिहासिकता की पुष्टि करते हैं। शंकर-शंकरम्, रामचरितमानसम्, तानतनुः, चैतन्य - चैतन्यम् भारतवीरम् में क्रमशः ८वीं शती के शंकराचार्य तथा १६वीं शती के तुलसी, तानसेन तथा चैतन्य महाप्रभु के अस्तित्व के लिए भी ऐतिहासिक साक्ष्य विद्यमान हैं परन्तु कहीं-कहीं इनके चरित्रों से सम्बद्ध किंवदन्तियों का भी आश्रय लिया गया है। प्रमुखतः इन रचनाओं का स्रोत इतिहास ही है।

'कविकुलकोकिलम्' में दस दृश्य हैं। प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में अध्ययन से पराङ्मुख पाठशाला से निकाले गए कालिदास प्रकृति माता की सम्पत्ति में सबका समान अधिकार मानकर आनन्दित होते हैं। तृतीय दृश्य में पिता की मृत्यु के उपरान्त परिवार के भरण पोषण का भार स्वयं पर आ जाने से कालिदास आजीविका के लिए काष्ठ विक्रेता के रूप में उपहास का पात्र बनते हैं। दो युवक परिहास में दरिद्रता-निवारण के लिए राजकन्या से विवाह का सुझाव देते हैं। चतुर्थ दृश्य में राजकन्या विद्यावती से पराजित एवं अपमानित ज्ञान मार्तण्ड आदि कुमार मूर्ख से विद्यावती का विवाह कराने को कटिबद्ध हैं। पंचम दृश्य में कालिदास से मिलते हैं, जो उसी डाल पर बैठे थे जिसका मूल काट रहे थे। षष्ठ दृश्यों में वे मूकशास्त्रार्थ में विजयी कालिदास विद्यावती से पाणिग्रहण करते हैं। सप्तम दृश्य में 'उष्ट्र' के स्थान पर कालिदास से 'उट्र' उच्चारण सुनकर विद्यावती उन्हें अपमानित कर भवन से निकाल देती है। आठवें एवं नवम दृश्य में कालिदास सरस्वती को प्रसन्न कर कविकुलकोकिल बनने का आशीर्वाद प्राप्त कर विद्यावती के राजप्रासाद में पहुँचते हैं। परितप्त विद्यावती कालिदास की

विद्वत्तापूर्ण वाणी सुनकर धन्य हो जाती है। दशम दृश्य में अपने काव्योत्कर्ष के कारण कालिदास विक्रमादित्य का आश्रय प्राप्त करते हैं तथा कविकुलकोकिल एवं कविसार्वभौम की उपाधि प्राप्त करते हैं।

देशदीपम् दस दृश्यों का नाटक है। प्रथम दृश्य एवं द्वितीय दृश्य में कलकत्ता में अध्ययनरत चम्पकवदन एवं उसका मित्र अभ्रप्रतिम गाँव आकर अपने माता-पिता आराधना, ब्रह्मबल एवं बहिन पंकजनयना से मिलते हैं तथा गाँव में एक सभा का आयोजन कर नर नारियों को देशसेवा के लिए प्रेरित करने की योजना बनाते हैं। तृतीय दृश्य में पल्लीप्रान्तर् में आयोजित सभा में देशवासियों का आह्वान करने पर धनी व गर्वित विपुलविक्रम उनका उपहास करता है। चतुर्थ दृश्य में जोयान संगठन में भर्ती होकर देशसेवा करने की पुत्र की इच्छा को जानकर माँ विह्वल हृदय से अनुमति देती है। पंचम दृश्य में पंकजनयना से विवाह का इच्छुक विपुलविक्रम जब उसके घर पहुँचता है तो वह उसका घृणापूर्वक प्रत्याख्यान कर देती है। षष्ठ दृश्य में पंकजनयना घायल सैनिकों की शुश्रूषा के लिए नर्स के रूप में युद्ध क्षेत्र में जाती है। सप्तम दृश्य में कुक्कुट और पेचक की सड़ी मछली व सड़े फल बेचने की योजना ध्वस्त हो जाती है। अष्टम व नवम दृश्य में जहाँगीर व चम्पक वदन अपने शिविर के पास शत्रु के गुप्तचर को देखकर उसे मार डालते हैं तथा चम्पकवदन युद्ध में भारतीय पताका फहराता हुआ घायल हो जाता है तथा चिकित्सा के लिए भारतीय शिविर में लाया गया मृत्यु का वरण करता है। दशम दृश्य में पुत्र के वीरगति का समाचार पाने से दुःखी माता-पिता पुत्र के 'देश-दीप' बन जाने से सन्तुष्ट भी होते हैं।

निवेदित-निवेदितम् में बारह दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में लन्दन में स्वामी विवेकानन्द की तेजस्विता से प्रभावित मार्गरिट् द्वितीय दृश्य में जिज्ञासा पूर्ण प्रश्न करके उनकी परीक्षा लेती है। विवेकानन्द धैर्यपूर्वक उसके प्रश्नों का समाधान करते हैं। तृतीय दृश्य में विवेकानन्द की शिष्या बनने की इच्छुक मार्गरिट् चतुर्थ दृश्य में विवेकानन्द के आह्वान पर भारत जाने का निश्चय करती है। पंचम दृश्य में मार्गरिट् मिस्म्याक्लेड् तथा मिसेस् ओलिवुल् के साथ भारत आकर रामकृष्ण परमहंस की धर्मपत्नी शारदा का दर्शन-लाभ करती हैं। षष्ठ दृश्य में विवेकानन्द मार्गरिट् को दीक्षा देकर निवेदिता नाम से अभिहित करते हैं। सप्तम व अष्टम दृश्य में प्लेग रोग से ग्रस्त क्षेत्र में सेवा के लिए गठित समिति की सचिव रूप में निवेदिता रोगोन्मूलन के लिए टीका व चिकित्सा आदि की व्यवस्था करती है। नवम दृश्य में वे 'निवेदिता बालिका विद्यालय' की स्थापना करती हैं। दशम दृश्य में उद्विग्न, व्याकुल निवेदिता को सहसा प्रकट होकर विवेकानन्द सान्त्वना देते हैं। एकादश एवं द्वादश दृश्य में निवेदिता की कीर्ति सुनकर जगदीशचन्द्र वसु एवं उनकी पत्नी दार्जिलिंग में अपने आवास पर

निवेदिता को आमन्त्रित करते हैं जहाँ अस्वस्थ होकर वे महासमाधि में विलीन होने को तत्पर हो जाती हैं।

पल्लीकमलम् नौ दृश्यों का रूपक है। प्रथम दृश्य में प्रकृति के सौन्दर्य पर मुग्ध कमलकलिका का काव्यमय जीवन उसकी माँ को अच्छा नहीं लगता। माँ की डाँट-डपट एवं सौतेले व्यवहार से ऐसा लगता है कि कमलकलिका उसकी पुत्री नहीं है। द्वितीय दृश्य में नदी में बही कमलकलिका की साड़ी रूपकुमार उसे लाकर देता है तो दोनों प्रथम दर्शन में ही परस्पर अनुरक्त हो जाते हैं। तृतीय दृश्य एवं चतुर्थ दृश्य में कमलकलिका के विवाह के लिए प्रस्तावित राजपुत्र मार्तण्ड के विवाह सम्बन्ध को कमलकलिका अस्वीकार कर देती है। माँ तरंगिणी उसे भला बुरा कहती है। पंचम दृश्य में कमलकलिका रूपकुमार से अभिसरण हेतु मध्यरात्रि में नदी तट पर पहुँचती है। रूपकुमार अपना परिचय देता है। सात वर्ष की अवस्था से वह अनाथ है। मयूखमालिका नौका ही उसका सर्वस्व है। कमलकलिका उसके सानिध्य में स्वयं को धन्य मानती है। रूपकुमार उसे नदी तट पर उतार देता है। वहाँ मार्तण्ड कमलकलिका को धमकाता है। षष्ठ दृश्य में कर्कट एवं मर्कट हास-परिहास में मार्तण्ड की प्रतिहिंसा की सूचना देते हैं। सप्तम एवं अष्टम दृश्य में कर न देने के मिथ्या आरोप में बन्दी बनाये गए कमलकलिका के पिता द्वारा एक भेद खुलता है कि कमलकलिका राजा प्रभंजन की पुत्री तथा मार्तण्ड की बहिन है। प्रभंजन उन्हें मुक्त कर देता है। नवम दृश्य में कमलकलिका रूपकुमार के सानिध्य का वरण करती है।

मेघमेदुरमेदनीयम् नौ दृश्यों में विभक्त रूपक है। प्रथम दृश्य में नदी के तीव्र प्रवाह में डूबती हुई कमलकलिका की रक्षा यक्ष अरुणकिरण करता है। दोनों अनुरागबद्ध हो जाते हैं। द्वितीय दृश्य में प्रचण्डप्रताप के द्वारा अशिष्टता का व्यवहार करने पर कमलकलिका उसे फटकारती है तथा अरुण कुमार उसे धमकाता है। तृतीय दृश्य में कमलकलिका से विवाह का प्रस्ताव लेकर प्रचण्ड प्रताप उसके माता-पिता के पास जाता है। अरुणकिरण के साथ उपस्थित कलमकलिका घृणापूर्वक उसका प्रत्याख्यान कर देती है। अरुणकिरण के साथ उसका विवाह निश्चित हो जाता है। चतुर्थ दृश्य में प्रचण्डप्रताप अरुणकिरण द्वारा रक्षित कुबेर के मायामदिरा नामक पद्मवन में हाथियों का झुण्ड छोड़ देता है। विवाहोपरान्त कमलकलिका के साथ एक कुंज में स्थित अरुणकिरण सरोवर की रक्षा नहीं कर पाता। पंचम दृश्य में समय से पुष्प न मिल पाने से कुबेर अरुणकिरण को एक वर्ष के लिए अलकापुरी से निष्कासित कर देता है। षष्ठ

एवं सप्तम दृश्य में निर्वासित यक्ष आठ मास का विरह भोगने के पश्चात् वर्षा-काल में मेघ से कमलकलिका के पास सन्देश भेजता है। अष्टम दृश्य में विरहिणी यक्षिणी अरुणकिरण का सन्देश पाकर प्रसन्न होती है। नवम दृश्य में अरुणकिरण का अलकापुरी आने पर नायिका कमलकलिका से शाश्वत् मिलन होता है।

यतीन्द्र-यतीन्द्रम् को बारह दृश्यों में विभक्त किया गया है। प्रथम दृश्य में स्वप्न में दिव्याकृति द्वारा पुत्र की याचना करने से विह्वल माँ को यतीन्द्र धैर्य बँधाते हैं। द्वितीय दृश्य में यतीन्द्र के पिता उच्च शिक्षा के लिए उन्हें विदेश भेजने को तैयार हो जाते हैं। चतुर्थ दृश्य में लन्दन में मि० राइल्याण्ड्स उन्हें लन्दन-विश्वविद्यालय द्वारा पीएच्०डी० उपाधि के आवेदन पत्र को स्वीकार करने का शुभ समाचार देते हैं। चतुर्थ दृश्य में यतीन्द्र 'इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी' में संस्कृत-पालि विभाग के प्रधान गवेषक तथा लन्दन विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में अध्यापक नियुक्त होते हैं। पंचम दृश्य में यतीन्द्र लन्दन के भारतीय भोजनागार काहिनूर में रमा को प्रथम बार देखकर ही आकृष्ट हो जाते हैं। षष्ठ दृश्य में स्वदेश आने पर भरी साहित्य सभा के मध्य अपनी गृहधात्री व गृह परिष्कारक से यतीन्द्र स्नेह एवं श्रद्धा से मिलते हैं। सप्तम, अष्टम नवम एवं दशम दृश्य में यतीन्द्र प्राच्यवाणी संस्था की स्थापना, राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, कलकत्ता के अध्यक्ष तथा राजकीय बंगीय संस्कृत शिक्षा परिषद् के सचिव पद को अलंकृत करके संस्कृत पठन-पाठन के लिए लोगों को प्रेरित करते हैं तथा श्रेष्ठ नाट्यकार के रूप में ख्यातिलाभ करते हैं। एकादश एवं द्वादश दृश्य में अस्वस्थ यतीन्द्र आद्याशक्ति महिला शिल्पाश्रम द्वारा आयोजित उत्सव की समाप्ति पर भाषण में मातृ-महिमा का गान करते हुए समाधिस्थ हो जाते हैं।

युगजीवनम् के दश दृश्यों में स्वामी रामकृष्णपरमहंस का चरित्र वर्णन है। प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में मातृदर्शन के लिए व्याकुल गदाधर को मथुरानाथ देव-सेवा का अधिकार सौपते हैं। तृतीय दृश्य में भावाविष्ट गदाधर द्वारा देवविग्रह को अपना उच्छिष्ट खिलाता देखकर उद्विग्न मथुरानाथ रानी रासमणि से उनकी शिकायत करते हैं। गदाधर की शिशुवत् निश्छल क्रीडाओं को रानी अनुचित नहीं मानती। चतुर्थ एवं पंचम दृश्य में गुरु रूप में ब्राह्मणी भैरवी पण्डित समाज में प्रमाण सहित गदाधर का अवतारत्व सिद्ध करती है। षष्ठ दृश्य में स्वामी तोतापुरी दीक्षा देकर गदाधर को रामकृष्ण नाम से अभिहित करते हैं। सप्तम दृश्य में रामकृष्ण अपनी पत्नी को मातृस्वरूप मानकर षोडशोपचार

विधि से उनका पूजन करते हैं। अष्टम दृश्य एवं नवम दृश्य में रामकृष्ण नरेन्द्र को उत्तम शिष्य मानकर अपनी समस्त अलौकिक शक्ति का आधान नरेन्द्र में कर उन्हें जगकल्याण के लिए प्रेरित कर अपनी लौकिक लीला संवरण की सूचना शारदा को देते हैं। रामकृष्णपरमहंस कातर शारदा को वैधव्य वेशधारण करने से मना करते हैं । शारदा उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर लेती है।

शंकर-शंकरम् में चौदह दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में महादेव की कृपा से शिवगुरु एवं विशिष्टा को अल्पायु एवं सर्वज्ञ पुत्र की प्राप्ति होती है। उसका नाम शंकर रखा जाता है। द्वितीय दृश्य में अष्टवर्षीय शंकर द्वारा प्रव्रज्या की अनुमति माँगने पर मोह-ग्रस्त माँ इस शर्त पर अनुमति देती है कि जब भी वह याद करें तो शंकर तत्काल उपस्थित हो जाएँ। तृतीय दृश्य में शंकर गोविन्दपाद से ब्रह्मज्ञान की दीक्षा लेते हैं। चतुर्थ दृश्य में विधवा रूप धारिणी माया तथा चाण्डाल से उन्हें ब्रह्म शक्ति का बोध होता है। पंचम एवं षष्ठ दृश्य से शंकर बदरिकाश्रम में ब्रह्मसूत्र भाष्य एवं उपनिषद् भाष्य समाप्त कर गोमुखी तीर्थ पहुँचते हैं। सप्तम दृश्य में वादविवाद से सन्तुष्ट वृद्ध ब्राह्मण रूपधारी व्यास से ज्ञात होता है कि शंकर की आयु सोलह वर्ष और बढ़ गई है। आठवें दृश्य में बौद्धश्रमण की हत्या के प्रायश्चित स्वरूप चितारोहण को तत्पर कुमारिल भट्ट शास्त्रार्थ के इच्छुक शंकर को मण्डन मिश्र के पास भेजते हैं। नवम दृश्य में शंकर को हराने में मण्डन मिश्र के असमर्थ होने पर उनकी पत्नी उभय-भारती शंकर से शास्त्रार्थ कर कामशास्त्र विषयक प्रश्न करती है जिसके उत्तर के लिए शंकर एक माह की अवधि मांगते हैं। दशम दृश्य में शंकर के शिष्य कापालिक को मारकर उनकी रक्षा करते हैं। एकादश, द्वादश एवं त्रयोदश दृश्य में शंकर शारदापीठ कश्मीर में पण्डितों पर कामरूप में तान्त्रिकों पर तथा नेपाल के पशुपति मन्दिर में वामाचारी बौद्धों पर विजय प्राप्त करते हैं। चतुर्दश दृश्य में केदारनाथ में ३२ वर्ष की अपनी अवस्था पूरी होने पर, अपनी उपलब्धियों की चर्चा करते हुए शारदामठ में साम, गोवर्धनमठ में ऋक्, ज्योतिर्मठ में अथर्व और शृंगेरीमठ में यजुर्वेद के अध्ययन-अध्यापन की विशेष व्यवस्था का आदेश देकर शंकर ब्रह्मलीन हो जाते हैं।

भारताचार्यम् में १२ दृश्य हैं। भारत के द्वितीय राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का दर्शन की ओर प्रवृत्त होना, दर्शन का सर्वोच्च विद्वान् बनना भारत का राष्ट्रपति बनकर यशस्वी होना आदि घटनाएँ दिखाई गई हैं।

भारततातम् में छह अंक हैं। प्रथम दृश्य में गान्धी जी द्वारा किया गया हरिजनोद्धार, द्वितीय दृश्य में साम्प्रदायिक सद्भाव, तृतीय दृश्य में सुभाषचन्द्र

बोस से साक्षात्कार तथा चतुर्थ दृश्य में देशबन्धु चितरंजनदास से गान्धी जी की भेंट को प्रदर्शित किया गया है। पंचम दृश्य लवण सत्याग्रह तथा छठा दृश्य नोआखाली आन्दोलन से सम्बद्ध है।

भारतपथिकम् में पाँच दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में राजाराममोहनराय के समाजोद्धार प्रयास के अन्तर्गत सतीप्रथा के उन्मूलन का प्रयास, द्वितीय दृश्य में लोगों को अंग्रेजी पढ़ने पढ़ाने की प्रेरणा प्रदान करना, तृतीय दृश्य में ब्रह्मसमाज की स्थापना, चतुर्थ दृश्य में विदेश यात्रा तथा पंचम में ब्रिस्टल में उनके स्वर्गवास की घटना प्रदर्शित की गई है।

चैतन्य-चैतन्यम् में पाँच दृश्य हैं। इनमें श्री चैतन्य की चारू चरितावली के अन्तर्गत उनके आविर्भाव, रासलीला, दिग्विजय और महासमाधि की प्रमुख घटनाएँ हैं।

रसमपरासमणिः नाटक में विधवा रानी रासमणि अत्याचारी नीलहे गोरण्ड सैनिकों से अकेले उत्साहपूर्वक अपनी प्रजा की रक्षा करती है। एक बार उसने मत्त गोरण्ड सैनिकों द्वारा अपनी राजधानी पर आक्रमण करने पर उन्हें परास्त किया। दक्षिणेश्वर में १२ मन्दिरों का निर्माण कराकर रामकृष्ण परमहंस को प्रधान पुजारी बनाती है। लोकहित के कार्यों में संलग्न अन्त में महासमाधि प्राप्त करती है। इसमें आठ दृश्य हैं।

रामचरितमानसम् में तुलसीदास की पत्नी के प्रति प्रगाढ़ आसक्ति, पत्नी द्वारा भर्त्सना किए जाने पर गृहत्याग, तपस्या एवं भक्ति द्वारा रामचन्द्र का दर्शन तथा रामचरितमानस की रचना आदि की घटनाएँ बारह दृश्यों में प्रदर्शित हैं।

नगरनूपुरम में मेखला नामक अपूर्व सुन्दरी गणिका अहर्निश अनेक कार्यों में संलग्न रहती है। सारा समाज उसके नृत्य एवं गीत से चमत्कृत होता है। अन्त में उसे अपने इस जीवन से वितृष्णा हो जाती है। हरिद्वार के एक महात्मा से उसे जीवन की वास्तविकता का ज्ञान होता है तथा शान्ति के लिए वह संन्यासिनी बन जाती है। इस रूपक में दश दृश्य हैं।

संसारामृतम् रूपक सात दृश्यों में निबद्ध है। दरिद्र केलि परिवार की एक कन्या को मयूर नामक व्यक्ति प्रेम करके धोखा देता है। उस पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ता है। कालान्तर में वह उसे पति रूप में प्राप्त होता है। मयूर अत्यन्त समृद्ध होते हुए भी अनेक चारित्रिक दुर्बलताओं से युक्त है किन्तु वह कन्या उसके चरित्र को सुधारने में सफल होती है।

अभेदानन्दम् के १२ दृश्यों में रामकृष्ण के प्रमुख शिष्य स्वामी अभेदानन्द के जीवन की प्रमुख घटनाएँ हैं। अभेदानन्द द्वारा रामकृष्ण वेदान्त मठ की स्थापना, जागरणमयी आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ, संन्यास लेना तथा स्वदेश एवं विदेश में अपने वर्चस्व को बढ़ाने का वर्णन है।

'कविकुलकमलम्' में आठ दृश्य हैं। इनमें घटकर्पर, विद्यावारिधि नामक कवियों की कालिदास से प्रतिद्वन्द्विता, कालिदास के प्राणहरण की योजना तथा पश्चात्ताप स्वरूप उनके प्राणों की रक्षा आदि घटनाएँ हैं। अन्तिम दृश्य में कुमार सम्भव की रचना करके उसे विक्रमादित्य को उपहार देने पर वे उनके प्रिय पात्र बनते हैं।

अग्निवीणानाटकम् में बांगलादेश के महाकवि नजरुल इस्लाम की जीवन गाथा प्रदर्शित की गई है।

गणदेवतानाटकम् में बंगाल के प्रख्यात उपन्यासकार ताराशंकर वन्द्योपाध्याय के जीवनचरित को आधार बनाया गया है।

प्रसन्न-प्रसादम् में दस दृश्य हैं। बंगाल के विश्रुतगायक रामप्रसाद समुचित साधना करके जगदीश्वरी अन्नपूर्णा का साक्षात्कार करते हैं। प्रतिस्पर्धा में वह महान् गायक अंजु गोस्वामी को विजित करते हैं। महाराजा रामकृष्ण उनको सम्मानित करते हैं। अन्त में माँ जगदीश्वरी से उनका तादात्म्य हो जाता है।

इन रूपकों के अतिरिक्त **लेनिन-विजयम्** रूस के साम्यवादी नेता लेनिन के जीवनचरित पर आधारित है **भारतवीरम्** में शिवाजी की चरित गाथा तथा **तानतनुः** में संगीतसम्राट् तानसेन का जीवन नाट्य रूप में उपनिबद्ध है।

श्रीमती लीलाराव ने चौबीस लघु रूपकों का प्रणयन किया है। इनके अधिकांश रूपकों की कथावस्तु का आधार पण्डिता क्षमाराव विरचित काव्य-कथाएँ हैं। इतिवृत्त के स्रोत की दृष्टि से इनकी कथाओं को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम वर्ग की कथाएँ उत्पाद्य कोटि की हैं। इनमें व्यक्ति एवं समाज के दोषों की ओर संकेत किया गया है। कथापंचकम् एवं कथामुक्तावली से ली गईं कथाएँ इसी प्रकार की हैं। इन कथाओं के आधार पर लीलाराव ने अनूपः, असूयिनी, कृपाणिका, क्षणिकविभ्रमः, गणेशचतुर्थी, गिरिजायाः प्रतिज्ञा, मायाजालम्, मिथ्याग्रहणम्, बालविधवा, वृत्तशंसिच्छत्रम्, हरिसिंहः, होलिकोत्सवम् की रचना की है। द्वितीय वर्ग की कथाएँ भारतीय स्वातन्त्र्यसमर को ध्यान में रखकर लिखी गई हैं लेकिन पात्र स्थान आदि सभी कल्पित हैं। इस श्रेणी में पण्डिता क्षमाराव की 'ग्रामज्योतिः' की कथाएँ आयेंगी। इन कथाओं के आधार पर लीलाराव ने कटुविपाकः, वीरभा एवं स्वर्णपुरकृषीवलाः लघुनाट्यों का प्रणयन किया है। तीसरे वर्ग की कथाएँ मिश्रकोटि की हैं। इनमें पात्र तथा घटनाएँ तो ऐतिहासिक हैं लेकिन नायक के जीवन में अलौकिकता का सन्निवेश करने के लिए किंवदन्तियों का सहारा लिया गया है। पण्डिता क्षमाराव की ऐसी रचनाओं को आधार बनाकर लीलाराव ने तुकारामचरितम्, मीराचरितम्, विठालाचरितम्, ज्ञानेश्वरचरितम् तथा परमभक्त

शिवाजिराट्-नाट्यों की रचना की है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक की कथावस्तु नारकण्डाश्रमः का मूल है। तुलाचलाधिरोहणम्, बाल्मीकि, कालिदास एवं भवभूति के श्लोकों को लेकर हिमालय की प्रशंसा प्रस्तुत करने वाला नाट्य है, जो प्रस्तुति में सर्वथा मौलिक लगता है। अतः यह भी मिश्र श्रेणी की रचना है। जयन्तुकुमानीयाः १९६२ के चीन-भारत युद्ध की पृष्ठभूमि पर रचा गया नाट्य है। इसके सभी पात्र कल्पित हैं। अतः कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से यह रचना उत्पाद्य श्रेणी की है।

पण्डिता क्षमाराव की 'आत्मनिर्वासनम्' कथा को उपजीव्य बनाकर लिखा गया **अनूपः** नामक एकांकी तीन दृश्यों में विभक्त है। प्रथम दृश्य में अनूप का मित्र गुणे मीरा को उसके पति के पास ले जाने आता है। मीरा उसे नर्तकी के साथ भागा हुआ विचार कर खिन्न है। गुणे जब अनूप को निर्दोष सिद्ध करने के लिए अनेक तर्क प्रस्तुत करता है तो मीरा साथ चलने को तैयार हो जाती है। द्वितीय दृश्य में रेलगाड़ीं में मीरा तथा गुणे अनूप से सम्बद्ध बातों का स्मरण करते हैं। मीरा को सर्वाधिक दुःख इस बात का है कि पत्नी तथा बच्चों से अपार स्नेह करने वाला अनूप अचानक ही उनकी उपेक्षा कर उन्हें परित्याग कर चला गया। तृतीय दृश्य में कुष्ठालय में मरणासन्न अनूप मीरा से क्षमायाचना करके सदैव के लिए आँखें बन्द कर लेता है। गुणे बताता है कि अनूप ने शपथपूर्वक कुष्ठ रोग के विषय में घरवालों को सूचित करने से उसे रोक दिया था। मीरा के रुदन और पश्चात्ताप के साथ एकांकी समाप्त हो जाता है।

अभिनय की दृष्टि से लीलाराव ने यहाँ कुछ परिवर्तन भी किया है। मूलकथा में रेलयान में मीरा अनूप को स्वप्न में देखकर घबराकर उठ बैठती है तथा उसका विचार करने लगती है।[२] उक्त घटना लीलाराव ने स्वप्न के माध्यम से न दिखाकर मीरा तथा गुणे के वार्तालाप के माध्यम से प्रदर्शित कर अपने नाट्य-कौशल का परिचय दिया है।[३] इसी दृश्य में गुणे के साथ वार्तालाप में मीरा अपने तथा अनूप के वैवाहिक सम्बन्धों की चर्चा करती है[४] जबकि मूलकथा में यह केवल मीरा द्वारा किया गया आत्मचिन्तन ही है।[५]

असूयिनी निरपत्यता की समस्या को लेकर लिखा गया पं० क्षमाराव विरचित 'असूयिनी' नामक मूलकथा[६] का चार दृश्यों में किया गया नाट्य रूपान्तरण है। प्रथम दृश्य में रेवा की सास गोपिका अपने पुत्र का दूसरा विवाह करना चाहती है क्योंकि रेवा के बच्चे जीवित नहीं रहते हैं। द्वितीय दृश्य में रेवा सन्तानहीनता के कारण अपने प्रभूत धन-धान्य को व्यर्थ मानती है। उसकी सखी दुर्गा दुःखी है कि सन्तान सुख होने पर भी दरिद्रता के कारण उनका समुचित पालन-पोषण नहीं कर पा रही है । तृतीय दृश्य में रेवा का पति सुपर्ण माँ को पौत्र सुख प्रदान करने के लिए दूसरा विवाह करने को तैयार है। निरपत्यता से दुःखी रेवा सन्तान-प्राप्ति के लिए नरबलि देने को तैयार होती है। वह दुर्गा के

बच्चों के लिए लड्डू बनाते समय उनमें धतूरा मिला देती है। चतुर्थ दृश्य में दुर्गा को आने में विलम्ब होता देख जब रेवा दूध और लड्डू लेकर घर पहुँचती है तब वहाँ उसके दोनों पुत्रों को मरणासन्न पाती है। दुर्गा के क्रन्दन को देखकर पश्चात्ताप करती हुई रेवा उन दोनों बच्चों को अपनी असूयिनी दृष्टि से मृत मानती है। उपसंहार में धीवर कन्याओं के वार्तालाप से ज्ञात होता है कि समुचित चिकित्सा से दुर्गा के दोनों पुत्र स्वस्थ हो गये हैं। पश्चात्ताप के बाद रेवा को भी पुत्र-प्राप्ति हो जाती है।

कटुविपाकः में पं० क्षमाराव की इसी नाम की कथा को उपजीव्य बनाया गया है। प्रस्तुत रूपक का विभाजन दो दृश्यों में किया गया है। प्रथम दृश्य में ग्रामाधिप का पुत्र दाण्डियात्रा में सत्याग्रहियों का साथ देने के कारण बन्दी बना लिया जाता है। पत्नी वीरभा तथा पुत्री रेवा ग्रामाधिप से छिपाकर खादी के वस्त्रों का निर्माण करती हैं एवं सत्याग्रहियों के शिविर में भेजती हैं। ग्रामाधिप की अनुपस्थिति में माँ को समझा बुझा कर रेवा सत्याग्रहियों की सेवा के लिए शिविर में चली जाती है।

द्वितीय दृश्य में ग्रामाधिप के आदेश से सत्याग्रहियों एवं महिलाओं के जुलूस पर लाठी प्रहार होने से रेवा भी क्षतविक्षत हो जाती है। सत्याग्रहियों का साथ देने के कारण पुत्री के प्रति क्रुद्ध ग्रामाधिप पत्नी को उसे देखने जाने के लिये मना करता है किन्तु वह रेवा के पास चली जाती है और खिन्न ग्रामाधिप अपनी जीवन-यात्रा में एकाकी रह जाता है।

कपोतालयः हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ नाट्यकार श्री जगदीश चन्द्र माथुर द्वारा रचित 'कबूतरखाना' नामक प्रहसन का दो दृश्यों में किया गया संस्कृत नाट्य रूपान्तरण है। प्रथम दृश्य में रत्न ने कबूतर के पिंजरे की आकृति का एक पत्र-कोश बनवाया है, जिसका प्रथम खाना चुकाए जाने योग्य हिसाब के पत्रों के लिए, द्वितीय खाना दिए हुए ऋण के कागजों के लिए एवं तृतीय खाना बैंक, बीमा आदि के निधि-पत्रों को रखने के लिए है। उसकी पत्नी कंचना यथास्थान पत्रों को रख देती है। अधिकांश कागज चुकाए जाने योग्य निकलते हैं। थोड़ी नोंक-झोंक के बाद अपनी वैवाहिक वर्णग्रन्थि के उपलक्ष्य में वे दोनों चलचित्र देखने चले जाते हैं।

द्वितीय दृश्य में चलचित्र देखकर वापस आने पर वे लुटा हुआ अपना घर देखकर दुःखी होते हैं किन्तु कपोतालय को देखकर रत्न प्रसन्न होता है, जिसमें सभी कागज सुरक्षित हैं। उसे विश्वास है कि बीमा-कार्यालय से उन्हें समस्त नष्ट वस्तुओं का मूल्य प्राप्त हो जायेगा।

द्वितीय दृश्य नाट्यकर्त्री की मौलिक कल्पना है। मूल प्रहसन में दम्पती के भ्रमणार्थ निकलने के साथ ही रूपक समाप्त हो जाता है[७] लेकिन यहाँ उस

कपोतालय का महत्व प्रदर्शित करने के लिए द्वितीय दृश्य की रचना की गई है, जिससे आधुनिक युग में बीमा कराने का महत्व प्रतिपादित हो जाता है।[८]

कृपाणिका पं० क्षमाराव विरचित 'तापसस्य पारितोषिकम्' की कथा को उपजीव्य बनाकर लिखित दो दृश्य में विभक्त लघु-नाट्य है। प्रथम दृश्य में उर्मिला अपने पति की असाध्य बीमारी से चिन्तित है। वैद्य के अनुसार आज की रात्रि सकुशल व्यतीत हो जाने पर ही रोगी का बचना सम्भव है।

द्वितीय दृश्य में पति के जीवन के प्रति निराश उर्मिला एक साधु द्वारा दी गई कृपाणिका से आत्महत्या करना चाहती है तभी संन्यासी प्रगट हो उसे इस घृणित कार्य से रोकता है तथा उसके पातिव्रत से प्रभावित होता है और संन्यासी के आशीर्वाद से प्रातःकाल तक स्वस्थ हो जाता है।

क्षणिक विभ्रमः नामक एक दृश्यात्मक एकांकी की कथा का आधार पं० क्षमाराव की इसी नाम की कथा है। सुनीति का पुत्र गोविन्द जेल से छूटकर आने पर अपने साथ एक बन्दी साथी को भी लाया है। उसे घर से दूर बैठा कर माँ से उसे अपने साथ रखने की अनुमति माँगता है। पुत्र हठ से बाध्य होकर सुनीति उसे गौशाला में स्थान देती है। वहाँ उसका भेद खुलता है कि वह गोविन्द का पिता है, जो आजीविका की खोज में निकला था तथा रेल के डिब्बे में क्षणिक लोभवश एक मृत व्यक्ति से वस्त्र विनिमय कर लेता है। अपना परिचय सूचक पत्र भी शव के कुर्ते की जेब में रख देता है। परिणामस्वरूप हत्या के अभियोग में गोविन्द के पिता को कारावास का दण्ड मिलता है। पिता को अचानक देखकर माँ प्रसन्न होगी, यह सोचकर गोविन्द उसे छिपा देता है। मन्दिर समय से न पहुँचने के कारण सुनीति पुत्र को डाँटती है तथा उसके स्नेही बन्दी साथी को भी अपशब्द कहती है, जिसे सुनकर गोविन्द का पिता पुनः घर छोड़कर चला जाता है। बाद में गोविन्द तथा रामदास उसे खोजते हैं और न मिलने पर दुःखी होते हैं।

गणेशचतुर्थी रूपक का उपजीव्य पं० क्षमाराव द्वारा विरचित इसी नाम की कथा है। प्रस्तुत रूपक में दो दृश्य हैं।

प्रथम दृश्य में हरि गणेश चौथ के दिन रुक्मा के यहाँ आश्रय माँगता है। लड़खड़ा कर गिरने से उसके पैर में चोट लग जाती है। तभी उसे चौथ का चन्द्रमा भी दिखाई दे जाता है। पिता के आदेश से हरि की मरहम पट्टी करके रुक्मा गोष्ठ में उसके ठहरने की व्यवस्था कर देती है।

द्वितीय दृश्य में उसी रात रुक्मा के पिता की हत्या हो जाती है। हत्या के अभियोग में हरि को बन्दी बना लिया जाता है। हरि उस अभियोग को चतुर्थी के चन्द्र दर्शन का परिणाम मानता है। अन्त में हत्यारों को पहचान कर रुक्मा हरि को मिथ्या अभियोग से बचा लेती है।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा भी पं० क्षमाराव की इसी शीर्षक की कथा का एक दृश्यात्मक नाट्य रूपान्तरण है।

बीस वर्ष पूर्व हुई पुत्र की हत्या का प्रतिशोध लेने के लिए गिरिजा प्रतिदिन पुत्र के चित्र के समक्ष प्रतिज्ञा करती है। जेल से भागा एक बन्दी उससे शरण माँगता है। कूएं में छिपाकर वह पुलस से उसकी रक्षा करती है। बाद में ग्रामाधिप से ज्ञात होता है कि वही उसके पुत्र का हत्यारा है। प्रतिशोध की ज्वाला से दग्ध वह उससे बदला लेना चाहती है लेकिन कैदी के गिड़गिड़ाने तथा क्षमायाचना करने पर दयार्द्र होकर रस्सी की सहायता से उसे बाहर निकालती है तथा मुक्त कर देती है।

जयन्तुकुमाउँनीयाः में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में हिमालय पर लगे कुमायुँ सैनिकों के युद्ध शिविर में नोर्बु नामक गुप्तचर चीनी शिविर के गुप्त समाचार लाता है तभी उपयुक्त अवसर जानकर चीनी शिविर पर आक्रमण कर दिया जाता है।

द्वितीय दृश्य में शत्रुओं द्वारा भयंकर प्रत्याक्रमण करने पर भी उत्साह युक्त कुमायुँ सैनिकों के शत्रुओं से नीलंगल क्षेत्र खाली करवा लिया। इस युद्ध में उनके अनेक अधिकारी एवं सैनिक मारे गये। तृतीय दृश्य में इसी युद्धस्थल पर विदेश मन्त्रियों के सम्मेलन में यह क्षेत्र पुनः चीन को सौंप दिये जाने के निर्णय से सैनिक एवं अधिकारी दुःखी होते हैं।

श्री तुकारामचरितम् भी पं० क्षमाराव के इसी नाम के काव्य का एकादश दृश्यों में रचित रूपक है।

प्रथम दृश्य में तुकाराम के जन्म के बाद आकाशवाणी द्वारा बालक के तुकाराम नामकरण की सूचना दी गई है। द्वितीय दृश्य में भगवान पाण्डुरंग तुकाराम को बाढ़ से सकुशल निकालते हैं। तृतीय दृश्य में परिवारी जनों के भला बुरा कहने पर तुकाराम घर के बर्तनों को बेचकर व्यापार करने का निश्चय करते हैं। चतुर्थ दृश्य में वह मिर्च खरीद कर एक मन्दिर में भगवद्-भजन में लीन हो जाते हैं। ग्रामीण पर्याप्त मिर्च लेकर बिना किसी मूल्य के ही चले जाते हैं। बाद में भगवान् पाण्डुरंग स्वयं तुकाराम के प्रतिनिधि बनकर मिर्च का मूल्य ग्रहण करते हैं। पंचम दृश्य में तुकाराम एक बुभुक्षु ब्राह्मण को उस दिन अर्जित पूरे दो सौ रुपये दे डालते हैं। षष्ठ दृश्य में दुर्भिक्ष के कारण तुकाराम की ज्येष्ठ पत्नी एवं पुत्र की मृत्यु हो जाती है। सप्तम दृश्य में एक खेत की रक्षा में नियुक्त तुकाराम पक्षियों को सारा खेत चुगवा देते हैं। क्षेत्रपति द्वारा अभियोग चलाने पर जब न्यायाधीश खेत का निरीक्षण करते हैं तो खेत को यथावत् हरा-भरा पाते हैं। अष्टम दृश्य में आकाशवाणी के निर्देश पर तुकाराम पद्यरचना करते हैं। नवम दृश्य में रामेश्वर नामक दुष्ट ब्राह्मण के कहने पर तुकाराम अपनी रचना

नदी में प्रवाहित कर देते हैं । इस पातक से वह रोगी हो जाता है और बाद में तुकाराम से क्षमा माँगने पर ही स्वस्थ होता है। दशम दृश्य में शिवाजी स्वयं उपस्थित होकर तुकाराम से आशीर्वाद ग्रहण करते हैं। एकादश दृश्य में तुकाराम सशरीर स्वर्गारोहण करते हैं ।

मिथ्याग्रहणम् एकांकी भी क्षमाराव की मूल कथा को आधार बनाकर लिखा गया है । इसमें दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में अमीना के निकाह की तैयारी चल रही है । अमीना तथा सरला उपवन में वार्तालाप करती हुई परस्पर विरह की आशंका से दुःखी होती हैं। द्वितीय दृश्य में घोड़े से गिरकर मूर्च्छित हुए अमीना के पति शेख को सरला अपने घर लाकर उपचार करवाती है। साथ ही अमीना को फोन से सूचित भी कर देती है। अपने पति के साथ उसके सम्बन्धों की आशंका से अमीना सरला से कालान्तर में चिढ़ने लगती है। अमीना सरला के घर से शेख को अपने घर ले जाना चाहती है। वहाँ एक अन्य युवती को सरला के शयन कक्ष में शेख का आलिंगन करते देख सरला के प्रति उसकी भ्रान्ति दूर हो जाती है। वह सरला से क्षमा याचना करती है कि अब तक वह उसे ही अपने पति की प्रेमिका समझती थी क्योंकि शेख बहुधा इसी घर में देखे जाते थे। सरला बताती है कि आज ही उसने यह मकान बदला है इससे पूर्व वही युवती इस घर में रहती थी ।

मीराचरितम् क्षमाराव विरचित 'मीरालहरी' नामक गीतिकाव्य को उपजीव्य बनाकर लिखित त्रयोदश दृश्यात्मक रूपक है। प्रथम दृश्य में बालमीरा वरयात्रा को देख कर अपने पति के विषय में पूछती है तथा माता के कहने पर श्रीकृष्ण को अपना पति मान लेती है। द्वितीय दृश्य में कृष्ण के प्रति मीरा की अनन्य भक्ति देखकर लोग आश्चर्य करते हैं। तृतीय दृश्य में मीरा का विवाह चित्तौड़ के राणा सांगा के साथ निश्चित होता है। चतुर्थ दृश्य में मीरा सास के कहने पर भी कुलदेवी की उपासना करने से मना कर देती है। पंचम दृश्य में ननद ऊदा द्वारा अनेक कष्ट दिये जाने पर भी मीरा की कृष्ण-भक्ति शिथिल नहीं होती। षष्ठ दृश्य में मीरा कुमार भोज को अपनी कृष्ण के प्रति प्रीति बता देती है। सप्तम दृश्य में भावमयी मीरा कृष्ण से वार्तालाप करती है। ऊदा कुमार को भड़काती है जिससे कुमार मीरा को मारने जाता है। अष्टम दृश्य में अकबर के संस्पर्श से दूषित मानकर मीरा को घर से निकाल दिया जाता है। नवम दृश्य में अदृश्यवाणी द्वारा अपने पूर्वजन्म का स्मरण करती हुई मीरा वृन्दावन के लिये प्रस्थान करती है। दशम दृश्य में मीरा की अनुपस्थिति में चित्तौड़ में उपद्रव होते हैं, अतः कुमार भिक्षुरूप में आकर पुनः मीरा को चित्तौड़ ले जाते हैं। एकादश दृश्य में मीरा के चित्तौड़ पहुँचने पर सर्वत्र आनन्द की लहर छा जाती है। द्वादश दृश्य में कुमार भोज की मृत्यु के पश्चात् मीरा को शूलों की शैय्या, सर्प की पेटी देकर तथा विष पिलाकर संत्रास दिया जाता है। त्रयोदश

दृश्य में तुलसीदास जी के पत्र के अनुसार मीरा बन्धु-बान्धवों का परित्याग कर वृन्दावन चली जाती है। वहाँ अनन्य भाव से कृष्ण की भक्ति में लीन होकर अन्त में उनके चरणों में ही समा जाती है।

परमभक्तशिवाजिराट् पं० क्षमाराव के रामदासचरितम् के आधार पर लिखा गया सप्त दृश्यात्मक रूपक है।

प्रथम दृश्य में देश की दुर्दशा से चिन्तित पुरोहित को देवी स्वप्न में रामदास के आविर्भाव की सूचना देती है। द्वितीय दृश्य में शिवाजी रामदास से कृपाभाव की याचना करते हैं। तृतीय दृश्य में शिवाजी अमात्यों के साथ मन्त्रणा में किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। तभी सहसा रामदास प्रकट होकर उन्हें आशीर्वाद देते हैं। चतुर्थ दृश्य में रामदास के आदेश पर शिवाजी तुकाराम के समीप आशीर्वाद लेने जाते हैं। पंचम दृश्य में पिपासु शिवाजी को रामदास पत्थर में से जलधारा निकाल कर पानी पिलाते हैं। षष्ठ दृश्य में भिक्षा के लिये उपस्थित स्वामी रामदास को शिवाजी अपना सम्पूर्ण राज्य दान कर देते हैं। सप्तम दृश्य में स्वामी रामदास के आशीर्वाद से शिवाजी की विधर्मियों पर विजय होती है। अन्त में शिवाजी तथा स्वामी रामदास के महाप्रयाण की सूचना दी गई है।

तुलाचलाधिरोहणम् में हिमालय के पास वायुयान दुर्घटना हो जाती है। हिमालय के क्रोध की आशंका से त्रस्त विमान चालक, पथिक, यात्री, विमान-परिचारिका आदि हिमालय का गुणगान करते हैं तथा उससे क्षमा याचना करते हैं।

नारकण्डाश्रमः में एक दृश्य है। अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक को इसके लिए उपजीव्य बनाया गया है।

शकुन्तला से गान्धर्व विवाह करने वाला राजकुमार युद्ध में घोड़े से गिरकर अपनी स्मरण शक्ति खो बैठता है। प्रवास से लौटे कण्व को शकुन्तला के आपन्नसत्वा होने का ज्ञान योग विद्या से होता है। शार्ङ्गरव तथा गौतमी के साथ सत् शिक्षा देकर वह उसे पति ग्रह भेज देते हैं।

मायाजालम् एकांकी की कथा पं० क्षमाराव द्वारा लिखित इसी शीर्षक की कथा का नाट्यरूपान्तरण है।

किसी पुरुष द्वारा प्रवंचित मुग्धा, मन्दा, मोहिनी तथा दया एक स्थान पर एकत्र हो अपनी कथा सुनाती है।

मुग्धा पिता द्वारा वाग्दान के उपरान्त अपने भावी पति से उपवन में गुप्त रूप से मिलती रही। पिता ने उस युवक को उच्च शिक्षा के लिए पैरिस भेज दिया जिसने आरम्भ में तो पत्र लिखे किन्तु बाद में धीरे-धीरे पत्राचार बन्द कर दिया और वह आज तक उसकी प्रतीक्षा कर रही है।

मन्दा अल्पशिक्षिता व कुरूप है। उसके बड़े भाई का एक मित्र बिना देखे ही उससे विवाह को तैयार हो जाता है। विवाहोपरान्त पिता की अस्वस्थता का बहाना करके गया हुआ वह आज तक नहीं लौटा है।

मोहिनी विवाह के पश्चात् पति के साथ पेरिस जाती है। वहाँ एक अल्पाहारगृह में वह उसको छोड़कर कहीं चला जाता है। एक भारतीय युवक उसका भोजन शुल्क चुका कर उस पर उपकार करता है पति के व्यवहार से खिन्न वह युवती उस भारतीय युवक के साथ मिश्र भाग जाती है। कालान्तर में वह युवक काहिरा में उसे अकेला छोड़ जाता है।

दया एक गणिका पुत्री है। वेश्यालय से भाग जाने पर उसे पुरोहित ने पाला है। पुरोहित की मृत्यु के बाद एक दिन समुद्रतट पर वह घायल अवस्था में एक मूर्च्छित युवक को देखकर अपने घर ले जाती है। स्मृति भ्रष्ट युवक वहीं रहता है और वे दोनों परस्पर अनुरागबद्ध हो जाते हैं। किन्तु एक दिन वह उसे छोड़कर चला जाता है। अन्त में एक ज्योतिषी के वक्तव्य से ज्ञात होता है कि चारों महिलाओं का अपराधी पति एक ही युवक था।

मायाजालम् में नाट्यकर्त्री ने मूलकथा से किंचित् परिवर्तन किया है, जो नाट्यदृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। रूपक में चारों महिलाओं की उपस्थिति बांगला देश से निष्कासित शरणार्थी के रूप में की गई है। महिलाओं के निवास स्थान भी चटगाँव, लाहौर तथा बांगलादेश से सम्बन्ध रखने वाले तथा देश के विभाजन के समय यवनों, द्वारा निष्कासन के रूप में कहे गये हैं। मूलकथा में सम्मिलन स्थल आबू पर्वत बताया गया है, जिसकी स्थिति गुजरात प्रदेश में सूचित की गई है। महिलाओं के निवास स्थल गुजरात के गाँवों तथा बम्बई को बताया गया है। ज्योतिषी की ख्याति सुनकर ये चारों आबू आयीं हैं न कि शरणार्थी के रूप में।

बालयोगी क्षमाराव विरचित ज्ञानेश्वर चरितम् महाकाव्य का चतुर्दश दृश्यों में नाट्य रूपान्तरण है। प्रथम दृश्य में ज्ञानेश्वर के वंश परिचय के बाद उनके पिता विट्ठल तीर्थाटन के लिये निकल जाते हैं। द्वितीय दृश्य में कुलदेवता के स्वप्न में दिये गये आदेश से विट्ठल विवाह के लिये तैयार होते हैं। तृतीय दृश्य में विठ्ठल विवाहोपरान्त संन्यास धर्म स्वीकार कर लेते हैं । रामानन्द उनकी पत्नी को अपूर्व सुत प्राप्ति का आशीर्वाद देते हैं। चतुर्थ दृश्य में रामानन्द के आदेश से विट्ठल संन्यास धर्म का परित्याग करके पुनः गृहस्थ धर्म स्वीकार कर लेते हैं। फलतः ग्रामीण उनका सामाजिक बहिष्कार कर देते हैं। पंचम दृश्य में विट्ठल को निवृत्ति, सोपान तथा ज्ञानदेव नामक तीन पुत्रों तथा मुक्ता नामक पुत्री की प्राप्ति होती है। षष्ठ दृश्य में पुरोहितों द्वारा संन्यासीपुत्र कहकर विट्ठल के पुत्रों का उपनयन संस्कार नहीं किया जाता। सन्तानहित के लिये विट्ठल पुरोहितों के आदेशानुसार सपत्नीक जल-समाधि लेते हैं। सप्तम दृश्य में चारों बालक

आत्मशुद्धि के लिये तीर्थयात्रा करते हैं। अष्टम दृश्य में चारों बालक सभापति से सम्मुख शुद्धिपत्र प्रस्तुत करते हैं जिसका ग्रामीण उपहास करते हैं। महिष पर किये गये दण्ड-प्रहार का चिह्न ज्ञानदेव की पीठ पर दिखाई पड़ता है। नवम दृश्य में ज्ञानदेव के संस्पर्श से पंगु तथा अन्धे ठीक हो जाते हैं। दुर्जन-तोषण के लिये वे भैंस के मुख से वेद मन्त्रोच्चार कराते हैं। दशम दृश्य में ज्ञान देव गीतादि महाप्रबन्धों का परिशीलन करते हैं। एकादश दृश्य में वह ज्ञानेश्वरी की रचना करते हैं। एक स्त्री के मृत पति को जीवनदान भी करते हैं। द्वादश दृश्य में ज्ञान देव जनता में ज्ञानेश्वरी भाष्य का उपदेश करते हैं। त्रयोदश दृश्य में सन्त ज्ञानेश्वर तथा भक्त नामदेव का स्नेह-मिलन हुआ है। चतुर्दश दृश्य में कार्तिक कृष्ण द्वादशी को ज्ञानेश्वर महाप्रयाण करते हैं।

बालविधवा पं० क्षमाराव ने विधवोद्वाहसंकटम् व बालिकोद्वाहसंकटम् नाम से कथापंचकम् तथा कथामुक्तावली में कथाएँ लिखी हैं। वे ही लीलाराव के रूपक बालविधवा का उपजीव्य रही हैं। इस रूपक में तीन दृश्य हैं। पार्वती नामक बालविधवा तथा अनूप परस्पर अनुरक्त हैं। समाज के संकीर्ण हृदय लोग विधवाविवाह की अनुमति नहीं देंगे—यह जानते हुए भी अनूप पार्वती को पुनर्विवाह के लिए तैयार कर लेता है।

द्वितीय दृश्य में एकपुरोहित केशहीना पार्वती को देखकर बिना विवाह कराये चला जाता है। स्वयं के कारण अनूप को अपमानित होता देख क्षमा माँग कर पार्वती भी अपने घर चली चाती है। तृतीय दृश्य में पार्वती की देवरानी उसे अपमानित एवं लांछित कर घर से निकाल देती है। अन्य आश्रय न पाकर पार्वती आत्म हत्या के लिए निकल पड़ती है।

वीरभा रूपक भी पं० क्षमाराव की वीरभा नामक कथा के आधार पर लिखा गया है। प्रस्तुत एकांकी में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में लीलावती के अपमान के विरोध में वीरभा के नेतृत्व में सत्याग्रहियों द्वारा मौन जनयात्रा तथा जनसभा करने का निश्चय किया जाता है। ग्रामाधिप उन्हें धमकाता है। द्वितीय दृश्य में भूमिकर न देने के कारण ग्रामाधिप के व्यक्ति वीरभा की गायों का अपहरण कर लेते हैं तथा उसके पति को लहूलुहान कर देते हैं। तीसरे दृश्य में सत्याग्रह आन्दोलन में लाठी प्रहार से मूर्च्छित वीरभा को स्वयं सेवक उसके घर छोड़ जाते हैं। अपने स्तन्धय शिशु के खो जाने पर वीरभा विचलित हो जाती है। वीरभा के साहस तथा राष्ट्रनिष्ठा को देखकर परिवर्तित हृदय वाला ग्रामाधिप उसकी गायें तथा शिशु को दे देता है तथा स्वयं भी सत्याग्रही बन जाता है।

वृत्तशंसिच्छत्रम् पं० क्षमाराव की इसी नाम की कथा का नाट्य रूपान्तरण है। इसमें चार दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में अनुपम अपनी सास इन्दिरा पर अनुरक्त है। अपनी पत्नी मीरा के प्रति उसे कोई आकर्षण नहीं है। इन्दिरा द्वारा फटकारने पर वह बिना बताये घर छोड़कर चला जाता है। द्वितीय दृश्य में वह आत्महत्या

के प्रयास में रेलगाड़ी से गिरकर अपनी स्मरण शक्ति खो बैठता है तथा खड्की स्थान पर अपना आश्रम बनाकर त्यागीबाबा के नाम से प्रसिद्ध हो जाता है। अपने पति की तलाश में निकली मीरा समीपस्थ विधवाश्रम में रामी नाम से रहने लगती है। एक दिन त्यागी बाबा उसे डूबने से बचाता है। फलतः दोनों में अनुराग हो जाता है। त्यागी बाबा के साथ विवाह की अनुमति लेने मीरा अपने रथ्या गाँव आ जाती है। पीछे से अनुपम भी उसके घर पहुँच जाता है। तृतीय दृश्य में अनुपम को अचानक आया देख इन्दिरा प्रसन्न होती है और रामी के रूप में मीरा के विधवाश्रम में रहने को छिपा जाती है। अनुपम भी त्यागी बाबा के रूप मे अपना परिचय नहीं देता है। चतुर्थ दृश्य में मीरा त्यागी बाबा के साथ विवाह हेतु माँ से अनुमति माँगती है। इन्दिरा उसे अनुपम के वापस लौटने का समाचार देती है। मीरा असमंजस में पड़कर दुःखी होती है। सहसा उसकी दृष्टि दरवाजे के पीछे रखे त्यागी बाबा के छाते के ऊपर पड़ती है। माँ उसे बताती है कि यह छाता अनुपम का ही है। त्यागी बाबा के रूप में अनुपम को पाकर मीरा के हर्ष की कोई सीमा नहीं रहती।

हरिसिंहः रूपक की उपजीव्य पं० क्षमाराव की इसी नाम की कथा है। रूपक में चार दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में उत्सव में जाते समय राजा मानसिंह के दर्शनों के लिए पंक्तिबद्ध खड़ी जनता द्वारा सहायता की याचना करने पर उन्हें चाबुक खाने पड़ते हैं। यह दृश्य देखकर हरिसिंह राजा से घृणा करने लगता है। द्वितीय दृश्य में हरिसिंह अपने अन्य तीन मित्रों के साथ आततायी मानसिंह के वध की योजना बनाते हैं। तृतीय दृश्य में सन्दूक में गोलियाँ खोजते समय हरिसिंह मानसिंह द्वारा माँ को लिखे गये कुछ पत्र देखता है। उसे अपनी माँ के चरित्र पर सन्देह होता है। पूछने पर माँ बताती है कि वह मानसिंह उसका पिता है। चतुर्थ दृश्य में हरिसिंह तथा उसके साथी पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार अर्धरात्रि में घात लगाये बैठे हैं। राजा के पास से जाते समय हरिसिंह गोली चला देता है। राजसैनिक हत्यारे की घोषणा करते हैं तथा ग्रामवासी हरिसिंह की जय जयकार करते हैं।

होलिकोत्सवम् पं० क्षमाराव की 'दन्तकेयूरम्' कथा का तीन दृश्यों में किया गया रूपकीकरण है। होली के दिन गणु की पत्नी राधा अपना भुजबन्ध गिरवी रखकर पति तथा पुत्र गोपाल के लिए नवीन वस्त्रों की व्यवस्था कर उत्सव में भेजती है। द्वितीय दृश्य में गणु कुसीदक के पास अपनी पत्नी का भुजबन्ध देखता है। वह शराब पीकर केयूर को प्राप्त करने के लिए जुआ खेलता है और समस्त द्रव्य हार जाता है। तृतीय दृश्य में घर लौटकर क्रुद्ध गणु अपनी पत्नी को चरित्रहीन कहकर घर से बाहर निकाल देता है। अन्त में गोपाल की कन्या के छोर में बँधे कागज से उसे ज्ञात होता है कि दस रुपये में उसकी माता ने अपना भुजबन्ध गिरवी रखा था। अन्त में गणु पछताता है।

नाट्यशास्त्र की दृष्टि से रंगमंच पर मृत्यु का प्रदर्शन निषिद्ध है।[९] अतः होलिकोत्सवम् में लीलाराव ने प्रदर्शित किया है कि गणु द्वारा पीटकर घर से निकाली गई राधा आत्महत्या के उद्देश्य से घर से निकल जाती है।[१०] मूलकथा में गणु द्वारा पीटने से कुछ समय बाद राधा की मृत्यु होना बताया गया है।[११]

स्वर्णपुर कृषीवला: पं० क्षमाराव की 'रेवायाः कथा' का दो दृश्यों में किया गया नाट्य रूपान्तर है। प्रथम दृश्य में रेवा के नेतृत्व में भूमिकर न देने का दृढ़ निश्चय करके स्वर्णपुर के कृषक समीपवर्ती गाँव में चले जाते हैं। व्याधिग्रस्त रेवा की स्वर्णपुर में आज अन्तिम रात्रि है। ग्रामाधिप के प्रलोभन का उस पर कोई प्रभाव नहीं होता। देश सेविकाओं का पक्ष लेने के कारण मण्डलाध्यक्ष के व्यक्तियों ने उसके पुत्र को मार-मार कर मूर्च्छित कर दिया है। द्वितीय दृश्य में मूर्च्छित पुत्र की शुश्रूषा में लगी रेवा को ग्रामाधिप पुनः डराता - धमकाता है तथा गाँव में आग लगवा देता है। सत्याग्रह के कारण दग्ध घरों की ज्वालाओं में रेवा की देशभक्ति और भी अधिक उद्दीप्त हो उठती है।

श्रीमती कमलारत्नम् ने पाँच लघु रूपकों का प्रणयन किया है। 'गणयञ्छागः' प्रतीकात्मक कल्पित नाट्य है तथा साक्षरता के महत्व से सम्बन्ध रखता है। 'विवेकानन्दस्मृतिः' तथा 'विवेकानन्द विजयम्' विवेकानन्द से सम्बद्ध ऐतिहासिक तथ्यों को लेकर लिखे गए रेडियो-रूपक हैं। 'विवेकानन्दविजयम्' का उपजीव्य प्रो० श्रीधर भास्कर वर्णेकर द्वारा लिखित महानाटक 'विवेकानन्दविजयम्'[१२] ही है। प्रथम अंक में वर्णेकर जी के महानाटक के तृतीय अंक की कथावस्तु, द्वितीय अंक में महानाटक के चतुर्थ अंक की कथा तथा तृतीय अंक में महानाटक के पंचम अंक की कथा निबद्ध है। विवेकानन्द ऐतिहासिक महापुरुष हैं अतः उनके जीवनवृत्त पर आधारित दोनों रूपक स्रोत की दृष्टि से प्रख्यात ऐतिहासिक कोटि के है। 'नचिकेतोयम-संवादम्' की कथावस्तु भी प्रख्यात कोटि की है तथा इसका उपजीव्य 'कठोपनिषद्' है।[१३] 'विक्रमवेतालनाटिका' की कथावस्तु भी लोककथा परक है। इसका आधार सोमदेव भट्ट विरचित 'कथासरित्सागर' है।[१४] इसकी आठ से लेकर छत्तीस तरंगे 'वेताल-पंचविंशतिः' में संगृहीत हैं। प्रस्तुत रूपक की कथा बारहवीं तरंग की है।[१५] विक्रमवेतालनाटिका की प्रस्तावना पंचविंशति की उपक्रमणिका का नाट्यीकृत रूप है।[१६]

'गणयञ्छागः' में दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में एक बकरी का बच्चा जलाशय में अपने प्रतिबिम्ब को देखकर स्वयं को गिनता है। शनैः शनैः उपस्थित गौ, वृषभ, अश्वशावक तथा गर्दभ को भी गिन जाता है। उसकी गिनती से घबराए समस्त पात्र उसे मारने दौड़ते हैं। द्वितीय दृश्य में छाग दौड़कर एक पोत पर चढ़ जाता है। पीछा करते हुए अन्य पशु भी उसमें चढ़ जाते हैं। पोत के डगमगाने से घबराया हुआ पोताध्यक्ष उन्हें गिनने को कहता है क्योंकि

उस पोत में दस यात्री ही बैठ सकते हैं। गर्वित छाग सबको गिनता है। इससे उसे पोत का मुद्राधिकारी बना दिया जाता है।

विवेकानन्द स्मृतिः नामक ध्वनि-रूपक में विवेकानन्द के जन्म, नामकरण, स्वामी रामकृष्णपरमहंस का शिष्यत्व, देश-विदेश में भारतीय धर्म का प्रसार, उनके उपदेश तथा अन्त में पार्थिव शरीर के परित्याग सम्बन्धी जन्म से मृत्यु-पर्यन्त प्रधान-प्रधान घटनाओं का वर्णन किया गया है।

विवेकानन्दविजयम् के प्रथम अंक में माता भुवनेश्वरी द्वारा बालक नरेन्द्र के विषय में पूछने पर सेविका लक्ष्मी बताती है कि वह विद्यालय के नाटक में अभ्यास हेतु गया है और सांयकाल जब वह नरेन्द्र के कक्ष में प्रकाश करने जाती है तब वहाँ उसे ध्यानमग्न पाती है। पड़ौसी के मुख से रामकृष्ण का अद्भुत चरित्र सुन कर नरेन्द्र मन ही मन उनके दर्शन का संकल्प करता है। द्वितीय अंक में विष्कम्भक से ज्ञात होता है कि नरेन्द्र ने शेफालिका तथा देवीप्रसाद को दुष्टों से बचाया है। नरेन्द्र रामकृष्ण के दर्शन करने जाता है तथा आध्यात्मिक जिज्ञासाओं का सम्यक् उत्तर पाकर सन्तुष्ट होता है। तृतीय अंक में नरेन्द्र द्वारा रामकृष्ण का शिष्यत्व ग्रहण करने, संन्यास लेने तथा भारत-भ्रमण का आरम्भ करने की सूचना देकर विष्कम्भक समाप्त हो जाता है। विवेकानन्द नाम से प्रसिद्ध नरेन्द्र युवकों को शारीरिक श्रम, व्यायाम तथा संस्कृत के अध्ययन की शिक्षा देते हैं एवं प्राणिमात्र के कल्याण के लिए देशाटन का संकल्प करते हैं। इस अंक के साथ ही रूपक समाप्त हो जाता है।

नचिकेतोयम संवादम् में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में वाजसनेय यज्ञ में पिता द्वारा वृद्ध गायों के दान से दुःखी नचिकेता उनसे पूछता है कि वे पुत्र रूप धन का दान किसे देगें? पुत्र के कुतर्कों से झुँझलाए पिता मृत्यु को दान की घोषणा करते हैं। नचिकेता उनसे अनुमति लेकर यमलोक को प्रस्थान करता है। द्वितीय दृश्य में यमराज नचिकेता को तीन वर माँगने को कहते हैं क्योंकि भूखे-प्यासे उसने यम की अनुपस्थिति में वहाँ तीन दिन व्यतीत किये हैं। नचिकेता पिता के क्रोध की शान्ति, स्वर्ग-साधन-भूत अग्निविद्या का ज्ञान तथा आत्मा के रहस्य का परिचय वर रूप में माँगता है। तृतीय दृश्य में आत्मा के सम्बन्ध में जिज्ञासा के प्रति नचिकेता की दृढ़ता देखकर यमराज उसे आत्मतत्त्व का उपदेश करते हैं।

विक्रमवेतालनाटिका चार दृश्यों में विभक्त है। प्रस्तावना में एक संन्यासी राजा त्रिविक्रम सेन को प्रतिदिन एक फल भेंट करता है। वह प्रतिदान के रूप में राजा से अपने एक अनुष्ठान में सहयोग माँगता है। उसके निर्देशानुसार राजा पेड़ पर लटके शव को लेने आता है। प्रथम दृश्य में वेताल मार्ग में राजा को हँसाने तथा उसका मौन-भंग करने के लिए एक कथा सुनाता है। उज्जयिनी के अमात्य हरिस्वामी की सोमप्रभा नामक असामान्य लावण्यवती कन्या ज्ञानी,

विज्ञानी अथवा शूर के साथ विवाह करना चाहती है। राजकाज से बाहर गए हरिस्वामी को सोमप्रभा से विवाह का इच्छुक एक युवक मिलता है। स्वयं को विज्ञानी सिद्ध करने के लिए स्वनिर्मित विमान से उन्हें आकाश में भ्रमण कराता है। प्रसन्न हुआ वह सातवें दिन उसे विवाह हेतु अपने घर आमन्त्रित करता है। द्वितीय दृश्य में सोमप्रभा से विवाह का अभिलाषी एक शूर अपनी वीरता से सोमप्रभा के भाई को प्रसन्न कर लेता है। वह भी निश्चित मुहूर्त में सातवें दिन उसे विवाह हेतु अपने घर में आमन्त्रित करता है। तृतीय दृश्य में एक ज्ञानी अपने ज्ञान से सोमप्रभा की माता को प्रसन्न करके उसकी पुत्री से विवाह की अभिलाषा व्यक्त करता है। वह भी सातवें दिन उसे घर पर आने के लिए कहती है। चतुर्थ दृश्य में सातवें दिन तीनों व्यक्ति अमात्य के घर उपस्थित होते हैं। सहसा सोमप्रभा के खो जाने पर ज्ञानी बताता है कि उसे राक्षस अपहरण कर धूमशिख नामक अपनी बस्ती में ले गया है। विज्ञानी अपने विमान से सबको वहाँ ले जाता है। शूरवीर राक्षस से युद्ध करके सोमप्रभा को मुक्त कराता है। तीनों आपस में सोमप्रभा के साथ विवाह के लिए विवाद करते हैं। वेताल द्वारा निर्णय पूछे जाने पर राजा शूरवीर के साथ सोमप्रभा के विवाह का निर्णय देता है। राजा के निर्णय से वेताल सन्तुष्ट होता है किन्तु मौनभंग होने के कारण पुनः पेड़ पर पूर्ववत् लटक जाता है।

डॉ० वनमाला भवालकर ने पाँच नाट्य कृतियों का प्रणयन किया है, जिनमें 'पाददण्डः' भावनात्मक सामाजिक सम्बन्धों पर आधारित उत्पाद्य कोटि का रूपक है। 'पार्वती परमेश्वरीयम्' कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से पौराणिक वर्ग का रूपक है। महाशिवपुराण में यह कथा है लेकिन वनमाला भवालकर ने अपना उपजीव्य महाशिवपुराण को न बनाकर कालिदास के कुमारसम्भव को बनाया है क्योंकि शब्दों और भावों का पूर्णतः साम्य कुमारसम्भव के साथ ही है।[१७] 'रामवनगमनम्' तथा 'सीताहरणम्' की कथावस्तु प्रख्यात कोटि की है तथा इसका ग्रहण बाल्मीकि रामायण से किया गया है।[१८] 'अन्नदेवता' की कथावस्तु कवि कल्पना प्रसूत होने के कारण उत्पाद्य कोटि की है।

पाददण्डः में छह दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में शान्ता युद्ध में पंगु होकर लौटे अपने भाई सुधीर के प्रति चिन्तित है कि उसकी वाग्दत्ता वधू ललिता सुधीर का प्रत्याख्यान न कर दे। उसका पति भास्कर समझाता है कि वह अपनी बहिन निशा का विवाह सुधीर से कर देगा क्योंकि वह सुधीर में अनुरक्त है। द्वितीय दृश्य में टेलीग्राम द्वारा ललिता के आगमन का समाचार सुनकर निशा को छोड़कर सभी प्रसन्न होते हैं। तृतीय दृश्य में ललिता के आने पर कुशल-क्षेम के उपरान्त सुधीर उपयुक्त अवसर पर ललिता को अपने पंगुत्व के विषय में बताने की सोचता है। चतुर्थ दृश्य में ललिता सुधीर को अपनी सखी के विषय में बताती है कि उसके मंगेतर का हाथ युद्ध में कट जाने पर उसके न चाहने पर भी

पिता ने उसका विवाह अन्यत्र कर दिया था। सुधीर पूछता है कि तुम्हारे साथ ऐसा होता तो तुम क्या करती ? ललिता उसके मनोभाव को न समझकर पिता की आज्ञा को सर्वोपरि मानती है। निराश होकर सुधीर अपनी भावी पत्नी के रूप में निशा का मिथ्या परिचय ललिता को कराता है तथा वहाँ से निकल जाने का आदेश देता है। पंचम दृश्य में उद्यान में खिन्न बैठी हुई एक व्यक्ति को बैसाखी लाता हुआ देखकर सुधीर के पंगु होने का रहस्य समझ जाती है। निशा एवं शान्ता भी उसकी भ्रान्ति को दूर करती हैं। षष्ठ दृश्य में भ्रान्ति का निराकरण होने के पंश्चात् ललिता सुधीर को उपालम्भ देती है तथा वह स्वयं उसका पाददण्ड बन जाती है।

पार्वती परमेश्वरीयम् तीन दृश्यों में विभक्त है। प्रथम दृश्य में नारद हिमालय से पार्वती के विवाह की चर्चा करते हैं तथा पार्वती-शिव के विवाह के सम्बन्ध में देवताओं की इच्छा बता कर शिव को वशीभूत करने का सुझाव देते हैं। द्वितीय दृश्य में पार्वती की पूजा से प्रसन्न शिव उसे अभीष्ट प्राप्ति का वरदान देते हैं। तभी शिव पर शर सन्धान करने से कामदेव उनकी क्रोधाग्नि में भस्म हो जाता है। पार्वती तपस्या द्वारा शिव को वश में करने का निश्चय करती है। तृतीय दृश्य में पार्वती की तपश्चर्या से प्रसन्न बटुक रूप धारी शिव पार्वती की परीक्षा लेते हैं। शिव की निन्दा सुनकर जब वह वहाँ से जाना चाहती है तभी शिव प्रकट होकर पार्वती को अभीष्ट प्राप्ति का वरदान देते हैं।

रामवनगमनम् के प्रथम दृश्य में राम के राज्याभिषेक के विचार से प्रसन्न कैकेयी मन्थरा के बहकाने पर राम को चौदह वर्ष का वनवास तथा भरत को युवराज पद—ये दो वरदान दशरथ से माँग लेती है। कैकेयी से पिता के दुःख का कारण जानकर राम बनवास के लिए सहर्ष तत्पर हो जाते हैं। द्वितीय दृश्य में सीता तथा लक्ष्मण राम के साथ वन जाने की प्रार्थना करते हैं। दोनों का दृढ़-निश्चय देखकर राम पिता से आज्ञा लेने जाते हैं। तृतीय दृश्य में मन्थरा तीनों को वल्कल वस्त्र देती है तथा पिता से अनुमति लेकर तीनों वन के लिए निकल पड़ते हैं।

सीताहरणम् में एक दृश्य है। पुष्प चयन करते समय सीता की दृष्टि हटात् स्वर्णमृग पर पड़ती है। विस्मित हुई वह राम से उसे पकड़ कर लाने का आग्रह करती है। सीता के हठ से बाध्य होकर वह स्वर्णमृग का पीछा करते हुए दूर निकल जाते हैं। दूर से आती हुई राम की आर्त पुकार सुनकर सीता लक्ष्मण को राम की रक्षा के लिए प्रेषित करती है। तभी सहसा उपस्थित मुनि को भिक्षा देने के लिए सीता लक्ष्मण रेखा से बाहर आ जाती है। मुनि के रूप में रावण सीता का अपहरण कर लेता है। मृग को मार कर लौटे राम कुटी में नीरवता देखकर शंकित होते हैं तथा आस-पास पद चिह्नों को देखकर सब समझ जाते हैं तथा सीता स्मरण कर मूर्च्छित हो जाते हैं।

अन्नदेवता में एक दृश्य है। अष्टवर्षीया बालिका लीला अपनी बहिन कमला से मिष्टान्न का आग्रह करती है। मिष्टान्न न मिलने पर भोजन का तिरस्कार कर भूखी ही सो जाती है। स्वप्न में देवदूती उसकी इच्छानुसार मिष्टान्नों को बालिका के सामने प्रस्तुत करती है। वह लीला की लोभी प्रवृत्ति को दूर करना चाहती है। तत्काल उसके उदर में वात पीड़ा होने से चाहने पर भी वह मिष्टान्न नहीं खा पाती है तथा देवदूती से स्वस्थ करने की प्रार्थना करती है जिससे उदर-पीड़ा के साथ मिष्टान्न भी अदृश्य हो जाते हैं। देवदूती उसे अन्न का सम्मान करने की शिक्षा देकर अन्तर्धान हो जाती है। जागने पर वह अपनी बहिन से क्षमायाचना करती है।

ब्रह्मचारिणी वेला देवी ने तीन रूपकों का प्रणयन किया है । कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से तीनों रूपकों की कथावस्तु प्रख्यात कोटि की है। 'नचिकेतश्चरितम्' की कथावस्तु का उपजीव्य कठोपनिषद्, 'महीयसी गार्गी' की कथावस्तु का मूल वृहदारण्यकोपनिषद् तथा 'विराड्गृहम्' की रचना का आधार महाभारत का विराट् पर्व है।

आठ दृश्यों से युक्त **नचिकेतश्चरितम्** के प्रथम दृश्य में पुण्डरीक, उत्पल तथा कुवलय नचिकेता के घर होने वाले विश्वजित् यज्ञ को देखने जाते हैं। द्वितीय दृश्य में पिता द्वारा वृद्ध गायों का दान करने से मित्रों के समक्ष लज्जित नचिकेता इस दान के विषय में तथा पुत्र रूपी धन के दान के विषय में पूछता है। क्रुद्ध पिता नचिकेता को यमराज को दानकर देते हैं। तृतीय दृश्य में यम की अनुपस्थिति में यमलोक के द्वार पर दौवारिक नचिकेता को भयभीत करने में असमर्थ रहते हैं। चतुर्थ, पंचम एवं षष्ठ दृश्य में इन्द्र के निर्देश पर सूर्य, चन्द्र आदि देव नचिकेता को समाधि से विरत करने में असफल रहते हैं। सप्तम एवं अष्टम दृश्य में नचिकेता का अर्घ्य आदि से आतिथ्य करके धर्मराज नचिकेता को प्रथम वर के रूप में पिता की प्रसन्नता, द्वितीय वर के रूप में अग्नि विद्या का ज्ञान तथा तृतीय वर के रूप में आत्मविद्या का ज्ञान प्राप्त कराते हैं।

महीयसी गार्गी पाँच दृश्यों का रूपक है। प्रथम दृश्य में गार्गी आत्म-तत्व एवं सृष्टि-तत्त्व का विचार करती हुई अपनी शंका के समाधान के लिए पिता गर्ग मुनि के पास जाती है। द्वितीय दृश्य में गर्ग अपने शिष्यों की निवृत्ति मार्ग एवं निष्काम कर्म-विषयक जिज्ञासा को शान्त करते हुए गार्गी की शंकाओं का भी समाधान करते हैं। तृतीय दृश्य में राजा जनक भारतवर्ष के ब्रह्मज्ञानियों की सभा आयोजित करने का निश्चय करते हैं। चतुर्थ दृश्य में गार्गी भी पिता के साथ उस सभा में जाने का विचार बनाती है। पंचम दृश्य में राजा जनक ब्रह्मज्ञानी से दस हजार गायें ग्रहण करने की प्रार्थना करते हैं। याज्ञवल्क्य अपने शिष्य को गायें ले जाने का आदेश देते हैं। अन्य कोई ब्रह्मज्ञानी शास्त्रार्थ हेतु आगे नहीं आता है। गार्गी उस सभा में याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ करती है। याज्ञवल्क्य

उसके प्रश्नों का समुचित उत्तर देते हैं। गार्गी के पराजित हो जाने पर भी जनक उसके ब्रह्मज्ञान तथा तर्क-शक्ति की प्रशंसा करते हैं।

विराड्गृहम् में पाँच दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में विराट् राजा की पत्नी सुदेष्णा की परिचारिका के रूप में द्रौपदी तीन शर्त रखती है—किसी पुरुष के सामने नहीं आयेगी, उच्छिष्ट नहीं खायेगी तथा पैर नहीं दबायेगी। अन्ततः सैरन्ध्री नाम से रानी की वेणीरचना करने का कार्य करती है। द्वितीय दृश्य में वृहन्नला रूपधारी अर्जुन उत्तरा को राधा-कृष्ण की स्तुति-परक नृत्य सिखाता है। तृतीय एवं चतुर्थ दृश्य में क्रमशः खण्डिका व लतिका तथा द्रौपदी एवं भीम के वार्तालाप से कीचक वध की सूचना तथा प्रथमतः भाई की मृत्यु से रानी के क्रुद्ध होने का तथा अनन्तर कीचक द्वारा द्रौपदी को अपमानित किए जाने के समाचार से क्रोध-शान्ति की सूचना दी गई है। पंचम दृश्य में अज्ञातवास की अवधि पूर्ण होने के कारण अर्जुन की सहायता से उत्तर द्वारा कौरवों को पराजित करने पर पाण्डवों की वास्तविकता का पता चलता है। विराट् उनसे क्षमा माँगते हैं। अर्जुन अपनी पुत्रवधू के रूप में उत्तरा की याचना करते हैं। विराट् इस सम्बन्ध को सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं।

डॉ० रत्नमयी द्वारा रचित 'भूमिकन्या' प्रसिद्ध मराठी साहित्यकार मामा वि० वरेरकर के मूल मराठी नाटक का संस्कृत-रूपान्तरण है। रामायण के उत्तरकाण्ड की सीता-निर्वासन-सम्बन्धी कथा को यहाँ सर्वथा नवीन रूप में प्रस्तुत किया गया है, अतः यह कथावस्तु प्रख्यात और उत्पाद्य का मिश्रण होने से मिश्र कोटि की है। इसके प्रथम अंक में वनवास के पश्चात् राज्याभिषेक होने के बाद अपने कक्ष में सीता वल्कल वस्त्र से युक्त चौकी पर बैठती है। उस पर बैठते ही वनवास की स्मृति सजीव हो जाने पर सीता राम से वन भ्रमणार्थ अपना दोहद प्रकट करती है। द्वितीय अंक में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में शम्बूक की व्यथा सुनकर सीता उसे रक्षा का वचन देती है। ऋषियों के कहने पर उसका वध करने को तत्पर राम से अनुनय-विनय करके सीता उसे गंगा-पार निर्वासित करा देती है। द्वितीय दृश्य में राजगुरु के परामर्श से विजय शम्बूक के यहाँ वास करने के अपराध में अपनी पत्नी बासन्ती का परित्याग करने का निर्णय करता है तथा रावण-भवन में रही सीता को स्वीकार करने वाले राम पर भी आक्षेप करता है। तृतीय दृश्य में राम व लक्ष्मण सीता के सम्बन्ध में राजगुरु व विजय के विचारों को सुनकर सीता को निर्वासित करने का निश्चय करते हैं। तृतीय अंक में राम के आदेश से लक्ष्मण सीता को बाल्मीकि के आश्रम के पास छोड़ जाते हैं। चतुर्थ अंक में लव-कुश के रामायण पाठ से प्रसन्न राम को बाल्मीकि दोनों

बालकों का परिचय कराते हैं तथा सीता की निष्कलंकता की घोषणा करते हैं। राम द्वारा प्रजा के समक्ष अपनी निष्कलंकता का प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए कहे जाने पर सीता राम राज्य की प्रतिष्ठा के लिए नहीं अपितु नारी जाति की प्रतिष्ठा के लिए शपथ लेकर भूमि में समा जाती है।

श्रीमती देवकी मेनन् ने चार नाट्य कृतियों का प्रणयन किया है। श्री रामकृष्ण परमहंस की सहधर्मचारिणी श्री शारदा देवी के जीवन की घटना का आश्रय लेकर निबद्ध 'कालीदर्शनम्' की कथावस्तु प्रख्यात है। शारदा देवी यद्यपि ऐतिहासिक महिला हैं। इनका जन्म २२ सितम्बर १८५३ में तथा मृत्यु २० जुलाई १९२० को हुई।[१९] किन्तु प्रस्तुत रूपक की कथा किम्वदन्तियों के रूप में प्रचलित होने के कारण[२०] स्रोत की दृष्टि से लोक कथापरक वर्ग में आयेगी। 'सैरन्ध्री प्रेक्षणक्म्' तथा 'कुचेलवृत्तम्' की कथावस्तु पौराणिक है। दोनों की कथावस्तु का आहरण श्रीमद्‌भागवत महापुराण के दशमस्कन्ध से किया गया है।

पृथङ्मुष्टिः भाणशैली में लिखित उत्पाद्य वर्ग का रूपक है।

कालीदर्शनम् में दो लघु अंक हैं। प्रथम अंक में दक्षिणेश्वर में स्थित अपने पति की उन्मत्तावस्था का समाचार सुनकर शारदा उन्हें देखने को व्याकुल होती हैं तथा चैतन्य जयन्ती पर समुचित अवसर जानकर वहाँ जाने का निश्चय करती हैं। द्वितीय अंक में मार्ग में अस्वस्थ हो जाने के कारण शारदा देवी को निकटस्थ काली मन्दिर में विश्राम करना पड़ता है। रात्रि में देवी उन्हें पति-दर्शन का आशीर्वाद देकर कृतार्थ करती हैं।

सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम् में अतिलघु दो अंक हैं। प्रथम अंक में कुब्जा सैरन्ध्री की प्रिय सखी सुशीला सैरन्ध्री के कृष्ण-भक्ति-परक गीत सुनकर कृष्ण का चित्र देखने के लिए उसके समीप आती है। तभी नागरिकों की घोषणा से कृष्ण-बलराम के मथुरा आगमन की सूचना मिलती है। द्वितीय अंक में सैरन्ध्री व उसकी सखी अंगानुलेपन की सामग्री लेकर कृष्ण-बलराम के स्वागतार्थ निकल पड़ती हैं। गाते-बजाते कृष्ण-भक्तों की भीड़ को चीर कर कुब्जा कृष्ण के पास पहुँचकर उन्हें अंगराग लगाती है। कृष्ण के स्पर्श से उसका कूबड़ दूर हो जाता है तथा वह अपूर्व सुन्दरी हो जाती है।

कुचेलवृत्तम् में छोटे-छोटे सात अंक हैं। कुचेल शब्द का अर्थ होता है खराब वस्त्रों वाला। कुचेल अत्यन्त दरिद्र है, जिसे श्रीमद्‌भागवत पुराण में सुदामा नाम से कहा गया है। भूख से व्याकुल उसके बच्चे माता से भोजन की याचना करते हैं। द्वितीय अंक एवं तृतीय अंक में पत्नी के बहुशः प्रेरित करने पर कुचेल अपने मित्र कृष्ण से मिलने जाता है। चतुर्थ एवं पंचम अंक में मिलने के लिए आए कुचेल का नाम रूक्मिणी से सुनकर कृष्ण स्वागतार्थ दौड़ पड़ते हैं।

कुचेल संकोच वश चिवड़ा नहीं दे पाता। कृष्ण बलपूर्वक उससे चिवड़ा छीन लेते हैं। लौटने पर अपने निर्धन गृह को ऐश्वर्य सम्पन्न देखकर विस्मित कुचेल एवं उसका परिवार कृष्ण का गुणगान करता है।

डॉ० वीणापाणि पाटनी रचित 'मधुराम्लम्' में पाँच रूपक हैं।

निम्बपत्राणि पंचदृश्यात्मक रूपक है। प्रथम दृश्य में छह स्नातक विद्याध्ययन की समाप्ति पर गुरुवात्स्यायन से आशीर्वाद लेकर आश्रम से विदा होते हैं। द्वितीय दृश्य में बुभुक्षा से व्याकुल होकर नैयायिक शारद्वत समीपवर्ती गाँव में घृत लाने तथा आयुर्वेदाचार्य जीवक शाक की व्यवस्था करने जाते हैं। वैयाकरण वैदुल गुरुमाता के दिए चावलों को पकाने की व्यवस्था करता है। पकते हुए चावलों में से आती वद-वद की ध्वनि को व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध मानकर अशुद्ध पाठ को सुनने के पाप से बचने के लिए लाठी से वटलोई गिरा देता है जिससे चावल नष्ट हो जाते हैं। तृतीय दृश्य में शारद्वत 'घृत पात्र में है अथवा पात्र घृत में है' — अपनी इस शंका के निवारण के लिए पात्र को उलट देता है जिससे समस्त घृत नष्ट हो जाता है। चतुर्थ दृश्य में जीवक वैद्यक की दृष्टि से प्रत्येक शाक में कोई न कोई दोष देखकर नीम के पत्तों को ही समस्त दोष-नाशक समझ कर ले आता है। पंचम दृश्य में तीनों स्नातक अपना-अपना वृतान्त सुनाते हैं। घृत, चावल एवं शाक के अभाव में उन्हें नीम के पत्तों को ही खाना पड़ता है। कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से किम्वदन्ती पर आश्रित यह रूपक लोककथा परक है।

प्रतिबुद्धा रूपक में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में अलार्म देर से बजने के कारण ललित विलम्ब से उठता है। चाय, क्षौरकर्म की सामग्री तथा जूते आदि यथास्थान व समय से न मिलने से उसे कार्यालय पहुँचने में विलम्ब हो जाता है। पति को विदा कर सुलेखा जैसे ही कार्यालय के लिए निकलना चाहती है तभी शाक विक्रेत्री मालाकार तथा रजक अपने-अपने हिसाब लेकर उपस्थित होते हैं। उन्हें विदाकर बच्चों को नौकर गिरधारी को सौंप कर विलम्ब से कार्यालय के लिए निकल पाती है। द्वितीय दृश्य में कार्यालय से लौटे थके सुलेखा एवं ललित घर की अव्यवस्था के कारण कलह एवं व्यंग्य करते हैं। तृतीय दृश्य में दूसरे दिन सांयकाल सुलेखा सुसज्जित हो, घर को सुव्यवस्थित कर ललित के घर लौटने पर मुस्कराकर चाय से स्वागत करती है। इस परिवर्तन का कारण पूछने पर सुलेखा कहती है कि घर एवं कार्यालय के कार्यों में सामंजस्य न कर पाने के कारण उसने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया है। ललित अब आर्थिक चिन्ता से दुःखी हो जाता है। उसी समय आशुतोष सुलेखा को घर एवं कार्यालय के कार्यों में सामंजस्य करने का परामर्श देकर प्रतिबुद्ध बनाता है। कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से समीक्ष्य रूपक की कथा वस्तु कल्पना प्रसूत होने से उत्पाद्य है।

यथार्थ्यगरलम् नामक चतुर्दश्यात्मक रूपक के प्रथम दृश्य में देवदत्त पूजा में भगवान् से लाटरी खुलने की याचना करता है। स्वप्न में भी उसने देखा है कि एक दिव्याकृति ने लाटरी का परिणाम उसके अनुकूल होने का आश्वासन दिया है। द्वितीय दृश्य में देवदत्त को कमिश्नर महोदय के यहाँ नवरात्र में दुर्गापाठ तथा विजयादशमी पर सपत्नीक सहभोज का निमन्त्रण मिलता है। वह ज्योतिष विद्या के आधार पर वहाँ धन एकत्र करने की योजना बनाता है। तृतीय दृश्य में सहभोज के अवसर पर आमन्त्रित अतिथियों में से कुछ को राहु, केतु व शनि के प्रीत्यर्थ जप एवं दान करने का सुझाव देकर पूजा-पाठ के लिए अग्रिम धनराशि भी लेता है। चतुर्थ दृश्य में देवदत्त का मित्र यज्ञदत्त देवदत्त के नाम लाटरी खुलने का समाचार सुनाता है। प्रसन्न देवदत्त एवं उसकी पत्नी वस्त्राभूषण खरीदने की योजना बनाते हैं। तभी पत्रवाहक पत्र लाकर देता है जिसके अनुसार लाटरी समान नाम एवं जाति वाले किसी अन्य स्थान के निवासी देवदत्त के नाम निकली है। प्रमाद से पहले प्रसारित गलत सूचना के लिए क्षमा-याचना की गई थी। देवदत्त की प्रसन्नताओं पर सहसा तुषारापात हो जाता है।

नारददौत्यम् में चार दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में चन्द्रमादि ग्रहों पर मानव के पहुँचने का समाचार सुनकर इन्द्र मानवों द्वारा देवलोक के विजित होने की आशंका से भयभीत होकर नारद को दूत रूप में पृथिवी पर नवीनतम वैज्ञानिक प्रगति को ज्ञात करने भेजते हैं। द्वितीय दृश्य में नारद सर्वप्रथम बम्बई जाते हैं। राजेश की बहिन नीता दुग्ध चूर्ण से निर्मित चाय से नारद का स्वागत करती है। सायंकाल वह राजेश, माधव तथा नीता के साथ क्लब जाते हैं। नाद-ब्रह्म-रूप संगीत के स्थान पर पॉप संगीत पर थिरकते युवक-युवतियों को देखकर नारद संगीत की दुरवस्था से दुःखी होते हैं। तृतीय दृश्य में दिल्ली आकर नारद दौवारिक की अनुमति से गृहमन्त्री महोदय से भेंट कर पाते हैं तथा भारत की दुरवस्था पर देवताओं की चिन्ता से उन्हें अवगत कराते हैं। देश के आन्तरिक मामलों में देवताओं की चिन्ता से गृहमन्त्री क्रुद्ध होकर भारत के विकास के लिए आयोजित पंचवर्षीय योजना, परिवार नियोजन आदि कार्यक्रमों की जानकारी देते हैं। आगामी चुनावों में वह इन्द्र की सहायता माँगते हैं ताकि समय पर वृष्टि होने से समुचित धनधान्य से कृषक सन्तुष्ट होकर उन्हें वोट दें। चतुर्थ दृश्य में नारद देवलोक पहुँच कर भारत की दुर्दशा इन्द्र से निवेदित करते हैं। भूलोक वासियों की दीन अवस्था देखकर इन्द्र निश्चिन्त हो जाते हैं। कथावस्तु के स्रोत की दृष्टि से यह उत्पाद्य रूपक है।

कविकालिदासीयम् में छोटे-छोटे दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में कवि गोष्ठी में कालिदास के श्लोक पर प्रसन्न होकर भोज उन्हें एक लक्ष स्वर्ण मुद्रा पुरस्कार स्वरूप देते हैं। द्वितीय दृश्य में कालिदास की बढ़ती प्रतिष्ठा से चिन्तित मयूर, कर्पूर आदि कवि उनके प्रभाव को कम करने की योजना बनाते हैं। तृतीय एवं

चतुर्थ दृश्य में चार पण्डित अपने निर्मित श्लोक के चुतर्थ पाद को कालिदास से पूर्ण कराकर राजा भोज को सुनाते हैं। चुतर्थ चरण में चमत्कार होने से उसी चरण के लिए पण्डितों को पुरस्कार देते हैं। पंचम दृश्य में कवियों के भड़काने पर राजा कालिदास को सभा से निष्कासित कर देते हैं। कवयित्री सीता की प्रार्थना पर पुनः कालिदास की खोज करवाते हैं। षष्ठ दृश्य में राजा के श्लोकार्ध को पूर्ण न कर पाने से कर्पूर आदि कवि नगर छोड़ कर जाते हैं। कालिदास चारण रूप में उस श्लोक की पूर्ति करते हैं। राजा के आदेश पर गुप्तचर विलासवती के भवन में कालिदास को खोज निकालते हैं। भोज स्वयं आकर उन्हें सभा में लाकर पूर्वपद पर प्रतिष्ठित करते हैं। कवि कालिदासीयम् की कथावस्तु प्रख्यात है जिसको भोज प्रबन्ध से लिया गया है।

श्रीमती नलिनी शुक्ला के **'राधानुनयः'** में पाँच दृश्य हैं। प्रस्तुत दृश्य में राधा-कृष्ण का स्तुतिपरक मंगलाचरण प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय दृश्य में कृष्ण के साथ रासक्रीड़ा में राधा को अनुपस्थित देखकर दो सखियाँ रास छोड़कर वहाँ क्रा वृतान्त राधा को कहती हैं। तृतीय दृश्य में कृष्ण के विरह में राधा विरह गीत गाती हैं तथा सखियों से कृष्ण दर्शन की अभिलाषा प्रकट करती है। चतुर्थ दृश्य में स्वयं के आगमन पर प्रणयमान युक्त राधा का कृष्ण अनुनय करते हैं। पंचम दृश्य में सखियाँ दिव्य रूप में अवस्थित राधा तथा कृष्ण की अर्चना करती हैं।

उपर्युक्त कथावस्तु का स्रोत श्रीमद्भागवत महापुराण है लेकिन वर्णनों से ऐसा प्रतीत होता है कि नाट्यकर्त्री ने अपना उपजीव्य श्रीमद्भागवत पुराण को न बनाकर जयदेव के गीतगोविन्द को बनाया है। भागवत् पुराण का रास शरद् ऋतु का रास है लेकिन गीत गोविन्द तथा राधानुनयः का रास बसन्त ऋतु का रास है। अतः उपर्युक्त संगीतिका का उपजीव्य गीत गोविन्द है।

पार्वतीतपश्चर्या में पाँच दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में पार्वती व शिव की प्रार्थना की गई है। द्वितीय दृश्य में नारद शुभलक्षण सम्पन्न पार्वती के भावी पति के रूप शिव के सम्बन्ध में हिमालय को बतलाते हैं। नारद के जाने पर हिमालय सखियों के साथ पार्वती को शिवाराधन के लिए भेजते हैं। तृतीय दृश्य में पार्वती की अर्चना से प्रसन्न शिव पार्वती को अभीष्ट प्राप्ति का आशीर्वाद देते हैं। तभी कामदेव के शर-संधान से शिव विकारग्रस्त हो जाते हैं तथा कारण ज्ञात होने पर उसे भस्म कर पुनः समाधिस्थ हो जाते हैं। चतुर्थ दृश्य में कामदेव के भस्म हो जाने से विलाप करती रति को बसन्त सान्त्वना देता है। पंचम दृश्य में पार्वती शिव की प्राप्ति के लिए कठोर तपस्या करती है। कठोर तपस्या से प्रसन्न शिव वटुक रूप में आकर उसकी परीक्षा लेते हैं तथा पत्नी रूप में पार्वती को स्वीकार करने का वचन देते हैं। प्रस्तुत रूपक की कथा मूलतः शिवपुराण की है किन्तु नाट्यकर्त्री ने महाकवि कालिदास के कुमार सम्भव को ही इसका आधार

बनाया है। भाव, भाषा शैली मे नाट्यकर्त्री कालिदास से ही प्रभावित हैं। रघुवंश के प्रथम श्लोक को रूपक में मंगलाचरण रूप में प्रस्तुत किया गया है।

डॉ० मिथिलेश कुमारी मिश्रा ने एक नाटिका एवं दस एकांकियों की सर्जना की है। 'आम्रपाली' में पाँच अंक हैं। प्रथम अंक में संगीत साधना में निरक्त आम्रपाली के गीत से आकृष्ट अजातशत्रु अनुरक्त हो उससे प्रणय निवेदन करता है। आम्रपाली उसे आश्वस्त कर अगले दिन होने वाले अपने स्वयंवर में आमन्त्रित करती है। द्वितीय अंक में अजातशत्रु की अनुपस्थिति में किसी अन्य का वरण न करने पर आम्रपाली को नगरवधू घोषित कर दिया जाता है। बाद में आये हुए अजातशत्रु के प्रणय को गणराज्य के नियमों में आबद्ध आम्रपाली द्वारा ठुकरा दिए जाने पर प्रणयाहत अजातशत्रु वैशाली पर आक्रमण की धमकी देता है। तृतीय अंक में श्रमण-युगल के वार्तालाप से ज्ञात होता है कि वैशाली के सैनिकों द्वारा क्षत-विक्षत कर बन्दी बनाया गया अजातशत्रु आम्रपाली की सेवा से स्वस्थ होकर पाटलीपुत्र लौट गया है। श्रमण-युगल से ही आम्रपाली को ज्ञात होता है कि शीघ्र ही तथागत उस पर कृपा दृष्टि करेंगे। चतुर्थ अंक में आम्रपाली के संघाराम में प्रवेश हेतु बुद्ध परीक्षा लेते हैं। उसकी निष्ठा देखकर श्रमण-समूह भी आम्रपाली के प्रवेश की प्रार्थना करता है। पंचम अंक में बुद्ध आम्रपाली को भिक्षुणी की दीक्षा देते हैं। भावावेश में अजातशत्रु भी भिक्षुक बनना चाहता है। आम्रपाली के आदेश से वह प्रजा की अनुमति लेने चला जाता है और अन्त में भिक्षुक बन जाता है।

आम्रपाली एक ऐतिहासिक नाटिका है। नाट्यकर्त्री ने इसका उपजीव्य रामवृक्ष वेनीपुरी के हिन्दी नाटक 'अम्बपाली' को बनाया है। यद्यपि नाट्यकर्त्री ने इतिहास के विरुद्ध आम्रपाली का अजातशत्रु से प्रेम दिखाया गया है किन्तु रामवृक्ष वेनीपुरी के अम्बपाली नाटक में भी ऐसा ही वर्णन मिलता है। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार आम्रपाली का अजातशत्रु के पिता बिम्बसार से प्रेम था।[२१] भिक्षुणी बनने को तत्पर आम्रपाली के पास जब अजातशत्रु प्रणय-याचना करने आता है तो वह उसे बिम्बसार की तस्वीर अवश्य दिखाती है,जो उसके पास विवाह के निमित्त भेजी गई थी। आम्रपाली का विश्वास था कि पिता की तस्वीर देखकर अजातशत्रु उससे विमुख हो जाएगा। इस प्रकार प्रस्तुत ऐतिहासिक आख्यान में पर्याप्त कल्पना का आश्रय लेकर इतिवृत्त को मिश्र कोटि का बना दिया गया है।

दशमस्त्वमसि रूपक संग्रह में दस रूपक संगृहीत हैं। 'सत्यमेव जयते' के अतिरिक्त समस्त एकांकी कल्पना प्रसूत होने के कारण उत्पाद्य वर्ग में आयेंगी। 'सत्यमेव जयते' ३ अप्रैल १९३० में घटित हुई गान्धी जी के नेतृत्व में नमक

कानून तोड़ने की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है।[२२] उस समय इर्विन वायसराय था। अतः इसकी कथावस्तु प्रख्यात ऐतिहासिक है।

दशमस्त्वमसि रूपक संग्रह के प्रथम रूपक **चराचरसंचितकर्मयन्त्रितम्** में पाँच दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में तपोधन नारद से कहता है कि ईश्वर से पूछ कर बतायें कि उसे उनके दर्शन कब होंगे? द्वितीय दृश्य में सुव्रत नामक तपस्वी भी नारद द्वारा मनोकामना पूछे जाने पर हरिदर्शन की अभिलाषा प्रकट करता है। तृतीय दृश्य में नारद विष्णु से दोनों तपस्वियों की अभिलाषा निवेदित करते हैं। भगवान् तपोधन को सात तथा सुव्रत को अनन्त जन्मों बाद दर्शन देना स्वीकार करते हैं। चतुर्थ दृश्य में विष्णु का सन्देश सुनकर तपोधन नारद को मारने के लिए दौड़ता है। पंचम दृश्य में अनन्त जन्मों के बाद भी दर्शन देने के भगवान के सन्देश को सुनकर सुव्रत प्रसन्न हो उठता है तथा नृत्य करता हुआ मूर्च्छित हो जाता है। सुव्रत की निष्ठा देखकर भगवान् तत्काल प्रकट होकर उसे दर्शन देते हैं।

अलक्ष्यं दूरदर्शनम् पाँच दृश्यों में विभक्त रूपक है। इसकी कथावस्तु उत्पाद्य है। प्रथम दृश्य में महेश द्वारा सेवक कंचन को पानी लाने का आदेश देने पर वह जल से भरा घड़ा ले आता है। बाजार जाने के लिए तैयार महेश जब छाता माँगता है तो सेवक जूते आदि आवश्यक सामान न लाकर केवल छाता लाता है। महेश उसे दूरदर्शिता पूर्ण अधिक काम करने को कहता है। तृतीय दृश्य में वैद्य को घर की तरफ भेजकर सेवक दूरदर्शिता पूर्वक कार्य करने का विचार करता है। चतुर्थ दृश्य में सेवक विचार करता है कि वैद्य के उपचार से शिरोवेदना सही नहीं हुई तो स्वामी का मरण निश्चित है। अतः वह महापात्र, नाई, वृषोत्सर्ग के लिए वृष तथा तिल, यव, गुड़, धान्यादि लाकर एकान्त में रोने लगता है। पंचम दृश्य में शवयात्रा में विलम्ब होता देखकर महापात्र आदि महेश के घर के भीतर पहुँच जाते हैं। सेवक के मूर्खता पूर्ण कृत्यों को जानकर क्रुद्ध महेश उसे सेवा-मुक्त कर देता है।

उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् की कथावस्तु उत्पाद्य श्रेणी की है। इसमें दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में नारद के मुख से स्वर्ग की प्रशंसा सुनकर एक ग्रामीण उन्हें प्रसन्न करके स्वर्ग देखने की अभिलाषा व्यक्त करता है। द्वितीय दृश्य में कल्पतरु के नीचे उसके मन में मार्ग श्रम को दूर करने का विचार आते ही अप्सरा एवं गन्धर्व उसकी सेवा में उपस्थित हो जाते हैं। तभी उसके मन में विचार उठता है कि यदि यह दृश्य उसकी पत्नी ने देख लिया तो अवश्य ही वह सभी को मारेगी। यह दृश्य भी साकार होता है। फलतः ग्रामीण तथा उसकी पत्नी स्वर्ग में उपहास के पात्र बनते हैं।

सत्यमेव जयते में प्रख्यात कथावस्तु को एक दृश्य में गुम्फित किया गया है किन्तु एकांकी में तीन उपदृश्य प्रतीत होते हैं। प्रथम दृश्य में काठियावाड़

जनपद के लोग गान्धी जी के नेतृत्व में नमक कानून तोड़ने के लिए सत्याग्रह करने का निश्चय करते हैं। द्वितीय उपदृश्य में सत्याग्रह करने के कारण बन्दी बनाये गये गान्धी न्यायाधीश के समक्ष मानवाधिकार पर ओजस्वी तर्क प्रस्तुत करते हैं जिससे प्रभावित न्यायाधीश उन्हें अपराध मुक्त घोषित करता है। तृतीय उपदृश्य में वायसराय गान्धी को पदादि के प्रलोभनों तथा सामादि उपायों से वश में करना चाहता है। अन्त में गान्धी की दृढ़ता के कारण किंकर्तव्यविमूढ़ होकर उन्हें मुक्त कर देता है। प्रस्तुत एकांकी के पात्र व घटनाएँ ऐतिहासिक हैं। नमक कानून तोड़ने की घटना ३ अप्रैल १९३० में हुई जब इर्विन वायसराय था।[२३]

सचाप्यस्तिरजक एव की कथावस्तु दो दृश्यों में विभक्त है। कथावस्तु उत्पाद्य है। प्रथम दृश्य में दो धोबी परस्पर झगड़ते हुए स्वयं को दूसरे से अधिक ज्ञानी सिद्ध करते हैं। तभी नदी में आकण्ठ डूबे एक महात्मा पर दृष्टि पड़ते ही वे उसकी भक्ति की प्रशंसा करते हैं। जैसे ही महात्मा नदी से बाहर निकलता है तो धोबी के धुले हुये कपड़े गन्दे हो जाते हैं। दोनों धोबी उसे मारने दौड़ते हैं। द्वितीय दृश्य में भूमण्डल पर इस दृश्य को देखकर भगवान् भक्त की रक्षा के लिए आना चाहते हैं। तभी भक्त को अपनी रक्षा के लिए पत्थर उठाये देख वह उसकी रक्षा से विरत हो जाते हैं।

ज्ञानेनहीनाः पशुभिः समानाः नामक एकांकी में उत्पाद्य कोटि की कथावस्तु है। रघुराज के नवनिर्मित तिमंजिले मकान की भव्यता से आश्चर्यचकित गोपाल उससे कहता है कि तिमंजिले से तो गृहस्वामी की मृत्यु होने पर चक्राकार सीढ़ियों से शव को नीचे उतारना कठिन होगा। इस पर क्रुद्ध रघुराज उसे बन्दी बनाकर पिटवाता है। शिवपाल उसे खोजते हुए वहाँ पहुँचता है। अपने भाई के मूर्खतापूर्ण विचारों के लिये क्षमा माँगकर गृहस्वामी को प्रसन्न करने के उद्देश्य से कहता है कि यदि तिमंजिले पर मृत्यु हो भी जाये तो शवातरण रस्सियों से हो सकता है। ऐसा कहने पर उसे भी बन्दी बना लिया जाता है। शिवपाल का अग्रज हरिपाल खण्ड खण्ड करके शवातरण की विधि सुझाता है। उनका पिता ऊपर ही दाहक्रिया का सुझाव देता है। सभी मूर्खता पूर्ण विचारों के लिये दण्डित होते हैं। अन्त में लड़कों की माता आकर बच्चों व पति की मूर्खता के लिये क्षमा माँगती है तथा उन्हें मुक्त कराती है।

न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः में उत्पाद्य कथावस्तु है तथा दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में सत्याग्रह आन्दोलन में प्राणों का परित्याग करने वाले जानकी नाथ की अनाथ कन्या का विवाह यशोदा अपने इकलौते पुत्र से करना चाहती है। न चाहते हुए भी गोपाल माँ की आज्ञा स्वीकार कर लेता है। द्वितीय दृश्य में विवाह के पश्चात् गोपाल शहर वापस चला जाता है तथा सत्याग्रह आन्दोलन में आजीवन करावास का दण्ड पाता है। कारागार से वह पत्नी के लिए 'न मुनिःपुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः' यह सन्देश भेजता है। जिसका

तात्पर्य है कि न देश स्वतन्त्र होगा न कारागार से मुक्ति मिलेगी। पार्वती पति के आश्य को समझ कर चिर-प्रतीक्षा में लीन हो जाती है।

भक्तराज में भी उत्पाद्य श्रेणी की कथा है। इसकी कथावस्तु चार दृश्यों में है। प्रथम दृश्य में भगवान् विष्णु अपने भक्त के लिये एक सुन्दर भवन बनवा रहे हैं। नारद उस भक्त को देखने की अभिलाषा प्रकट करते हैं। द्वितीय दृश्य में अशोकानन्द गुरु के रूप में नारद तथा शोकानन्द शिष्य के रूप में विष्णु रुपये की गणना में संलग्न सेठ से भिक्षा याचना करते हैं। सेठ द्वारा दुत्कारे जाने पर विष्णु उसकी गणना को चौगुनी होने का आशीर्वाद देते हैं। तृतीय दृश्य में गुरु और शिष्य एक जर्जर कुटी पर पहुँचते हैं। भक्त शीघ्र ही गाय दुह कर दूध से उन दोनों का स्वागत करता है। प्रसन्न होने पर भी विष्णु उसकी गाय मरने की कामना करते हैं। चतुर्थ दृश्य में विष्णु नारद को अपने आशीर्वाद का रहस्य समझाते हैं कि बन्धु-बान्धवों से रहित होने पर भी भक्त गाय में आसक्त है, अतः गाय के मरने पर अधिक निष्ठा से भगवद्भजन कर सकेगा और उसकी मुक्ति शीघ्र सम्भव है। दूसरी ओर सेठ जन्म-जन्मान्तर तक पैसे में आसक्त रहेगा जिससे उसकी मुक्ति असम्भव है।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः नामक उत्पाद्य श्रेणी की कथावस्तु तीन दृश्यों में विभक्त है। प्रथम दृश्य में वेदप्रकाश गान्धी जी के आह्वान पर सत्याग्रही हो जाता है। पुत्र के इस निर्णय से दुःखी देवव्रत को उसकी पुत्रवधू मंगला धैर्य बँधाती है। द्वितीय दृश्य में वेदप्रकाश को खोजते हुए सैनिक उसके घर पहुँच कर उसकी पत्नी तथा पिता को प्रताड़ित करते हैं। परिणामस्वरूप पिता की मृत्यु हो जाती है। उसका घर भी जला दिया जाता है। तृतीय दृश्य में मृत्यु के मुख से लौटा वेदप्रकाश अपनी पत्नी के मुख से घर की दुर्दशा का वृतान्त जानकर हताश होता है तथा सत्याग्रह छोड़ने का निश्चय कर लेता है। पत्नी के समझाने पर वह पुनः राष्ट्रमुक्ति का संकल्प लेकर घर छोड़ देता है।

'दशमस्त्वमसि' में एक ही दृश्य है। इसकी कथावस्तु भी उत्पाद्य है। नदी के पार जाने के इच्छुक दसमुनि नौका की प्रतीक्षा करते हुये शास्त्र-चर्चा करने लगते हैं। नौका के आने पर दूसरे किनारे पर उतर कर गिनती करने पर एक मुनि को कम पाते हैं। प्रत्येक मुनि स्वयं को छोड़कर अन्य नौ को गिनता है। कुछ नाविक को दोषी ठहराते हैं तथा शाप देने को तत्पर होते हैं। तभी नाविक क्रमशः दसों मुनियों को गिनकर दस संख्या पूरी कर देता है। सभी मुनि उसे साधुवाद देते हैं। मुनियों की मूर्खता देखकर वह मुस्कुराता है।

परशुरामप्रतिज्ञा श्रीमती सुधासहाय की एकमात्र उपलब्ध नाट्यकृति है। प्रख्यात इतिवृत्त युक्त इसका आधार महाभारत का वनपर्व है।[२४] समीक्ष्य रूपक में पाँच दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में कार्तवीर्य अर्जुन के अत्याचारों से पीड़ित देवगण सहायतार्थ विष्णु के समक्ष उपस्थित होते हैं। विष्णु परशुराम के रूप में अवतीर्ण

होकर अत्याचारों से मुक्ति का आश्वासन देते हैं। द्वितीय दृश्य में रेणुका तथा जमदग्नि अपने पाँचों पुत्रों की परीक्षा लेते हैं। पिता जमदग्नि द्वारा माता का शीर्षच्छेद करने के लिये कहे जाने पर केवल परशुराम ही इस कृत्य में प्रवृत्त होते हैं। आज्ञा-पालन से प्रसन्न जमदग्नि परशुराम की प्रार्थना पर माता को पुनर्जीवन एवं उन्हें शाश्वत वीरता तथा अपने द्वारा क्रोध न करने का वरदान देते हैं। तृतीय दृश्य में कार्तवीर्य अर्जुन जमदग्नि को मारकर कामधेनु को ले जाता है। चतुर्थ दृश्य में पितृ-वध से क्रुद्धं परशुराम पृथिवी को हैहय क्षत्रियों से रहित करने की घोषणा करते हैं। पंचम दृश्य में सहस्त्रार्जुन का वध करने पर भी परशुराम का क्रोध शान्त नहीं होता देख कर देवगण रेणुका से पुत्र को समझाने की प्रार्थना करते हैं। माता के कहने पर परशुराम क्षत्रियवध से विरत हो जाते हैं।[२५]

श्रीमती विजयलक्ष्मी त्रिवेदी की उपलब्ध नाट्यरचना है —**'नचिकेतः कुत्र गतोऽसि'** पौराणिक कथाशैली का आश्रय लेते हुए पूर्णतः कल्पना द्वारा यह वर्तमान शिक्षण संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार को प्रकाशित करती है। कथावस्तु उत्पाद्य कोटि की है।

प्रस्तुत रूपक में चार दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में पिता को वृद्ध गायों का दान करते देखकर नचिकेता पूछता है कि मुझे किसको देंगे। पिता कहते हैं कि तुझे यम को दूँगा। द्वितीय दृश्य में यम की अनुपस्थिति के कारण गुरुकुल का कार्यभार उनकी पत्नी विद्यादेवी सँभालती है। द्वारपाल नचिकेता को वापस करता है, परन्तु नचिकेता द्वारा स्वर्ण कंकण दिये जाने पर वह उसे विद्यादेवी के पास पहुँचने का मार्ग बता देता है। तृतीय दृश्य में सफलकाम नामक राजपुत्र विद्यादेवी को अपने पिता के राज्य में शिक्षामन्त्री के पद का लोभ देकर प्रवेश पाने में सफल हो जाता है। विद्यादेवी द्वारा लोभवश स्थान न होने पर भी सफलकाम को प्रवेश देता देख नचिकेता विद्यादेवी के पास न जाकर आचार्य यम के आगमन की प्रतीक्षा करता है। चतुर्थ दृश्य में प्रवास से लौटे आचार्य से विद्यादेवी सफलकाम के राज्य में शिक्षा मंत्री बनाने की अनुमति माँगती है। विद्यादेवी की लोभी वृत्ति जानकर आचार्य दुःखी मन से अनुमति देते हैं। साथ ही अपने शिक्षा संस्थान को भी बन्द कर देते हैं।[२६]

कु० निर्मला शुक्ला द्वारा रचित **'यातुकं पातकं परम्'** की कथावस्तु उत्पाद्य है, जिसमें दो दृश्य हैं।

प्रथम दृश्य में दहेज के लोभी क्षेमकरण एवं सरला अपने अभियन्ता पुत्र का विवाह धनाढ्य अशोक की पुत्री से निश्चित करते हैं।

द्वितीय दृश्य में निश्चित समय पर तीनों लड़की देखने जाते हैं। सम्बन्ध निश्चित करने के रूप में इक्कीस हजार नगद तथा विवाह के समय टी० वी०, फ्रिज, कूलर, गाड़ी आदि की माँग करते हैं। अशोक जो कि गुप्तचर विभाग का

अधिकारी है, गुप्त रूप से उनकी समस्त वार्ता रिकॉर्ड कर लेता है तथा पैसे लेते हुये उनकी फोटो भी ले लेता है। क्षेमकरण द्वारा पूर्व में पुत्रवधू की हत्या की स्वीकृति कर लेने पर तथा अन्य साक्ष्य उपस्थित होने पर अशोक अपना परिचय देकर उन तीनों को बन्दी बना लेता है।

भक्तिसुधा मुखोपाध्याय द्वारा रचित दो रूपक उपलब्ध हैं। **'सुकन्या'** की कथावस्तु का चयन महाभारत के वनपर्व से किया गया है। इसमें छोटे-छोटे तीन अंक हैं। प्रथम अंक में राजा शर्यातिकी कन्या सुकन्या सखियों के साथ वनविहार को जाती है। वहाँ बाँबी में से चमकती हुई मुनि च्यवन की आँखों को मणि समझ कर लकड़ी से वेध देती है। उनमें से खून निकलता देखकर जब बाँबी हटाई जाती है तो उसमें तपस्यारत च्यवन के कहने पर प्रायश्चित स्वरूप उनकी पत्नी बनने के लिए अपनी स्वीकृति दे देती है। द्वितीय अंक में सुकन्या के रूप सौन्दर्य से मुग्ध अश्विनीकुमार च्यवन की निन्दा करते हैं। सुकन्या उन्हें फटकारती है। वे दोनों उसके पातिव्रत गर्व को दूर करने की योजना बनाते हैं। तृतीय अंक में समरूपधारी तीन युवकों मे से सुकन्या आकाशवाणी की सहायता से अपने पति को पहचानने में सफल हो जाती है। अश्विनी कुमार उसके पातिव्रत से प्रसन्न होते हैं।

मदनदहनम् छोटे-छोटे पाँच अंकों का रूपक है। इसकी कथावस्तु का ग्रहण शिवपुराण से किया गया है। प्रथम अंक में देवराज इन्द्र द्वारा बुलाए जाने पर मदन (कामदेव) मन ही मन इसके कारण का विचार करता है। द्वितीय अंक में इन्द्र मदन को शिव की तपस्या भंग करने का आदेश देते हैं। तृतीय अंक में रति एवं वसन्त के साथ मदन शिव की तपस्या में विघ्न करने जाता है। चतुर्थ दृश्य में रति व मदन नृत्य, गान आदि द्वारा शिव को तपस्या विरत करने में असमर्थ रहते हैं। तभी शिव पूजा के लिए आती हुई पार्वती को देखकर कामदेव शर-सन्धान करता हैं। शिव की विचलित दृष्टि सहसा मदन पर पड़ती है तथा वह भस्म हो जाता है। पंचम दृश्य में शिव अन्तर्हित हो जाते हैं। पति के नष्ट होने के शोक से रति मुर्च्छित हो जाती है। वसन्त उसकी मूर्च्छा दूर करने का प्रयास करता है। खिन्न मन से पार्वती घर वापस आ जाती है।

सुश्री अर्चना विरचित बाल एकांकी **'को भेदः'** में एक दृश्य है। एक मनुष्य को शंका होती है कि देव एवं असुर में क्या भेद है ? नारद शंका निवारण के लिए उसे विष्णु के समीप ले जाते हैं। शंका निवारणार्थ भगवान् विष्णु ने देवों एवं असुरों को सहभोज में आमन्त्रित किया और भोजन के लिए एक शर्त रखी कि हाथों को तोड़े-मरोड़े बिना भोजन किया जाएगा। असुर भोजन पर टूट पड़ते हैं तथा शर्त के अनुसार भोजन करने में असमर्थ हुए भोज्य सामग्री को नष्ट कर देते हैं। देवता परस्पर एक दूसरे के सम्मुख बैठ जाते हैं तथा हाथ बिना मोड़े

हुए ही एक दूसरे को भोजन कराकर सन्तुष्ट एवं तृप्त हो जाते हैं। मनुष्य असुरों की स्वार्थपरता एवं देवों की उदारता देख कर सुर-असुर के भेद को समझ जाता है।

सुश्री आशा द्वारा रचित दो रूपक उपलब्ध हैं— महामुनिः दधीचिः एवं शठेशाठ्यं समाचरेत्। **महामुनिः दधीचिः** में तीन दृश्य हैं। प्रथम दृश्य में इन्द्र प्रमुख कुछ देवता असुरों के भय से अपने शस्त्रास्त्रों को बचाने के लिए उन्हें महर्षि दधीचि के पास सुरक्षित रख देते हैं। द्वितीय दृश्य में उन शस्त्रास्त्रों को प्राप्त करने के लिए असुर उपद्रव करते हैं। लेकिन दधीचि द्वारा रचित उन अस्त्र-शस्त्रों को प्राप्त करने में वे असमर्थ रहते हैं। दधीचि राक्षसों के बढ़ते उपद्रव को देखकर तथा सहस्रों वर्षों तक देवताओं को वापस आया हुआ न देखकर दधीचि अपने तप के प्रभाव से उन शस्त्रों का भक्षण कर लेते हैं। तृतीय दृश्य में देवताओं द्वारा शस्त्र माँगने पर महात्मा दधीचि योग द्वारा प्राणों का परित्याग कर देते हैं। विश्वकर्मा उनकी अस्थियों से अजेय शस्त्रों का निर्माण करते हैं। देवता उन्हें साधुवाद देते हैं। इस कथावस्तु का ग्रहण श्रीमद्भागवत-महापुराण षष्ठ स्कन्ध के दशम अध्याय से किया गया है।

शठे शाठ्यं समाचरेत् में एक दृश्य है। एक भोला-भाला ब्राह्मण सिंह को पिंजरे में बन्द देख कर, उसके द्वारा प्रार्थना करने पर पिंजरे से मुक्त कर देता है। बाहर आया हुआ व्याघ्र ब्राह्मण को मारना चाहता है। तभी एक शृगाल उपस्थित होता है। सिंह उससे पूछता है। शृगाल नासमझ बनकर व्याघ्र को पूरी स्थिति बतलाने को कहता है। वह प्रायोगिक रूप में बताता है वह इस तरह पिंजरे में बन्द था। वह पिंजरे में घुसकर दिखाता है। शृगाल तत्काल उसका पिंजड़ा बन्द कर देता है तथा ब्राह्मण से कहता है कि इसे इसी में बन्द रहने दो वास्तव में दुष्ट के साथ दुष्टता का ही व्यवहार करना चाहिए।

चिन्मयी माहेश्वरी द्वारा रचित तीन रूपक उपलब्ध होते हैं।

सखा सुदामा छह लघु दृश्यों का पौराणिक इतिवृत्त प्रधान रूपक है। प्रथम दृश्य में सान्दीपनि मुनि के आश्रम में गुरुमाता सुदामा के साथ कृष्ण को वन में ईन्धन लाने भेजती है। द्वितीय दृश्य में वन में घनघोर वृष्टि होने पर गुरुमाता के द्वारा दिए चनों को कृष्ण सुदामा मिलकर खाते हैं। तृतीय दृश्य में अध्ययन की समाप्ति पर कृष्ण राजा बनते हैं। चतुर्थ दृश्य में दीन हीन सुदामा को उनकी पत्नी आग्रहपूर्वक कृष्ण के पास भेजती है। पंचम दृश्य में सुदामा के आगमन का समाचार द्वारपाल से सुनकर कृष्ण आनन्द विह्वल होकर स्वागतार्थ दौड़ पड़ते हैं। वार्तालाप के मध्य सुदामा की पत्नी द्वारा दिए गए भोज्य कणों को छीनकर खाते हैं। षष्ठ दृश्य में लौटने पर सुदामा अपने घर को ऐश्वर्य सम्पन्न देखकर कृष्ण का गुणगान करते हैं। इस कथा वस्तु का चयन श्रीमद्भागवतपुराण के दशम स्कन्ध से किया गया है।

चौरस्यचातुर्यम् कल्पित कथावस्तु प्रधान एक दृश्य का बाल एकांकी है। एक चोर चोरी करता हुआ पकड़े जाने पर, राजा के समक्ष उपस्थित किया जाता है। मृत्युदण्ड से पूर्व इच्छापूर्ति के विषय में पूछे जाने पर कहता है कि वह स्वर्ण की खेती जानता है। राजा उसे स्वर्ण की खेती का आदेश देता है। चोर की शर्त है कि खेत में बीज वही डालेगा जिसने कभी चोरी न की हो। वह क्रमशः राजा, मंत्री, पुरोहित सभी को आमन्त्रित करता है, लेकिन सभी ने कभी न कभी चोरी अवश्य की है अतः कोई आगे नहीं आता है। चोर के चातुर्य से प्रसन्न होकर राजा उसे मुक्त करता है।

'भारविः' महाकवि भारवि के जीवन से सम्बद्ध एक किंवदन्ती का आश्रय लेकर रचा गया, एक दृश्य का बाल एकांकी है। बालक भारवि शास्त्र चर्चा में पण्डितों के द्वारा पूछे गए सभी प्रश्नों का उत्तर देते हैं। सभी पण्डित उनके ज्ञान एवं पाण्डित्य की प्रशंसा करते हैं। अपने पुत्र के गर्व को समझकर पिता सभा के मध्य उसकी निन्दा करते हैं। पिता के प्रति क्रोध एवं असूया से ग्रस्त भारवि रात्रि में पिता को मारने जाते हैं, तभी उनका ध्यान माता-पिता के वार्तालाप पर जाता है। पिता माता से उनकी प्रशंसा कर रहे थे। पिता के वास्तविक उद्गार सुनकर भारवि उनसे क्षमा याचना करते हैं।

भारतीवरखेड़कर विरचित **'वनदेवता'** रूपक में एक दृश्य है। यहाँ एक बालिका वन्य प्रान्त में अपने माता पिता से विमुक्त होकर मार्ग भूल जाने से व्याकुल हो कर रोती है। वन देवता उसे सुस्वादु फल देकर उसका मनोरंजन करता है तथा एक राक्षसी को मारकर उसकी रक्षा करता है।

निष्कर्षतः आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं की कथावस्तु तथा स्रोत के पर्यालोचन से निकलता है महिलाओं की सर्वाधिक ४६ रूपक रचनाएँ उत्पाद्य कोटि की है। इनमें सर्वाधिक रूपक रचनाओं का श्रेय लीलाराव को है। दूसरे स्थान पर ऐतिहासिक कोटि की रूपक रचनाएँ लगभग २८ हैं। सर्वाधिक ऐतिहासिक रूपकों की रचना रमा चौधुरी ने की है। तीसरे स्थान पर पौराणिक रूपक लगभग १६ हैं। स्रोत की दृष्टि से दन्तकथा परक रूपकों की संख्या सात है।

संदर्भ

१. दशरूपकम्, १/१५/१६.

२. अनूपः — दिव्यज्योतिः, पृ० १३-१५.

३. आत्मनिर्वासनम् — कथामुक्तावली, पृ० ११८.

४. अनूपः — दिव्यज्योतिः, पृ० १३-१५.
५. आत्मनिर्वासनम् — कथामुक्तावली, पृ० ११६-११८.
६. असूयिनी — कथापंचकम, पृ० ६७-८६.
७. कबूतरखाना — ओ मेरे सपने, पृ० ७०.
८. कपोतालयः — मंजूषा, जून १९५६, पृ० २३२.
९. दूराह्वानं वधोयुद्धं राजदेशादिविप्लवः ।
विवाहो भोजनं शापोत्सर्गौ मृत्युरतंतथा ॥

— साहित्य दर्पण ६/१६

१०. राधा– एषागच्छामि । परमेकदानुतप्यसे ... ।
गणु–(वारयित्वा) वक्ष्यामि पंचत्वमुपगतेति (कराभ्यां राधां प्रधृष्य सरभसं द्वारं विदधात्ति)– होलिकोत्सवम्– मंजूषा १० :२, पृ० ३३.
११. मन्ददीपप्रकाशेऽसौ प्रैक्षतास्यामुखामम्बुजम् ।
प्रशान्तमभिरामं च मीलितं कालनिद्रया ॥ – श्लोक १५६.

– दन्तकेयूरम्, (कथापंचकम्)

१२. प्राचार्या श्रीमतीकमलारत्नम्महोदयाभिः आकाशवाणीदिल्लीकृते रूपान्तरितं श्रीधरभास्करवर्णेकरलिखितं नाटकं विवेकानन्द विजयम् ।

— पारिजातम्, जुलाई १९८६, पृ० २७.

१३. कठोपनिषद्, प्रथम एवं द्वितीय अध्याय
१४. कथासरित्सागर, ८ से ३६ तरंग, पृ० २६७-६५५.
१५. पंचमकथा — वेतालपंचविंशतिः, पृ० ४७.
१६. उपक्रमणिका — वेतालपंचविंशतिः, पृ० १-४.
१७. कालिदासीय कुमारसम्भवमत्रमूलम्,—पार्वतीपरमेश्वरीयम् की प्रवेशिका
१८. (क) बाल्मीकिरामायणम्, २/७-४० सर्ग
(ख) वही ।
१९. माँ शारदा देवी — भारत के स्त्रीरत्न, पृ० ८०.
२०. वही, पृ० ८५.
२१. वैशाली की गणिका — इतिहास साक्षी है, पृ० ५२.
२२. भारत का स्वाधीनता आन्दोलन तथा संवैधानिक विकास, पृ० ९६.
२३. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, पृ० २१.
२४. महाभारत, वनपर्व, ११६/४, ११६/१४.
२५. वही, ११६/१८.
२६. वही, ११६/२५.

तृतीय प्रकाश
आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यकृतियों की कथावस्तु की समीक्षा

भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार नाट्य के तीन भेदक तत्वों-वस्तु, नेता व रस में प्रथम भेदक तत्व वस्तु ही है।[१] इसे कथा, कथावस्तु, वृत्त, इतिवृत्त, कथानक आदि शब्दों से भी अभिहित किया जाता है। कथावस्तु नाट्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि इसकी रमणीयता, व्यापकता तथा गतिशीलता पर ही नाट्य की रोचकता व सौन्दर्य अवलम्बित है। इसे नाट्य का शरीर कहा गया है।[२] कथा के अनुरूप ही चरित्र[३] व रस[४] की भी योजना की जाती है। संस्कृत नाट्यशास्त्र में कथावस्तु प्रधान अथवा अप्रधान दो प्रकार की हो सकती है; जिन्हें क्रमशः आधिकारिक एवं प्रासंगिक कहते हैं।[५] इन्हीं आधिकारिक एवं प्रासंगिक इतिवृत्तों को पंच अर्थप्रकृति, पंच अवस्था एवं पंच सन्धियों के अनुरूप व्यवस्थित किया जाता है।[६]

जिन दृश्यों की योजना अनिवार्य तो हो किन्तु सामाजिकों के मन पर जिनका दुष्प्रभाव पड़ने की सम्भावना हो, यथा-मृत्यु रति क्रीड़ा आदि। इन्हें विष्कम्भक, प्रवेशक, अंकावतार व चूलिका नामक अर्थोपक्षेपकों से सूचित किया जाता है।[७]

संवाद अथवा नाट्यधर्म की दृष्टि से कथावस्तु सर्व श्राव्य, नियत श्राव्य तथा अश्राव्य होती है। नियत श्राव्य कथावस्तु को जनान्तिक, अपवारित तथा आकाशभाषित के माध्यम से व्यक्त किया जाता है।[८]

पाश्चात्य नाट्यशास्त्र में भी कथावस्तु का जो विभाजन मिलता है वह कुछ सीमा तक भारतीय तत्वों से साम्य रखता है। अरस्तु ने त्रासदी के संवृत्ति एवं निवृत्ति ये दो भाग किए हैं। संवृत्ति नामक कथाभाग का विस्तार कार्य के आरम्भ से लेकर उस अवस्था तक जाता है जहाँ कथा नायक के उत्कर्ष की ओर मोड़ दी जाती है और निवृत्ति में उस कौतूहल का परितोष होता है।[९] त्रासदी के विभाजन के अनुरूप ही पाश्चात्य नाट्यशास्त्र में वस्तु की पाँच अवस्थाओं-आकस्मिक घटना, कार्य विकास, चरमोत्कर्ष, निगति तथा अन्तिम फल का क्रमशः विकास होता है।[१०] आचार्य वी० राघवन् भारतीय अर्थ-प्रकृतियों एवं अवस्थाओं के संयुक्त कार्य से उन्नति, विकास, विराम तथा परिणाम नामक पाँच स्थितियों की कल्पना करते हैं,[११] जो पाश्चात्य विभाजन से साम्य रखता है। सीताराम चतुर्वेदी यूनानी त्रासदी की चार अवस्थाएँ मानते हैं प्रोतासिस (Prothasis) ऐपितासिस (Apithasis) कतास्तासिस (Kathastasis) तथा

कतास्त्रोफी (Catastrophe) ये क्रमशः आरम्भ, मुख्य कार्य (जो कि परिणाम की ओर ले जाने वाला), चरमोत्कर्ष तथा दुःखमय अन्त से सम्बद्ध है।[१२]

पाश्चात्य सभ्यता संस्कृति तथा साहित्य के सम्पर्क ने संस्कृत नाट्यरचना की कथावस्तु, रूपक भेद सम्बन्धी विचारधारा में भी परिवर्तन किया है। आज प्राचीन रूपक एवं उपरूपक भेदों से भिन्न एकांकी (One act play) संगीत नाट्य (opera) तथा बैले (Belet) आदि रूपों में भी नाट्य रचनाएँ देखने को मिल रही हैं। इसी प्रकार अर्थ प्रकृति, अवस्था, सन्धि एवं अर्थोपक्षेपकों से सम्बद्ध विचारधारा में भी परिवर्तन दृष्टिगत होता है।

निष्कर्षतः कथावस्तु की गतिशीलता, स्वाभाविकता, रोचकता, इष्टार्थ की रचना, प्रयोग की अद्‌भुतता कथानक की अविच्छिन्नता के लिए उसका विभाजन किया जाता है।[१३] केवल नियम पालन की दृष्टि से नहीं। अतः नाट्य में वस्तु संविधान की दृष्टि से पंचक-त्रय को आवश्यक माना जा सकता है, अपरिहार्य नहीं। प्रस्तुत प्रकाश में वस्तु-संविधान की इस शास्त्रीय पृष्ठभूमि में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचनाओं के समीक्षण का प्रयास किया जा रहा है।

तकनीकी दृष्टि से रमा चौधुरी के रूपकों में पारम्परिक नाट्यशास्त्रीय विधानों का अनुसरण देखा जाता है। रुपकों का आरम्भ एवं समाप्ति का प्रकार लगभग समान है । आरम्भ में प्रस्तावना भी सभी रूपकों में समान है। सूत्रधार व्याकुल होकर नटी को पुकारता है, नटी उसे धैर्य बँधाती है और प्ररोचना के द्वारा नाट्यकर्त्री, नाट्यवस्तु तथा नायक की प्रशंसा से सामाजिकों का उन्मुखीकरण तथा पात्र प्रवेश की सूचना देकर दोनों चले जाते हैं।

रमा चौधुरी ने प्रायः चतुष्पदा[१४] अष्टापदा[१५] एवं षोडश[१६]पदा नान्दी का प्रयोग किया है। नान्दी के अन्तर्गत नमस्कारात्मक एवं वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण का प्रयोग समस्त रूपकों में द्रष्टव्य है। इनमें चरित नायक अथवा नायिका का वन्दन करके उनका महत्व प्रकट किया गया है। 'कविकुलकोकिलम्' में कालिदास, 'देशदीपम्' में देशभक्त, 'निवेदित-निवेदितम्' में निवेदिता, 'पल्लीकमलम्' में कथावस्तु के अनुरूप ग्राम्य माता, 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में कालिदास, 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम' में यतीन्द्रविमल, युगजीवनम् में रामकृष्ण परमहंस तथा 'शंकरशंकरम्' में शंकराचार्य का गुणगान नान्दी के अन्तर्गत नमस्कार परक किया गया है।[१७]

समस्त रूपकों में प्ररोचना एवं प्रस्तावना के प्रतियोगातिशय अंग का प्रयोग हुआ है। प्ररोचना के अन्तर्गत नाटक के नायक व नाट्यकर्त्री की प्रशंसा करके सामाजिकों को नाटक के प्रति उत्सुक बनाया गया है। कहीं-कहीं नाटक खेलने के अवसर की भी सूचना दी गई है। जैसे— 'निवेदित-निवेदितम्' आकाशवाणी के भगिनी निवेदिता जन्मशतीवार्षिकोत्सव के कार्यकर्ताओं के आदेश से, 'मेघमेदुरमेदनीयम्' उज्जयिनी के अखिल भारतीय

कालिदास-समारोह के आयोजकों के आदेश से,[१८] 'यतीन्द्रयतीन्द्रम्' यतीन्द्रविमल चौधुरी के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में तथा 'शंकरशंकरम्' प्राच्यवाणी के बाइसवें प्रतिष्ठा दिवस के उपलक्ष्य में खेला गया। सूत्रधार व नटी द्वारा प्ररोचना के अन्तर्गत नाट्यकर्त्री की प्रशंसा परक कथ्य भी प्रकट हुए हैं। यथा-'निवेदित-निवेदितम्' में सूचना दी गई है कि नाट्यकर्त्री रमा चौधुरी कलकत्ता के प्राच्यवाणी की सदस्या तथा रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय की उपकुलपति हैं।[१९] 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम' में यतीन्द्र विमल की प्राण एवं सर्वस्वरूपा कही गई हैं।[२०] 'शंकरशंकरम्' में सूचना दी गई है कि यतिश्रेष्ठ यतीन्द्र विमल की पुण्य जीवन साधना कभी म्लान एवं शुष्क नहीं होगी वह निरन्तर उनकी जीवन स्वरूपा रमा के जीवन में निरन्तर प्रस्फुटित रहेगी।[२१]

सभी रूपकों में प्रयोगातिशय के माध्यम से सीधे ही पात्र प्रवेश की सूचना देकर सूत्रधार रंगमंच से निष्क्रमण करता है तदनुरूप पात्र प्रवेश करता है।[२२] 'कविकुलकोकिलम्' में कालिदास के पिता सदा शिव न्यायवागीश, 'देशदीपम्' में आराधना, 'निवेदित-निवेदितम्' में केल्टिक बाला, 'पल्लीकमलम्' में कमल कलिका'मेघमेदुरमेदनीयम्' मे कमलकलिका, 'यतीन्द्रयतीन्द्रम्' में यतीन्द्र की माँ नयनतारा, 'युगजीवनम्' में गदाधर तथा 'शंकरशंकरम्' में शंकर के पिता शिवगुरु के प्रवेश की सूचना दी गई है।

भरत वाक्य प्रस्तुत करने का ढंग भी सब रूपकों में समान है। अन्तिम पात्र **इतोऽपि प्रियं स्यात्**? तथापि **इत्थमस्तु** वाक्य कहकर भरतवाक्य पढ़ता है। भरत वाक्य के अन्तर्गत विजयविलासिनी, विश्वविनोदिनी, सुधास्यन्दिनी भारतभूमि की मंगलकामना एवं शान्तिकामना अधिकांश रूपकों में है।[२३] 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में धरा पर से द्वेष, हिंसादि वृत्ति के अपनयन की कामना की गई है।[२४] 'कविकुलकोकिलम्' में मधुर काव्यलोक के सर्वत्र संचरण की शुभाशंसा है।[२६]

रंगमंचीय सीमाओं के कारण कुछ स्थलों पर भारतीय परम्परानुरूप नाट्यधर्मो का प्रयोग तथा कुछ रूपको में आधुनिक पश्चावर्तन कौशल (फ्लैश बैक) का भी प्रयोग हुआ है। 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में एक स्थल पर पताका स्थानक का प्रयोग हुआ है जहाँ समासोक्ति के माध्यम से सूर्य के अस्त हो जाने से मुकलित कमलकलिका के उदाहरण से अरुणकिरण के निर्वासिन कमलकलिका के विरह की सूचना है।[२६] यह सूचना नेपथ्य से प्राप्त होने से चूलिका भी है। 'निवेदित-निवेदितम्' शंकरशंकरम् में तथा युगजीवनम् में नाट्यधर्म जनान्तिक का प्रयोग हुआ है। शारदामणि के दर्शन से प्रभावित मार्गरिट् उन्हें न सुनाकर अन्य तीन महिलाओं की ओर उन्मुख हो अपना कथन करती है।[२७] शंकरशंकरम् में शंकर तथा सनन्दन के वार्तालाप शास्त्रार्थ के लिए तैयार पण्डित समूह से गोप्य है।[२८] 'युगजीवनम्' में मथुरानाथ तथा रासमणि

गदाधर की उपस्थिति में उनकी अलौकिक चेष्टाओं को लक्ष्य करके जनान्तिक विधि से सम्भाषण करते हैं।[२९]

पल्लीकमलम के अष्टम दृश्य में ब्रह्मबल तथा उनकी पत्नी को कमलकलिका की प्राप्ति की घटना तथा शंकरशंकरम् के अष्टम में कुमारिल भट्ट के चितारोहण की घटना की कारणभूत बौद्धश्रमण की हत्या की कथा, दशम दृश्य में उग्रभैरव द्वारा कुचक्र से शंकर का शिष्य बनने की कथा पश्चावर्तन कौशल के माध्यम से प्रस्तुत है।

निवेदितनिवेदितम तथा **मेघमेदुरमेदनीयम्** में आधुनिक चित्रपट से प्रभावित होकर नवीन प्रयोग किया है। तृतीय दृश्य में विवेकानन्द का सेवक मागरिट् को उनका पत्र देता है। मागरिट् वह पत्र पढ़ती है लेकिन पत्र वाचन में कण्ठ स्वर मार्गरिट् का नहीं सुनाई पड़ता है अपितु पत्र प्रेषक विवेकानन्द का ही गूँजता है। इसी प्रकार मेघमेदुरमेदनीयम् में निर्वासित यक्ष मेघ द्वारा अपनी पत्नी कमलकलिका को सन्देश प्रेषित करता है। अष्टम दृश्य में यक्षिणी यक्ष के विषय में चिन्तन करती है तभी नेपथ्य से यक्ष द्वारा मेघ को दिया गया सन्देश यक्ष के ही कण्ठ स्वर में गूँजता है।

रमा चौधुरी के रूपकों में अर्थ प्रकृति, अवस्था एवं सन्धियों के प्रयोग भी परिलक्षित हुये हैं। 'कविकुलकोकिलम्' में कालिदास पाठशाला से भाग कर प्रकृति के सानिध्य से आनन्दित होते हैं इससे पिता का विस्मय विमूढ होना 'बीज' है।[३०] पिता का यही विस्मय अन्त में पुत्र के श्रेष्ठ कवित्व लाभ के रूप में फलीभूत हुआ है।

चतुर्थ दृश्य में राजकुमारी विद्यावती के प्रसंग से विच्छिन्न कथा प्रवाह पंचम दृश्य में उस स्थूल पर जुड़ा है। जहाँ ज्ञानमार्तण्ड आदि विद्यावती से शास्त्रार्थ में पराजित एवं अपमानित होकर प्रतीकार के लिए मूर्ख को खोजने निकले तथा कालिदास को उस शाखा पर देखते हैं, जिसे वह काट रहा था। अतः वह स्थल 'बिन्दु' है।[३१] छठे दृश्य में जब सम्राट् अपनी पत्नी के साथ पुत्री के विवाह के लिए चिन्तित है तभी दौवारिक कालिदास के साथ ज्ञानमार्तण्ड आदि के उपस्थित होने की सूचना देता है। यह स्थल भी 'बिन्दू' है।

पताका एवं प्रकरी वृत्तों का यहाँ अभाव है। कालिदास को पत्नी सहित सार्वभौम कवित्व प्राप्ति कामसिद्धि होने से 'कार्य' हैं अथवा सरस्वती का आशीर्वाद मिलने से धर्मसिद्धि रूप कार्य भी कहा जा सकता है।[३२]

समीक्ष्यरूपक में पाँचों अवस्थाएँ द्रष्टव्य हैं। अध्ययन में रुचि न होने से कालिदास का पाठशाला न जाना आरम्भ है।[३३] स्वाध्याय से रहित होने के कारण कालिदास का आजीविका के लिए भटकना, लकड़ी काटना सीखना 'यत्न' नामक अवस्था है।[३४] यहाँ कालिदास को अपनी शिक्षा पर ग्लानि होती

है । ज्ञानमार्तण्ड आदि द्वारा षड्यन्त्र कर कालिदास का विद्यावती से विवाह होना तथा विद्यावती द्वारा कालिदास की अज्ञता ज्ञात होने पर तिरस्कार कर उसे भवन से निकालने में 'प्राप्त्याशा' है यहाँ ज्ञान प्राप्ति रूप फल की सम्भावना लगने लगती है । कालिदास द्वारा प्रसन्न हुई देवी सरस्वती से कविकुल कोकिल होने का आशीर्वाद पाना 'नियताप्ति' है । सम्राट् विक्रमादित्य का कालिदास को सर्वश्रेष्ठ कवि का पद प्रदान करना 'फलागम' है ।[३५]

प्रथम दृश्य में कालिदास की अध्ययन परांगमुखी वृत्ति रूप 'आरम्भ अवस्था' तथा प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण तथा कवित्व हृदय रूप बीज के निवेश के कारण 'मुख सन्धि' है । द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में 'प्रतिमुख सन्धि' है । कालिदास का कवि हृदय प्रकृति के रम्य वातावरण में आनन्दित होता है यहां बीज स्पष्ट होता है किन्तु आजीविका खोजने के प्रयास तथा काष्ठ छेदन सीखने में अलक्षित हो जाता ह । पुनः वृक्ष काटने में प्रकृति से क्षमा याचना में उनकी हार्दिक कोमलता प्रकट होती है । जिससे बीज के पुनः लक्षित हाने से 'प्रतिमुख सन्धि' है ।[३६] चतुर्थ दृश्य में विद्यावती के परिणय प्रसंग में बीज का ह्रास और पंचम दृश्य में ज्ञान मार्तण्ड आदि द्वारा कालिदास की शाखा कर्तन रूप मूर्खता को देखकर षड्यन्त्र रचने में बीज का पुनः अन्वेषण हुआ है इसके अतिरिक्त विद्यावती से परिणय तथा उसके द्वारा अपमान में पुनः ह्रास एवं अन्वेषण है । अतः चतुर्थ से सप्तम दृश्य पर्यन्त 'गर्भ सन्धि' है । अष्टम दृश्य में पत्नी द्वारा अपमानित कालिदास का सरस्वती को प्रसन्न करके आशीर्वाद प्राप्त करना विमर्श सन्धि है । नवम एवं दशम दृश्य में कालिदास का पत्नी से मिलन एवं सार्वभौम कवित्व की प्राप्ति होने से निर्वहण सन्धि है ।[३७]

देशदीपम् में अर्थ प्रकृतियों की स्थिति इस प्रकार है । पंकज नयना की नायक चम्पक वदन के विषय में देश के लिये आत्मोत्सर्ग हेतु जिज्ञासा नाट्य का बीज है ।[३८] यही बीज सम्पूर्ण रूपक में फैला हुआ चम्पकवदन द्वारा देश के निमित्त आत्मोत्सर्ग करके फलरूप में प्रकट हुआ है । सप्तम दृश्य में कुक्कुट, पेचक मार्ग परिष्कारिका तथा मांस विक्रेत्री के हास-परिहास से अवरुद्ध कथा अष्टम दृश्य में चम्पकवदन तथा जहाँगीर की सूर्यवन्दना व हिमालय वन्दना से जुड़ जाती है अतः वह 'बिन्दु' स्थल है ।[३९] पताका का यहाँ अभाव है जहाँगीर एवं अभ्रप्रतिम के वृतान्त 'प्रकरी' हैं । देश के लिए आत्मोत्सर्ग करके चम्पक वदन द्वारा अमरत्व लाभ करना[४०] नाटक की 'कार्य' नामक अर्थप्रकृति है । पाँचों कार्यावस्थाओं की स्थिति भी यहाँ देखी जा सकती है । प्रधानमन्त्री के देश सेवा के लिए सर्वस्व त्याग करने सम्बन्धी सन्देश को गाँव में प्रसारित करने की योजना बनाना 'आरम्भ' नामक अवस्था है ।[४१] चम्पकवदन की इच्छानुसार माता पिता द्वारा उसे युद्धभूमि में जाने की अनुमति प्रदान किया जाना 'यत्न' नामक अवस्था है ।[४२] युद्ध क्षेत्र में शत्रु के गुप्तचर द्वारा चम्पकवदन को मारने का

प्रयास करने में असम्भव प्रतीत होती फल प्राप्ति शत्रु को पहचानकर जहाँगीर द्वारा मारकर चम्पकवदन की रक्षा से सम्भव लगती है, जिससे यहाँ 'प्राप्त्याशा' है।[४३] अष्टम दृश्य में अपने जन्मोत्सव पर चम्पकवदन द्वारा देशजननी को उपहार स्वरूप स्वयं को समर्पित करने की इच्छा से युद्धभूमि में जाना तथा अतुल पराक्रम प्रदर्शित कर आहत हो जाना फल की प्राप्ति सुनिश्चित कर देता है। अतः यहाँ 'नियताप्ति' है।[४४] अन्तिम दृश्य में आहत चम्पकवदन का देश सेवार्थ आत्मोत्सर्ग करके सर्वत्र देशदीपक रूप में यश प्राप्त करना 'फलागम' है।[४५] प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में देश सेवा के लिए सर्वस्व त्याग रूप बीज तथा चम्पक वदन को युद्ध में जाने के लिए माता-पिता की अनुमति प्रदान करना रूप आरम्भ अवस्था के योग से यहाँ 'मुख सन्धि' है। तृतीय एवं चतुर्थ दृश्यों में 'प्रतिमुख सन्धि' है। तृतीय दृश्य में देशसेवा के लिए ग्रामवासियों के आह्वान में बीज लक्षित होता है। खलनायक विपुल विक्रम के प्रतिवाद से अलक्षित हुआ है। चतुर्थ दृश्य में चम्पक वदन के युद्ध क्षेत्र में गमन से पुनः लक्षित हुआ है। अतः यहाँ 'प्रतिमुख सन्धि' है। पंचम, षष्ठ व सप्तम दृश्यों में 'गर्भ सन्धि' है। विपुल विक्रम की प्रति हिंसा से ह्रास को प्राप्त बीज का अन्वेषण पंकज नयना द्वारा युद्ध क्षेत्र में जाने और अन्त में उससे क्षमायाचना करने के कारण अन्वेषित हुआ है। सप्तम कौतुक दृश्य में पुनः बीज का ह्रास व अन्वेषण होने से 'गर्भ सन्धि' है। अष्टम दृश्य तथा नवम दृश्य के पूर्वार्द्ध में चम्पकवदन के आत्मोत्सर्ग के निश्चय के साथ विमर्श सन्धि है तथा नवम दृश्य के उत्तरार्द्ध व दशम दृश्य में नायक वदन की देशदीपक होने की अभिलाषा के फलीभूत होने से 'निर्वहण सन्धि' है।

निवेदित निवेदितम् में यथा स्थान अर्थ प्रकृतियाँ प्रयुक्त हैं। मार्गरिट् द्वारा विवेकानन्द की ख्याति सुनकर प्रथम बार उनका भाषण सुनने जाना नाटक का 'बीज' है।[४६] मार्गरिट् विवेकानन्द से प्रभावित है किन्तु प्रत्यक्ष रूपेण वह इस तथ्य को स्वीकार नहीं करती एवं परीक्षा लेती है। वेदान्त सिद्धान्त की प्रतिपादक दोनों की उक्ति-प्रत्युक्तियों से मूल कथा, विच्छिन्न सी प्रतीत होती है जो बाद में विवेकानन्द की उक्तियों से जुड़ने के कारण 'बिन्दु' है।[४७] रामकृष्ण परमहंस की सहधर्मचारिणी माता शारदा का वृतान्त 'पताका' है। प्रकरी का इस रूपक में अभाव है। निवेदिता द्वारा निष्काम भाव से जनसेवा करने से धर्म सिद्धि रूप 'कार्य' है।[४८] समीक्ष्य रूपक में अवस्थाओं का भी प्रयोग हुआ है। मार्गरिट् द्वारा स्वामी विवेकानन्द की परीक्षा लेने का विचार करना 'आरम्भ' नामक स्थिति है।[४९] यहाँ उसे विवेकानन्द के अद्भुत एवं आकर्षक व्यक्तित्व के प्रति उत्सुकता मात्र है। मार्गरिट् द्वारा विवेकानन्द से उनका शिष्यत्व ग्रहण करने की प्रार्थना करना 'यत्न' है।[५०] मार्गरिट् का भारत आगमन, विवेकानन्द द्वारा निवेदिता नाम देना आदि घटनाएँ फल प्राप्ति की आशा उत्पन्न करती है लेकिन विदेशी महिला

को भारतीय समाज में सम्मान मिलेगा अथवा नहीं यहाँ असम्भावना तथा पुनः शारदामणि द्वारा निवेदिता को वात्सल्यता पूर्वक स्वीकार करने में पुनः प्राप्ति की सम्भावना से 'प्राप्त्याशा' है।[५१] विवेकानन्द के आदेश से जनसेवा की दीक्षा लेकर कलकत्ता में प्लेग महामारी में जनता की सेवा करने तथा निवेदिता बालिका विद्यालय की स्थापना करने से उनके निष्कामकर्म की सफलता निश्चित सी लगती है अतः 'नियताप्ति'[५२] अवस्था है। भारत सेवा में निवेदिता का सर्वस्व समर्पण 'फलागम' है। प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में 'मुख सन्धि' है। यहाँ मार्गरिट् का विवेकानन्द से प्रभावित होता बीज उनके विवेकानन्द से दीक्षा लेने से जुड़ता हुआ सम्पूर्ण नाटक में फैल कर उनके द्वारा तन, मन व धन से भारत की सेवा के रूप में फलीभूत हुआ है। तृतीय दृश्य मे मार्गरिट् द्वारा विवेकानन्द की शिष्यत्व कामना से बीज दिखाई देता है किन्तु इसी दृश्य में रामकृष्ण का शिष्यत्व ग्रहण करने के परामर्श में बीज लुप्त हो गया। चतुर्थ दृश्य में पुनः विवेकानन्द के भारत आगमन की अभिलाषा के रूप में बीज लक्षित हुआ है इस प्रकार बीज के लक्ष्यालक्ष्य रूप में विद्यमान होने से तृतीय व चतुर्थ दृश्य में 'प्रतिमुख सन्धि' है।[५३] पंचम एवं षष्ठ दृश्य में विवेकानन्द मार्गरिट् को दीक्षा देकर निवेदिता नाम देते हैं। इन दोनों दृश्यों में 'गर्भ सन्धि' है।[५४] सप्तम अष्टम व नवम दृश्य में 'विमर्श सन्धि' है। निवेदिता की भारतवासियों के प्रति निःस्वार्थ सेवा से फलप्राप्ति निश्चित प्रायः है। दशम दृश्य से द्वादश दृश्य पर्यन्त 'निर्वहण सन्धि' है जहाँ निष्काम जन सेवा करती हुई प्रसन्नमना निवेदिता अन्त में महासमाधि ग्रहण करती है।

पल्लीकमलम् में पताका एवं प्रकृति को छोड़कर अन्य तीन अर्थ प्रकृतियाँ प्रयुक्त हैं। नदी में स्नान करते समय तट पर रखी कमलकलिका की साड़ी का खो जाना नाटक का 'बीज' ह[५५] क्योंकि नदी की धारा में बहती हुई उसी साड़ी को रूप कुमार लाकर कमलकलिका को देता है एवं इस प्रथम मिलन में ही दोनों के मानस में पूर्वराग अंकुरित हो जाता है, जो अन्त में स्थायी मिलन के रूप में फलीभूत होता है। कमलकलिका के साथ विवाह को इच्छुक मार्तण्ड उसके माता-पिता के सामने विवाह प्रस्ताव रखता है जिससे मुख्य कथा विच्छिन्न हो जाती है परन्तु रात्रि में चुपचाप रूप कुमार से मिलने के लिए गई कमलकलिका के कथन से जुड़ने के कारण वहाँ 'बिन्दु' है।[५६] रूपकुमार तथा कमलकलिका के स्थायी समागम में कामसिद्धि रूपकार्य है।[५७]

समीक्ष्य रूपक में पाँचों अवस्थाएँ प्रयुक्त हैं। रूपकुमार द्वारा प्रवाह में बहती हुई साड़ी लाकर देने के अवसर पर कमलकलिका से मिलना ही नाटक की 'आरम्भ' अवस्था है इससे ही दोनों में पूर्व राग अंकुरित होता है। रात्रि में कमलकलिका व रूप कुमार का नदी तट पर मिलना 'यत्न' है।[५८] विवाह के इच्छुक मार्तण्ड का कमलकलिका द्वारा प्रत्याख्यान करने से अपमानित हुए

उसकी प्रतिहिंसा के प्रयासों से विघ्नीभूत फल मातापिता द्वारा कमलकलिका को रूप कुमार के साथ विवाह करने की अनुमति प्रदान करने में फल प्राप्ति की सम्भावना जाग्रत करता है अतः यह स्थल 'प्राप्त्याशा'[५९] का है। अष्टम दृश्य में कमलकलिका राजा प्रभंजन की पुत्री है, ब्रह्मपद की नहीं, अतः मार्तण्ड की सहोदरा है— यह भेद खुलने पर उसका रूप कुमार के साथ विवाह होना सुनिश्चित हो जाता है, जिससे इस दृश्य में 'नियताप्ति'[६०] अवस्था है। अन्त में कमलकलिका तथा रूप कुमार का महामिलन ही 'फलागम' है।[६१]

प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में रति आदि भावों से युक्त बीज की समुत्पत्ति से 'मुख-सन्धि' है। तृतीय दृश्य में कमलकलिका के माता-पिता द्वारा मार्तण्ड के साथ उसका विवाह करने के प्रसंग से अलक्षित बीज कमलकलिका के निषेध से पुनः स्पष्ट दृष्टिगोचर हो गया है। पुनः मार्तण्ड के पिता आदि परिजनों के कमलकलिका को देखने के लिए घर आने से वह अदृष्ट हो गया है। इस प्रकार बीज के दृष्टादृष्ट होने से यहाँ 'प्रतिमुख-सन्धि' है। चतुर्थ व पंचम दृश्य में कमलकलिका व रूपकुमार के एकान्त मिलन में बीज का अन्वेषण हुआ है। इसी दृश्य में रूपकुमार के सहसा चले जाने तथा मार्तण्ड के अचानक प्रवेश से ह्रास को प्राप्त बीज मार्तण्ड की वास्तविकता जानकर ब्रह्मपद द्वारा उससे सम्बन्ध विच्छेद करने के कारण पुनः प्रकट हुआ है। अतः पंचम से सप्तम दृश्य पर्यन्त 'गर्भ-सन्धि' है। अष्टम दृश्य में 'विमर्श-सन्धि' है। प्रतिहिंसा की भावना से भरा मार्तण्ड कमलकलिका के पिता को कर न देने के मिथ्या अभियोग में दरबार में बुलाता है। इसी दृश्य में कमलकलिका मार्तण्ड की बहिन है यह रहस्योद्घाटित होता है और मार्तण्ड के लिए पुनर्विचार करना आवश्यक हो जाता है। अतः 'विमर्श-सन्धि' है। नवम दृश्य में मुखादि सन्धियों में फैले हुये अर्थों का नायक-नायिका के मिलन रूप प्रयोजन से अन्वय हुआ है, अतः 'निर्वहण-सन्धि' है।

मेघमेदुरमेदनीयम् में पताका व प्रकरी का अभाव है तथा अन्य तीन अर्थ प्रकृतियाँ-बीज, बिन्दु व कार्य प्रयुक्त हुए हैं। कमलकलिका की प्रियदर्शन लाभ की अभिलाषा एकांकी का बीज है।[६२]

प्रबल वेगवती नूपुर निक्वणा नामक नदी में कमलकलिका स्नान के लिए गई, जहाँ नदी में डूबती हुई उसकी रक्षा अरुणकिरण करता है और दोनों परस्पर अनुरक्त हो जाते हैं जो अन्तिम दृश्य में स्थायी मिलन के रूप में फलित होता है। प्रथम दृश्य में ही अरुणकिरण तथा तरुणतपन के वार्तालाप से विच्छिन्न कथावस्तु नदी में डूबती कमलकलिका की रक्षा के लिए की गई पुकार से जुड़ गई है। तृतीय दृश्य में प्रचण्डप्रताप कमलकलिका के माता-पिता के समक्ष विवाह प्रस्ताव रखता है। यहाँ उन लोगों के वार्तालाप से भी मुख्य कथा विच्छिन्न सी हो गई है।[६३] सहसा अरुणकिरण के साथ उपस्थित कमलकलिका

द्वारा विवाह प्रस्ताव के प्रत्याख्यान से कथा अपने पूर्व प्रवाह से जुड़ गई है। ये दोनों स्थल 'बिन्दु' हैं।[६४] कमलकलिका तथा अरुणकिरण का स्थायी मिलन काम सिद्धि रूप 'कार्य' नामक अर्थ प्रकृति है।[६५] नदी में डूबती हुई कमलकलिका की रक्षा के लिए अरुणकिरण का जाना तथा कमलकलिका के प्रति अरुणकिरण का अनुरागोदय 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[६६] कमलकलिका तथा अरुणकिरण का निकुंज में मिलना 'यत्न' है। माता-पिता द्वारा कमलकलिका का विवाह अरुणकिरण से करने लेकिन प्रचण्ड प्रताप द्वारा विघ्न उत्पन्न किए जाने से वह असम्भव सा लगता है। जिसके परिणाम स्वरूप अरुणकिरण को एक वर्ष के लिए अलकापुरी से निष्कासित कर दिया जाता है। अतः 'प्राप्त्याशा' है।[६७] रामगिरि आश्रम में निर्वासित जीवन बिताने वाले यक्ष[६८] द्वारा मेघ से अपनी प्रिया के लिए सन्देश भेजने में स्थायी मिलन होना भी निश्चित सा प्रतीत होता है अतः 'नियताप्ति' है।[६९] एक वत्सरीय विरह के पश्चात् अरुणकिरण का कमलकलिका से पुनः मिलन होना ही 'फलागम' है। प्रथम दृश्य में प्रणयरूप बीज के सूक्ष्मरूप में निवेश के कारण 'मुखसन्धि' है। द्वितीय दृश्य में नायक-नायिका के मिलन में बीज दिखाई देता है। किन्तु उसमें विघ्न रूप प्रचण्ड प्रताप के आ जाने से अलक्ष्य हुआ है। तृतीय दृश्य में भी प्रचण्ड प्रताप के कमलकलिका से विवाह के प्रयास में वह ही रहता है परन्तु अरुणकिरण के साथ विवाह की माता पिता से आज्ञा मिल जाने पर लक्षित होने से 'प्रतिमुख सन्धि' है। चतुर्थ एवं पंचम दृश्यों में 'गर्भसन्धि' है। यहाँ नायक-नायिका की विवाहोपरान्त प्रेम प्रगाढ़ता में बीज का साक्षात् होता है किन्तु प्रचण्ड-प्रताप द्वारा मदिरा वन को उजाड़ने से उसका ह्रास हो गया है। पुनः कुबेर द्वारा अरुणकिरण को दण्डित करते समय कमलकलिका द्वारा अरुणकिरण को क्षमा करने तथा स्वयं को दण्डित किये जाने की प्रार्थना में पुनः बीज का स्पष्ट दर्शन होता है। जिससे 'गर्भ सन्धि' है। षष्ठ सप्तम एवं अष्टम दृश्यों में नायिका एवं नायक का प्रेम अन्य सन्धियों की अपेक्षा अधिक उत्कट रूप में प्रकट हुआ है लेकिन कुबेर दण्ड से वह विघ्नित हो गया है अतः इन दृश्यों में 'विमर्श सन्धि' है। नवम दृश्य में विघ्नों की समाप्ति हो जाने पर नायक-नायिका के शाश्वत् मिलन में उसका प्रेमपूर्णता को प्राप्त होता है अतः 'निर्वहण सन्धि' है।

युगजीवनम् में पताका प्रकरी के अतिरिक्त बीज बिन्दु व कार्य नामक अर्थ प्रकृतियों के दर्शन होते हैं। गदाधर के मन में देवीदर्शन की उत्कट अभिलाषा नाटक का 'बीज' है।[७०] द्वितीय दृश्य में मन्दिर के कर्मचारी गदाधर को उन्मत्त समझ कर उसके क्रियाकलापों से क्रुद्ध होकर रानीरासमणि से शिकायत करने जाते हैं। उनके वार्तालाप से विच्छिन्न मूलकथा गदाधर के भावावेश से पुनः जुड़ जाती है। उन पर कर्मचारियों के कथन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह नाटक की 'बिन्दु' नामक अर्थ प्रकृति है। अन्त में गदाधर द्वारा कष्ट पीड़ित मानवों को

भक्तिमार्ग में उन्मुख कर देना नाटक का धर्म सिद्धि रूप 'कार्य' है।[७१] दक्षिणेश्वर मन्दिर में देवी की पूजा-सेवा के प्रति गदाधर का उत्सुक होना 'आरम्भ' अवस्था है।[७२] मन्दिर में अनन्यभाव से उनके द्वारा देवी की उपासना आरम्भ करना एवं जगज्जननी के दर्शन-लाभ के लिए व्याकुल होना 'यत्न' अवस्था है।[७३] भैरवी ब्राह्मणी की गुरु रूप में प्राप्ति तथा उनके द्वारा गदाधर को अवतार बताने से फलप्राप्ति सम्भव सी लगती है लेकिन कुछ ब्राह्मणों द्वारा गदाधर को अवतार रूप में स्वीकार न करने से वह असम्भव सी लगती है अतः यहाँ 'प्राप्त्याशा' नामक अवस्था है।[७४] षष्ठ, सप्तम व अष्टम दृश्य में गदाधर की रामकृष्ण के रूप में प्रतिष्ठा होने, तोतापुरी से दीक्षा लेने तथा नरेन्द्र को शिष्य बनाने से फल प्राप्ति निश्चित सी हो गई है जिससे 'नियताप्ति' अवस्था है।[७५] रामकृष्ण का कल्पतरु रूप धारण करने पर अलौकिकता की प्राप्ति 'फलागम' है।[७६] प्रथम दृश्य में 'मुखसन्धि' है जहाँ गदाधर का अनिर्वचनीय भक्ति भाव बीज रूप में उपन्यस्त है। द्वितीय दृश्य में काली मन्दिर में गदाधर का देवी से सम्भाषण करना, उन्मत्त प्रलाप करना आदि से बीज अधिक स्पष्ट हुआ है तथा कर्मचारियों द्वारा गदाधर की निन्दा में अलक्षित हो गया है। तृतीय दृश्य में रानी रासमणि उनकी इस अवस्था को देवी की परमभक्ति मानती है। इस प्रकार बिन्दु तथा यत्न के मेल से बीज के पुनः दिखाई पड़ने से 'प्रतिमुख सन्धि' है। चतुर्थ एवं पंचम दृश्यों में 'गर्भ सन्धि' है। यहाँ भैरवी एवं पण्डितों के मध्य गदाधर को अवतार मानने में बीज पुनः दृष्टगोचर हुआ है किन्तु सभा के मध्य में गदाधर की उन्मत्तावस्था एवं वातुलता से वह लुप्त सा लगता है। षष्ठम, अष्ठम व नवम दृश्यों में गदाधर द्वारा तोतापुरी से दीक्षाग्रहण करना, राम कृष्ण नाम की प्राप्ति करना, विवेकानन्द को शिष्य बनाना आदि से गदाधर की लोकोत्तरता एवं अभूत पूर्व भक्ति भाव की सिद्धि हुई है जिससे इसे विमर्श या 'अविमर्श सन्धि' कहा जायेगा। नवम एवं दशम दृश्य में गदाधर (रामकृष्ण) परमहंस तथा युगजीवन रूप में कष्टपीड़ित प्राणियों के उद्धार का अपना कार्य शारदा को सौंप कर चिरसमाधिमग्न होते हैं। अतः यहाँ 'निर्वहण सन्धि' है।

शंकरशंकरम् में भी पताका एवं प्रकरी प्रासंगिक इतिवृत्तों का प्रयोग नहीं हुआ है। शंकर रूप में शिवगुरु को अलौकिक पुत्र की प्राप्ति होना नाट्य का 'बीज' है।[७७] यही अलौकिकता ज्ञान-क्षेत्र में उसके दिग्विजय के रूप में साकार होती है। अष्टम दृष्य में बौद्धाचार्य की हत्या के कारण कुमारिल भट्ट जीवित ही चितारोहण करने जाते हैं। इस प्रसंग से शंकर सम्बन्धी मुख्य कथा शिथिल सी हो गई है। तभी शंकराचार्य का प्रवेश इस शिथिल कथा को पुनः सक्रिय कर मूल वृत्तधारा से जोड़ देता है। अतः 'बिन्दु' है।[७८] शंकर द्वारा अद्वैत वेदान्त का प्रचार धर्म-सिद्धि होने से 'कार्य' है।[७९]

आलोच्य रूपक में पाँचों कार्यावस्थाएँ दिखाई पड़ती हैं। शिवगुरु द्वारा महादेव से सर्वज्ञ पुत्र प्राप्ति का वरदान माँगना ही 'आरम्भ' अवस्था है। संन्यास ग्रहण करने के लिए माँ की अनुमति-प्राप्ति के इच्छुक शंकर द्वारा माया रचित ग्राह से पकड़े हुए चरण दिखाकर अनुमति लेना 'यत्न' अवस्था है। गोविन्द पाद से दीक्षा लेने के बाद अद्वैत ज्ञान के प्रकर्ष से युक्त होकर दिग्विजय में मण्डनादि को परास्त करते हैं लेकिन उनकी पत्नी भारती से पराजित होते हैं अतः फल प्राप्ति उपाय और अपाय की शंका से युक्त है। फलतः 'प्राप्त्याशा' अवस्था है। नेपाल पशुपतिमन्दिर में वामाचारी बौद्ध श्रमणों की पराजय से वेदान्त के प्रसार में शंकर की दिग्विजय निश्चित सी हो जाने से 'नियताप्ति' है। शंकर का दिग्विजय तथा वेदान्त का प्रसार होना ही 'फलागम' है। प्रथम दृश्य में शंकर की सर्वज्ञता रूप बीज के न्यास से 'मुख सन्धि' है। द्वितीय दृश्य से सप्तम दृश्य पर्यन्त 'प्रतिमुख सन्धि' है। अष्टम से द्वादश दृश्य पर्यन्त 'गर्भ सन्धि' है। यहाँ मण्डन मिश्र की पराजय, उभय भारती से शंकर का शास्त्रार्थ कापालिक विजय में वेदान्त प्रचार रूप बीज पुनः प्रकट होता है। त्रयोदश दृश्य में शंकर द्वारा नेपाल में वामाचारी बौद्धों पर विजय से 'विमर्श सन्धि' है। चतुर्दश दृश्य में वेदान्त का प्रचार करने के बाद शंकर द्वारा महासन्धि ग्रहण करने में 'निर्वहण सन्धि' है।

नाट्य-भेद की दृष्टि से रमा चौधुरी के समस्त रूपक नाटक हैं। रूपकों की कथा वस्तु का विभाजन दृश्यों में किया गया है। दृश्यों में उपदृश्य भी रखे गए हैं। ये दृश्य इतने बड़े-बड़े हैं; कहीं-कहीं वे प्राचीन रूपकों के अंकों के समकक्ष हो गए हैं। नान्दी एवं भरत वाक्य के प्रस्तुतीकरण का ढंग भी समस्त रूपकों में समान हैं। प्रख्यात कथावस्तु से सम्बद्ध नाटकों में नायक उदात्त कोटि का है अर्थ प्रकृतियों में बीज, बिन्दु व कार्य का सभी नाटकों में प्रयोग प्राप्त होता है, कुछ नाटकों में पताका एवं प्रकरी का अभाव है। पाँचों अवस्थाएँ व पाँचों सन्धियाँ सर्वत्र प्रयुक्त हैं। आधुनिक नाट्य शास्त्रीय दृष्टि से सर्वाधिक २१ चरित प्रधान रूपकों का प्रणयन किया है शेष चार-'पल्लीकमलम्', 'मेघमेदुरमेदनीयम्', 'संसारामृतम्', तथा 'नगरनूपुरम्' घटना प्रधान रचनाएँ हैं। पताका स्थानक 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में तथा जनान्तिक 'शंकरशंकरम्', निवेदित निवेदितम् व 'युगजीवनम्' में प्रयुक्त है। पश्चावर्तन कौशल 'शंकरशंकरम्' तथा 'पल्लीकमलम्' में अपनाया गया है। इस प्रकार रमा चौधुरी के नाटकों में संस्कृत नाट्यशास्त्रीय प्रभाव के साथ-साथ आधुनिक प्रभाव भी परिलक्षित होता है।

श्रीमती लीलाराव के रूपक तकनीकी दृष्टि से आधुनिक होते हुए भी अंशतः भारतीय नाट्यशास्त्रीय विधानों से युक्त है। नियमों का निर्वाह उन्होंने अनिवार्य नहीं समझा है, अतः कुछ रूपकों में नान्दी का अभाव है कुछ में प्ररोचना तथा प्रस्तावना का अभाव है कुछ रूपक ऐसे हैं जिनमें तीनों ही नहीं हैं।

सीधे ही कथावस्तु प्रारम्भ कर दी गई है। भरत वाक्य प्रायः किसी भी रूपक में नहीं है। अनूपः, असूयिनी, कपोतालयः, मिथ्याग्रहणम्, क्षणिकविभ्रमः, गणेशचतुर्थी, ज्ञानेश्वरचरितम् तथा गिरिजायाः प्रतिज्ञा में नान्दी नहीं हैं। वृत्तशंसिच्छत्रम्, हरिसिंहः, होलिकोत्सवः, बालविधवा एवं स्वर्णपुरकृषीवलाः में बिना नान्दी, प्ररोचना तथा प्रस्तावना के कथावस्तु को प्रारम्भ किया गया है। 'कटुविपाकः' में नेपथ्य से पठित नान्दी में महात्मा गान्धी के प्रति श्रद्धाञ्जलि प्रस्तुत की गई है।[८०] अन्त में पटाक्षेप के बाद भरत वाक्य की धुन पर प्राणीमात्र के सुखी होने की प्रार्थना की गई है।[८१] 'कृपाणिका' के आरम्भ में नेपथ्य से अमितदाता पति की पूजा की गई है। इन श्लोकों का सम्बन्ध कथावस्तु से होने के कारण इन्हें वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण कह सकते हैं।[८२] 'नारकण्डाश्रमः' में अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रथम श्लोक "या सृष्टिः स्रष्टुराद्या" को नान्दी रूप में प्रस्तुत किया गया है। तत्पश्चात् प्ररोचना द्वारा कालिदास जयन्ती के अवसर पर अभिज्ञान शाकुन्तलम् की कथावस्तु को नवीन रूप में प्रस्तुत करने की घोषणा सूत्रधार से कराई है।[८३] 'अनूपः' में सूत्रधार नाटक के नाम, नारिकेल पूर्णिमा के अवसर पर खेले जाने का अवसर रचनाकर्त्री का परिचय तथा बीज की सूचना देकर सामाजिकों का उन्मुखीकरण करता है। 'कपोतालयः' में प्ररोचना के अन्तर्गत रूपक को प्रहसन माना है तथा मूल नाट्यकार के रूप में जगदीश चन्द्र माथुर के नाम की सूचना दी गई है।[८४] 'असूयिनी' की प्रस्तावना सूत्रधार, नटी अथवा पारिवार्श्विक द्वारा न होकर रूपक की पात्र भूत कुछ स्त्रियों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है।[८५] वीरभा,[८६] मारीचरितम्,[८७] ज्ञानेश्वरचरितम्,[८८] जयन्तु कुमाउनीयाः आदि कुछ रूपकों में सूत्रधार ही दर्शकों के उन्मुखीकरणार्थ रूपक के नायक, नाट्यकर्त्री, मूल रचनाकर्त्री तथा बीज की सूचना देकर कथावस्तु की स्थापना करता है।

अर्थोपक्षेपकों की स्थिति भी कुछ रूपकों में दिखाई पड़ी है। 'असूयिनी' में गृहकार्य में लगी रेवा को समुद्रतट पर होने वाली कथा के भावोद्दीपक अंश नेपथ्य से सुनाए गए हैं अतः यह अंश चूलिका का है।[८९] 'कृपाणिका' में उर्मिला लघुकृपाणिका को निरर्थक समझ कर फेंकना चाहती है। नेपथ्य से संन्यासी का निषेधात्मक स्वर सुनकर रुक जाती है।[९०] यह स्थल भी चूलिका का है। 'नारकण्डाश्रमः' में कण्व के प्रवास से लौटने की सूचना[९१] तथा 'वीरभा' में सत्याग्रह स्थल की घटनाओं की सूचना भी नेपथ्य से दी गई है।[९२] अंकावतार नाट्य धर्म की स्थिति 'असूयिनी' व 'वीरभा' से दिखायी पड़ती है। 'असूयिनी' के प्रथम दृश्य में मंच से निकली रेवा तथा दुर्गा की कथा दूसरे दृश्य में क्रमशः चल रही है।[९३] 'वीरभा' में भी द्वितीय दृश्य के पात्र ही तृतीय दृश्य में प्रवेश करते हुए पूर्व की कथावस्तु को आगे बढ़ाते हैं।[९४] अतः ये दोनों स्थल अंकावतार के हैं।

वृत्तशंसिच्छत्रम् के द्वितीय दृश्य के आरम्भ में दो ग्रामीणों का वार्तालाप विष्कम्भक के समकक्ष है। यहाँ इन्दिरा के द्वारा फटकारा गया अनुपम आत्महत्या के प्रयास में रेलयान से गिर कर अपनी स्मरण शक्ति खोकर त्यागी बाबा के रूप में प्रसिद्ध हो गया है।[९५] 'असूयिनी' में प्रस्तावना तथा उपसंहार की घटनाओं की तुलना में दृश्यों की कथावस्तु पाँच वर्ष पूर्व की है। कथावस्तु के संयोजन के लिए दृश्यों की कथा को पश्चावर्तन कौशल (फ्लैश बैक) के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। 'क्षणिकविभ्रमः' में अभ्यागत के साथ घटित घटना को उसी के मुख से कहलाया गया है, जिससे कथावस्तु औत्सुक्यपूर्ण तो हो गयी है, लेकिन रूपक की गति अवरुद्ध हो गयी है। अतीत की इन घटनाओं को पश्चावर्तन कौशल अथवा विष्कम्भक के माध्यम से अधिक रोचक ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता था।

लीलाराव ने सुखान्त एवं दुःखान्त दोनों ही प्रकार के रूपकों की रचना की है। सुखान्त रूपकों में तो अर्थ प्रकृति अवस्था एवं सन्धियाँ स्पष्टतः परिलक्षित हुई है। परन्तु दुःखान्त रूपकों में धर्म, अर्थ एवं काम सिद्धि के रूप में फलप्राप्ति न होने से भारतीय नाट्य शास्त्रीय तत्त्व स्वरूपतः प्रकट नहीं हुए हैं अपितु सायास ही देखे जा सकते हैं।

असूयिनी एकांकी में रेवा की सास द्वारा सन्तानहीनता के कारण उसकी भत्सर्ना एकांकी का 'बीज' है।[९६] यही भत्सर्ना सन्तापकारिणी होने से असूया के रूप में फैलती हुई अन्ततः पश्चात्ताप के रूप में फलीभूत होती है। पुत्र प्राप्ति के रूप में देवी दुर्गा की प्रसन्नता धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है।[९७] तृतीय दृश्य में सुपर्ण का दूसरे विवाह के लिए तैयार होना 'बिन्दु' है[९८] क्योंकि दूसरे दृश्य में दुर्गा के बच्चों के प्रति रेवा के वात्सल्य प्रदर्शन से मूलकथा विच्छिन्न हो रही थी लेकिन सुपर्ण के दूसरे विवाह की असह्य कल्पना से नरबलि के रूप में उन बच्चों को मारने का विचार बनाती है। प्रथम दृश्य में सन्तान प्राप्ति के लिए सास से पुत्र का दूसरा विवाह न करने की रेवा की प्रार्थना 'आरम्भ' अवस्था है[९९] तथा पश्चात्ताप के परिणामस्वरूप रेवा को पुत्र प्राप्ति 'फलागम' है।[१००] रूपक के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में बीज का क्रमशः उपक्षेप, परिकर एवं परिन्यास प्रदर्शित किया गया है अतः इनमें 'मुख सन्धि' है। तृतीय दृश्य की समाप्ति पर, चतुर्थ दृश्य एवं उपंसहार में 'निर्वहण सन्धि' है।

'कृपाणिका' में बीज, बिन्दु एवं कार्य अर्थ प्रकृतियाँ, आरम्भ व फलागम कार्यावस्था व मुख एवं निर्वहण सन्धियाँ है। उर्मिला द्वारा वैद्य से पति के जीवन की रक्षा के लिए प्रार्थना 'बीज' नामक अर्थ प्रकृति है।[१०१] द्वितीय दृश्य में पति के जीवन से निराश आत्महत्या के लिए प्रयत्नशील उर्मिला को संन्यासी द्वारा

रोकना 'बिन्दु' है[१०२] क्योंकि यह स्थल आत्महत्या के लम्बे प्रयास से विच्छिन्न कथावस्तु को जोड़ रहा है। संन्यासी के आशीर्वाद से उर्मिला के पति का सचेत होना अभीष्ट सिद्धि होने से 'कार्य' है।[१०३] पति के स्वास्थ्य के प्रति उर्मिला की जिज्ञासा 'आरम्भ' है[१०४] तथा उसके पति का स्वस्थ होकर बोल पड़ना 'फलागम' है।[१०५] तदनुरूप प्रथम दृश्य में 'मुख' तथा द्वितीय दृश्य में 'निर्वहण' सन्धि है।

गणेशचतुर्थी के आरम्भ में चन्द्रदर्शन से बचने का शंकर राव का प्रयास बीज है।[१०६] हरि नामक व्यक्ति का गणेशचतुर्थी के दिन शंकरराव के यहाँ आश्रय आदि से विच्छिन्न कथा हरि द्वारा अधोलिखित वाक्य से जुड़ती है—'हरिः (हसन्)—तथापि पादस्खलनावसरे दुर्दैवेन प्रतिहतं मेऽनिष्टम्।' .. .. (उलूकस्य धूत्कार श्रूयते)[१०७] हरि को चन्द्रमा दिखाई पड़ने से तथा उल्लू की धूत्कार श्रवण से ऐसा आभास होने लगता है कि हरि पर कोई विपत्ति आने वाली है। अतः यह 'बिन्दु' का स्थल है। शंकर राव की हत्या के मिथ्या अभियोग में बन्दी हरि की मुक्ति 'कार्य' है।[१०८] हरि द्वारा शंकर राव के यहाँ रात्रि में आश्रय लेना 'यत्न' है।[१०९] इसी रात्रि को शंकर राव की हत्या होना, हरि को बन्दी बनाना एवं हरि द्वारा अपनी निर्दोषता बतलाना 'प्राप्त्याशा' है।[११०] हरि को देखकर रुक्मा द्वारा वध कर्ता के रूप में मना करना 'नियताप्ति' है।[१११] यहाँ ज्ञात होने लगता है कि हरि निर्दोष है। निरपराध होने से पुलिस द्वारा हरि को मुक्त करना 'फलागम' है।[११२] यहाँ प्रथम दृश्य में 'मुख सन्धि' तथा द्वितीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है।[११३]

तुकाराम चरितम् में कनाकी को तुकाराम के रूप में पुत्र प्राप्ति 'बीज' है।[११४] रामेश्वर एवं शिवाजी वृतान्त मुख्य कथानायक के ही उपकारक हैं इनसे सम्बद्ध इतिवृत्त प्रकरी है। तुकाराम के स्वर्गारोहण के निमित्त दिव्यरथ आना धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है।[११५] तुकारामचरितम् में अवस्थाएँ अधोलिखित रूप में दिखाई पड़ी हैं। आकाशवाणी द्वारा तुकाराम का नामकरण होने पर लोगों का बालक के प्रति औत्सुक्य एवं आश्चर्य 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[११६] भगवान द्वारा तुकाराम की बाढ़ से रक्षा, प्रतिनिधि बनकर मिर्च का मूल्य वसूल करना पक्षियों द्वारा चुगा खेत न्यायाधीश के आने पर हरा भरा होना आदि कार्य तुकाराम की अलौकिकता सिद्ध करते हैं। ये स्थल 'यत्न' अवस्था के हैं।[११७] इन सब कार्यों से तुकाराम की ईश्वर के प्रति अनन्य निष्ठा पूर्वपेक्षा अधिक प्रगाढ़ होती है। रामेश्वर द्वारा गाँव में तुकाराम की निन्दा, तुकाराम के काव्य को नदी में विसर्जित करवाना, ग्रामीणों द्वारा तुकाराम की महिमा स्वीकारने में तुकाराम की भक्ति विषयक बीज उपाय-अपाय से ग्रस्त होने से 'प्राप्त्याशा' है।[११८] तुकाराम का तिरस्कार करने के कारण रामेश्वर का अस्वस्थ होना क्षमायाचना करने पर स्वस्थ होना 'नियताप्ति' है[११९] क्योंकि इससे तुकाराम की

भक्ति की कीर्ति का प्रसार होता है। तुकाराम द्वारा सशरीर स्वर्गारोहण 'फलागम' है।[१२०] यहाँ निर्वहण सन्धि में अद्भुत रस का सन्निवेश किया गया है। संगीतिका के प्रथम दृश्य में 'मुख', द्वितीय से अष्टम दृश्य पर्यन्त बीज के लक्ष्यालक्ष्य होने से 'प्रतिमुख सन्धि' है। नवम एवं दशम दृश्य मे 'विमर्श सन्धि' है तथा अन्तिम एकादश दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है। गर्भ सन्धि का यहाँ अभाव है।

नारकण्डाश्रमः में गान्धर्व विवाह करने के उपरान्त राजकुमार के वापस न आने पर शकुन्तला के प्रति चिन्ता एकांकी का 'बीज' है।[१२१] प्रियवंदा तथा अनसूया अपने विगत जीवन तथा कण्वाश्रम में पहुँचने की घटना का स्मरण कर रही है। इस प्रसंग से शिथिल हुआ शकुन्तला सम्बन्धी मुख्य कथा सूत्र अनसूया के निम्नलिखित कथन से जुड़ रहा है। यथा—'अनसूया—एहि ननु, प्रियसख्याः सौभाग्यदेवतार्चनीया।'[१२२]

अतः यह स्थल अच्छेद का हेतु होने से 'बिन्दु' है। शकुन्तला के पतिगृह गमन से कण्व को अभीष्ट सिद्धि होती है। अतः शकुन्तला का विदा होना 'कार्य' है।[१२३] 'युद्धभूमि में स्मरणशक्ति खो बैठने से राजकुमार शकुन्तला का स्मरण करता है अथवा नहीं इस रूप में यहां प्रियवंदा की बीज के प्रति उत्सुकता मात्र होने के कारण 'आरम्भ' अवस्था है।[१२४] शकुन्तला के सौभाग्य देवता के लिए सखियों का पुष्प चयन 'यत्न' है।[१२५] शकुन्तला के आपन्नसत्वा होने का समाचार जानकर कण्व की प्रतिक्रिया की आशंका 'प्राप्त्याशा' है[१२६] तथा गौतमी एवं शाङ्र्गरव के साथ पतिगृह जाती हुई शकुन्तला को कण्व का आशीर्वाद 'नियताप्ति' है।[१२७] शकुन्तला की विदाई फलागम है। आरम्भ से लेकर अनसूया की चिन्ता कि शकुन्तला के आपन्नसत्वा होने का समाचार कैसे दिया जाए—यहाँ तक 'मुखसन्धि' है।[१२८] तथा इस स्थल से आगे से आरम्भ कर अन्तपर्यन्त 'निर्वहण सन्धि' है।

मिथ्याग्रहणम् में मूर्च्छित शेख महोदय को सरला अपने घर ले आती है उसे शंका है कि पर पुरुष के उसके घर होने से लोग अन्यथा न सोचने लगें। उसकी यही शंका एकांकी का 'बीज' है[१२९] क्योंकि शेख महोदय की पत्नी अमीना ही सरला के इस कार्य को शंका की दृष्टि से देखती है। यही भ्रान्ति रूप बीज सम्पूर्ण एकांकी में द्रष्टव्य है। सखियों के मध्य भ्रान्ति निवारण तथा पुनः मित्रत्व प्राप्ति 'कार्य' है।[१३०] सरला द्वारा शेख साहब की मूर्च्छा का समाचार टेलीफोन द्वारा अमीना के घर देना एकांकी की 'आरम्भ' अवस्था है।[१३१] अमीना के सेवक द्वारा फोन पर अस्वस्थ शेख को घर लाने की अनुमति माँगने पर चिकित्सक द्वारा मना कर देना 'यत्न' है।[१३२] इससे अमीना की शेख तथा सरला के सम्बन्धों के प्रति भ्रान्ति और दृढ़ हो जाती है। अमीना द्वारा सरला के

घर पहुँचने पर भ्रान्ति निवारण की किंचित् आशा उत्पन्न होने से यह स्थल 'प्राप्त्याशा' का है।[१३३] अमीना द्वारा सरला की प्रतिवेशिनी को शेख साहब का आलिंगन करते देखना 'नियताप्ति' है।[१३४] यहाँ स्पष्ट होने लगता है कि अमीना की सरला के प्रति भ्रान्ति दूर हो जायेगी। भ्रान्ति निवारण से अमीना का पश्चात्ताप तथा क्षमायाचना 'फलागम' है।[१३५] प्रथम दृश्य से लेकर सरला के घर अमीना के पहुँचने से पूर्व तक 'मुखसन्धि' है तथा सरला के यहाँ अमीना के आगमन से लेकर अन्त पर्यन्त 'निर्वहण' सन्धि है।[१३६]

मीराचरितम् में माता के कहने पर मीरा द्वारा कृष्णमूर्ति को अपना पति मान लेना संगीतिका का 'बीज' है। रूपक की समाप्ति पर मीरा का कृष्ण में विलीन होना धर्मसिद्धि होने से 'कार्य' है।[१३७]

अपने पति के विषय में बालिका मीरा की उत्सुकता 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[१३८] मीरा द्वारा कृष्ण को पति मानकर मनोयोग से कृष्णमूर्ति की सेवा में लगना 'यत्न' नामक अवस्था है।[१३९] ससुराल वालों की यातनाओं से मीरा की भक्तिभावना मे विघ्न, मीरा का चित्तौड़ परित्याग, भिक्षुरूप में कुमार द्वारा पुनः चित्तौड़ लाना 'प्राप्त्याशा' है।[१४०] यहाँ उसकी भक्ति अपाय एवं उपाय से ग्रस्त दिखाई पड़ती है। बारहवें दृश्य में तुलसीदास के सुझाव पर चित्तौड़ छोड़कर मीरा का वृन्दावन आगमन 'नियताप्ति' है।[१४१] कृष्ण के चरणों मे मीरा का विलय 'फलागम' है।[१४२] यहाँ प्रथम दृश्य में मुख, द्वितीय से एकादश दृश्य पर्यन्त प्रतिमुख तथा तृतीय में द्वादश दृश्य में 'निर्वहण' सन्धि है।

वीरभा एकांकी में नायिका वीरभा की प्रगल्भता, नेतृत्व क्षमता सम्पूर्ण एकांकी में फैलकर ग्रामाधिप के हृदयपरिवर्तन का कारण बनी है। उसके परिचायक वीरभा की माँ के अधोलिखित वाक्य एकांकी का 'बीज' है। यथा—

'जननी'-अथ किम् चतुरा में सुता। प्रगल्भा च प्रतिद्वन्द्वैर्बलिभिः पुरूषैरपि।
व्यस्माययज्जनान् सर्वान् स्वया कार्यसम्पदा॥[१४३]

ग्रामाधिप में देशभक्ति-भावना का संचार धर्मसिद्धि होने से 'कार्य' है।[१४४] लीलावती के अपमान के प्रतिकार के लिए महिलाओं द्वारा वीरभा के नेतृत्व की अभिलाषा 'आरम्भ' अवस्था है।[१४५] वीरभा के नेतृत्व में मौन जुलूस निकालने का निर्णय 'यत्न' अवस्था है। जनयात्रा पर ग्रामाधिप द्वारा लाठी प्रहार, गोली प्रहार, वीरभा का मूर्च्छित होना 'प्राप्त्याशा' है।[१४६] ग्रामाधिप द्वारा अपहरण कराये वीरभा के पुत्र तथा गौधन को पुनः उन्हें सौपना 'नियताप्ति' है।[१४७] वीरभा की सत्याग्रह के प्रति निष्ठा देखकर ग्रामाधिप में सत्य अहिंसा का संचार 'फलागम' है।[१४८] एकांकी के प्रथम दृश्य में 'मुख सन्धि' है। द्वितीय में तथा तृतीय दृश्य के आरम्भ में 'प्रतिमुख' सन्धि है। यहाँ गोधन का अपहरण, पति को ग्रामाधिप द्वारा पिटवाना, जुलूस यात्रा, वीरभा के शिशु का अपहरण आदि

घटनाओं में बीज कभी लक्ष्य तो कभी अलक्ष्य होने से 'प्रतिमुख सन्धि' है। तृतीय दृश्य में खद्दर वेशवेष्टित ग्रामाधिप के प्रवेश से लेकर एकांकी की समाप्ति तक 'निर्वहण सन्धि' है।

स्वर्णपुरकृषीवलाः में सेवक के कथन से ज्ञात होता है कि ग्रामवासी सत्याग्रह के निमित्त गाँव छोड़ कर जा रहे हैं। उसका यह कथन ही 'बीज' है।[१४९] इसी दृश्य में रेवा द्वारा अपने पुत्रों के वस्त्रादि सेवक को दिखाने पर वात्सल्याभिभूत होने से सत्याग्रह सम्बन्धी कथा विच्छिन्न सी हो जाती है जो ग्रामाधिप के प्रवेश तथा उसके धमकाने पर उद्दीप्त होने से 'बिन्दु' है।[१५०] रेवा में देशभक्ति भावना का पुनः उद्दीप्त होना 'कार्य' है।[१५१] समस्त ग्रामवासी गाँव छोड़कर जा चुके है। ग्राम छोड़ने में रेवा की विलम्बता के प्रति शाकटिक की उत्सुकता 'आरम्भ' है।[१५२] रेवा द्वारा गमन से पूर्व अपना सामान दूसरे गाँव पहुँचा देना 'यत्न' है।[१५३] सत्याग्रह के प्रति ग्रामाधिप के प्रलोभनों में न पड़कर सत्याग्रह के प्रति रेवा के दृढ़ रहने से फल प्राप्ति सम्भव लगती है परन्तु ग्रामाधिप द्वारा घर में आग लगवाने, पुत्र को पिटवाने से अपाय ग्रस्त सी हो जाती है। अतः यहाँ 'प्राप्त्याशा' है।[१५४] सर्वस्व खोने के बाद भी रेवा के उत्साह में वृद्धि 'नियताप्ति' है। घर जलने के बाद सेवक के घर में आश्रय 'फलागम' है।[१५५] सत्याग्रह की यही पराकाष्ठा है कि अपना सब कुछ दाँव पर लगाने के बाद भी रेवा ने भूकर देना स्वीकार नहीं किया। यहाँ प्रथम दृश्य में 'मुख-सन्धि' तथा द्वितीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है।

इस प्रकार लीलाराव के रूपकों में प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्रीय नियमों के अनुरूप अर्थ प्रकृति, अवस्था तथा सन्धियों के प्रयोग परिलक्षित हुये हैं।

वृत्तशंसिच्छत्रम् में अपने प्रति स्वयं के दामाद अनुपम की प्रीति जानकर इन्दिरा की पुत्री मीरा के भविष्य की चिन्ता एकांकी का 'बीज' है।[१५६] पति-पत्नी का स्थायी मिलन काम-सिद्धि होने से 'कार्य' है।[१५७] अनुपम के साथ मीरा को विदा करने के लिए मुहूर्त देखना 'आरम्भ' अवस्था है।[१५८] यहाँ दोनों के सम्मिलन के लिए औत्सुक्य मात्र प्रतीत होता है। स्वयं के प्रति प्रीति प्रकट करने पर इन्दिरा द्वारा अनुपम को फटकारने पर इसका पश्चात्ताप 'यत्न' अवस्था है।[१५९] त्यागी बाबा के रूप में अनुपम का रामी रूप मीरा से प्रेम करने में फल प्राप्ति के सम्भव लगने से तथा मीरा का अपने घर वालों से पुनर्विवाह की अनुमति प्राप्त करने में फलप्राप्ति अपाय युक्त लगती है अतः यहाँ 'प्राप्त्याशा' है।[१६०] मीरा के अपने गाँव जाने पर त्यागी बाबा रूपधारी अनुपम का अपने ससुराल पहुँचना 'नियताप्ति' है।[१६१] यहाँ दोनों का मिलन रूप फल निश्चित लगता है। त्यागी बाबा को अपने पति अनुपम के रूप में देखकर मीरा का प्रसन्न होना 'फलागम' है।[१६२] यहाँ प्रथम दृश्य में 'मुख सन्धि', द्वितीय दृश्य में 'प्रतिमुख' तथा तृतीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है।

अनूपः, कटुविपाकः, क्षणिकविभ्रमः गिरिजायाः प्रतिज्ञाः होलिकोत्सवम्, बालविधवा दुःखान्त रूपक हैं। इनमें यूनानी त्रासद के चारों चरण दिखाई पड़े हैं, जैसे—'अनूपः' में समस्त व्यापार मीरा और अनूप के मिलन के लिए हुये हैं परन्तु मिलन के अवसर पर अनूप की क्षय रोग से मृत्यु एकांकी को दुःखान्त बना रही है। भिषक् द्वारा मीरा को अनूप के पास चलने की प्रार्थना आरम्भ अर्थात् 'प्रोतासिस अवस्था' है।[१६३] मीरा द्वारा भिषक् के साथ निर्दिष्ट स्थान के लिए चल पड़ना 'एपितासिस' है।[१६४] यह कार्य मिलन रूप परिणाम की ओर ले जाने वाला है। तृतीय दृश्य में अपने पति को कुष्ठ रोगी के रूप में देखना 'कतास्तासिस'[१६५] अथवा चरमोत्कर्ष की स्थिति है। यहाँ से घटना दूसरी ओर मुड़ जाती है। यहाँ अनूप के द्वारा परित्यक्त होने से मीरा का विषाद पति के प्रति निष्ठा, प्रेम तथा स्वयं के प्रति ग्लानि का रूप ले लेता है। अतः यह स्थल नाटकीय संघर्ष का निर्णायक स्थल है। अनूप की मृत्यु तथा मीरा का विलाप एकांकी की दुःखद परिणिति कर रहा है अतः यह स्थल 'कतास्त्रोफी' का है।[१६६]

श्रीमती लीलाराव ने सर्वथा आधुनिक शैली में चौबीस रूपकों का प्रणयन किया है। नाट्यविद्या की दृष्टि से इनके दो भेद हैं। इनमें कुछ रूपक एकांकी हैं तो कुछ संगीत नाट्य। यद्यपि प्राचीन संस्कृत रूपक एवं उपरूपक भेदों में वीथी आदि अनेक रूपक एकांक है लेकिन लीलाराव के रूपकों मे उक्त रूपकों एवं उपरूपकों के लक्षण घटित नहीं होते हैं। ये वर्तमान काल में प्रचलित एकांकियों के सदृश हैं। इन रूपकों मे अनूपः, असूयिनी, कटुविपाकः, कपोतालयः, कृपाणिका, क्षणिकविभ्रमः, गणेशचतुर्थी, गिरिजायाः प्रतिज्ञा, जयन्तु कुमाउनीयाः, तुलाचलाधिरोहणम्, नारकण्डाश्रमः, मायाजालम्, मिथ्याग्रहणम्, बालविधवा, वीरभा, वृत्तशंसिच्छत्रम्, होलिकोत्सवः तथा स्वर्णपुर कृषीवलाः एकांकी नाट्य हैं। इनके अतिरिक्त तुकाराम चरितम्, मीराचरितम्, परमभक्त शिवाजिराट्, बालयोगी तथा हरिसिंह नामक रूपक रचनाएँ संगीतिकाएँ है। तुकारामचरितम्, मीराचरितम् तथा परमभक्त शिवाजिराट् में पात्र ही संवाद बोलते हैं और अभिनय भी करते हैं। नाट्यकर्त्री को जो कुछ कहना है वह 'नेपथ्य' से कहा गया है। इसी माध्यम से पूर्वापर कथाओं का संयोजन भी हुआ है। 'बालयोगी' में चार कवि जिनका अभिनय से कोई सम्बन्ध नहीं है, रंगमंच के कोने में स्थित होकर ज्ञानेश्वर चरित्र का वर्णन कर रहे हैं। ये कविगण रूपक में आद्यन्त उपस्थित रहे हैं। इन्हीं के वर्णन के अनुरूप रंगमंच पर ज्ञानेश्वर आदि पात्र आकर अभिनय करते हैं तथा संवाद बोलते हैं। इसी प्रकार 'हरिसिंहः' में क्षमाराव रंगमंच के कोने में स्थित होकर एक बाला को हरिसिंह की कथा सुना रही है ; तदनुरूप पात्रों का अभिनय एवं संवाद प्रदर्शित हुआ है। प्रत्येक प्रसंग की समाप्ति पर पुनः क्षमा तथा बाला का संवाद दिखाया गया है। इस प्रकार लीलाराव ने एकांकी एवं संगीत नाट्य दो प्रकार के रूपकों की रचना की है।

प्रचुर ध्वनि निर्देशों से मुक्त होने के कारण ये रेडियो पर भी सफलता से प्रस्तुत किए जा सकते हैं। ये रूपक उद्यान रूपकों के रूप में विकसित हुए हैं।[१६७]

मायाजालम् को पूर्णतः नाट्य न कह कर पाठ्य नाट्य (क्लोजेट ड्रामा)[१६८] मान सकते हैं। यहाँ क्रियात्मकता का अभाव है। ऐसा लगता है कि कथा सुन रहे हैं। 'अनूपः' नैतिक नाटक (मौरेलिटी प्ले) है। नैतिक नाटकों में मृत व्यक्ति के शव के साथ भावात्मक चरित्रों के गुण और दोषों के बीच लम्बा शास्त्रार्थ कराया जाता है और नैतिक निष्कर्ष निकाला जाता है।[१६९] समीक्ष्य एकांकी में मीरा अनूप के शव के पास बैठकर उसकी महानता को लक्ष्य करके उसकी मृत्यु पर विलाप कर रही है। 'कपोतालयः' आधुनिक प्रहसन या कॉमेडी है। कॉमेडी शब्द प्रहसन तथा सुखान्त रूपकों के लिए प्रयुक्त हुआ है।[१७०] कपोतालयः में धूर्तता पूर्ण कृत्यों से उत्पन्न हास्य का अभाव है। रत्न अपनी विनोदशील प्रकृति के कारण कष्टोत्पादक आर्थिक परिस्थितियों में मधुर हास्य की सृष्टि करता है। रूपक की परिणति भी सुखान्त है क्योंकि दम्पति को अपनी नष्ट वस्तुओं का मूल्य बीमा कार्यालय से प्राप्त हो जाने का विश्वास है।

आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार अनूपः, कटुविपाकः, कृपाणिका, गिरिजायाः प्रतिज्ञाः, जयन्तुकुमाउनीयाः, तुकारामचरितम्, विठालाचरितम्, परमभक्त शिवाजिराट्, ज्ञानेश्वर चरितम्, वीरभा, हरिसिंहः तथा स्वर्णपुर कृषीवलाः चरित प्रधान रूपक है यहाँ नाट्यकर्त्री का विशेष प्रयास घटना, उद्देश्य तथा संगीत आदि के माध्यम से पात्र विशेष के चारित्रिक गुणों को उभारना है। क्षणिकविभ्रमः, गणेशचतुर्थी, तुलाचलाधिरोहणम्, नारकण्डाश्रमः, बालविधवा तथा होलिकोत्सवम् उद्देश्य प्रधान रूपक है। यहाँ पात्र घटनाएँ संगीत आदि उपकरण किसी उद्देश्य विशेष को महत्त्व प्रदान करने हेतु बने हैं। यथा— लोभ का दुष्परिणाम्, मद्यपान, विधवा समस्या आदि। असूयिनी, कपोतालयः, मिथ्याग्रहणम् तथा वृत्तशंसिच्छत्रम् व्यापार प्रधान रूपक है। यहाँ पात्र, उद्देश्य आदि विशेष व्यापारों के परिणामस्वरूप ही निखर कर आए हैं। यथा - 'असूयिनी' में रेवा घटनाओं के चक्र में फँस कर वत्सल हृदया होने पर भी असूयिनी बन जाती है। 'बाल विधवा' में अनूप को पुनर्विवाह के प्रयास में असफल होता देख पार्वती को आत्महत्या करनी पड़ती है । 'होलिकोत्सवम्' में परिस्थितियों के जाल में फँस कर गणु अपनी पत्नी को चरित्रहीन समझता है। इस प्रकार आधुनिक वर्गीकरण के छः भेदों में लीलाराव के रूपक तीन प्रकार के ही हैं।

श्रीमती लीलाराव के कुछ रूपकों में नैतिकता एवं मनोवैज्ञानिकता का भी निर्वाह अत्यन्त सूक्ष्मता से किया गया है। 'अनूपः' एकांकी में मीरा एवं अनूप के चरित्रनिर्माण में इन्होंने अपनी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का परिचय दिया है। कुष्ठ जैसे असाध्य संक्रामक रोग से ग्रस्त होने पर भी अनूप का परिवार के साथ

रहना सर्वथा अनुचित था अतः अनूप का गृह त्याग नैतिक दृष्टि से उचित ही है। मनोवैज्ञानिक कारणों से ही अनूप बिना बताए गृह परित्याग को बाध्य था। यदि वह अपने रोग के विषय में अपनी पत्नी को बताता तो कर्तव्य एवं स्नेहवश उसकी सेवा के लिए साथ ही कुष्ठालय जाने का हठ करती। अनूप नहीं चाहता था कि उसका परिवार भी संक्रामक रोग की चपेट में आए।

असूयिनी में जब धतूरे युक्त लड्डू और दूध लेकर रेवा दुर्गा के घर पहुँच कर उसके बच्चों को मरणासन्न पाती है। बच्चों को मृत मानकर हत्या का दोष अपने ऊपर ले लेती है। यह निर्विवाद है कि उसने बाल हत्या नहीं की लेकिन अपनी दूषित कल्पना मात्र से वह चिल्ला पड़ती है कि वही हत्यारिन है। नैतिक दृष्टि से उसका यह कृत्य अनुचित नहीं है। दुर्गा तथा उसका पति हतप्रभ हो रेवा के चिल्लाने को बच्चों के प्रति उसका वात्सल्य मानते हैं। मनोविज्ञान में इसे Unconcious mind (अचेतन मस्तिष्क) की Awareness (घबराहट) अवस्था कहते हैं। जब व्यक्ति घबराहट की अवस्था में होता है तथा ऐसी आश्चर्यजनक बातें बोलता है कि व्यक्ति विशेष को आश्चर्य होता है कि ऐसा उसने क्यों कहा? इसका कारण अचेतन मन ही होता है।[१७१] रेवा आत्मनिन्दा भ्रान्ति की शिकार भी है। इसे मनोविज्ञान की भाषा में Delusion of self Condemnation कहते हैं।[१७२] इस प्रकार की भ्रान्ति में व्यक्ति समझता है कि उसने कोई पाप किया है। जिसका दण्ड उसे मिलना चाहिए। वह स्वयं इस भ्रान्ति की निन्दा या भर्त्सना करता है। रेवा भी घातुक कहकर स्वयं की निन्दा करती है।

कृपाणिका में उर्मिला के चरित्र में नाट्यकर्त्री ने अपनी मनोवैज्ञानिक कुशलता का परिचय दिया है। सामान्यतया सतीप्रथा समाज सुधारकों की आलोचना का विषय रही है लेकिन पति को सर्वस्व मानने वाली उर्मिला पति के स्वास्थ्य के प्रति निराश, भावी जीवन में असुरक्षा की भावना से ग्रस्त आत्महत्या को ही एक मात्र मार्ग मानती हुई सती प्रथा का समर्थन करती है **अपि न ज्ञातं यत्पुरातनकाले ललामभूतानि ललनारत्नान्यपि पति निधनोत्तरं चितामारोहन्ति।**

नैतिक दृष्टि से आत्मघात अनुचित होने से तापस के शब्दों में निन्दा भी कराई है—**यतो नीतिशास्त्रस्य विरूद्धं भवेदीदृक्चेष्टितं विधात्रा दत्तान् प्राणान् विनाशयितुं न कस्यापि अधिकारोऽस्ति।**[१७३]

उर्मिला के व्यवहार में सस्पेन्स अथवा थ्रिलिंग सिचुएशन द्रष्टव्य है। आरम्भ में वह विषैली गोलियों से आत्महत्या करना चाहती है, अचानक नौकर के आ जाने से ऐसा नहीं कर पाती है। तत्पश्चात् उसकी दृष्टि कृपाणिका पर पड़ती है, वह उससे आत्महत्या करना चाहती है तभी पति के स्वस्थ हो जाने की कल्पना से विरत हो जाती है। अन्तिम बार वह कृपाणिका से अपने वक्षस्थल पर जैसे ही प्रहार करने को उद्यत होती है, अचानक संन्यासी के प्रकट हो जाने के

कारण उसे रुकना पड़ता है। यहाँ सस्पैन्स बनाये रखने में नाट्यकर्त्री सफल रही है। 'क्षणिक विभ्रमः' में सुनीति के पति की मनोदशा तथा अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण मनोवैज्ञानिक है। ट्रेन में मृत व्यक्ति से वस्त्रों का विनिमय नैतिक दृष्टि से अनुपयुक्त है, परन्तु आर्थिक विपन्नता तथा आसन्न प्रसवा पत्नी की दुर्दशा का स्मरण करके वह वस्त्र विनिमय करने को विवश हो गया था। यहाँ अभ्यागत की अपनी भूल ही उसके पतन का कारण बनी है। वह आजीवन कारावास की सजा पाता है तथा सदैव के लिए अपने परिवार से वियुक्त होता है। अतः यह स्थिति हार्मातिया[१७४] अथवा ऐरर् है। यही त्रासात्मक भूल अभ्यागत के पतन का कारण है।

नारकण्डाश्रमः में शकुन्तला को कुमार द्वारा विस्मरण करने का आधार भी लीलाराव ने मनोवैज्ञानिक खोजा है। मस्तिष्क पर अधिक चोट लगने से व्यक्ति अपनी अतीत की बातें भूल जाता है। कुमार भी शकुन्तला को युद्धभूमि में चोट लगने से स्मरण नहीं कर पाता है। शाप के कारण नहीं। 'बालविधवा' में अनूप के द्वारा विधवा पार्वती के चरित्र में लीलाराव ने मनोवैज्ञानिकता का सफल निर्वाह किया है। अनूप को स्वयं से विवाह के लिए प्रयास करने पर पुरोहित आदि के द्वारा अपमानित देखती है तो उसका साथ छोड़कर वापस घर आ जाती है क्योंकि वह नहीं चाहती है कि जिसे वह प्रेम करती है वह उसी के कारण अपमानित हो।

वृत्तशंसिच्छत्रम् मनोवैज्ञानिक समस्या प्रधान एकांकी है। यहाँ चारित्रिक अन्तर्द्वन्द्व सुन्दरता से संजोया गया है। अनमेल विवाह के कारण अनुपम का अपनी पत्नी मीरा के प्रति आकर्षण नहीं है अपितु वह अपने से दो वर्ष छोटी यौवना, सुन्दरी अपनी सास के प्रति आकृष्ट है। इन्दिरा (सास) के द्वारा फटकारे जाने पर हीन मानसिक ग्रन्थि (इन्फीरियरटी कॉम्पलैक्स) का शिकार होता हुआ अपना जीवन व्यर्थ समझ कर आत्महत्या के प्रयास में रेल से गिर कर स्मरण शक्ति खो बैठता है। १८ वर्ष बाद त्यागी बाबा के रूप में अपनी नैसर्गिक कामवृत्ति के कारण मीरा (भूतपूर्व पत्नी) को आत्महत्या से बचाने के बाद उससे प्रेम करने लगता है। संन्यासी के रूप मे मीरा से उसका प्रेम अनुचित होने पर भी मनौवैज्ञा'निक दृष्टि से स्वाभाविक है। इसी प्रकार मीरा बहुत समय तक अपने पति वं खोजती है अन्त में निराश होकर आत्महत्या के प्रयास में त्यागीबाबा के द्वारा ब्वाए जाने पर उससे प्रेम करने लगती है। अपने रक्षक से उसका प्रेम भी मनोवैज्ञानिक है। निष्कर्षतः लीलाराव ने अपने कुछ रूपकों में नैतिकता, मनोवैज्ञानिकता तथा चारित्रिक अन्तर्द्वन्द्व का निवेश कुशलता से किया है। इससे उनके रूपकों की कथावस्तु तथा पात्रों में स्वाभाविकता भी आ गई है।

इस प्रकार लीलाराव के रूपकों में कथावस्तु के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि उन्होंने कथावस्तु सम्बन्धी भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों ही विधानों को

आवश्यकतानुरूप ग्रहण किया है लेकिन बलात् नियमों को ठूँसा नहीं है। जहाँ उन्होंने अर्थप्रकृति, अवस्था, सन्धि तथा नाट्यधर्मों को अपनाया है वहीं यूनानी त्रासद के चरणों एवं पश्चावर्तन कौशल का भी प्रयोग किया है। पात्रों के चारित्रिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व को भी अनूपः, बाल-विधवा, क्षणिक विभ्रमः एवं वृत्तशंसिच्छत्रम् जैसे समस्या प्रधान रूपकों के माध्यम से कुशलता से उभारा है। रूपक की विधा में भी वैविध्य है। वस्तुतः लीलाराव अपने रूपकों में आधुनिक एवं पारम्परिक वस्तु विधानों में सामंजस्य रखने में सफल रही है।

कमलारत्नम् विरचित 'गणयञ्छागः' रेडियो प्रहसन है। सूत्रधार आरम्भ से लेकर अन्त तक पात्रों के प्रवेश-निष्क्रमण आदि कार्यों की सूचना देता रहा है। सामाजिक तो रंगमंच के कार्यों को स्वयं देखने में सक्षम होता है; रेडियो रूपक के श्रव्य नाट्य होने से ही सूत्रधार की आरम्भ से अन्त तक उपस्थिति सार्थक लगती है। परम्परानुरूप नान्दी[१७५] एवं भरत वाक्य प्रयुक्त हुये हैं।[१७६] जिनमें गिनती का महत्त्व प्रकट किया गया है। प्ररोचना एवं प्रस्तावना का अभाव है। एकांकी के आरम्भ में नर्तन करते हुये छाग का गणना करना एकांकी का 'बीज' है। स्वंय को गिनते हुये समीपवर्ती गोवत्स को गिनने की प्रवृत्ति 'आरम्भ'[१७७] है तथा सम्पूर्ण प्रथम दृश्य में 'मुखसन्धि' है। द्वितीय दृश्य में गिनती जानने से छाग को पोत का मुद्राधिकारी बनाया जाना अर्थसिद्धि होने से 'कार्य' है। यही 'फलागम' अवस्था है। यहाँ द्वितीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है।

नचिकेतोयमसंवादम् रेडियो एकांकी है जो आकाशवाणी दिल्ली से श्रीमती कमलारत्नम् के ही निर्देशन में प्रसारित हुआ। प्रसिद्ध समाचार वाचक श्री देवकीनन्दन पाण्डेय, श्री बलदेवानन्दसागर, श्री विश्वनाथ आदि ने भी इसमें भाग लिया।[१७८] दृश्यों के साथ दिये गये सम्यक् नाट्य निर्देशों के कारण इसे रंगमंच पर भी सफलता से खेला जा सकता है। प्राचीन रूपकों में प्रस्तावना सूत्रधार या स्थापक द्वारा होती थी। यहाँ प्रस्तावना में स्वामी विवेकानन्द कथावस्तु के मूलभाव को प्रस्तुत करते हैं।[१७९] प्रस्तावना के पश्चात् सूत्रधार एवं युवा द्वारा मंगलाचरण किया गया है। इसे प्ररोचना मात्र कह सकते हैं। यहाँ नाटक देखने स्वर्ग से आये हुए मैक्समूलर आदि वेद ज्ञाताओं की प्रशंसा की गई है। कथावस्तु की दृष्टि से यहाँ प्रवेशक का निवेश निरर्थक है। यहाँ सामाजिकों का केवल उन्मुखीकरण हुआ है।

कुछ अर्थ प्रकृतियाँ, अवस्थायें तथा सन्धियाँ यहाँ द्रष्टव्य हैं। नचिकेता को वृद्ध गायों का दान करते देखकर नचिकेता द्वारा किया गया प्रश्न **तर्हि त्वं मां कस्मै दास्यसि?**[१८०] रूपक का 'बीज' है जो आत्मज्ञान विषयिणी जिज्ञासा के रूप में फैलता हुआ तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के रूप में फलीभूत होता है। क्रोधित पिता का नचिकेता को मृत्यु को देने की घोषणा रूपक की 'आरम्भ अवस्था' है।[१८१] द्वितीय दृश्य में शरण्यु एवं पिंगलाक्षी के वृक्षसिंचन से विच्छिन्न

कथावस्तु यमराज के आगमन की सूचना से जुड़ जाती है अतः यह स्थल 'बिन्दु' है।[१८२]

पिता के मना करने पर भी यमराज के पास जाने का नचिकेता का आग्रह 'यत्न' नामक अवस्था है।[१८३] प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में 'मुख सन्धि' है तथा तृतीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है। नचिकेता द्वारा तत्व ज्ञान की प्राप्ति धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है।[१८४] यमलोक में यम द्वारा नचिकेता को प्रलोभन देना 'प्राप्त्याशा' है[१८५] क्योंकि इससे फल प्राप्ति अपाय ग्रस्त सी लगती है। नचिकेता द्वारा प्रलोभनों के वशीभूत न होना 'नियताप्ति' है।[१८६] नचिकेता को तत्त्वज्ञान देकर यम द्वारा विदा करना 'फलागम' नामक अवस्था है।[१८७]

नचिकेतो यम संवादम् में नाट्यकर्त्री ने अर्थोपेक्षक तथा नाट्यधर्म की अवतारणा भी की है।[१८८] प्रथम दृश्य के आरम्भ में प्रवेशक की रचना नाट्यशास्त्रीय विधान के प्रतिकूल है क्योंकि प्रवेशक दो अंकों के मध्य होता है। यहाँ प्रथम दृश्य के आरम्भ में इसकी योजना है। इसके अन्तर्गत भूत एवं भावी कथावस्तु की सूचना भी नहीं है। वस्तुतः यदि यहाँ प्रवेशक की योजना न होने पर भी कथावस्तु के विकास में किसी प्रकार का अन्तर न आता। द्वितीय दृश्य में यमराज का जनान्तिक कथन जनान्तिक न होकर स्वगत कथन के तुल्य है क्योंकि यहाँ यमराज एवं नचिकेता के अतिरिक्त अन्य कोई पात्र रंगमंच पर नहीं है। अतः वह स्वतः ही अपने मन में नचिकेता की प्रशंसा करता है परन्तु उसे सुनाना नहीं चाहता है।[१८९]

विक्रमवेतालनाटिका में नान्दी तथा भरत वाक्य का अभाव है। प्रस्तावना की विधि भी सर्वथा नवीन है। प्रस्तावना का प्रयोग स्थापक अथवा सूत्रधार द्वारा नहीं किया गया है, वरन् राजा त्रिविक्रम एवं वेताल द्वारा किया गया है। ये दोनों नाटिका में आरम्भ से अन्त तक प्रत्येक दृश्य में रहते हैं। प्रस्तावना में कथावस्तु से सम्बद्ध वर्तमान, अतीत अथवा भविष्य की सूचना न होकर राजा द्वारा वेताल को ले जाने का प्रयोजन दिखाया है। वस्तुतः आधुनिक नाट्य सिद्धान्त का पश्चावर्तन कौशल अथवा पूर्व दीप्ति यहाँ प्रयुक्त है। प्रस्तावना में संन्यासी वृत्त तथा सम्पूर्ण एकांकी में सोम प्रभा वृत्तान्त इसी कौशल द्वारा प्रस्तुत किया गया है। संन्यासी का वृतान्त राजा वेताल को सुनाता है तथा सोम प्रभा का वृतान्त वेताल राजा को सुनाता है। इन्हीं कथाओं के समायोजन के लिए प्रस्तावना का प्रयोग हुआ है।

शशिप्रभा द्वारा वर के विषय में पूछे जाने पर सोम प्रभा द्वारा ज्ञानी, विज्ञानी अथवा शूर के साथ विवाह की अभिलाषा प्रकट करना[१९०] एकांकी की 'बीज' नामक अर्थ प्रकृति है। शशि प्रभा द्वारा शूरवीर के साथ विवाह काम सिद्धि होने से 'कार्य' है।[१९१] मूढ़ तथा असिद्ध से विवाह न करने की सोमप्रभा

की इच्छा 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[१९२] ज्ञानी, विज्ञानी अथवा शूर से विवाह के लिए सोमप्रभा का माता-पिता तथा भाई से निवेदन 'यत्न' अवस्था है।[१९३] माता-पिता तथा भाई द्वारा विवाह के इच्छुक तीन युवकों को पृथक्-पृथक् आमन्त्रित करने पर उनका विवाह हेतु युगपत् उपस्थित होना 'प्राप्त्याशा' है[१९४] क्योंकि तीनों के एक साथ उपस्थित होने से फल प्राप्ति अपाय ग्रसित लगती है। सोमप्रभा का अपहरण करने वाले राक्षस से मुक्त कराने के कारण शूर की सोमप्रभा से विवाह की घोषणा 'नियताप्ति' है।[१९५] तथा सोमप्रभा के साथ शूर का विवाह किया जाना 'फलागम' है।[१९६] यहाँ प्रथम दृश्य में 'मुख सन्धि' है। द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में बीज के लक्ष्यालक्ष्य होने से 'प्रतिमुख सन्धि' है क्योंकि यहाँ तीन युवक एक युवती से विवाह हेतु एक साथ उपस्थित होते हैं। चतुर्थ दृश्य में निर्णायक स्थल होने से 'निर्वहण सन्धि' है।

विवेकानन्द विजयम् तीन अंकों का एक लघु नाट्य है जो श्रीधर भास्कर के इसी नाम वाले महानाटक का ध्वनि नाट्य है। अतः इसे रेडियो रूपक कहा जा सकता है।[१९७] यहाँ बालक नरेन्द्र का अपने कक्ष में स्वाध्याय करने के स्थान पर ध्यान मग्न होना रूपक का 'बीज' है।[१९८] नरेन्द्र की यही अन्तर्मुखी प्रकृति सम्पूर्ण रूपक में फैलती हुई संन्यास ग्रहण के रूप में फलीभूत हुई है। नरेन्द्र द्वारा संन्यास ग्रहण धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है।[१९९] स्वामी रामकृष्ण के विषय में सुनकर उनके प्रथम बार दर्शन की अभिलाषा 'आरम्भ' अवस्था है।[२००] नरेन्द्र द्वारा रामकृष्ण के दर्शन का कार्यक्रम बनाना 'यत्न' है।[२०१] उसके द्वारा रामकृष्ण के दर्शन करना 'प्राप्त्याशा' है[२०२] क्योंकि यहाँ नरेन्द्र में स्वामी जी के प्रति भक्ति भाव न होकर विस्मय भाव होता है। पुनः नरेन्द्र द्वारा परमहंस का शिष्यत्व ग्रहण करना 'नियताप्ति' है[२०३] तथा संन्यास धारण करके विवेकानन्द के रूप में नरेन्द्र का देश पर्यटन 'फलागम' है।[२०४] यहाँ प्रथम अंक में 'मुख' द्वितीय में 'गर्भ' तथा तृतीय अंक में 'निर्वहण' सन्धि है। रूपक के आरम्भ में परम्परानुरूप नान्दी पाठ में विवेकानन्द की स्तुति की गयी है परन्तु भरत वाक्य का अभाव है। नान्दी के पश्चात् सूत्रधार प्रविष्ट होकर प्ररोचना द्वारा विवेकानन्द का परिचय देकर दर्शकों को उन्मुख करता है।[२०५] द्वितीय तथा तृतीय अंक के आरम्भ में विष्कम्भक की योजना की गई है। द्वितीय अंक के विष्कम्भक में शेफालिका तथा देवी प्रसाद के माध्यम से नरेन्द्र के रामकृष्ण के दर्शनार्थ गमन की सूचना मिली है। तृतीय अंक के विष्कम्भक में विलियम रहमान आदि मध्यम पात्र नरेन्द्र के रामकृष्ण का शिष्यत्व ग्रहण करने की सूचना देते हैं। द्वितीय अंक के विष्कम्भक में देवी प्रसाद आकाश भाषित द्वारा नरेन्द्र के रामकृष्ण के पास दर्शनार्थ गमन की सूचना दी है।[२०६] 'विवेकानन्द स्मृतिः' पूर्णरूप से श्रव्य नाट्य है और इसे रेडियो के लिए लिखा गया है। नाट्यकर्त्री ने इसे ध्वनि रूपक नाम दिया है।[२०७] यहाँ कार्य व्यापारों का अभाव है। वाचक एवं वाचिकाओं ने

अपने स्वर के उतार चढ़ाव के साथ विवेकानन्द के जीवनवृत्त को प्रस्तुत किया है अतः इसे रेडियो वृत्तचित्र या रिपोर्ताज भी कह सकते हैं। भारतीय नाट्य परम्परा के अनुरूप आरम्भ में नान्दी पाठ के अन्तर्गत विवेकानन्द का नमस्कार किया गया है।[२०८] इस प्रकार नाट्यकर्त्री ने अपने रूपकों में संस्कृत नाट्यशास्त्रीय नियमों को एक सीमा तक अपनाने के साथ नाट्यविधा के रूप में नवीन विधा अपनाई है। इनके सभी रूपक आकाशवाणी से प्रसारित हो चुके हैं। इन्हें व्यावसायिक अथवा अव्यावसायिक रंगमंचों पर भी सहजता से प्रस्तुत किया जा सकता है।

श्रीमती वनमाला भवालकर विरचित 'पाददण्डः' तथा 'अन्न देवता' आधुनिक एकांकी है। आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार 'पाददण्डः' घटना प्रधान एवं अन्नदेवता उद्देश्य प्रधान एकांकी है। अन्न के प्रति आदर भाव उत्पन्न करना 'अन्नदेवता' का उद्देश्य है। 'पाददण्डः' में घटनाओं और क्रियाओं के उतार चढ़ाव पर ही विशेष बल दिया गया है। 'पाददण्डः' में संस्कृत नाट्यशास्त्रीय तत्त्व इस प्रकार हैं—

सुधीर के पंगु हो जाने पर ललिता द्वारा उसका प्रत्याख्यान कर दिए जाने की शान्ता की आशंका एकांकी का 'बीज' है।[२०९] द्वितीय दृश्य में निशा के गीत से ललिता एवं सुधीर के प्रेम सम्बन्धी मुख्य कथा के विच्छिन्न होने पर निशा द्वारा ललिता की चर्चा उस कथा को जोड़ देती है। अतः निशा का कथन 'बिन्दु' है।[२१०] निशा का वृतान्त 'पताका' है। यह द्वितीय दृश्य से अन्त तक चला है। सुधीर एवं ललिता के मध्य निशा के कारण भ्रान्ति होती है अन्त में वही इन दोनों की भ्रान्ति का निवारण करती हुई उन दोनों का स्थायी मिलन कराती है। ललिता एवं सुधीर का स्थायी मिलन 'कार्य' है।[२११] प्रथम दृश्य में ललिता के आगमन अथवा पत्र की प्रतीक्षा एकांकी की आरम्भ 'अवस्था' है[२१२] तार सन्देश से ललिता के आगमन की सूचना मिलना 'यत्न' है। सुधीर द्वारा निशा का परिचय अपनी भावी पत्नी के रूप में देना 'प्राप्त्याशा' है[२१३] क्योंकि यहाँ कुछ समय के लिए ललिता सुधीर को विश्वासघाती मान लेती है। अतः मिलन रूप कार्य अपाय ग्रस्त लगता है। निशा द्वारा सुधीर की वास्तविकता (पंगुत्व) बतलाकर दोनों के मध्य भ्रान्ति का निराकरण 'नियताप्ति' है।[२१४] सुधीर तथा ललिता द्वारा परस्पर एवं दूसरे को स्वीकार करना 'फलागम' है।[२१५]

एकांकी के प्रथम दृश्य में 'मुखसन्धि' है और द्वितीय दृश्य में 'प्रतिमुख' सन्धि है। यहाँ बीज ललिता के अनागमन से अलक्ष्य तथा तार द्वारा आगमन के सन्देश से लक्ष्य बनता है। तृतीय एवं चतुर्थ दृश्य में 'गर्भ सन्धि' है जिसमें ललिता के आगमन, सुधीर तथा ललिता के वार्तालाप से कुछ काल के लिये दोनों में भ्रान्ति, तथा वैसाखी तथा निशा के स्पष्टीकरण से कि वह सुधीर की भावी पत्नी नहीं है, से बीज का क्रमशः अन्वेषण ह्रास तथा पुनः अन्वेषण हुआ

है। पंचम एवं षष्ठ दृश्य में 'निर्वहण' सन्धि है। भ्रान्ति के निराकरण से उत्फुल्ल वातावरण में दोनों का मिलन होता है। इनके अतिरिक्त कथावस्तु की गतिमयता के लिए आकाशभाषित नामक नाट्यधर्म का प्रयोग एक स्थल पर एकांकी के आरम्भ में हुआ है।[२१६] कथावस्तु के विस्तार को कम करने के लिए एवं नाट्य मंच की मर्यादा के कारण जनान्तिक का प्रयोग भी एक स्थल पर हुआ है। यथा— "(ततः प्रतिशति ससंभ्रमम् भास्करः शान्तानुगतः) भास्करः—(जनान्तिकम्) शान्ते, मधुरः कथायोगो विसंवादितो निशया।"[२१७] यहाँ रंगमंच पर स्थित निशा तथा सुधीर को न सुनाकर केवल शान्ता को ही उक्त कथन किया गया है।

द्वितीय दृश्य के आरम्भ में अंकास्य अर्थोपक्षेपक उपस्थित है। यहाँ प्रथम दृश्य के अन्त में भास्कर तथा शान्ता निशा के गीत को सुनने के लिए रंगमंच से निकल जाते हैं दूसरा दृश्य निशा के इस गीत तथा उनके दोनों के द्वारा श्रवण से आरम्भ होता है। अतः अंकास्य है।[२१८] समीक्ष्य एकांकी में प्राचीन परम्परा का अनुकरण करते हुये नान्दी[२१९] तथा एकांकी की समाप्ति पर मंगलमय गीत गाया गया है।[२२०]

'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' तथा 'रामवनगमनम्' नवीन शैली के नाट्य हैं। इन्हें संगीत नाट्य अथवा ऑपेरा माना जा सकता है। यहाँ पर गद्य संवादों का अभाव है। पात्र पद्यों के अनुरूप अभिनय करते हैं तथा संवाद भी कहते हैं। प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से काव्य[२२१] एवं हल्लीश[२२२] नामक उपरूपकों के कतिपय लक्षण इनमें घटित होते हैं।

'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' में एक अंक है, गीतों का बाहुल्य है नायक-नायिका शंकर-पार्वती उदात्त है। मुख, प्रतिमुख एवं निर्वहण सन्धियाँ हैं किन्तु काव्य में हास्यरस का बाहुल्य होता है जिसका यहाँ अभाव है। इसी प्रकार हल्लीश के लक्षणों के अनुसार एक अंक का होना, स्त्री पात्र पार्वती की प्रधानता (पार्वती जया-विजया-रति-मेना) रूप में स्त्री पात्रों की अधिकता, कैशिकी वृत्ति, मुख तथा निर्वहण सन्धियाँ तथा गान-ताल का प्रचुरता से प्रयोग तो हुआ है परन्तु स्त्री पात्रों की निश्चित संख्या (७-१०) का न होना एक से अधिक पुरुष पात्रों का होना मुख तथा निर्वहण के अतिरिक्त प्रतिमुख सन्धि का भी होना इसे हल्लीश की सीमा से बाहर करता है।

'रामवनगमनं में 'काव्य' उपरूपक के लक्षण अंशतः देखे जा सकते हैं। यथा यहाँ एक अंक है। गीतों का बाहुल्य है। नायक नायिका (राम-सीता) उदात्त है। काव्य में प्रतिमुख सन्धि भी होती है। यहाँ मुख एवं निर्वहण दो ही सन्धियाँ हैं। हास्यरस का भी अभाव है जबकि काव्य में हास्यरस का बाहुल्य होता है।

इसी प्रकार श्लक्ष्ण नेपथ्य रचना, मुख तथा निर्वहण सन्धि कैशिकी व भारती वृत्ति, एक अंक तथा उदात्त नायिका (सीता) के होने से 'सीताहरणम्' को एक सीमा तक भाणिका[२२३] मान सकते हैं लेकिन नायक राम मन्द अथवा हीन

कोटि का नहीं है रावण को जो कि प्रतिनायक है हीन कोटि का मान सकते हैं। अर्थ प्रकृति, अवस्था एवं सन्धियों की दृष्टि से 'पार्वती परमेश्वरीयम्' की कथावस्तु का विश्लेषण निम्नांकित है।

रूपक के आरम्भ में हिमालय तथा मैना नारद पार्वती के भावी पति के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं। उनकी यही जिज्ञासा 'बीज' है।[२२४] द्वितीय दृश्य में कामदेव वसन्त आदि के वार्तालाप से विच्छिन्न कथा वस्तु पार्वती की सेवा से सन्तुष्ट शिव के अधोलिखित कथन से जुड़ती है। अतः यह स्थल 'बिन्दु' है —

एकान्तभक्त्या तव गौरि सेवया
शंकरः— प्रसन्न चित्तोऽस्मि कृतं श्रमेण ते ॥[२२५]

कामदेव की मृत्यु पर रति विलाप प्रसंग 'प्रकरी' है। अन्त में शिव पार्वती का स्थायी मिलन 'कार्य' है।[२२६]

संगीतिका में पाँचों अवस्थाएँ भी आयी हैं। सर्वप्रथम पार्वती द्वारा पतिरूप में शिव विषयक अभिलाषा प्रकट करना 'आरम्भ' है।[२२७] शिव की पूजा के लिए पार्वती का सखियों सहित वनगमन 'यत्न' है।[२२८] द्वितीय दृश्य में पार्वती की पूजा से प्रसन्न शिव पार्वती को अभीष्ट प्राप्ति का वर देते हैं लेकिन कामदेव को क्रोध से भस्म कर शिव पुनः समाधि लीन हो जाते हैं अतः फल प्राप्ति उपायापायग्रस्त प्रतीत होने से 'प्राप्त्याशा' है।[२२९] वटुक रूप में शिव द्वारा पार्वती की परीक्षा 'नियताप्ति'[२३०] तथा शिव का पार्वती पर प्रसन्न होना 'फलागम' है। समीक्ष्य संगीतिका के प्रथम दृश्य में 'मुख सन्धि' है।[२३१] द्वितीय दृश्य में बीज के लक्ष्यालक्ष्य होने से 'प्रतिमुख सन्धि' है व तृतीय दृश्य में फल की निर्णायक स्थिति होने से 'निर्वहण-सन्धि' है।

रामवनगमनम् मे मन्थरा के भड़काने पर कैकेयी को चिन्ता है कि राम के अभिषेक के बाद कौशल्या राजमाता होगी तथा मैं उसकी दासी-'बीज' है[२३२] क्योंकि कैकेयी की यही चिन्ता राम के वनवास के रूप में फलीभूत होती है। राम का वनगमन धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है[२३३] क्योंकि दुष्टों के विनाश के लिए ही राम ने अवतार लिया है। दुष्टों का विनाश राम के वन गमन से ही सम्भव है।

कार्यावस्थाएँ तो पाँचों ही यहाँ विद्यमान हैं। भरत को युवराज पद तथा राम को वनवास के रूप में वरदान माँगने के लिए मन्थरा द्वारा कैकेयी को उकसाना 'आरम्भ' है।[२३४] कैकेयी द्वारा दशरथ से उक्त दोनों वरदान माँगना 'यत्न' अवस्था है।[२३५] राम के वनगमन की आशंका से दशरथ का त्रस्त होना, कैकेयी के हठ के समक्ष राजा का चुप रहना, कौशल्या द्वारा कैकेयी से राम को वन न भेजने के प्रार्थना से कैकेयी का द्रवीभूत होना तथा पुनः मन्थरा द्वारा राजधर्म का संकेत किये जाने से राम वनगमन रूप फल अपायोपाय से युक्त प्रतीत होता है।[२३६] अतः यहाँ 'प्राप्त्याशा' है। राम-सीता तथा लक्ष्मण को

मन्थरा द्वारा वल्कल वस्त्र प्रदान करना 'नियताप्ति' है तथा सीता व लक्ष्मण के साथ राम का वनगमन 'फलागम' है।[२३७]

प्रस्तुत नाट्य के प्रथम दृश्य में 'मुख' तथा द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में 'निर्वहण' सन्धि है।[२३८]

सीताहरणम् नृत्यनाट्य (बैले) है यहाँ नाट्यकर्त्री के निर्देशानुसार पात्र मूकाभिनय करते हैं।[२३९] यहाँ सीता द्वारा स्वर्ण मृग प्राप्त करने के लिए राम से आग्रह रूपक का 'बीज' है।[२४०] रावण द्वारा सीता का अपहरण 'कार्य' है[२४१] क्योंकि राक्षस कुल के विनाश के लिए यह कृत्य धर्म सिद्धि है। स्वर्ण मृग को देखकर सीता की उत्सुकता 'आरम्भ' अवस्था है।[२४२] उसे प्राप्त करने के लिए राम को प्रेषित करना 'यत्न' है। लक्ष्मण द्वारा अभिमन्त्रित रेखा से बाहर न आने का निर्देश 'प्राप्त्याशा' है।[२४३] सीता द्वारा लक्ष्मण रेखा से बाहर आकर भिक्षा देना 'नियताप्ति' है तथा रावण द्वारा सीता का अपहरण करना 'फलागम' है। रूपक के पूर्वार्द्ध में 'मुख सन्धि' तथा उत्तरार्द्ध में 'निर्वहण' सन्धि है।

अन्नदेवता बाल एकांकी है। जहाँ लीला का भोजन का निरादर करके मिष्टान्न खाने के लिए हठ करना रूपक का 'बीज' है।[२४४] लीला द्वारा कभी भी अन्न का निरादर न करने का प्रण करना धर्म सिद्धि होने से 'कार्य' है।[२४५] समीक्ष्य रूपक में लीला की मिष्टान्न भोजन के प्रति उत्सुकता 'आरम्भ' अवस्था है। कमला द्वारा भोजन के लिए बुलाए जाने पर लीला द्वारा मिठाई का आग्रह करना यत्न है। मिठाई न मिलने पर लीला का भूखे सो जाना 'प्राप्त्याशा' है। स्वप्न में देवी द्वारा अन्न की महत्ता समझाना 'नियताप्ति' है। जगने पर लीला द्वारा अन्न का निरादर न करके अपनी दीदी से पुनः भोजन माँगना 'फलागम' है। रूपक में 'मुख' एवं 'निर्वहण' सन्धियाँ है।

रत्नमयी द्वारा रचित **भूमिकन्या** चार अंक का नाट्क है। नाटक के नाट्यशास्त्रीय लक्षणों के अनुसार राम के सीता त्याग का ख्यात इतिवृत्त है। पाँचों अर्थ प्रकृति, पाँच अवस्था एवं पाँच सन्धियाँ यहाँ प्रयुक्त हैः किन्तु शृंगार वीर में से कोई रस अंगी न होकर करुण रस यहाँ प्रधान है। आधुनिक नाट्यशास्त्र के अनुसार यह घटना प्रधान नाटक है।

प्रथम अंक में सीता के अन्तःपुर में चादर पर लगे कलंक को सेवक द्वारा छिपाने का प्रयास नाटक का 'बीज' है।[२४६] रावण के यहाँ निवास से उत्पन्न सीता का कलंक अग्नि प्रवेश में परिशुद्धि के पश्चात् भी नहीं धुल पाया जिसके कारण राम को सीता का परित्याग करना पड़ा। द्वितीय अंक में विजय व कुशिका के वार्तालाप से अवरुद्ध कथा वासन्ती के प्रवेश से जुड़ती है इसी प्रकार शम्बूक प्रसंग से अवरुद्ध कथा राजगुरु तथा विजय के संवादों से जुड़ती है अतः यहाँ 'बिन्दु' नामक अर्थ प्रकृति है।[२४७] उर्मिला का वृतान्त 'पताका' है। वासन्ती

एवं विजय तथा शम्बूक का वृतान्त 'प्रकरी' है। राम राज्य की नहीं अपितु सीता-राम के राज्य की स्थापना होने से धर्म सिद्धि रूप 'कार्य' है।[२४८]

वनवासोपरान्त सीता के अन्तःपुर में प्रवेश करने से पूर्व सेवक सेविका द्वारा वहाँ बिछी चादर के कलंक को मृग चर्म से छिपाने का प्रयास 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[२४९] मृगचर्म से सीता की वनवास कालीन स्मृति तथा कलंक उसके निर्वासन का कारण बनते हैं। राजगुरु के सीता के लोकापवाद सम्बन्धी विचार सुनकर राम द्वारा किए गए विचार-विमर्श के बाद सीता परित्याग का निर्णय 'यत्न' है।[२५०] सुमन्त्र तथा उर्मिला द्वारा सीता का पक्ष लेने से लगता है कि सम्भवतः राम सीता का प्ररित्याग न करें ; जिससे 'प्राप्त्याशा' अवस्था है।[२५१] लक्ष्मण द्वारा सीता को वन में छोड़ना 'नियताप्ति' है।[२५२] स्त्री जाति की प्रतिष्ठा के लिए शपथ लेकर सीता का भूमि में समा जाना 'फलागम' है।[२५३] भूमिकन्या के प्रथम अंक में 'मुख सन्धि' है। द्वितीय अंक के प्रथम एवं द्वितीय दृश्यों में 'प्रतिमुख सन्धि' है। द्वितीय अंक के तृतीय दृश्य में मात्र 'गर्भ सन्धि' का निवेश है। तृतीय अंक में 'विमर्श' तथा चतुर्थ अंक में 'निर्वहण सन्धि' है। नान्दी एवं भरत वाक्य रूपक में प्रयुक्त नहीं है।

कालीदर्शनम् एकांकी है। देवकी मेनन् ने इसे संस्कृत नाट्यशास्त्रीय परम्परा के अनुसार दो छोटे-छोटे अंकों में विभक्त किया है। वस्तुतः यह विभाजन अंकों में न होकर दृश्यों में ही होना चाहिए। आरम्भ मे देवी एवं रामकृष्ण और शारदा से सम्बन्धित श्लोकों का गान हुआ है। इन्हें नमस्कारात्मक तथा वस्तु निर्देशात्मक नान्दी माना जा सकता है।[२५४] एकांकी की समाप्ति पर भी नेपथ्य से देवी की महत्ता एवं राम कृष्ण परमहंस एवं शारदा देवी की महिमा के सूचक श्लोक हैं।[२५५] यह चरित प्रधान रूपक है जिसमें राम कृष्ण परमहंस की धर्मपत्नी शारदा देवी के उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत किया गया है।

पति की उन्मत्तावस्था से व्यथित शारदा देवी की पति-दर्शन की अभिलाषा 'बीज' है।[२५६] शारदा देवी को स्वप्न में काली देवी का दर्शन होना धर्म सिद्धि रूप 'कार्य' है।[२५७] इन अर्थ प्रकृतियों के अलावा अन्य अर्थ प्रकृतियाँ प्रयुक्त नहीं है।

पति-दर्शन के लिए शारदा देवी की उत्कण्ठा 'आरम्भ' नामक अवस्था है।[२५८] चैतन्य जयन्ती पर गंगा स्नान के बहाने पति-दर्शन के लिए प्रस्थान करना 'यत्न' है।[२५९] मार्ग में शारदा देवी का ज्वराक्रान्त होना 'प्राप्त्याशा' है।[२६०] स्वप्न में देवी से पति दर्शन का आशीर्वाद पाना 'नियताप्ति' है।[२६१] देवी के संस्पर्श से प्रफुल्लित शारदा देवी का स्वस्थ हो जाना 'फलागम' है।[२६२] रूपक के प्रथम दृश्य में बीज एवं आरम्भ के न्यास के कारण 'मुख सन्धि' तथा द्वितीय अंक में कार्य के फलागम से 'निर्वहण सन्धि' है।

सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् तथा **कुचेलवृत्तम्** संगीत रूपक (ऑपेरा) हैं। नाट्यकर्त्री ने भूमिका में इन्हें नवीन रीति का नाट्य स्वीकार किया है।[२६३] अर्थ

प्रकृति, अवस्था तथा सन्धियों की स्थिति यहाँ भी देखी जा सकती है। यथा– 'सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम्' में सैरन्ध्री के गीत से सखी सुशीला का आकृष्ट होना रूपक का 'बीज' है।[२६४] कृष्ण के दर्शन एवं स्पर्श से सैरन्ध्री का - कुब्ज दूर होना धर्म एवं काम सिद्धि होने से 'कार्य' है।[२६५] सैरन्ध्री द्वारा कृष्ण दर्शन की अभिलाषा 'आरम्भ' है।[२६६] कृष्ण के मथुरा आगमन की घोषणा सुनकर सैरन्ध्री द्वारा उनके समीप जाने का कार्यक्रम बनाना 'यत्न' है।[२६७] महान सम्मर्द के कारण सैरन्ध्री का कृष्ण के समीप न पहुँच पाना 'प्राप्त्याशा' है।[२६८] भीड़ को हटाकर कृष्ण-बलराम का कुब्जा सैरन्ध्री की ओर उन्मुख 'नियताप्ति" है[२६९] कृष्ण को अंगराग से उपरंजित करने से सैरन्ध्री का सुन्दरी होना 'फलागम' है।[२७०] रूपक के प्रथम दृश्य में मुख तथा द्वितीय दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है। दोनों ही संगीतिकाओं का आरम्भ एवं समाप्ति कृष्ण स्तुति परक मंगल श्लोकों से की गई है।[२७१] 'नेपथ्य' शीर्षक द्वारा नाट्यकर्त्री ने स्वयं के कथ्य एवं पूर्वापर कथाओं का संयोजन किया है।

ब्रह्मचारिणी वेला देवी रचित तीनों रूपक लघुनाट्य होने से एकांकी के तुल्य है। नचिकेतश्चरितम् तथा महीयसी गार्गी चरित प्रधान रूपक हैं तथा विराड्गृहम् घटना प्रधान रूपक है। 'नचिकेतश्चरितम्' के आरम्भ में राम-कृष्ण परमहंस की नमस्कारात्मक व आशीर्वादात्मक नान्दी प्रयुक्त है।[२७२] 'महीयसी गार्गी' के आरम्भ में शान्ति पाठ के रूप में आशीर्वादात्मक नान्दी है।[२७३] विराड्गृहम् में कृष्ण की स्तुति परक नमस्कारात्मक मंगल पाठ है।[२७४] तीनों ही रूपकों की समाप्ति पर भरत वाक्य भी पढ़ा गया है। 'नचिकेतश्चरितम्' के भरत वाक्य में उपनिषदीय शान्ति पाठ, 'महीयसी गार्गी' में नारियों को गार्गी के समान बनने की प्रेरणा तथा 'विराड्गृहम्' के भरत वाक्य में विघ्नों के निवारण की शुभाशंसा की गई है।[२७५] 'नचिकेतश्चरितम्' में सूत्रधार एवं पारिपार्श्विक प्रोचना में नाट्य, नाट्यकर्त्री तथा नाट्य खेलने के अवसर की सूचना देते हैं। 'महीयसी गार्गी' तथा 'विराड्गृहम्' में केवल सूत्रधार ही इन सबकी सूचना देता है। इन सूचनाओं से ज्ञात होता है कि पश्चिम बंग नारी शिक्षा के प्रमुख अतिथियों की सभा में संस्कृत महाविद्यालय के पुरस्कार वितरण के उपलक्ष्य में 'नचिकेतश्चरितम्' का, विश्व नारी वर्ष के उपलक्ष्य में 'महीयसी गार्गी' का अभिनय आद्यापीठ परिचालित बालिकाश्रम संस्कृत महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा हुआ था।[२७६]

नचिकेतश्चरितम् में एक स्थल पर जनान्तिक नाट्यधर्म प्रयुक्त हुआ है। यहाँ उद्दात्मक को जीर्ण-शीर्ण गौ-दान करते देखकर दो व्यक्ति यजमान की अनुदारता की चर्चा जनान्तिक के माध्यम से करते हैं।[२७७]

अर्थ प्रकृतियों में बीज एवं कार्य, पाँचों कार्यावस्थाएँ तथा सन्धियों में मुख व निर्वहण सन्धियाँ तीनों ही रूपकों में प्रयुक्त हैं। उदाहरण के लिए-

'नचिकेतश्चरितम्' में क्रीडारत बालकों के मध्य में नचिकेता की नित्यतत्व के विषय में उत्पन्न जिज्ञासा रूपक का 'बीज' है तथा नचिकेता को आत्मज्ञान की प्राप्ति रूपक की 'कार्य' नामक अर्थ प्रकृति है।[२७८] बिन्दु, पताका व प्रकरी का अभाव है। पिता को जीर्ण गौ-दान करते देखकर स्वयं के दान के प्रति नचिकेता की जिज्ञासा 'आरम्भ' अवस्था है। पिता से अनुमति लेकर नचिकेता का यमलोक प्रस्थान 'यत्न' अवस्था है। यमलोक में यम की अनुपस्थिति में द्वार पालक देवों की विघ्न तथा नचिकेता को विचलित करने में असमर्थ होने से प्राप्त्याशा अवस्था है। यमराज द्वारा प्रदत्त प्रलोभनों में न पड़कर अपने उद्देश्य में नचिकेता के दृढ़ रहने से 'नियताप्ति' है। यमराज द्वारा आत्म विषयक ज्ञान का उपदेश 'फलागम' है।[२७९] प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में बीज व आरम्भ के मेल से 'मुख सन्धि' है। तृतीय, चतुर्थ, पंचम व षष्ठ में 'प्रतिमुख सन्धि' है यहाँ बीज दृश्यादृश्य रूप में विद्यमान है। सप्तम व अष्टम दृश्यों में निष्कर्षात्मक स्थिति होने से 'निर्वहण सन्धि' है। महीयसी गार्गी व विराड्गृहम् में भी इसी प्रकार यथा स्थान अर्थ प्रकृति, अवस्था एवं सन्धियों का प्रयोग हुआ है।

वीणापाणी पाटनी द्वारा रचित **मधुराम्लम्** नामक नाट्य संग्रह में प्रकाशित पाँचों रूपक विधा की दृष्टि से आधुनिक एकांकी है। 'निम्बपत्राणि,' 'प्रतिबुद्धा', 'यथार्थ्यगरलम्' तथा 'नारददौत्यम्' प्रहसन है। निम्बपत्राणि उद्देश्य प्रधान हास्य एकांकी है। यहाँ वैदुल शारद्वत जीवक आदि ने व्याकरण, न्याय व वैद्यक आदि शास्त्रों का अध्ययन किया है लेकिन व्यावहारिक ज्ञान से शून्य होने के कारण चावल, घृत आदि भोज्य पदार्थ को नष्ट कर देते हैं तथा नीम के पत्ते खाकर ही काम चलाना पड़ता है। उनकी ये क्रियायें हास्योत्पत्ति के साथ-साथ व्यावहारिक ज्ञान से शून्य शास्त्रीय ज्ञान की निःसारता प्रकट करती है।

प्रतिबुद्धा भी उद्देश्य प्रधान हास्य एकांकी है। यहाँ सुलेखा द्वारा घर एवं नौकरी में सामंजस्य न कर पाने से उत्पन्न परेशानियाँ हास्यजनक है इनका उद्देश्य दोनों कार्योमें समायोजन की शिक्षा देना है।

यथार्थ्यगरलम घटना प्रधान हास्य एकांकी है। देवदत्त द्वारा लाटरी पत्र खरीदना तथा समाचारपत्र के प्रमाद से अन्य व्यक्ति के स्थान पर उसके नाम लाटरी खुलने की घटना से उत्पन्न हताशा दर्शकों को हास्यानुभूति कराती है।

नारददौत्यम् में पृथ्वी पर होने वाले आविष्कार से देवों की चिन्ता नारद का दूत बन कर भूमि पर आना और यहाँ के लोकों की भौतिकवादिता से आश्चर्यान्वित होना भी हास्यकारक है। अतः हास्य एकांकी है।

कविकालिदासीयम् चरित प्रधान एकांकी है। कालिदास की महत्ता बतलाने के साथ-साथ यहाँ किसी से ईर्ष्या न करने की प्रेरणा दी गई है। इन सब रूपकों के आरम्भ में मंगलाचरण के स्तोत्र नान्दी रूप में प्रस्तुत है। प्रस्तावना भरत वाक्य आदि भारतीय विधानों का अभाव है। अर्थ प्रकृति, अवस्था एवं सन्धियाँ यहाँ विशेष प्रयास करने पर ही दिखाई पड़ती है।

नलिनी शुक्ला का राधानुनयः आधुनिक नाट्य सिद्धान्त के अनुसार ओपेरा है। इसे नृत्य नाटिका भी कहा जा सकता है क्योंकि यहाँ कत्थक नृत्य के माध्यम से अभिनय प्रस्तुत है। प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्रीय भेद नाट्य रासक एवं रासक के कतिपय लक्षण इस पर घटित होते हैं। भोज के मतानुसार वसन्तादिक ऋतुओं के आगमन पर स्त्रियों द्वारा प्रेम के आवेश में राजाओं के चरित्र को नृत्य द्वारा प्रस्तुत करना नाट्यरासक है। इस नृत्य में मंच पर सर्वप्रथम दो नर्तकियाँ प्रवेश करती हैं वे अधिष्ठाता देव को पुष्प अर्पित करके वापस चली जाती हैं, तत्पश्चात् बहुत सी नर्तकियों द्वारा वसन्तोत्सव सम्बन्धित नृत्य को गीत व वाद्य की सहायता से प्रस्तुत किया जाता है।[२८०] भाव प्रकाशन में इसी परिभाषा को हेर फेर के साथ प्रस्तुत किया गया है।[२८१] सागरनन्दी[२८२] तथा विश्वनाथ[२८३] ने इसके नाट्यात्मक स्वरूप का उल्लेख करते हुये उपरूपक स्वीकार किया है। उनके अनुसार इसमें लय एवं ताल की बहुलता, उदात्तनायक, पीठ मर्द उपनायक तथा नायिका वासक सज्जा होती है। विश्वनाथ के अनुसार मुख व निर्वहण सन्धि तथा अन्यों के अनुसार प्रतिमुख को छोड़कर अवशिष्ट समस्त सन्धियाँ होती है।

इन लक्षणों से स्पष्ट होता है कि 'राधानुनयः' में वसन्त के उन्मादक वातावरण में दो सखियाँ राधाकृष्ण के समक्ष नृत्य एवं पुष्प अर्पित करके वापस चली जाती हैं तदनन्तर अन्य सखियों का नृत्य, अन्त में भी कृष्ण की प्रशंसा परक नृत्य किया गया है। नायिका राधा वासकसज्जा न होकर विरहोत्कण्ठिता है। श्री कृष्ण उदात्त नायक है लेकिन पीठ मर्द का अभाव है। शृंगार की प्रधानता है तथा मुख तथा निर्वहण सन्धि का सद्भाव है।[२८४]

रासक में पाँच पात्र, मुख एवं निर्वहण सन्धि कैशिकी व भारती वृत्ति की प्रधानता, सूत्रधार का अभाव, एक अंक, वीथ्यंगों का प्रयोग श्लिष्ट नान्दी, ख्यातनायिका तथा नायक मूर्ख होता है। विश्वनाथ प्रतिमुख सन्धि भी मानते हैं।[२८५] इन्द्राचक्रवाल रासक का सम्बन्ध कृष्ण के रास से मानती है।[२८६] संगीत दामोदर में इसके लक्षण के पश्चात् अन्य मत से गोपियों की क्रीडा को रासक बताया है।

इस दृष्टि से 'राधानुनयः' में पाँच पात्र, मुख प्रतिमुख सन्धि, कैशिकी व भारती वृत्ति का बाहुल्य, वीथी के उत्तमोत्तमक व तथा उक्त प्रयुक्त अंग यहाँ प्रयुक्त हैं। नायिका राधा ख्यात है लेकिन मूर्ख नायक व श्लिष्ट नान्दी का अभाव है। उपर्युक्त विवेचन के अनुसार नाट्यरासकत्वं रासक लक्षण पूर्ण रूप से घटित न होने पर भी यह रासक से अधिक साम्य रखता है।[२८७]

यहाँ बीज, बिन्दु एवं कार्य अर्थ प्रकृतियों का सद्भाव है। रास के समय राधा की अनुपस्थिति ही 'बीज' नामक अर्थ प्रकृति है।[२८८] सखियों के नृत्य से अवरूद्ध कथा तन्तु तृतीय दृश्य में विरहोत्कण्ठिता राधा के प्रवेश से जुड़ जाने

के कारण 'बिन्दु' है।[२८९] राधा के मानभंग से कामसिद्धि 'कार्य' है।[२९०] अवस्थाएँ पाँचों ही यहाँ द्रष्टव्य हैं। सखियों द्वारा रास का वृतान्त राधा को सुनाना 'आरम्भ अवस्था' है।[२९१] सखियों का राधा से रास में सम्मिलित होने का आग्रह 'यत्न' नामक अवस्था है।[२९२] कृष्ण के आगमन पर राधा के प्रणय मान करने से 'प्राप्त्याशा' है।[२९३] कृष्ण के अनुनय से राधा का प्रसन्न होना 'नियताप्ति' है।[२९४] राधा एवं कृष्ण का महा मिलन 'फलागम' है।[२९५] इस एकांकी के आरम्भिक दृश्य में नमस्कारात्मक एवं वस्तु निर्देशात्मक 'नान्दी' का प्रयोग है।[२९६] द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में 'मुख सन्धि', चतुर्थ दृश्य में 'प्रतिमुख सन्धि' तथा पंचम दृश्य में 'निर्वहण सन्धि' है। लास्यांगों में उत्तमोत्तमक तथा उक्त प्रत्युक्त अंग यहाँ देखे जा सकते हैं। कृष्ण के विरह में राधा प्रसन्न तो होती है लेकिन उनके सम्मुख आते ही कोप युक्त हो जाती है। इस अवसर पर गाया गया उसका गीत 'उत्तमोत्तमक' है।[२९७] उक्ति प्रत्युक्ति से युक्त उपालम्भ सहित मिथ्या प्रतीत होने वाला विलासपूर्ण अर्थ सुसम्पन्न गान राधानुनयः के चतुर्थ दृश्य में होने से 'उक्त प्रत्युक्त' है।[२९८]

मिथिलेश कुमारी मिश्रा द्वारा विरचित 'आम्रपाली' पर प्राचीन रूपक एवं उपरूपक भेदों में से किसी भी भेद के लक्षण पूर्णतः घटित न होने से इसे रूपक का कौन सा भेद माना जाए ; इस सम्बन्ध में मतभेद हो सकता है। प्रस्तावना में नाट्यकर्त्री ने इसे नाटिका माना है। नाट्य शास्त्रीय दृष्टि से विवेच्यरूपक में वृत्त कविकल्पित न होकर ऐतिहासिक है अंक भी चार न होकर पाँच हैं। नायक अजातशत्रु धीरललित न होकर धीरोद्धत है। इन दोनों का मिलन राज्यमहिषी आदि किसी पर निर्भर नहीं है। इस प्रकार नाटिका के लक्षण यहाँ संगत नहीं बैठते,[२९९] परन्तु कथावस्तु के ऐतिहासिक होने पर भी नायक के प्रख्यात वंश का व नायिका के कुलजा अर्थात् उच्च श्रेष्ठी कुल की व संगीत कला में निपुण होने से अन्यवृत्तियों के साथ कैशिकी वृत्ति के प्रयुक्त होने से तथा कथावस्तु के नायिका प्रधान होने से आम्रपाली को नाटिका माना जा सकता है।

पारम्परिक नियमों का पालन करते हुये नान्दी, प्ररोचना तथा आमुख द्वारा नाटिका का प्रारम्भ किया गया है। नान्दी प्रयोग के पश्चात् प्ररोचना द्वारा नाटिका की नायिका आम्रपाली तथा शान्तरस का महत्त्व प्रतिपादित किया है।[३००] तत्पश्चात सूत्रधार तथा नटी आमुख के प्रयोगातिशय भेद द्वारा अजातशत्रु के प्रवेश की सूचना देकर रंगमंच से निकल जाते हैं। यहाँ साक्षात् पात्र प्रवेश की सूचना देने से प्रयोगातिशय है।[३०१] तृतीय अंक के आरम्भ में श्रमण युगल के वार्तालाप से, अजातशत्रु द्वारा वैशाली पर आक्रमण तथा आम्रपाली द्वारा युद्ध में क्षतविक्षत अजातशत्रु की सेवा शुश्रूषा किये जाने की सूचना मिलती है। अतीत की घटनाओं की सूचना मिलने से इस स्थल को विष्कम्भक माना जा सकता है। यद्यपि नाट्यकर्त्री ने विष्कम्भक रूप में इस स्थल को निर्देशित नहीं किया है।

यहाँ अर्थ प्रकृति, अवस्था तथा पंचसन्धियों का प्रयोग भी द्रष्टव्य है। रूपक के प्रारम्भ में आम्रपाली का गीत 'बीज' है[३०२] क्योंकि उसमें आम्रपाली के भावी वैराग्य की गन्ध है। आम्रपाली का गीत सुनकर उससे मिलने की अजातशत्रु की अभिलाषा 'आरम्भ' नामक अवस्था है[३०३] तथा गीत सुनकर अजातशत्रु के आकृष्ट होने से लेकर प्रथम अंक की समाप्ति तक 'मुख सन्धि' है। स्वयंवर में आम्रपाली को नगरवधू घोषित किये जाने के पश्चात् अजातशत्रु का प्रवेश 'बिन्दु' है।[३०४] अजातशत्रु का विलम्ब से प्रवेश आम्रपाली के नगर वधू बनने का कारण है। अन्यथा तो वह उसका वरण कर राजमहिषी बन जाती तथा वैराग्य रूप फल की प्राप्ति न हो पाती। यहीं पर स्वयंवर में अजातशत्रु की अनुपस्थिति में किसी अन्य का वरण न करने पर आम्रपाली को नगर वधू घोषित करना 'यत्न अवस्था'है।[३०५] आम्रपाली की यह भाग्य प्रवंचना उसे वैराग्यवृत्ति की ओर उन्मुख करती है। सम्पूर्ण द्वितीय अंक में 'प्रतिमुख सन्धि' है क्योंकि स्वयंवर स्थल पर वैराग्यवृत्ति रूप बीज अलक्ष्य है। आम्रपाली के नगरवधू बनाने से यह किंचित् लक्ष्य हुआ है। पुनः अजातशत्रु की धमकी से अलक्ष्य हुआ है। पताका तथा प्रकरी का यहाँ प्रयोग नहीं हुआ है। प्रणय में आहत अजातशत्रु द्वारा वैशाली पर आक्रमण तथा तथागत की आम्रपाली पर कृपा से प्रधान फल क्रमशः अपाय-उपाय से ग्रस्त होता है। अतः सम्पूर्ण तृतीय अंक में 'प्राप्त्याशा' तथा 'गर्भ सन्धि' है।[३०६] संघाराम में आम्रपाली को बुद्ध प्रवेश की स्वीकृति देते हैं जिससे श्रमण समूह असन्तुष्ट होता है। उनकी सन्तुष्टि के लिये बुद्ध द्वारा आम्रपाली की परीक्षा लेने पर समस्त श्रमण समूह की सन्तुष्टि 'नियताप्ति' है। श्रमण समूह की सन्तुष्टि से आम्रपाली का संघाराम में प्रवेश निश्चित है। यहाँ चतुर्थ अंक में तथा पंचम अंक में अजातशत्रु के प्रथम बार आगमन तथा निर्गम तक 'विमर्श सन्धि' है। आम्रपाली द्वारा बौद्ध धर्म स्वीकार करना 'कार्य' है।[३०७] बुद्ध द्वारा आम्रपाली को बौद्ध धर्म की दीक्षा देना 'फलागम' है।[३०८] बुद्ध द्वारा आम्रपाली को अभीष्ट वर देने से लेकर नाटिका समाप्ति पर्यन्त पंचम अंक में 'निर्वहण' सन्धि है। इस प्रकार नाट्यकर्त्री ने निस्संकोच भाव से भारतीय नाट्यशास्त्रीय नियमों को अपनाया है।

दशमस्त्वमसि एकांकी संग्रह के समस्त एकांकी रूपक आधुनिक शैली के हैं। उनमें नान्दी, प्ररोचना, आमुख तथा भरत वाक्य आदि का प्रयोग नहीं हुआ है। पटाक्षेप या दृश्य परिवर्तन का भी उल्लेख नहीं है। नाट्यनिर्देश से ही दृश्य परिवर्तन का अनुमान होता है।

नाट्य भेद की दृष्टि से 'अलक्ष्यं दूरदर्शनम्' 'उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्', 'ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः' तथा 'दशमस्त्वमसि' में हास्यरस की प्रधानता होने से प्रहसन मान सकते हैं। प्राचीन नाट्य शास्त्रीय प्रहसन के लक्षण घटित न होने पर भी आधुनिक समय में सामान्यतः प्रहसन तीन श्रेणियों में बाँटे

जा सकते है–[३०९] विनोदात्मक, व्यंग्यात्मक तथा भँड़ैती या फूहड़ नाटक। यहाँ हँसाने का कार्य तीन ढंग से होता है। मूर्खता के कार्य और मुद्राएँ प्रदर्शित करके, दूसरे को मूर्ख बनाकर तथा किसी प्रमत्त का मद दूर करके। 'अलक्ष्यं दूर दर्शनम्' में कंचन अपने मूर्खता पूर्ण कृत्य जैसे– पानी पीने के लिए सम्पूर्ण घड़ा लेकर उपस्थित होना, स्वामी के शिरो-वेदना होने पर शव यात्रा की व्यवस्था करके हँसाता है। वह दूरदर्शिता पूर्ण कार्य करना चाहता है लेकिन उसके ये कार्य उसकी मूर्खता ही प्रदर्शित करते हैं।[३१०]

उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम् भी एक ऐसा प्रहसन है जिसमें संस्कृत नाट्यशास्त्रीय लक्षण घटित नहीं होते हैं। एक सीधा सादा ग्रामीण स्वर्गस्थ नन्दन वन में अपनी पत्नी द्वारा पिटाई की कल्पना करने के कारण कष्ट पाता है, परन्तु दर्शकों को हँसाता है। यहाँ उसकी मूर्खतापूर्ण कल्पना हास्योत्पत्ति का कारण बनी है।[३११]

ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः भी आधुनिक प्रहसन है। यहाँ गोपाल, शिवपाल हरिपाल तथा इनके पिता जगत्पाल गृहस्वामी के शवावतरण सम्बन्धी मूर्खता पूर्ण सुझावों से हास्य की सृष्टि करते हैं।

दशमस्त्वमसि भी प्रहसन है। यह हास्य प्रधान न होकर व्यंग्य प्रधान है। यहाँ दसों मुनि सांख्यादि विविध शास्त्रों में निष्णात हैं। तत्काल किसी भी बात की सिद्धि के लिए प्रमाण प्रस्तुत करने को तत्पर रहते हैं, लेकिन अपनी दस संख्यात्मक मुनि मण्डली को नहीं गिन सकते। यहाँ व्यवहारिक ज्ञान से शून्य मुनियों के शास्त्रीय ज्ञान पर कटाक्ष किया गया है।

ये चारों एकांकी नाट्य के आधुनिक वर्गीकरण उद्देश्य प्रधान वर्ग के हैं। इनमें मूर्खता पूर्ण कृत्यों के बाद एक शिक्षा दी गई है जो क्रमशः इस प्रकार है– (१) व्यक्ति को आवश्यकता से अधिक दूरदर्शिता नहीं दिखानी चाहिए। (२) उच्चासन पर बैठकर भी व्यक्ति यदि शुभ कल्पना सर्वजन हितार्थ नहीं कर सकता तो उसका जीवन व्यर्थ है (३) ज्ञान से रहित व्यक्ति पशु तुल्य है। (४) व्यवहारिक ज्ञान से शून्य कोरा शास्त्रीय ज्ञान किसी काम का नही है।

सचाप्यस्तिरजक एव हास्य व व्यंग्य प्रधान एकांकी है। यहाँ नाट्यकर्त्री ने ऐसे महात्मा पर व्यंग्य किया है जो स्वयं को महात्मा दिखाते हुए भी आपत्ति आने पर भगवदास्था त्याग कर आत्मरक्षा के लिए धोबियों जैसा व्यवहार करने लगता है।[३१३]

भक्तराजः, 'चराचरसंचित कर्मयन्त्रिम्' भी आधुनिक एकांकी है। आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार इन्हें भी उद्देश्य प्रधान रूपक माना जा सकता है।

सत्यमेव जयते तथा **न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः** आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार चरित्र प्रधान एकांकी है। 'सत्यमेव जयते' में महात्मा

गान्धी के महान् गुण सत्याग्रह का प्रकाशन प्रधानतः किया गया है। न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः में भारतीय नारी की गरिमा पार्वती के माध्यम से प्रस्तुत की गई है।[३१४]

'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' घटना प्रधान एकांकी हैं यहाँ चरित्र अथवा उद्देश्य को प्रकट करने के अलावा घटनाओं के संयोजन में नाट्यकर्त्री का विशेष ध्यान रहा है। एक युवक गान्धी के आह्वान पर अध्ययन त्याग कर क्रान्तिकारी तो बन जाता है, परन्तु अपने घर परिवार का विनाश देखकर निराश होकर जब वह सत्याग्रह से विरत होना चाहता है तब उसकी पत्नी उसमें पुनः देशभक्ति की भावना का संचार करती है।[३१५]

इस प्रकार नाट्य के वर्तमान वर्गीकरण के अनुसार **दशमस्त्वमसि** नाट्यसंग्रह के सात एकांकी उद्देश्य प्रधान, दो एकांकी चरित्र प्रधान तथा एक एकांकी घटना प्रधान वर्ग से सम्बद्ध है। इन एकांकियों में कतिपय अर्थ प्रकृति, अवस्था एवं सन्धि स्थल भी खोजे जा सकते हैं। बीज व कार्य, मुख व निर्वहण सन्धि तो सभी रूपकों में है।

सुधा सहाय द्वारा रचित चरित प्रधान 'परशुराम प्रतिज्ञा' एकांकी, विश्व संस्कृत एवं भारतोदय संस्कृत पत्रों में प्रकाशित हुई है। विश्व संस्कृत में प्रकाशित इसमें नान्दी, प्ररोचना एवं भरत वाक्य का प्रयोग नहीं है परन्तु भारतोदयः में प्रकाशित 'परशुराम प्रतिज्ञा' में इन तीनों का प्रयोग हुआ है। शेष एकांकी समान है। सूत्रधार ही नान्दी पाठ पढ़ता है। नान्दी नमस्कारात्मक एवं वस्तु निर्देशात्मक है एकांकी के कथानायक के स्वरूप का यहाँ वर्णन किया गया है। प्रस्तावना सूत्रधार व नटी द्वारा कराई गई है। सूत्रधार संक्षेप में परशुराम की कथा सुनाता है तथा विष्णु लक्ष्मी तथा देवों के रूप में पात्र प्रवेश की सूचना देता है। जबकि कथावस्तु के प्रयोग में केवल विष्णु व लक्ष्मी ही प्रथमतः रंगमंच पर उपस्थित होते हैं। सूत्रधार द्वारा परशुराम का परिचय देने से एकांकी में गतिरोध तथा कौतुहल-शान्ति दोष आ गये हैं।[३१६]

नचिकेतः कुत्र गतोऽसि आधुनिक नाट्यसिद्धान्त के अनुसार उद्देश्य प्रधान श्रेणी की एकांकी है। भ्रष्ट शिक्षण व्यवस्था पर प्रहार इस रचना का मूल है। यह व्यंग्यात्मक रूपक है इसका अन्त भी दर्शक को अपनी कल्पना से ही अनुमित करना पड़ता है। तृतीय दृश्य में नचिकेता आचार्य की प्रतीक्षा में रत दिखाई पड़ा है। चतुर्थ दृश्य में विज्ञा देवी की लोभी प्रवृत्ति के कारण आचार्य वैवस्वत को अपना शिक्षण संस्थान भंग करना पड़ता है। छात्रों में धन एवं ऐश्वर्य पाने की ललक है, अतः वहाँ की ऐसी दुर्दशा देखकर कल्पना करनी पड़ती है कि नचिकेता सम्भवतः वहाँ से चला गया होगा। विज्ञा देवी की लोभी प्रवृत्ति से वह पहले से ही हताश था।

'यौतुकं पातक परमं' दहेज प्रथा की बुराई को प्रदर्शित करने वाला उद्देश्य प्रधान एकांकी है। यहाँ नान्दी प्रस्तावना के बिना ही कथावस्तु प्रारम्भ की गई है।

सुकन्या नाट्यसिद्धान्त की दृष्टि से च्यवन ऋषि की पत्नी के पतिव्रत्य को प्रतिष्ठित करने वाला चरित्र प्रधान एकांकी है। यहाँ आरम्भ में सुकन्या के सतीत्व का गान होने से वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरण है। एकांकी की समाप्ति पर भी भरत वाक्य रूप में पातिव्रत की महिमा प्रदर्शित की गई है। सूत्रधार के द्वारा पात्रों के प्रवेश की सूचना दी गई है। एक स्थान पर जनान्तिक नाट्य-धर्म का प्रयोग हुआ है। जहाँ अश्विनी कुमार सुकन्या की उपस्थिति में ही उसके पातिव्रत्य की परीक्षा लेने का निर्णय करते हैं।

प्रस्तुत अध्याय में महिला नाट्यकारों की कथावस्तु सम्बन्धी विवेचना से निष्कर्ष निकलता है नाट्यकर्त्रियों ने भारतीय पारम्परिक विधानों नान्दी, प्रस्तावना भरत वाक्य आदि को अंशतः ही अपनाया। रमा चौधुरी के समस्त नाटकों में इनका नियमतः विधान दृश्य है परन्तु लीलाराव, मिथिलेश कुमारी, कमला रत्नम् आदि से अपने रूपक-चक्र में कुछ में तो इन्हें स्थान दिया है तथा कुछ में इन्हें छोड़ दिया है। यौतुकं पातकं परम्, नचिकेतः कुत्रगतोऽसि आदि रूपक भी बिना किसी प्रस्तावना के आरम्भ है। रमा चौधुरी के अतिरिक्त अन्य नाट्यकर्त्रियों ने जहाँ भी प्रस्तावना विधि से कथावस्तु प्रारम्भ की वहाँ अति संक्षेप में प्रस्तावना प्रस्तुत की है परन्तु रमा चौधुरी के रूपकों में प्रस्तावना अत्यन्त लम्बी है।

अर्थोपक्षेपकों में चूलिका एवं अंकावतारों का प्रायेग हुआ है। कमलारत्नम् ने विवेकानन्द विजय में विष्कम्भक का भी प्रयोग किया है। अंकास्य एव प्रवेशकों का अभाव है। नाट्य धर्म के रूप में अपवारित की अपेक्षा जनान्ति का प्रयोग अधिक किया है। कुछ रूपकों में आधुनिक पश्चावर्तन शैली का प्रयोग भी किया गया है। ऐसा प्रयोग लीलाराव व रमा चौधुरी ने ही असूयिनी पल्लीकमलम् व शंकरशंकरम् में किया है प्रत्येक नाट्यकर्त्री संक्षिप्त कथावस्तु लेकर उसी के विकास में दत्त चित्त रही है यही कारण है अधिकांश रूपकों में बीज एवं कार्य अर्थ प्रकृति तो सर्वत्र है। बिन्दु पताका एवं प्रकरी का प्रयोग स्वल्प है। दुःखान्त रूपकों में यूनानी त्रासद के अनुरूप कथावस्तु का चतुः प्रोतासित, एपितासिस, कतास्तासिस व वैतास्त्रोफी का प्रयोग हुआ है। चारित्रिक मानसिक, अन्तर्द्वन्द्व एवं मनोवैज्ञानिकता का निर्वाह करने में लीलाराव सर्वाधिक सफल रही हैं। नैतिकता के पालन में सभी नाट्यकर्त्रियाँ प्रयासरत हैं। आधुनिक नाट्यशैली के अनुसार चरित्र प्रधान रूपकों की प्रधानता है। दूसरा स्थान घटना प्रधान तथा तीसरा स्थान समस्या रूपकों का है। संगीत प्रधान रूपक चतु

स्थान पर आते हैं। तकनीकी दृष्टि से एकांकियों की संख्या सर्वाधिक है। लीलाराव ने २४, मिथिलेश कुमारी ने १०, कमला रत्नम् ने एक, वनमाला भवालकर ने दो, वीणा पाणि ने पाँच, देवकी मेनन् ने एक वेलादेवी ने तीन, नलिनी शुक्ला ने एक, इनके अतिरिक्त निर्मला शुक्ला, विजय लक्ष्मी त्रिवेदी,सुधा सहाय,भक्ति सुधा, चिन्मयी, सरला आदि उदीयमान नाट्यकर्त्रियों ने एकांकी रचनाएँ की है। नाटक विधा की सर्वश्रेष्ठ नाट्यकर्त्री रमा चौधुरी हैं जिन्होंने २० नाटकों की रचना की है।

नवीन नाट्यशैली के रूप में ध्वनि नाट्य लिखने वाली नाट्यकर्त्रियों में श्रीमती कमला रत्नम् अग्रगण्य हैं। इनके सभी रूपक आकाशवाणी की दृष्टि से लिखे गये हैं तथा प्रसारित भी हो चुके हैं। वनमाला भवालकर, देवकी मेनन, नलिनी शुक्ला ने आधुनिक ऑपेराओं का भी निर्माण किया है। मिथिलेश कुमारी मिश्रा की आम्रपाली नाटिका है। निष्कर्षतः अर्वाचीन महिला नाट्यकर्त्रियों ने आधुनिक एवं पारम्परिक दोनों ही रूपों में नाट्य रचनाएँ की है।

संदर्भ

१. दशरूपकम्,१/१.

२. नाट्यशास्त्रम्,१९/१.

३. (क) इतिवृत्तवशायातां त्यक्त्वाननुगुणां स्थितिम्।
उत्प्रेक्ष्याप्यन्तराभीष्टरसोचितकथोन्नयः ॥-ध्वन्यालोकः,३/११.
(ख) नहि कवेरितिवृत्तमात्रनिर्वहेणेन किंचित्प्रयोजनं इतिहासादेव तत्सिद्धेः।
— वही,३/पृ० १८३.

४. दशरूपकम्,३/३२,३३.

५. वस्तु च द्विधा। तत्राधिकारिकं मुख्यमङ्ग प्रासंगिकं विदुः। — वही,१/११.

६. वही,१/१६-१९,२२,२३.

७. नीरसोऽनुचितस्तत्र संसूच्यो वस्तुविस्तरः।
दृश्यस्तु मधुरोदात्तरसभावनिरन्तरः ॥
अर्थोपक्षेपकैः सूच्यं पंचभिः प्रतिपादयेत्।
विष्कम्भकचूलिकाङ्कास्याङ्कावतारप्रवेशकैः ॥— दशरूपकम् १/५७,५८.

८. नाट्यधर्ममपेक्ष्यैतत्पुनर्वस्तु त्रिधेष्यते।
सर्वेषां नियतस्यैव श्राव्यमश्राव्यमेव च ॥
सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यादश्राव्यं स्वगतं मतम्।
द्विधाऽन्यन्नाट्यधर्माख्यं जनान्तमपवारितम् ॥ — वही,पृ० १/६३-६७.

९. अरस्तु का काव्यशास्त्र,पृ० ७८.

१०. वही,पृ० ७९.

११. संस्कृतनाटक तथा अभिनय (भारतीय नाट्य साहित्य),पृ० ७.

१२. समीक्षाशास्त्र,पृ० ८६३,६४.

१३. इष्टार्थस्यरचना गोप्यगुप्तिः प्रकाशनम् ।
रागः प्रयोगस्याश्चर्यं वृतान्तस्यानुपक्षयः ॥ — दशरूपकम्, १/५५.

१४. (क) देशदीपम्, पृ० २.
(ख) पल्लीकमलम्, पृ० १.
(ग) मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १.
(घ) युगजीवनम्, पृ० १.
(ङ) शंकरशंकरम्, पृ० १.

१५. (क) यतीन्द्र-यतीन्द्रम् (पाटलश्रीः अक्टूबर १९६९), पृ० २९.
(ख) कविकुलकोकिलम्, पृ० १.

१६. निवेदित-निवेदितम्, पृ० १.

१७. (क) नौमिकालिदासं कल्याण विकाशं कषितकनकं भासम् _। — कविकुलकोकिलम् पृ० १.
(ख) नमामिस्वदेशं धरा तोषकम् _। — देशदीपम्, पृ० २.
(ग) नमामि__ शारदामणिनन्दिनीम__। — निवेदितनिवेदितम्, पृ० १.
(घ) प्रणमामि पल्ली पल्लवमालिनीम् _। — पल्लीकमलम्, पृ १.
(ङ) नमामिगानं मधुरसपानं कालिदासकविप्रवरम्_। — मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १.
(च) नमामियतीन्द्रम् यति सुन्दरम_। — यतीन्द्र-यतीन्द्रम्, पृ० २९.
(छ) धरावतंसं_ प्रणमामिपरमहंसम् । युगजीवनम्, पृ० १.
(ज) नमामिशंकरं शंकरकिंकरम्_। शंकरशंकरम्, पृ० १.

१८. सूत्रधारः– अयि अमले अखले अबले बाले। शृणु सावधानं मम उद्वेगकारणम् उज्जयिनीस्थ सर्वभारतीय 'कालिदाससमारोह' कर्तृपक्षैरादिष्टोऽस्मि_।
—मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० २.

१९. तद्वयं कालिकातास्थ प्राच्यवाणी सदस्याः रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालयोपाचार्यडॉक्टररमाचतुर्धुरीणा विरचितं अभिनवं संस्कृत नाटकं निवेदित-निवेदितम् नाट्ये प्रयोक्तुमुद्यताधीराश्चवर्तामहे ।
यतीन्द्रयतीन्द्रम-पाटलश्रीः अक्टूबर १९६९, पृ० ३०.

२०. वही, पृ० ३०.

२१. शंकरशंकरम्, पृ० २.

२२. (क) एषोऽयमित्युपक्षेपाद् सूत्रधारः प्रयोगतः
पात्रप्रवेशः यत्रैव प्रयोगातिशयो मतः ॥– दशरूपकम्, ३/११.
(ख) प्रविशति प्रसन्नः प्रभुकरुणाधन्यः सदाशिवो ज्ञानिगुणिवरः
पण्डिताग्रगण्यस्तर्कमतानन्यः सुतमंगलकामनापरः – कविकुलकोकिलम्, पृ० ४.
(ग) देशदीपम्, पृ० ४.
(घ) निवेदित-निवेदितम्, पृ० ६.
(ङ) पल्लीकमलम्, पृ० ४.
(च) मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ७.
(छ) यतीन्द्र-यतीन्द्रम्, पृ० ३१.
(ज) युगजीवनम्, पृ० ३.
(ञ) शंकरशंकरम्, पृ० ३.

२३. पंकजनयना–x x x किमन्यद् युवयोः प्रियं कर्तुं पारयामि ?
ब्रह्मबलः–इतोऽपि प्रियं स्यात्। तथापीत्थमस्तु धरणीभरणी भारतजननी जयतु विजय विलासिनी.... ओं शान्तिः, ओं शान्तिः, ओं शान्तिः।
–देशदीपम्, पृ० ५६,५७.

२४. अपसरतु धराया द्वेषहिंसादिवृत्तिः....
विरत विरह खेदं नित्यनेत्राञ्जनं नः॥ –मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ५५.

२५. अमलाशोकः काव्यालोकः हस्तुविमलगगने। –कविकुलकोकिलम्, पृ० ७४.

२६. नेपथ्ये-अहो ! अहो ! अहो ! अस्तंगतोऽरुणकिरणः अस्तंगतः अस्तंगतः।
मुद्रिता कमलकलिका मुद्रिता मुद्रिता। अहो अहो अहो ! –मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ४४.

२७. मार्गरिट्-(जनान्तिक) अहो अभिनवा अपरूपा अत्याश्चर्येयं श्रीमातृमूर्तिः।
निवेदितनिवेदितम्, पृ० ४३

२८. शंकरशंकरम्, पृ० ६९.

२९. युगजीवनम्, पृ० ८,२०.

३०. पिता-विस्मयविमूढः स्वगतम् न जाने किमत्र करणीयम् न जाने। कथं तरुणबालकस्य मुखे ईदृशी निगूढतत्वकथा ? कथं किमिदं शुभलक्षणं अशुभलक्षणं वा।
कविकुलकोकिलम्, पृ० ९.

३१. वही, पृ० ४१,४४.

३२. कालिदासः–एषा तवैव महानुभवता नाम। अयि स्नेहसुशीतले शृणु महानन्दसंवादम्। श्रीसरस्वतीकृपाधन्योऽहं साम्प्रतं शतशतजन्मसंचितानां पुण्यानां सम्मिलित फलेन। तस्या एव परमकरुणया अहं कविकुलकोकिलः भवितुं यतिष्ये..।
कविकुलकोकिलम्, पृ० ६८.

३३. पण्डितः–(आश्चर्यान्वितः) अपि न जानाति तद् भवान् ? अपि न जानाति भवान् यद् भवतः प्राणप्रतिमः पुत्रः सप्ताहाधिकं कालं पाठशालायां न गतवान्... तत्र केवलं सहपाठिभिः सह कलहविवादरतः आसीत्। –वही, पृ० १०.

३४. वही, पृ० २३,२४.

३५. वही, पृ० ५६.

३६. सरस्वती-अस्ति एकमात्र प्रायश्चित्तम्, शृणु तत् भव कविकुलकोकिलः.... ।
कविकुलकोकिलम्, पृ० ६१.

३७. सम्राट-शृण्वन्तु सर्वे। अद्य प्रभृति श्रीकालिदासः 'कविसार्वभौमः' इत्युपाधिभूषितो भविष्यति, भविष्यति च स कविकुलकोकिलः तस्य मनोहरसंगीतमूर्च्छनया विश्वभुवनं मोहयित्वा।–वही, पृ० ७३.

३८. अभ्रप्रतिमः-कल्याणि ! यथाशक्ति तव प्रश्नानामुत्तरदानाय यतिष्ये।
पंकजनयना-मां कथयतु भवान् देशस्य कथाम्।
अभ्रप्रतिमः-देशस्य कथां प्राचीनां वा नवीनां वा।
पंकजनयना-उभे एव। –देशदीपम्, पृ० ६.

३९. देशदीपम्, पृ० ४२.

४०. चम्पकवदनः(गवाक्षरन्ध्रेणबहिर्दत्तदृष्टिः) अहो अस्तं गच्छति भगवान् भास्करः। अस्तं गच्छति जीवन सूर्योऽपि। परन्तु कदापि नास्तं गमिष्यति भारतमातुर्महागौरवच्छविः। कदापि न, कदापि न, कदापि न। –देशदीपम्, पृ० ५१.

४१. रहिमः—गुरुतरा वार्ता। आकाशवाण्यामाध्यमेन अस्माकं जनप्रियः प्रधानमन्त्री अस्मान् आहूतवान् सर्वस्व त्यागाय। ग्राममध्ये इयं वार्ता प्रचारयितव्या।
—वही,पृ० १४.

४२. वही,पृ० २३,२४.

४३. वही,पृ० ४४.

४४. चम्पकवदन(सावेगम्) प्राणप्रियभ्रात्! मा चिन्ताकुलोभव, अद्य मम जन्मदिवसः। अस्मिन् विशेषदिने अहं वाच्छामि देशजनन्यै मम कञ्चन क्षद्रोपहारं दातुम् x x x मा चिन्ताकुलोभव। अहं यामि देशजनन्या गौरवपताकां स्थापयितुं सानन्दम्। —वही, पृ० ४०.

४५. ब्रह्मबलः—(अश्रुणिसंवृत्य)...देश जनन्या गौरवरक्षार्थं उत्सर्गीकृतप्राणानां सेवकानां मरणन्नास्ति x x x अहो अशेषसौभाग्यं आवयोः। यदावयोर्जीवनसर्वस्वपुत्रको नित्यप्रदीप्तो देशदीपो जातः।—देशदीपम्,पृ० ५६.

४६. मार्गरेट्-अहो बहु विलम्बो जातो मम। अहमत्र सर्वं शेषमागता। भृशं लज्जिताहम् (अन्यान् निविष्टमनसो दृष्टवा) अहो! परम सौभाग्यं मम, यद् भाषणश्रवणोत्सुका निविष्टमनस एते मां,न पश्यन्ति।—निवेदित निवेदितम्,पृ० ७.

४७. वही,पृ० ४८.

४८. निवेदिता- (नयने मुद्रयित्वा श्लोकावृत्तिं करोति) कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफल हेतुर्भूमा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि॥ ... न ज्ञातुमिच्छामि च निष्काम कर्म-व्रतनी अहं,कथमुद्वेगो मम फलप्राप्तेः?-निवेदितनिवेदितम्,पृ० ९३.

४९. मार्गरेट्-उपपादयामि युष्मभ्यं मम सिद्धान्तस्य प्रामाण्यम्....तस्य निस्तारो नास्त्यद्य अस्मत् सदृशयोद्धृणां हस्तात्। (सर्वे हसन्ति)—वही,पृ० १५.

५०. मार्गरेट —(सावेगम्) श्री गुरुदेव। अहं भवतः शिष्यत्वं याचे। कृपया वर्षतु मयि भगवन्!—वही,पृ० ३०.

५१. विवेकानन्दः —अपि सत्यमेतत्? आशातीतं सर्वम् सायुष्माभिः सहभोजनादिकमपि करिष्यतीति नमे आसीदाशा। जयः श्रीमार्तुजयः... । वही,पृ० ४८.

५२. निवेदिता-त्वत्प्रदत्ते। महाभारमहं सानन्दं गृह्णामि नतमस्तका न जाने सफलकामा भविष्यामि न वा ...यद्भवान् आदिशति।—वही,पृ० ६०.

५३. अबला x x x भारतवर्षाय सर्वस्वं निवेदितवति निवेदिते। विश्वकल्याणार्थं स्वजीवनं निवेदितवति निवेदिते। स्वात्मानं अर्घ्यरूपेण निवेदितवति निवेदिते। भारतजननी चरणे,परमजननी चरणे च निवेदिते,सार्थकनामांकिते निवेदिते।—निवेदितनिवेदितम्, पृ० १०३.

५४. कमलकलिका-भवन्तु, नदीतीरे अत्रैव उपविशामि। (तथाकुर्वती, सहसास्मृत्वा) हा! हतास्मि मन्दभाग्या! क्व मम स्नानशाटिका? नूनं प्रबलपवनवेगेन मम स्नानशाटिका नदीगर्भे पतिता ... ।—पल्लीकमलम्,पृ० १२.

५५. कमलकलिका- (उच्छ्वसन्ती) गभीर निद्रामग्नां मातरं विहाय अहमत्रागता धावनपरा एकाकिनी उन्मत्तावत्। किमेतत् शोभनं? किन्तु किं वा कर्तुं शक्नोमि? शक्तिहीनैव जाताहम् अकस्मात् परपदनतादयित निर्भरशीला प्रियैक प्राणाः च सर्वथा।
—वही,पृ० ३०.

५६. रूपकुमारः— किन्तु राज्यपरिवारसमाजधनजनमानान् परित्यज्य आगमिष्यति भवती दीनहीनदरिद्रेण मया सह?
कमलकलिका—(विहस्या) मया बहुशः उक्तं त्वं न दीनहीनदरिद्रः। यस्य गृहे नित्यं वसति प्राणबन्धु ....तस्य कोऽभावः?

पल्लीकमलम्, पृ० ६३.

५७. वही, पृ० १४.

५८. वही, पृ० ३२.

५९. वही, पृ० ४५.

६०. प्रभंजनः x x x मम द्वितीयविवाहजाताः चण्ड मार्तण्ड प्रमुखा बहवः सन्तानाः सन्ति। ततोभवतः एकैव कन्यका x x x अजानन् महापापोद्यतो मार्तण्डः ईश्वरेण परमकृपया रक्षितः। वही, पृ० ५९.

६१. रूपकुमारः –भवतु तत् प्रिये! भवतु तत्। कुसुमाकीर्णो भवत्वाक्यो मिलितः जीवनपथः–वही, पृ० ६४.

६२. कमलकलिका–मन्ये ममापि संघटिष्यते। प्रियदर्शन लाभोऽद्य ममापि, ततो यामि यामि यामि यामि मुहूर्तमात्रमपि विलम्बोऽसहनीयः यामि यामि यामि। (वेगेन प्रस्थिता)–मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ८.

६३. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १० व २३.

६४. यक्षपत्नी–क एष? किं मम प्रियतमः आगतः। अहमपि न जाने इदं सत्यं न वा। प्राणप्रतिम मम! गृहाण मम सभक्ति प्रमाणाञ्जलिम्। –वही, पृ० ६४.

६५. अरुणकिरणः–भद्रे विरमतु विरमतु भवती अकस्मात् अर्वाचीन कर्मणः x x x भवतु, वृथा कालव्ययो न करणीयो महुर्तमात्रमपि। ततो याम्यहं तस्या उद्धारार्थम्। –वही, पृ० ११

६६. वही, पृ० १४, १५.

६७. वही, पृ० ४३.

६८. वही, पृ० ५२.

६९. यक्ष–जीवन-सर्वस्वमम! विरहक्लिष्टां त्वां दृष्ट्वा उद्वेल्लति मम मनः किन्तु चिन्तय मम प्राणरस! विरहस्याप्यस्ति प्रयोजनम् तथैव विरहात् परमेव मिलनं भवति शुद्धतरं पूर्णतरं मधुरतरम्। –वही, पृ० ५४.

७०. युगजीवनम्, पृ० ५.

७१. रामकृष्णः–शृणुक्षेमकरि! शृणुयदाहं इदं शरीरं त्यक्त्वा गमिष्यामि तदा त्वमपि शरीरं न त्यज ईश्वरं विस्मृत्य अन्यान्यकर्माणि कृत्वा जनाः पतङ्गवत् किलविलायन्ते गम्भीरकष्टानि भुज्यंते च त्वं तेषां रक्षोवेक्षण करिष्यंसि तेभ्यः शक्तिं भक्तिं च दास्यति। वही, पृ० १०२.

७२. युगजीवनम्, पृ० १२.

७३. वही, पृ० १४.

७४. भैरवी-समागताः पण्डितवर्याः। कृपया शृण्वन्तु भवन्तः अस्या सभाया विचार्यविषयं तत्रमन्मतञ्च किंच अयं श्री गदाधरं अवतारो न वा? अत्र मन्मतम् अयं श्री गदाधर महोदयः कलियुगावतारः इति नास्ति कश्चिदपि सन्देहः।

प्रथमपण्डितः–x x x असम्भवमिदम् सर्वं अयौक्तिकञ्च। –वही, पृ० ४०.

७५. वही, पृ० ८०.

७६. वही, पृ० ९३.

७७. शिवगुरुः–(भावाविष्टः) श्रद्धेय श्वसुरमहोदय। श्रद्धेय श्वस्रूमातः किं कथयतः भवन्तौ? पुत्रो ममजातः?

कामाक्षी-अथकिम्? पुत्रस्तवजातः अत्याश्चर्यः अतुलनीय अनिर्वचनीयश्च पुत्रस्तवजातः।

—शंकरशकरम्, पृ० ६.

७८. वही, पृ० ४६.

७९. शंकरः— (अनवहितः) श्रूयते किल यत् सुदीर्घषोडशवर्षान् व्याप्याहं दिग्विजयरतः। पञ्चोत्तरसप्ततिसंख्यकाः सम्प्रदाया मया विजिताश्चेति। x x x समाप्ताः खलुममविजयाः। मायावरणं छित्वाहं ब्रह्मलोकं उपलब्धवान् स एवालोको मयाचतुर्दिक्षुविकीर्णः। —वही, पृ० ८९.

८०. नेपथ्ये-भारतावनिरत्नाय सिद्धतुल्यमहात्मने।
गान्धिवंशप्रदीपाय सादरं प्रणताम्यहम्॥
—कटुविपाकः-मंजुषा, १०:४, पृ० ८३.

८१. सत्यं विजयतां लोके मुक्तं भवतु भारतम्।
नन्दन्तु सुखिनः सर्वे देशजाश्च विदेशजाः॥ —वही, पृ० ९६.

८२. नेपथ्ये—नातन्त्री वाद्यते वीणा नाचक्रो वर्तते रथः।
नापतिः सुखमेधेत या स्यादपिशतात्मजा॥
मितं ददाति हि पिता मितं माता मितं सुतः।
अमितस्य दातारं भर्तारं का न पूजयते॥
कृपाणिका-दिव्यज्योतिः, अक्टूबर, १९७६, पृ० २२.

८३. नारकण्डाश्रमः— दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९८०, पृ० १०.

८४. कपोतालयः— मंजूषा, १० :१०, पृ० २२८.

८५. असूयिनी-मंजूषा, १२ :११, पृ० २९७.

८६. वीरभा -मंजूषा, ॥ :३, पृ० १३३.

८७. मीराचरितम्-मंजूषा, १४ :१२, पृ० २९०.

८८. ज्ञानेश्वरचरितम्-मंजूषा, १६ :४, पृ० ९७.

८९. असूयिनी-मंजूषा, १२ :११, पृ० २९९.

९०. कृपाणिका-दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९७६, पृ० २४.

९१. नारकण्डाश्रमः— दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९८०, पृ० ॥.

९२. वीरभा-मंजूषा, ११ :१३, पृ० १४०.

९३. असूयिनी -मंजूषा, १२ :११, पृ० २९९-३००.

९४. वीरभा-मंजूषा, पृ० १३४.

९५ वृत्तशंसिच्छत्रम्— मंजूषा, ११ :८, पृ० २१३.

९६. गोपिका-(क्रोशन्ती)—रे उदरम्भरिके। यथा यथा तवापत्यानि नश्यन्ति तथा-तथा तव बुभुक्षा वर्धते। (रेविका जोषमास्ते) किमर्थं मम पुत्रेण त्वं भर्तव्येति न जाने। धिक् वन्ध्यां या शिलेव कण्ठनिबद्धा नित्यं सन्तापकारिणी।
असूयिनी-मंजूषा, जुलाई १९५८, पृ० २९८.

९७. द्वितीया-नूनमेवमेतत्। परं विचित्रं विधेर्विधानं येनविचिरादेव कृतप्रायश्चित्ता रेविकापि कालीप्रसादात् पुत्रं लेभे।— असूयिनी— मंजूषा, १२ :११, पृ० ३०७.

९८. वही, पृ० ३०४.

९९. असूयिनी— मंजूषा, १२ :११, पृ० २९९.

१००. वही, पृ० ३०७.

१०१. कृपाणिका-दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९७६, पृ० २३.

१०२. वही, पृ० २५.
१०३. वही, पृ० २९.
१०४. वही, पृ० २३.
१०५. वही, पृ० २९.
१०६. गणेशचतुर्थी—मंजूषा, १० :४, पृ० १९५.
१०७. गणेशचतुर्थी, पृ० १९६.
१०८. वही, पृ० २०३.
१०९. रक्मा—तात ! श्रीगणेशोत्सवोऽद्य तत्सावधानेन भाव्यं भवतापि यथा न कदाचिद् बालेन्दुर्दूष्टिगोचरः स्यातः । —वही, पृ० १९५.
११०. हरि—भद्र । देहि मे शरणम् । परिक्लान्तोऽहम् । आकुलिताश्च पदपीडाभिः । —वही, पृ० १९५.
१११. वही, पृ० १९९-२०१.
११२. वही, पृ० २०३.
११३. वही, पृ० २०३.
११४. तुकारामचरितम्,—मंजूषा, १० :६, पृ० १५३.
११५. वही, पृ० १७०.
११६. तुकारामचरितम्,—मंजूषा, १० :६, पृ० १५४.
११७. वही, पृ० १५७-६२.
११८. वही, पृ० १६४-६६.
११९. वही, पृ० १६७-६८
१२०. वही, पृ० १६९-७०.
१२१. नारकाण्डाश्रमः—दिव्यज्योतिः, पृ० १०.
१२२. वही, पृ० ११.
१२३. वही, पृ० १५.
१२४. वही, पृ० १०.
१२५. वही, पृ० ११.
१२६. वही, पृ० १३.
१२७. वही, पृ० १४.
१२८. वही, पृ० ११.
१२९. मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, १० :६, पृ० १३२.
१३०. वही, पृ० १३९.
१३१. मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, १० :६, १३३.
१३२. वही, पृ० १३३.
१३३. वही, पृ० १३५.
१३४. वही, पृ० १३७.
१३५. वही, पृ० १३८.
१३६. किं पत्युः सविधेस्थिताहम् ? अथ किं पार्श्वे हि ते स स्थितः ।
शुश्रूषा कथमम्ब पत्युरिह मे ? कार्या सुते श्रद्धया ॥

—मीराचरितम्—मंजूषा,१४ : १२,पृ० २९०.
१३७. नृत्यन्ती बत मुक्तभूतलमसौ विष्णोः पदेऽन्तादधे। —वही,पृ० ३०६.
१३८. वही,पृ० २९०.
१३९. मीराचरितम्—मंजूषा,१४ : १२,पृ० २९१-९२
१४०. वही,पृ० २९५-३००
१४१. वही,पृ० ३०४.
१४२. वही,पृ० ३०६.
१४३. वीरभा—मंजूषा,१ १ : ३,पृ० १३४.
१४४. ग्रामाधिपः—नितरां व्याकुलोऽभवं लज्जितो दुरितैर्निजैः।
स्त्री जनस्याभ्यवस्कन्दान्निवृत्तं च मनो ममः ॥—वही,पृ० १४४.
१४५. वीरभा—योऽत्याचारः कृतो घोरः प्रतिग्रामनिवासिषु।
स बलात् प्रत्यवस्थेयः क्रान्त्वा विघ्नशतान्यपि ॥—वही,पृ० १३४.
१४६. वीरभा—मंजूषा,११ : ३,पृ० १३७-४२
१४७. वही,पृ० १४३.
१४८. वही,पृ० १४४.
१४९. सेवकः—सकलैरपि गन्तव्यमेव। न जानासि ? वसति स्म चिरादत्रकृषीवलगणो महान् सत्याग्रहमयी विभ्रद्व्रतदीक्षामनुत्तमाम् x x x स्वगृहाणि सर्वैरेव त्यक्तानि x x x भूकरस्याप्रदानेन परां काष्ठामनीयत। —स्वर्णपुरकृषीवलाः—मंजूषा १२: ६, पृ० १५५.
१५०. वही,पृ० १५९.
१५१. वही,पृ० १६५.
१५२. वही,पृ० १५६.
१५३. वही,पृ० १५७.
१५४. स्वर्णपुरकृषीवलाः—मंजूषा १२ : ६, पृ० १६२.
१५५. वही,पृ० १६५.
१५६. वृत्तशंसिच्छत्रम्,मंजूषा,११ : ८,पृ० २११.
१५७. वही,पृ० २३३.
१५८. वही,पृ० २०९.
१५९. वही,पृ० २११.
१६०. मीरा—पुनर्विवाहो योषितां न जातु लोकप्रियः। तदसम्भवमेतत्। —वही,पृ० २१५.
१६१. वही,पृ० २१७.
१६२. वृत्तिशंसिच्छत्रम्—मंजूषा,११ : ८,पृ० २२३.
१६३. भि० (सशिरः कम्पम्) आम्। (मुहूर्तं निःशब्दता विराजते) क्षत्रात् मयूरस्य केकारवः श्रयते) मया सह भवत्या अर्धरात्रौ प्रस्थातव्यमिति संप्रार्थये। निशीथे धूम्रयानेन प्रतिस्थितौ समुचितकाले प्राप्स्यावः संकेतस्थानम्। —अनूपः,पृ० ७.
१६४. वही,पृ० १२-१३.
१६५. मीरा—(विस्फारित नयना) अविहा अविहा। किमेतत्। (इति स्वपतिमुपेत्य निपातितदेहा रुदति) अहह। मम प्राणेश्वर। कुष्ठव्याधिः! कुष्ठव्याधिग्रस्तोऽसि

हन्त। कुतो नाहं सूचितासम् क्षम्यतां पापिनीं माम्। धिग्दुष्टजिह्वां मे, या पतिदेवं मिथ्याग्रहणेनाकलितम्। –वही, पृ० १६.

१६६. मीरा– अहो प्रत्यक्षीकृतभर्तृमरणया मया अद्यापि जीव्यते। खलं हि खलु मे हृदयं पातकिन्याः। घोरव्याधिग्रस्तेन नाथेन व्यथामात्मनोऽनिगणय्य, परमधर्मवशाद् अनेकैः प्रकारैरस्मदर्थं धनसंचय कृतो... (इति पत्युः पादौ गाढं परिष्वजते)। –वही, पृ० १७.

१६७. I Have try to the performances in various part of our garden so as to have a different setting each time.

–Sanskrit plays in Kathmandu.

१६८. समीक्षाशास्त्र, पृ० ९४०.

१६९. (क) वही, पृ० ९१६.

(ख) अनूपः, पृ० १७.

१७०. (क) Comedy, P. 19.

(ख) A handbook for the study of Drama, P. 68.

(ग) Encyclopaedia of Britanika, Vol. 6, P. 99.

१७१. असामान्य मनोविज्ञान, पृ० १६६.

१७२. वही, पृ० १४०.

१७३. कृपाणिका-दिव्यज्योतिः, अक्टूबर, १९७६, पृ० २६.

१७४. समीक्षाशास्त्र, पृ० ८६१.

१७५. गणयज्छागः, दिव्यज्योतिः, जुलाई १९७६, पृ० १०.

१७६. वही, पृ० १४.

१७७. वही, पृ० १०.

१७८. अस्य नचिकेतो यमसंवादस्य आकाशवाणीतः ध्वनिनाट्य प्रयोगः समननि।

–नचिकेतोयम संवादम्– पारिजातम्, वर्ष ३, अंक १, २, पृ० २४.

१७९. विवेकानन्दः x x x अयिशुद्धभावभरितभ्रातर! अद्य हि भवतामेव भव्याय श्रेयसे अहं तामेवातिप्रत्नां नचिकेतसः साहसकथां पुनः श्रावयितुमिच्छामि। ममैवेहाऽनुगुणं प्रेरणया वाऽपि बालस्याप्य बालचरितस्य तस्य नचिकेतसः कथां अभिनयमाध्यमेन इमेऽद्य नाट्यं प्रयोक्तारः भवतां समक्षं प्रस्तोष्यन्ति। –नचिकेतोयमसंवादम्, पृ० १०।

१८०. वही, पृ० १४.

१८१. वही, पृ० १६.

१८२. वही, पृ० १६.

१८३. नचिकेतोयमसंवादम्, पृ० १४.

१८४. वही, पृ० २३.

१८५. वही, पृ० १९.

१८६. वही, पृ० २०.

१८७. वही, पृ० २३.

१८८. वही, पृ० ११, १२.

१८९. यमराजः (जनान्तिकम्) अयं सुयोग्यः शिष्यः। लोकपरलोकयोः रहस्यं पृच्छति। किं जीवनं कः मृत्यु इत्यस्य तत्वं जिज्ञासते। भवतु अस्मै कथयिष्यामि। (प्रकाशम्)– नचिकेतः शृणु। –वही, पृ० २०.

१९०. सोमप्रभा–(किंचिद्विचार्य) ज्ञानी विज्ञानी शूरो वा भवतु सः।– पृ० ७.

१९१. राजा– (अतिसारल्येन) अत्र कः सन्देहस्तव शूराय प्रदेया एषा कन्या। –वही, पारिजातम्, २७ अप्रैल, १९८३, पृ० १५.

१९२. वही, पृ० ६.

१९३. वही, पृ० ७.

१९४. वही, पृ० १३.

१९५. वही, पृ० १५.

१९६. राजा x x x अतएव हि सा अस्मै शूराय प्रदेया। त्यजन्तु भवन्तः विवादम्। आगच्छन्तु च वयं सर्वे मिलित्वा सोमप्रभायाः विवाह विधिं निष्पादयिष्यामः।
–वही, पृ० १६.

१९७. प्राचार्या श्रीमती कमलारत्नम् महोदयाभिः आकाशवाणीदिल्लीकृते रूपान्तरितम् श्रीधरभास्करवर्णेकर लिखितं नाटकं विवेकानन्दविजयम्।
विवेकानन्दविजयम–पारिजातम्, आषाढ सं० २०४३, पृ० २७

१९८. वही, पृ० २१.

१९९. वही, पृ० ४१.

२००. वही, पृ० २९.

२०१. वही, पृ० ३०.

२०२. वही, पृ० ३३.

२०३. वही, पृ० ३७.

२०४. वही, पृ० ४१.

२०५. सूत्रधारः–भो भो श्रोतारः। अस्मिन् कलौ युगे परमहंस श्रीरामकृष्णदेवस्य शिष्यत्वं गतः परमतेजस्वी युवा नरेन्द्रः, पश्चात् विवेकानन्द स्वामी इति नाम्ना प्रख्यातः ... अयं तस्यैव लोकान्तरं चरित्रमधिकृत्य प्रस्तूयते इदं विवेकानन्दविजयं नाटकम्।
– विवेकानन्दविजयम्-पारिजातम्, आषाढ सं० २०४३, पृ० २७.

२०६. देवी प्रसादः– (नेपथ्याभिमुखं उच्चैः) भो बन्धु नरेन्द्र। कुत्र यासि? एहिआगच्छ। शफालिका-(ऊर्ध्वमवलोक्य) किं ब्रवीसि?
देवीप्रसादः–श्रीरामकृष्ण दर्शनार्थं सुहृद् सार्धं गच्छामीति।
गच्छतु महानुभावा, पुण्यानुभावं द्रष्टुम्। –वही, पृ० ३२.

२०७. ध्वनिरूपकस्यान्ते पुनः 'मूर्तमहेश्वरः' इति संगीतध्वनिः श्रूयते।
– विवेकानन्द स्मृतिः (संविद् १५ नवम्बर, १९८४ पृ० ३९.

२०८. वही, पृ० २६.

२०९. शान्ता - न पश्यामि तस्य जीवने कमपि सुखस्यावकाशं, तस्याशादीपो निर्वापित एव यदि तस्य सर्वस्वभूतायाः प्रेयस्या अनुरागोऽवस्थान्तरं गतो भवेत्।
– पाददण्डः– सागरिका, २ : ३, पृ० २५९.

२१०. निशाः– ललिता देवी तु लब्धयशा संगीतज्ञेति बहुश्रुतं, किमतीव मधुरं तस्या गायनम्?
–वही, पृ० २६३.

२११. वही, पृ० २६०.

२१२. शान्ताः–कस्य संदेशोऽयं सुधीरः?

सुधीरः—(सहर्षम्) अक्क, ललिता आगच्छति, अद्य अधुनैव ... ।—वही, पृ० २६५.

२१३. सुधीर —x x x एषा मम् भगिन्या ननान्दा यया शुश्रूषणसंजीवन्या मृत्युमुखात् प्रतिनिवर्तिता मे प्राणाः। सैव मम वाग्दत्ता वधूः, मे भविष्यत्पत्नी. . .।—वही, पृ० २७५.

२१४. निशा—(अवरूद्धकण्ठा)—नहि नहि ललिते, पंगुत्वेन पतिना सह प्रसह्य तव जीवनयापनं मा प्रसज्येदिति किमपि मनसि कृत्वा सुधीरेण छलः कृतः।

पाददण्डः—सागरिका, २ :३, पृ० २८०.

२१५. वही, पृ० २८२.

२१६. शान्ता (औत्सुक्येन बहिः पश्यन्ती, उच्चैरामन्त्रयति) भो पत्र वितरक, शृणु तावत् अस्ति किञ्चित्पत्रगस्मत् कृते ? किं भणसि, अद्य नास्त्येव किमप्यस्मानुद्दिश्य किं नहि सुधीरस्यापि।—वही, पृ० २५७।

२१७. वही, पृ० २६३.

२१८. पाददण्डः, पृ० २६२.

२१९. कैलासे केलिकाले प्रियवचनरतार्धांगिनीदत्तदृष्टेः
श्रुत्वा हा हेति दूराज्झटिति शरणिनां रक्षणायोत्थितस्य।
देव्या सम्भ्रान्त्याङ्कात्परिपतनभयाद्रश्रितो शंकरस्य
त्रैलोक्याधारहेतुर्दुरितभयहरः पातु नः पाददण्डः॥—वही, पृ० २५७.

२२०. वही, पृ० २८३.

२२१. साहित्यदर्पणः ६/२८४,८५.

२२२. वही, पृ० ६/२०७.

२२३. साहित्यदर्पण, ६/३०३-१२.

२२४. नारदः—अन्विष्टः कोऽनुरूपोऽस्याः कस्मै देवाय दास्यसि। त्रैलोक्यरत्न मुद्वोढु वरो भाग्यवत्तमः।—पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० ६.

२२५. वही, पृ० ११.

२२६. शंकरः— ....वधूमिमां त्वामहमेव याचे।
न रत्नमन्विष्यति मृग्यते तत्॥
—वही, पृ० २८.

२२७. पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० ७.

२२८. वही, पृ० ९.

२२९. वही, पृ० १५.

२३०. वही, पृ० २२.

२३१. वही, पृ० २७.

२३२. दासीभूता क्षणमपि कथं जीवितुं चोत्सहेऽहम्। रामवनगमनम्, पृ० ३.

२३३. वसिष्ठः—तपोवनं गतो रामः नैतद्दुःखनिरर्थकम्
अगम्य कर्म धीराणामलौकिकमहात्मनाम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्
ईदृशा भुवि जायन्ते जानीमो न तु तान् वयम्॥—वही, पृ० १८.

२३४. रामवनगमनम्, पृ० ४.

२३५. वही, पृ० ५.

२३६. कौशल्या– तव देवि पतामि पादयो, शृणु मा पुत्रमितो विवासय
कैकेयी (द्रवीभूतेव) रामो ममापि पुत्रो....
मन्थरा– विस्मरणीयो न राजधर्मोऽपि। –वही, पृ० १५.

२३७. वही, पृ० १६.

२३८. वही, पृ० १७.

२३९. सीताहरणम् (हस्तलिखित), पृ० १७.

२४०. वही, पृ० ३/पृ० ४.

२४१. वही, ५८/पृ० १४.

२४२. अपूर्व हरिणोऽयं हिरण्यमयः x x x पद्मराग जिह्वा च चकास्ति। सीताहरणम्, १७/पृ० ४.

२४३. वही, ४२/पृ० ११.

२४४. अन्नदेवता, (हस्तलिखित), पृ० १.

२४५. लीला– x x x अतोऽधिकं न किंचिद् अभिलषे। न कदापि रुष्टा भूत्वा दुराग्रहं करिष्यामि न निन्दामि अन्नम्....।
– अन्नदेवता (हस्तलिखित), पृ० १२.

२४६. विजयः (व्यग्रोभूत्वा) अहो कलंकः। यद्येष कलंकः प्रक्षालनान्तरमपि वर्तते तद कथमहं रजकः? x x x कामं विदीर्यतु परं कलंकस्तु प्रमृष्टो भवेत्। –भूमिकन्या, पृ० ५.

२४७. वही, पृ० ५२.

२४८. सीता - रामराज्यस्य प्रतिष्ठा? तस्या अधिकं महनीया प्रतीयते मम स्त्रीजातेः प्रतिष्ठा x x x मम जीवनं भवेत्सीतारामराज्ये एव। पतितपावनं इति यस्य जयजयकार प्रवर्तते जगति, सोऽस्ति सीतारामः ।x x x। –वही, पृ० ११७.

२४९. कुशिका– कलंकं छादयितुं कृष्णाजिनं परमुपयुक्तमेव। x x x
विजयः– प्रयत्नेनाच्छादितमप्येतत् लाञ्छनमद्य वा श्वो वा नियतमेव विवृतं भविष्यति। तदा मे प्रतिष्ठा कुतः स्थास्यति। –वही, पृ० ७.

२५०. रामः – किं करोमि? ? लक्ष्मण! किं करोमि, द्विधा भवति मे मनः! लोकाः निन्दन्ति असह्योऽयं परिवादः। को हेतु निन्दायाः। सीतां निर्दोषां जानामि x x x अपीमां आत्मपरिवादकथामुपेक्षं? आहोस्विददोषा धर्मपत्नीं त्यक्ष्ये। –वही, पृ० ६०.

२५१. रामः –उर्मिले! किं मे हृदयं न जानासि वत्से। सीतां परित्यज्यन् किमहमानन्दमनुभवामि? इयं मे घोरातिघोरा परीक्षा।– भूमिकन्या, पृ० ६६.

२५२. वही, पृ० ७०.

२५३. सीता– परं स्त्री जातेपरमानस्य विध्वंसनार्थमद्य दिव्यं करोमि। रघुकुलोत्पन्नाद् श्रीरामचन्द्रादृते नान्यपुरुषचिन्ताकृता मया x x x तथा मे माता x x x निजनिष्कलंककन्यायै अस्मिन्नेवक्षणे आश्रयं दातुं अर्हति। (सीता अन्तर्हिता)। –वही, पृ० ११७-१८.

२५४. नमामित्रिपुरां देवी दक्षिणेश्वरवासिनीम्।
मूर्तित्रयात्मिकां कालीं सृष्टिस्थित्यन्तकारिणीम्॥
वन्देऽहं करुणामूर्तिं रामकृष्णजगद्गुरुम्।
अम्बां च शारदादेवीं भक्तिमुक्तिप्रदायिनीम्॥
–कालीदर्शनम् (संस्कृत प्रतिभा १२ : २), पृ० १५८.

२५५. वही, पृ० १६३.

२५६. शारदाः—(निभृतं श्रुत्वा सावेगम्) शान्तं पापम्। यत्र यत्र गम्यते तत्रतत्रैषा वार्तैव हृदयशल्यायमाना श्रवण पथं प्रविशति। उत्कण्ठितास्मि पतिं दृष्ट्वा तस्य शरीरस्थिति तत्वतो ज्ञातुम्।—काल दर्शनम् (संस्कृतप्रतिभा १२ : २), पृ० १५९.

२५७. (शारदा निद्रायाः प्रबुध्यआत्मगतम्) अये ! आश्चर्यमेतत् स्वप्ने मया ज्योतिस्स्वरूपिणी देवी काली दृष्टा। तया सह संवादोऽपि कृतः।—वही, पृ० १६२.

२५८. वही, पृ० १६०.

२५९. वही, पृ० १६०.

२६०. वही, पृ० १६०.

२६१. देवीः —अलमुत्कण्ठया, शीघ्रमेव स्वस्थ शरीरा भविष्यसि। दक्षिणेश्वरस्थं ते भर्तारमपि द्रक्ष्यसि। त्वत्कृते हि मया तेन तत्र वासः कारितः।—वही, पृ० १६२.

२६२. शारदा — x x x देव्याः शीतलकरपल्लवस्पर्शेन विगतज्वरा स्वस्थशरीरा चास्मि संवृत्ता।—वही, पृ० १६३

२६३. प्रभावती—ननु जानासि आंगलाभाषायां ऑपेरा (opera) इति प्रसिद्धः प्रचुरसंगीतविशिष्टो नाटकाभिनयः। एतत्सरण्या निबद्धा खलु प्रस्तुता कृतिः। —कुचेलवृत्तम्—संस्कृत प्रतिभा, ३ : २, पृ० २२९.

२६४. सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम्—संस्कृत प्रतिभा ५ : २, पृ० २०३.

२६५. वही, पृ० २०९.

२६६. सैरन्ध्री x x x सखि अकृतपुण्याहं तु सदा कृष्णगतमानसा कदा वा सकृदपि भगवद्दर्शनावसरं लभेय इति चिन्तया उत्ताम्यामि।—वही, पृ० २०४.

२६७. वही, पृ० २०५.

२६८. वही, पृ० २०७.

२६९. वही, पृ० २०८.

२७०. वही, पृ० २०७.

२७१. (क) कर्मणा मधुरानायभुजिष्यात्वं गताऽपि सा
मनसा देवकी सूनं प्रेपेदे मधुराजनिम्॥—वही, पृ० २०२.
(ख) वही, पृ० २०९.
(ग) अवतारैर्यथाकालं धर्म रक्षा करोति यः।
तंवन्दे मुरलीगानलोलं गोकुलबालकम्॥—कुचेलवृत्तम्, पृ० २२८
(घ) वही, पृ० २४१.

२७२. नचिकेतश्चरितम्, पृ० १.

२७३. महीयसीय गार्गी, पृ० २३.

२७४. विराड्गृहम्, पृ० ४५.

२७५. नचिकेतश्चरितम्, महीयसी गार्गी, विराड्गृहम्, पृ० १८, ३३, ५०.

२७६. वही, पृ० १, २३, ४५.

२७७. (जनान्तिके द्वौ सदस्यौ आलपतः)
प्रथमः—यजमानस्य दानेच्छा वर्तते किन्तु स न उदारः, धिक् मह्यं प्रदत्ता गौ अतीवशीर्णाः।
द्वितीयः—शीर्णाः ? नयतु गृहम्। तत्र भोजनदानेन पुष्टां कुरु। मह्यं तु या दत्ता सा कदापि न प्रसोष्यति।—वही, पृ० ४.

२७८. नचिकेतश्चरितम्, पृ० १५.

२७९. वही, पृ० १७.
२८०. शृंगारप्रकाशः, ११, पृ० ४६८.
२८१. भावप्रकाशनम्, ९, पृ० २६३-२६५.
२८२. नाटकलक्षण रत्नकोश; पृ० ३०५.
२८३. साहित्यदर्पणः, ६/२७७-७९.
२८४. हास्यशृंगार भूयिष्ठं दशलास्याङ्गभूषितम् ।
उदात्तनायकञ्चैव पीठमर्दोपनायकम् ॥
यत्र वासकसज्जा तु नायिकोदात्तनायकाः ।
नाट्यरासकमेकाङ्कमिदमाह महामुनिः ॥ —संगीतदामोदरः, ४/पृ० ९५-९६.
२८५. (क) नाटकलक्षणरत्नकोशः, पृ० ३०४.
(ख) अथ रासकमेकाङ्क सूत्रधारेणवर्जितम्
सुलिष्टनान्दीयुक्तं पञ्चपात्रं त्रिसन्धिकम् ॥
वीथ्यङ्गमण्डित मुख्यनायकं ख्यातनायिकम्
उदात्तभावविन्यासभूषितम् सोत्तरोत्तरम् ॥ —भावप्रकाशनम्, ९/पृ० २६९.
(ग) साहित्यदर्पण, ६/२८८-९०.
२८६. उपरूपकों का उद्भव और विकास, पृ० ८३.
२८७. केचिद्वदन्ति गोपीनां क्रीडारासकमित्यपि ।
—संगीतदामोदरः, ४/पृ० ९५.
२८८. राधानुनयः, पृ० ३.
२८९. शीतलमन्द-सुगन्ध-वायुपूरिते सघनमधु-ऋतुरसाले निर्जन-निकुंजे कृष्णविरहोत्सुका राधा एकाकिनी परिभ्रमति । —वही, पृ० ५.
२९०. सबहुमानमनुनीता राधा शनैः शनैः आगत्य कृष्णस्य पार्श्वे तिष्ठति राधाकृष्णौ परस्परं सानुरागं पश्यथः । —वही, पृ० १८.
२९१. वही, पृ० ३.
२९२. मुरलिका ध्वनिमयि ! सखि शृणु सखि शृणु
क्षणमवधान्तया राधे ! शृणु । वही, पृ० ८.
२९३. राधानुनयः, पृ० १३.
२९४. वही, पृ० १८.
२९५. प्रियां राधिकां ह्लादिनी शक्तिभूतां
तृषार्तेक्षणां राधयन्तं ब्रजेशम् ।
स्वलीलासवैमोहयन्तं परमेशम्
जगत्पालकं श्रद्धया भावयामि ॥ —वही, पृ० १९.
२९६. वही, पृ० १-२.
२९७. राधाः — अये गोपिकारासकेलि प्रियस्त्वं
किमर्थं निकुञ्जे रहस्यागमोऽयम् ।
विहायैकमेकं सुमनं स्वादलुब्धो
द्विरेफः प्रधावन्न विश्वासयोग्यः ११ — वही, पृ० १४.
२९८. वही, २६-३३/पृ० १४-१८.

२९९. दशरूपकम्, ३/४३-४८.

३००. (क) नटः– किं कथयति भवान् ? किन्नजानाति भगवतीमाम्रपालीम् ? कथन्न स्मरति लिच्छिविगण राज्यसुन्दरीम् ? सा चैवेषाम्रपाली यस्या आतिथ्यं महात्मा बुद्धोऽपि सहर्षं स्वीकार । – वही, १/पृ० १२.

(ख) वही, १/पृ० १२.

३०१. नटः– आकर्ण्य भाव सत्यम् । (ध्वनिर्मुहुर्मुहुर्वर्धते) तदमहमेतत्कारणं पश्यामि । क्षणं तिष्ठतु भवान् (पुनः कर्णं दत्वा) अवगतमवगतमस्य कारणं यदद्य वैशाल्यां मगधेश्वरस्यशत्रोरेव पदार्पणात् समुद्यत एष कोलाहल विशेषः प्रतीयते यदसौ राजकुमारस्तु अस्यामेव दिशायामागच्छन्नस्ति । – वही, पृ० १३.

३०२. वही, १/२, पृ० १४.

३०३. आम्रपाली, पृ० १५.

३०४. वही, पृ० २६.

३०५. वही, पृ० २५.

३०६. आनन्दः– x x x सरलहृदया आम्रपाली भवतो दयापात्रैव खलु भिक्षुणीपदे स्थापयितव्या । – वही, पृ० ४३.

३०७. वही, पृ० ५१.

३०८. बुद्धः– x x x आम्रपाली ! त्वमधुना भिक्षुणीपदमारोहसि तत्त्वन्मार्गे न काचिदपि बाधागमिष्यति । – आम्रपाली, पृ० ५०.

३०९. समीक्षाशास्त्र, पृ० ९३१.

३१०. महेशः– (विहस्य) मूर्खाधिराज ! एषा ते दूरदर्शिता विनाशकारिणीव दृश्यते । वैद्यराजस्यानयनाय मयोक्तो न तु ते दूरदर्शनस्य प्रदर्शनार्थम् ।

– अलक्ष्यं दूर दर्शनम् (दशमस्त्वमसि), पृ० ३२.

३११. उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम् (दशमस्त्वमसि), पृ० १४.

३१२. हरिपालः– नाथ ! मम भ्रातरौ शठराजौ स्तः, कथं न ताभ्यामेवं चिन्तितं यद्भवतः शवः खण्डविधिना सरलतया भूमावतारयितुं शक्यः ।

– ज्ञानेनहीनाः पशुभिस्समानाः (वही), पृ० २०.

३१३. सचाप्यस्ति रजक एव (दशमस्त्वमसि), पृ० ११.

३१४. पार्वती– अम्बे ! स एव मम स्वामी अधुना भारत देशस्य मुक्तिकार्ये कारागारयातनां सहतेऽसौ । अतः तस्य प्रतीक्षायां यद्यहं चिरकौमार्यं भजे तर्हि मम जीवनस्य साफल्यम् । – नमुनिपुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः, पृ० ४९.

३१५. वेदप्रकाशः– मंगले ! मोहावरणमधुना त्वदवचनेनापसारितम् । सत्यं रविदर्शनमिव प्रत्यक्षीभूतमद्य । गच्छाम्यहं साम्प्रतम् । राष्ट्रमुक्तिरेव ने लक्ष्यभूता ।

– माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः (दशमस्त्वमसि), पृ० ४३.

३१६. सूत्रधारः – जमदग्नेः सुताय रेणुकायश विवर्धकायः
एकविंशतिर्वारं क्षत्रिकुल विनाशकाय ।
हैहय गोत्रोत्पन्न कार्तवीर्यार्जुन वंशध्वंसकाय
श्रीविष्णुस्वरूपाय परशुरामाय नमोनमः ॥

—परशुराम प्रतिज्ञा (भारतोदयः फरवरी १९८६), पृ० ७.

चतुर्थ प्रकाश
आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों की कथावस्तु में प्रवृत्ति एवं आधुनिक जीवन-प्रभाव

नाट्य में यथार्थता की प्रतीति के लिए स्थान-विशेष के अनुसार पात्रों की वेशभूषा भाषा, आचार, व्यवहार आदि को मंच पर प्रदर्शित करना प्रवृत्ति है।[१] आचार्य भरत के अनुसार विश्व के विभिन्न प्रदेशों के स्थानीय वेश, आचार, भाषा तथा कार्य व्यवहार की सूचिका प्रवृत्ति होती है।[२] अभिनवगुप्त के अनुसार प्रवृत्ति बाह्य-विषयों का ज्ञान है।[३] डॉ० एस० एन० शास्त्री प्रवृत्ति को मनुष्य के बाह्य जीवन या सभ्यता को जानने का महत्त्वपूर्ण साधन मानते हैं।[४] आचार्य धनंजय[५] एवं शारदातनय[६] भी उपर्युक्त मत को ही स्वीकार करते हैं। आचार्य राजशेखर वेश विन्यास क्रम[७] को एवं विश्वनाथ स्थान विशेष के अनुसार भाषा-विधान[८] को ही प्रवृत्ति कहते हैं। शिंगभूपाल इसका लक्षण करने की आवश्यकता ही नहीं समझते।[९] वास्तविकता तो यह है कि नाट्य में विभिन्न स्थानों एवं वर्गों के पात्र होते हैं, उनकी सहज प्रवृत्ति को दिखाए बिना नाट्यकार अपनी कृति को स्वाभाविक नहीं बना सकता । नाट्य की सार्थकता विभिन्न रुचि के दर्शकों का एक साथ मनोरंजन करने में होती है।[१०] अतः प्रवृत्ति के प्रयोग से नाट्यकार इस उद्देश्य की आंशिक पूर्ति करता है।

आचार्य भरत ने चार प्रकार की प्रवृत्तियाँ मानी है - दाक्षिणात्या आवन्तिका ओड्रमागधी तथा पांचाल मध्यमा।[११] इन प्रवृत्तियों के द्वारा वे विभिन्न प्रदेशों के मनुष्यों के वेशभूषा एवं स्वभाव का भेद भी बताना चाहते हैं। उदाहरण के लिए पंजाबी प्रायः युद्ध प्रिय तथा बंगाली कला प्रिय एवं मृदुल स्वभाव के होते हैं। अतः नाट्य में भी देशगत एवं स्वभावगत भिन्नता सदा सुयोजित होनी चाहिए।[१२]

प्रस्तुत प्रकाश में अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के रूपकों मे प्रयुक्त विविध प्रवृत्तियों के साथ-साथ आधुनिकता के प्रभाव, आधुनिक युग की समस्याओं के निरूपण व समाधान का अध्ययन किया जाएगा।

श्रीमती रमा चौधुरी के अनेक नाटक आधुनिक महापुरुषों के चरित को चित्रित करने वाले हैं। ऐसे रूपकों में तो आधुनिक व्यक्ति, स्थान एवं आचार-विचार का स्वतः सन्निवेश होता है। 'देशदीपम्' में देशभक्ति भावना, हिन्दु मुस्लिम एकता तथा सर्वधर्म समन्वय की भावना[१३] मुखरित हुई है। देशदीपम् का नायक चम्पकवदन व उसका मित्र कलकत्ता महाविद्यालय में एम० ए० का छात्र है।[१४] देश-विदेश का समाचार जानने के लिए उसके गाँव में रेडियो की व्यवस्था है परन्त सभी के पास रेडियो नहीं हैं। चम्पकवदन

अभ्रप्रतिम आदि ग्रामवासी चाचा रहीम के यहाँ जाकर रेडियों पर प्रधानमन्त्री का देश के लिए सर्वस्व अर्पण करने का सन्देश सुनते हैं।[१५] इसी रूपक में एक स्थान पर नर्सिंग प्रशिक्षण का उल्लेख हुआ है। नायिका पंकजनयना अपनी नर्सिंग का प्रशिक्षण समाप्त करके युद्ध में घायल सैनिकों की परिचर्या के निमित्त युद्धक्षेत्र में जाने के लिए माता-पिता से अनुमति माँगती है।[१६] अभ्रप्रतिम शिक्षा समाप्ति के पश्चात् विमान चालक बनना चाहता है।[१७] तिरंगाध्वज स्वातन्त्र्योपरान्त भारत का राष्ट्रीय ध्वज बना। इसका उल्लेख भी एक स्थान पर नाट्यकर्त्री ने चम्पकवदन के मुख से गर्व से कराया है। वह शत्रु के शिविर पर गौरव सहित भारतीय तिरंगा फहराना चाहता है।[१८] एक स्थान पर आधुनिक शस्त्र 'पिस्तौल' का भी उल्लेख हुआ है। भारतीय शिविर में प्रविष्ट शत्रु सेना का गुप्तचर पहचाने जाने पर तत्काल आत्मरक्षा के लिए पिस्तौल चलाता है।[१९]

निवेदितनिवेदितम् की नायिका भगिनी निवेदिता विदेशी महिला थी, जो स्वामी विवेकानन्द से प्रभावित होकर भारत आई थी। अतः आलोच्य रूपक में उनसे सम्बद्ध वर्तमान समय के देश-विदेश के स्थल व्यक्ति एवं रहन-सहन आदि का परिचय मिलता है। स्वामी विवेकानन्द लन्दन में धर्म प्रचार के लिए जाते हैं तो वहाँ लेडी ईसाबेल के यहाँ रुकते हैं। उसकी बैठक के अग्न्याधार (आतिशदान) में अग्नि जल रही है। यहाँ बैठक के लिए संस्कृत शब्द अतिथि सम्मेलन प्रकोष्ठ का प्रयोग करके अंग्रेजी भाषा के शब्द ड्राइंगरूप को भी कोष्ठक में दिया है।[२०] विदेशी महिलाओं के नामों के पूर्व मिस् एवं मिसेस् अथवा लेडी शब्द का प्रयोग किया गया है।[२१] आधुनिक ईसवी सन् की तिथियों एवं अंग्रेजी मासों को भी यथावत् ग्रहण किया गया है।[२२] कहीं-कहीं अंग्रेजी के ही शब्दों को तथा कहीं-कहीं उनके उच्चारण के देवनागरी रूप को भी प्रयोग में लाया गया है।[२३]

मार्गरेट् जब विवेकानन्द के साथ भारत आकर माता शारदा देवी से मिलती हैं तब दोनों के एक दूसरे की भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण उनका भाषण दुभाषिये के सहयोग से होता है।[२४] एक अन्य स्थल पर कलकत्ता में फैले प्लेग रोग के निवारण के लिए निवेदिता टीके की व्यवस्था करवाती है।[२५] इस प्रकार निवेदितनिवेदितम् में भी आधुनिक जीवन के प्रभाव को स्पष्टतः देखा जा सकता है।

यतीन्द्र-यतीन्द्रम् के नायक यतीन्द्र विमल चौधुरी हैं। उनकी मृत्यु कलकत्ता में १९६४ में हुई। यह नाट्यकर्त्री रमा चौधुरी के पति थे। इनके चरित्र-निरूपण के क्रम में युगानुरूप आधुनिक शिक्षा-दीक्षा व रहन-सहन का पर्याप्त उल्लेख हुआ है। यतीन्द्र विमल ने कलकत्ता के प्रेसिडेन्सी महाविद्यालय से एम०ए०[२६] परीक्षा उत्तीर्ण की, तदनन्तर लन्दन से पी-च्० डी० की उपाधि प्राप्त की। लन्दन में वे इण्डिया आफिस लाइब्रेरी में संस्कृत एवं पालि के प्रधान

गवेषक के रूप में नियुक्त हुए।[२७] लन्दन में यतीन्द्र विमल ल्याण्ड लेडी मिसेस् कक्स के यहाँ पेइंग गेस्ट बनकर रहे थे।[२८] उनके पिता प्रति माह उनके लिए धनराशि भेजते थे।[२९] लन्दन में 'कोहिनूर' नामक भारतीय भोजनागार का वर्णन किया गया है, जहाँ कभी-कभी भारतीय भोजन के लिए इच्छुक लोग जाते थे। यतीन्द्र भी मोटरयान से दत्त के साथ यहाँ जाया करते थे।[३०] इस प्रकार यतीन्द्र-यतीन्द्रम् में आधुनिक शिक्षा एवं रहन-सहन का वर्णन हुआ है।

श्रीमती रमा चौधुरी के कुछ रूपकों में बंगीय प्रभाव भी दृष्टिगत होता है। 'देशदीपम्' में बंगाल के एक सुखी परिवार को दिखाया गया है। गृहस्वामी ब्रह्मबल का पुत्र कलकत्ता में महाविद्यालय का छात्र है। अवकाश में वह अपने मित्र के साथ गाँव आता है।[३१] चम्पक वदन की माँ अभ्रप्रतिम को नारियल मिश्रित भुजे चावल खाने को देती है।[३२] एक अन्य स्थल पर ब्रह्मबल भात के साथ भोजन करने के लिए मछलियों को पकड़ने जाता है।[३३] कुक्कुट मछलियाँ बेचकर अपनी जीविका चलाता है।[३४] ग्राम्य परिवेश के अनुसार ही ब्रह्मबल का घर अत्यन्त छोटा तथा मिट्टी का बना हुआ है।[३५] चम्पकवदन देश सेवा के लिए बंगाल के ही एक जोयान नामक दल में भर्ती होता है।[३६] ये सब वर्णन रूपक पर बंग जीवन के प्रभाव को परिपुष्ट करते हैं।

युगजीवनम् के नायक रामकृष्ण परमहंस बंगाल के महापुरुष हैं। अतः इस नाट्क पर भी बंगीय प्रभाव परिलक्षित होता है।[३७] गदाधर दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर में काली की पूजा करते हैं। अमावस्या की घोर रात्रि में काली पूजा के दिन रामकृष्ण परमहंस षोडशोपचार विधि से देवी की पूजा करते हैं। कुछ स्थानों पर बंगीय उक्तियों का संस्कृत रूपान्तरण भी किया गया है।[३८]

निवेदित-निवेदितम् नाटक के आरम्भिक दृश्यों में आंग्ल प्रभाव तथा बाद के दृश्यों में बंग-प्रभाव परिलक्षित होता है। आरम्भ में निवास के लिए प्रयुक्त स्थानादि की नामावली यथावत् अंग्रेजी भाषा से ही ग्रहण की गई है। लन्दन में शीत अधिक होता है। अतः बैठक में अग्नि प्रज्वलन का उल्लेख है।[३९] मार्गरेट् को अपने पाश्चात्य होने का अभिमान है, अतः वह सहजता से विवेकानन्द पर विश्वास नहीं करती।[४०] अन्तिम दृश्यों में कलकत्ता के गली मुहल्ले तथा दार्जिलिंग के रायभिला आदि क्षेत्रों का नामतः वर्णन आया है। निवेदिता अपने जीवन के अन्तिम दिन पर्वतीय क्षेत्र दार्जिलिंग के रायभिला में व्यतीत करती हैं।[४१] कलकत्ता के वाग्बाजार एवं १६ बोसपाला लेन को निवेदिता अपना प्रमुख कार्यक्षेत्र बनाती है।[४२]

यतीन्द्र-यतीन्द्रम् में भी बंगीय जीवन शैली का प्रभाव है। यतीन्द्र के पिता-रसिकचन्द्र चटगाँव के कब्धुरखिल ग्राम के निवासी थे।[४३] यतीन्द्र विमल माँ के परमभक्त थे।[४४] विदेश से लौटने के पश्चात् यतीन्द्र कलकत्ता के फेडरेशन स्ट्रीट पर स्थित भवन में प्राच्यवाणी संस्था का कार्यालय खोलते हैं। वे

कलकत्ता के राजकीय संस्कृत महाविद्यालय के अध्यक्ष तथा कलकत्ता में ही स्थित राजकीय बंगीय संस्कृत शिक्षा परिषद् के सचिव बनते हैं ।[४५] इनके घर के नौकर-चाकर इन्हें दादाबाबु कहते हैं ।[४६]

पल्लीकमलम् एक काल्पनिक रचना है तथापि यहाँ भी नाट्यकर्त्री के बंगाल निवासिनी होने से बंगीय वातावरण है । नाटक के प्रतिनायक मार्तण्ड की कलकत्ता में कई अट्टालिकाएँ हैं लेकिन दुर्गापूजा के अवसर पर वह गाँव आकर ही रहता है ।[४७] कई स्थानों पर बंगीय कहावतों का संस्कृत रूपान्तरण किया गया है । यथा—बंगीय प्रवादः—आकाशचन्द्रः पतित करे में[४८] कुक्षौ क्षुधा मुखे लज्जा ।[४९]

उपर्युक्त विवेचन से निष्कर्ष निकलता है कि नाट्यकर्त्री रमा चौधुरी आधुनिकता एवं बंगीय प्रभाव से पर्याप्त प्रभावित है ।

श्रीमती लीलाराव के नाट्य साहित्य में यथा-स्थान ग्राम व नगर का परिवेश प्रकट हुआ है । इनके रूपकों में आधुनिकता का प्रभाव भी सहज दृष्टिगत होता है, तकनीकी दृष्टि से तो उन्हें आधुनिक कहा ही जा सकता है । साथ ही कथावस्तु में उन्होंने आधुनिककाल व उसकी समस्याओं को चित्रित भी किया है ।

अनूपः रूपक महाराष्ट्र के लोनावलिग्राम से सम्बद्ध है । वहाँ नारिकेल पूर्णिमा महोत्सव का आयोजन किया जाता है । इसका संकेत नाट्य के आरम्भ में दिए गए नाट्य निर्देश से मिलता है ।[५०] मीरा भी अपने दोनों बच्चों के साथ बैलगाड़ी में बैठकर मेला देखने जाती है । बैलों के गले में बँधी घण्टी की आवाज होती चलती है जो ग्राम्य परिवेश के अनुरूप है ।[५१] नारिकेल पूर्णिमा महोत्सव महाराष्ट्र के प्रमुख उत्सवों में प्रसिद्ध एवं सार्वजनिक है क्योंकि अपने वर्तमान जीवन से दुःखी मीरा इस उत्सव के अतिरिक्त अन्य उत्सवों में भाग नहीं लेती है ।[५२]

गणेशचतुर्थी में भी महाराष्ट्रीय परिवेश है । यह रूपक महाराष्ट्र के प्रसिद्ध पर्व गणेशोत्सव से सम्बन्ध रखता है । 'गणपति बापा मोर्या'[५३] आदि मराठी ध्वनियों से महाराष्ट्रीय समाज के वातावरण को प्रस्तुत किया गया है ।

असूयिनी रूपक काली प्रभाव तथा नरबलि आदि से बंगाली वातावरण को प्रकट करता है । तदनुरूप खान-पान रहन-सहन एवं वेशभूषा आदि का संकेत किया गया है । घटना-स्थल समुद्र के समीपवर्ती वासन नामक ग्राम में मछुआरों की बस्ती है ।[५४] उसका पति सुपर्ण मछलियाँ बेचकर अपनी आजीविका चलाता है । मछली पकड़ने के लिए उसके पास अपनी नाव भी है ।[५५] लेकिन दुर्गा आर्थिक दृष्टि से विपन्न है, उसके पास नाव भी नहीं है । रेवा के पास पर्याप्त पशुधन भी है । सूर्योदय के पहले ही वह गाय दुह लेती है ।[५६]

रूपक के आरम्भ में वह मिट्टी के पात्र में चूल्हे पर खीर पकाती प्रदर्शित की गई है। खीर पाक में प्रवृत्त रेवा को देखकर उसकी सास भत्सर्ना करती है क्योंकि कुछ दिन पूर्व ही उसका बच्चा मरा है।[५७] एक स्थान पर सुपर्ण पकाने के लिए मछलियाँ लेकर आता है।[५८] गरीब दुर्गा के बच्चे रेवा से पूए तथा सत्तु खाने को माँगते हैं। भिनभिनाती मक्खियों वाले पूआ एवं इमली खाकर दुर्गा के बच्चे मरणासन्न हो जाते हैं। प्रकाश के लिए ग्राम्य वातावरण के अनुरूप ही तेल का दीपक काम में लाया जाता है।[५९] यहाँ वेशभूषा के लिए नाट्यकर्त्री ने स्पष्टतः संकेत नहीं किया है, अनुमान से ही मानना पड़ता है कि सुपर्ण मछुआरे की वेशभूषा में होगा। गीली चप्पलों को उसने हाथ में लिए हुए है। कन्धे पर मछली पकड़ने का जाल है। हाथ में कंगन पहन रखा है। चलते समय उसमें से झणत्कार होता है।[६०]

कटुविपाकः की घटनाएँ गुजरात प्रदेश के एक ग्रामाधिप के घर में घटित हुई है।[६१] यहाँ ग्रामाधिप वातावरण के अनुरूप नाश्ते में मट्ठा एवं पूओं का उल्लेख हुआ है। प्रातःकाल ग्रामाधिप के घर में प्रवेश करते ही वीरभा अपनी पुत्री से पिता के लिए मट्ठा एवं पूआ लाने को कहती है।[६२] श्रीमती लीलाराव का ग्रीष्म कालीन प्रवास प्रतिवर्ष रानीखेत में होता है। अतः पहाड़ी जीवन के प्रभाव से उन्होंने 'कृपाणिका' में एक तिब्बती संन्यासी (लामा) के प्रति आस्था प्रकट की है।[६३] संन्यासी के आशीर्वाद से उर्मिला का मरणासन्न पति स्वस्थ हो जाता है।

क्षणिक विभ्रमः में भी स्थानीय रंग (Local Colour) उभरा है। गुजरात एवं महाराष्ट्र के अधिकांश घरों में झूले लगाने का प्रचलन है। समीक्ष्य रूपक एक निर्धन महाराष्ट्रिय परिवार से सम्बद्ध है। रंगमंच के मध्य यहाँ एक झूले का निर्देश हुआ है।[६४]

गिरिजायाः प्रतिज्ञा एवं बालविधवा में भी ग्रामीण वातावरण है। यहाँ जल व्यवस्था के लिए कूप तथा पानी निकालने के लिए रस्सी के साधन का संकेत है। गिरिजा अपराधी को पुलिस से बचाने के लिए रस्सी की सहायता से कूँए में उतार देती है।[६५] बालविधवा में पार्वती जल लाने के लिए घर से बाहर कूँए पर आती है। यहीं उसकी भेंट अनूप से होती है।[६६]

जयन्तुकुमाउनीयाः में बेडुपाको वारामासो तथा छानी बिलौरी के रूप में प्रादेशिक गीतों का प्रयोग हुआ है। कुमाऊँ रेजीमेण्ट के सैनिक अवकाश के क्षणों में प्रादेशिक लोकगीत गाकर एवं नाचकर अपना मनोरंजन करते हैं।[६७] इसी रूपक में फौजी दृश्यों को सजीव करने के लिए बैण्ड सहित थिमय्या मार्च एवं बीटिंग रिट्रीट का वर्णन आया है।[६८]

'ज्ञानेश्वरचरितम्', 'तुकारामचरितम्' तथा 'परमभक्त शिवाजिराट्' जैसे चरित्र प्रधान रूपकों में स्थानीय नदी, नगर, सन्त तथा देवता आदि का उल्लेख है। 'ज्ञानेश्वरचरितम्'[६९] में अलिन्दपुर, भगवान् पाण्डुरंग, इन्द्रायणी नदी,

'तुकारामचरितम्' में पाण्डुरंग, इन्द्रायणी नदी, देहुपुर आदि[७०] तथा 'परमभक्तशिवाजिराट्' में महाबलेश्वर, प्रतापदुर्ग, हुकिरि प्रदेश, सतारपुर सामनदुर्ग, पुणे आदि का उल्लेख है।[७१] महाराष्ट्र में प्रति वर्ष ज्ञानेश्वर के जन्मदिन पर वार्षिक यात्रा का आयोजन किया जाता है, उसी दिन यह रूपक अभिनीत भी किया गया है।[७२] मीराचरितम् में मालवदेश, कुरर्वीनगर (मेड़ता), चित्तौड़ आदि स्थल राजस्थान से सम्बद्ध हैं। एक स्थल पर दीपावली उत्सव मनाने की चर्चा भी हुई है।[७३]

होलिकोत्सवम् में नाट्यकर्त्री ने महाराष्ट्र के एक निम्नवर्गीय परिवार में होली के दिन घटी घटनाओं की मार्मिक प्रस्तुति की है। होली के दिन वहाँ प्रातःकाल नहाधोकर, नवीनवस्त्र पहनकर, होली खेलने जाने की प्रथा है।[७४] पुरुष शराब-घर जाते और जुआ खेलते हैं। स्त्रियाँ मन्दिर जाती हैं और मिल कर नाच गाना करती हैं।[७५] गणु राधा को नाचने से मना करता है। स्त्रियाँ भी ताड़ीघर जाती हैं। गणु के ताड़ी घर साथ चलने के प्रस्ताव को राधा ठुकरा देती है।[७६] विशेष अवसर पर नारियल खाने की प्रथा है। गणु ताड़ीघर जाते-जाते रात्रि भोजन के लिए मना करता है क्योंकि वह बाहर से नारियल लेकर आयेगा।[७७] पात्रों के नाम - गणु, रंगु, विट्ठल आदि भी मराठी हैं।

गणेशचतुर्थी की नायिका रुक्मा कृषि आदि कार्यों को कुशलता से करती है।[७८] हरि अपने बैलों को बेचने के लिए घर से निकला। हरि के शरण माँगने पर रुक्मा उसके रात्रि विश्राम की व्यवस्था गोष्ठ में करती है।[७९] इस प्रकार गौ, गोष्ठ, बैल, खेती-बाड़ी आदि के वर्णनों से ग्रामीण वातावरण को सजीव किया गया है। ग्रामीणों की शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टि को प्रदर्शित किया गया है।[८०] हरि अपने लड़कों को महाविद्यालयी शिक्षा दिलाना नहीं चाहता, क्योंकि पढ़ लिखकर युवक कृषि कार्यों से घृणा करने लगते हैं।

लीलाराव के कुछ रूपकों में आधुनिकता की छाप सहज दृष्टिगत होती है। 'कटुविपाकः', 'वीरभा' तथा 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' में आधुनिक स्वतन्त्रता संग्राम तथा सत्याग्रह के प्रति ग्रामीणों के उत्साह तथा अंग्रेज शासकों के अत्याचार से अधिकाधिक उद्दीप्त राष्ट्रीय भावनाओं का प्रदर्शन हुआ है।[८१] चर्खा कातना, खादी वस्त्रों को पहनना, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, इन्कलाब जिन्दाबाद का उद्घोष तथा महात्मा गाँधी की जय जयकार गान्धी-युग का प्रभाव है।[८२] जयन्तु कुमाउनीयाः से १९६२ में हुए भारत-चीन युद्ध के समय आधुनिक कुमाऊँ वीरों की राष्ट्रिय भावना एवं अदम्य साहस का परिचय प्राप्त होता है।[८३] 'कपोतालयः' का नायक रत्न आधुनिक वेशभूषा (पैण्ट शर्ट) से भूषित रंग मंच पर प्रविष्ट होता है। उसकी पत्नी अपनी बैठक में रेडियो पर गाना सुनती हुई, स्वेटर बुनती है।[८४] प्रस्तुत रूपक में आधुनिक धन-बचत-योजना के रूप में बीमा-पॉलिसी का महत्त्व प्रदर्शित किया गया है। रत्न के घर में चोरी हो जाती है। उसने घर की वस्तुओं

का बीमा करा रखा है, अतः बीमा कार्यालय से नष्ट वस्तुओं का मूल्य प्राप्त होने के प्रति आशान्वित है।[८५] रत्न एवं कंचना अपनी वैवाहिक वर्ष गाँठ पर सिनेमा देखने जाते हैं।[८६]

नारकण्डाश्रमः अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक की कथावस्तु को किंचित् परिवर्तन के साथ प्रस्तुत किया गया है। दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला को विस्मृत करने में दुर्वासा के शाप की कल्पना आज के तर्क प्रधान युग के अनुरूप नहीं है। अतः नाट्य में स्वाभाविकता की पक्षधर लीलाराव ने गोली लगने से राजकुमार से स्मृति भ्रंश की कल्पना करके कथा में परिवर्तन किया है। भारत-पाक विभाजन के समय गोली लगने से राजकुमार युद्धभूमि में घोड़े से गिर पड़ता है। परिणामस्वरूप् वह अपनी स्मरण शक्ति खो बैठता है।[८७] शकुन्तला, प्रियंवदा और अनुसूया भी यहाँ ऋषिकन्याएँ नहीं हैं अपितु भारत-पाक विभाजन में अपने-अपने परिवारों से विमुक्त कण्व नामक भिषक् द्वारा अपने आश्रम में पोषित कन्याएँ हैं।[८८]

मिथ्याग्रहणम् में भी आधुनिक रहन सहन की समस्या का वर्णन है। आजकल महानगरों में आवास की भीषण समस्या होती है। कई-कई मंजिलों के मकान होते हैं। पड़ौसी आपस में एक दूसरे को पहचानते तक नहीं हैं। सरला भी बम्बई के विशाल बहुमंजिले भवन के चौथे तल में किराये पर रहती है।[८९] वह अपने पड़ौसियों से परिचित नहीं है। सरला उसी भवन के एक मंजिल पर शेख साहब को किसी युवती के साथ प्रतिदिन देखती थी लेकिन पहचानती नहीं थी। दूरस्थ व्यक्ति से वार्तालाप के लिए वह टेलीफोन का प्रयोग करती है।[९०] शेखसाहब के मूर्च्छित होने की सूचना टेलीफोन द्वारा अमीना को देती है। वैद्य के आने पर कॉफी पिलाकर उसका स्वागत करती है।[९१] सरला कार्यालय में नौकरी करती है। थक कर शाम को जब वह कार्यालय से लौटती है तो मनोविनोद के लिए अश्वारोहण के लिए शेख के साथ पार्क में जाती है।[९२] स्त्री-पुरुष सम्बन्धों को इस प्रकार सहजता से लेना उसकी आधुनिक मनोवृत्ति का परिचायक है। विवाह के पूर्व युवक-युवती में परस्पर परिचय भी उसकी दृष्टि में आवश्यक है।[९३] रात्रि में वह वस्त्र (गाउन) धारण करती है। इस प्रकार रहन-सहन, आवास व्यवस्था, वेशभूषा भोज्य पेय पदार्थ एवं मनोवृत्ति आदि आधुनिक जीवन के प्रभाव को व्यक्त करती है। इसी रूपक में पर्दा-प्रथा तथा बहुपत्नी प्रथा के दुष्परिणाम् हिन्दु-मुस्लिम एकता को भी प्रकट किया गया है।[९४] अपने बुरके (पर्दाप्रथा) के कारण ही अमीना शेखसाहब की चरित्र हीनता सम्बन्धी व्यवहार से अनभिज्ञ रहती है।[९५] सरला शेखसाहब के अन्य स्त्री से सम्बन्ध को मुस्लिम कानून के बहुपत्नी प्रथा के अनुरूप बताती है तो अमीना उसे यवन युवतियों के प्रति अन्याय की संज्ञा देती है।[९६] हिन्दू और मुसलमान होने पर भी सरला तथा अमीना के मध्य प्रगाढ़ मैत्रीत्व की प्रशंसा वैद्य भी करता है।[९७]

बालविधवा में लीलाराव राजा राममोहन राय के १९१४ में पारित कराये गए बालविवाह निरोधक शारदा एक्ट तथा १९२८ में पारित विधवा कानून से प्रभावित प्रतीत होती है। इस रूपक की उपजीव्य कथा में पं० क्षमाराव ने तो स्पष्टतः शारदा एक्ट का उल्लेख किया है।[९८] न्यायालय द्वारा विवाह (Court marriage) का भी एक स्थान पर प्रसंग है।[९९]

श्रीमती लीलाराव ने अपने रूपकों में कुछ आधुनिक समस्याओं को उभारने का प्रयास किया है। आधुनिक वैवाहिक मान्यताएँ 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' की मूल संवेदना है। काम समस्या, बालविवाह, अनमेल विवाह, पुनर्विवाह सम्बन्धी समस्याओं को यहाँ प्रस्तुत किया गया है। समस्याओं के समाधान के प्रति नाट्यकर्त्री ने रुचि नहीं दिखाई है।

२८ वर्षीय अनुपम की पत्नी मीरा १२ वर्ष की तथा सास २६ वर्ष की है। वह अपनी पत्नी मीरा के प्रति आकृष्ट न होकर सास में अनुरक्त हो जाता है। सास के फटकारने पर ट्रेन से कूदकर आत्महत्या का प्रयास करता है। बच जाने पर दूसरे गाँव में त्यागी बाबा के नाम से रहने लगता है। मीरा अठारह वर्ष तक अपने पति को खोजने में असफल रामी नाम से एक विधवा आश्रम में काम करने लगती है। १८ वर्षों में वह भी वयस्का तथा सुन्दरी हो गई है। वहाँ वह स्वयं को नदी में डूबने से बचाने वाले त्यागी बाबा से विवाह करना चाहती है। त्यागी बाबा के रूप में अनुपम भी रामी नाम वाली मीरा के प्रति अनुरक्त हो विवाह को तत्पर हो जाता है। रामी स्वयं को विधवा मानती हुई समाज से डरती है। इस प्रकार यहाँ भारतीय समाज में व्याप्त काम समस्या, बाल विवाह-समस्या, अनमेल विवाह की समस्या, पुनर्विवाह की समस्या प्रदर्शित की गई है।

होलिकोत्सवम् में निम्न व मध्यम वर्ग के लोगों में फैली हुई सुरापान तथा जुआ खेलने की समस्या को प्रकाशित किया गया है। घर में पर्याप्त खान-पान की व्यवस्था नहीं है। बच्चे की फीस भी गणु समय से नहीं दे पाता है, परन्तु शराब एवं जुआ खेलने पहुँच जाता है।[१००] जुए में पराजय एवं पत्नी से मारपीट[१०१] करके अपने ही परिवार का विनाश कर लेता है।[१०२] यहाँ शराब एवं जुए के दुष्परिणाम से सामाजिक को सुपरिचित बनाने में नाट्यकर्त्री सफल रही है।

बालविधवा में नायिका पार्वती की दुर्दशा के माध्यम से बालविवाह एवं विधवा-विवाह की समस्या को उठाने का प्रयास किया है। बाल्यावस्था में ही पार्वती के पति की मृत्यु हो गई थी । उसे अपने पति की आकृति तक याद नहीं है। कालान्तर में अनाथ हुई उसे अपनी देवरानी सुमित्रा के यहाँ भृत्यवत् जीवन यापन करना पड़ता है।[१०४] इसके समाधान के लिए एक स्थल पर न्यायालय द्वारा विवाह (Court marriage) का संकेत किया गया है। विवाह हेतु अनूप जब पण्डित को तैयार करने में असमर्थ होता है तो वह पार्वती के समक्ष न्यायालय द्वारा विवाह का प्रस्ताव रखता है।[१०५]

गणेशचतुर्थी के माध्यम से नाट्यकर्त्री चतुर्थी के दिन चन्द्र दर्शन से लगने वाले मिथ्या कलंक के अन्धविश्वास का निराकरण करने में पर्याप्त रूप से सफल रही है। गणेश चतुर्थी के चन्द्रमा का दर्शन करने के कारण शंकरराव की हत्या के मिथ्या अभियोग में बन्दी बनाये गए हरि को अन्ततः निर्दोष सिद्ध कर मुक्त कर दिया जाता है।

लीलाराव के तीन रूपकों में शकुन-शास्त्र के प्रति भी आस्था प्रकट की गई है। 'गणेशचतुर्थी' में एक स्थल पर शंकर राव उल्लू के धूत्कार से शंकित दिखाया गया है। उसी रात शंकरराव की हत्या से सामाजिक के मन में यह विश्वास हो जाता है कि सम्भवतः उल्लू की धूत्कार के कारण ही हत्या जैसा अपकृत्य हुआ।[१०६] 'अनूपः' में छिपकली का बोलना अशुभ परिणाम देने वाला बताया गया है।[१०७] आगे चलकर मीरा के पति की मृत्यु से इसका अमंगलकारी प्रभाव पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है। 'परम भक्त शिवाजिराट्' में देवी को प्रणाम करने पर देवी की माला का गिरना शुभ फलदायी प्रतिपादित किया गया है।[१०८]

निष्कर्षतः लीलाराव ने अपने रूपकों में प्रदेश के अनुरूप खान-पान, वेशभूषा रहन-सहन के प्रभाव को प्रकट किया है। उनके रुपकों में ग्राम्य एवं नगर दोनों का ही वातावरण चित्रित हुआ है तथापि उनकी वृत्ति ग्रामीण परिवेश को साकार करने में अधिक रमी है। दैशिक प्रवृत्तियों के साथ-साथ उनके रूपक आधुनिकता से प्रभावित हैं। आधुनिक सामाजिक एवं वैयक्तिक समस्याओं तथा धार्मिक सामाजिक मान्यताओं एवं विश्वासों से आधुनिक युग का प्रभाव भी पर्याप्त रूप से प्रकट हुआ है।

डॉ० वनमाला भवालकर द्वारा रचित 'पाददण्डः' में यद्यपि युद्ध का वर्णन नहीं है तथापि युद्ध की पृष्ठभूमि पर इस एकांकी का नायक सुधीर युद्ध में पंगु हो जाता है। 'पाददण्डः' संवत् २०२० (१९६३ ई०) में लिखा गया है। १९६२ में भारत-चीन युद्ध हुआ था। अतः भारत-चीन युद्ध ही इस एकांकी की पृष्ठभूमि है। स्थान-स्थान पर युद्ध की विभीषिका एवं तज्जन्य अभावों का वर्णन किया गया है। शान्ता के भोज्य वस्तुओं में चीनी का अभाव हो गया है।[१०९] नाट्यकर्त्री ने कई स्थलों पर वृत्त पत्रों, पत्र वितरण,[११०] द्रुत सन्देश आदि का संकेत किया है। ललिता के आगमन का समाचार सुधीर को तार-सन्देश द्वारा प्राप्त होता है। पेय पदार्थ के रूप में दो स्थानों पर चाय-पान का वर्णन आया है। मध्याह्न में सोकर उठने के बाद भास्कर की चाय पीने की तीव्र इच्छा है।[१११] सुधीर को निशा के हाथ की चाय बहुत अच्छी लगती है। ललिता के आने पर निशा उसके लिए चाय बनाकर लाती है।

रामवनगमनम्, **पार्वतीपरमेश्वरीयम्** व **सीताहरणम्** की कथावस्तु पौराणिक है लेकिन इन रूपकों की रचना प्रकृति आधुनिक संगीत नाट्य (ऑपेरा) तथा नृत्य नाट्य (बैले) है। डॉ० नलिनी शुक्ला द्वारा रचित 'राधानुनयः'

तथा देवकी मेनन् रचित **कुचेलवृत्तम्** और **सैरन्ध्री-प्रेक्षणकम्** भी संगीत नाट्य हैं। देवकी मेनन् प्रणीत 'कालीदर्शनम्' में चैतन्य महाप्रभु की जयन्ती पर गंगा स्नान, काली के प्रति आस्था, दक्षिणेश्वर का काली मन्दिर तथा वहाँ रामकृष्ण परमहंस की उपस्थिति से भी बंगीय परिवेश मूर्तिमान् हुआ है।[११२]

वीणापाणि पाटनी के 'प्रतिबुद्धा', 'याथार्थ्यगरलम्' तथा 'नारददौत्यम्' में भी आधुनिक जीवन का प्रभाव देखा जा सकता है। **'प्रतिबुद्धा'** रूपक का नायक ललित राजकीय कार्यालय में कर्मचारी है। नायिका सुलेखा भी नौकरी करती है। इनका घर आधुनिक संसाधनों से पूर्ण है। आरम्भ में रेडियो से वन्दना का स्वर सुनाई पड़ता है।[११३] प्रातः जल्दी उठने के लिए ललित घड़ी में एलार्म भर कर सोता है।[११४] हाथ में भी वह घड़ी बाँधता है। उसकी पत्नी उठते ही उसे चाय देती है। सुलेखा भोजन गैस पर बनाती है। गैस समाप्त हो जाने पर स्टोव पर परन्तु गैस समाप्त होने तथा स्टोव में तेल न होने के कारण उसने अँगीठी पर चाय बनायी है, जिससे उसमें धूँए की गन्ध आ गई है। पन्द्रह दिन पूर्व ही गैस सिलेण्डर भरवाया था। बहुधा बाजार में सिलेण्डरों का अभाव रहता है।[११५] सुलेखा प्रातः काल से नौ बजे तक घर के कार्यों में व्यस्त रहती है तत्पश्चात् सायंकाल पाँच बजे तक कार्यालय में टाइप करती है। बाहर से आने वाला व्यक्ति द्वार पर घण्टी बजाकर अन्दर आ पाता है। उसके गृहोद्यान में प्लाक्सपुष्प, पैंजीपुष्प तथा मास्टर्शियम् पुष्प लगाये गये हैं। सुलेखा को बस से कार्यालय जाना पड़ता है जो अत्यन्त कष्ट साध्य है। ललित स्कूटर में विकृति हो जाने से टैक्सी से कार्यालय पहुँचता है।[११७] गिरधारी तारसंदेश दिखाकर सुलेखा से अवकाश ले अपने घर जाता है। आकस्मिक, अर्जित तथा असाधारण अवकाश समाप्त हो जाने से वह कार्यालय से अवकाश नहीं ले पाती है। यहाँ यह सब व्यवस्था रूपक में आधुनिक वातावरण की परिचायक है।[११८]

यथार्थ्यगरलम् के नायक देवदत्त को निरन्तर पैसा बढ़ाने की चिन्ता है। घर में भोजन हो अथवा न हो, लाटरी-पत्र वह नियमित रूप से खरीदता है।[११९] पूजा में भगवान् से भी अपने नाम लाटरी खुलने की प्रार्थना करता है। स्वप्न भी वह लाटरी से सम्बद्ध ही देखता है।[१२०]

नारददौत्यम् में भारतवर्ष में बढ़ती हुई पाश्चात्यीकरण की प्रवृत्ति पर चिन्ता प्रकट की गई है। नारद के भूलोक आने पर चाय से उनका स्वागत किया जाता है। राजेश चाय पान को न्यूक्लियर युग का सोमरस मानता है। नारद के चायपान न करने पर नीता गर्म जल में दुग्ध पाउडर डाल कर लाती है।[१२१] क्लब में नाद ब्रह्म रूप संगीत के स्थान पर पाश्चात्य पॉप संगीत व नृत्य देखकर नारद निराश होते हैं।[१२२] बिहार राज्य में अन्नाभाव तथा वस्त्राभाव होने पर भी नये-नये कृत्रिम ग्रह उपग्रहों के निर्माण से नारद चिन्तित होते हैं।[१२३] राष्ट्र की समृद्धि के लिए मन्त्री महोदय ने पंचवर्षीय योजना तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए

परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रारम्भ किया है। इस प्रकार रूपक में प्रयुक्त खान-पान, संगीत तथा अन्य कार्यक्रम आधुनिकता के प्रभाव से युक्त है।[१२४]

मिथिलेश कुमारी मिश्रा के आम्रपाली पर बौद्धकालीन जीवन शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है। उस समय वैशाली गणराज्य में एक नियम सर्वमान्य था कि नगर की सर्वाधिक सुन्दरी को बाध्य होकर नगर वधू अर्थात् सार्वजनिक स्त्री बनना पड़ता था।[१२५] आम्रपाली भी इसी नियम से नगर वधू बनाई गई थी। उस समय मनोविनोदार्थ स्त्री-पुरूषों के लिए पृथक-पृथक उद्यान होते थे। संगीत साधना में निरत आम्रपाली की मधुर कण्ठध्वनि सुनकर अजातशत्रु पुरुष वर्जित उद्यान में प्रविष्ट हो जाता है।[१२६] बौद्ध संघाराम में स्त्रियों का प्रवेश वर्जित था क्योंकि साधारण भिक्षु महिलाओं को अपनी साधना में विघ्न मानते थे।[१२७]

न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः तथा 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' दोनों ही एकांकी ग्राम्य परिवार से सम्बद्ध हैं। अतः ग्राम्य जीवन के अनुरूप घर से बाहर के कूँए से जल भर कर लाना, सूर्योदय से पूर्व गोदोहन आदि कार्यों को करने की चर्चा की गई है। 'माता पुत्रोऽहं भूमिः पृथिव्याः' की नायिका सायंकालीन दूध दुहती हुई बछड़े से देशभक्ति की चर्चा करती है।[१२८]

कुछ रूपकों मे भारतीय परम्परा के अनुरूप धार्मिक संस्कार सम्पन्न हुए हैं। **ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः** में रघुराज अपने नवनिर्मित भवन में गृह प्रवेश के लिए पण्डित से शुभमुहूर्त पूछता है। दक्षिणा के लोभ में पण्डित गृह प्रवेश के लिए पूजोपचार के पक्ष में है। रघुराज उसे न चाहते हुए भी स्वीकार करता है। १२९

उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्' में अग्निदेव के साक्ष्य में विवाह संस्कार सम्पन्न होने का उल्लेख है। नन्दन वन में अप्सराओं से घिरे ग्रामीण को देखकर उसकी पत्नी ग्राम्या आक्षेप करती है कि अग्नि को साक्षी मानकर विवाह तो मेरे साथ किया है लेकिन रमण इन अप्सराओं के साथ करते हो।[१३०]

अलक्ष्यं दूरदर्शनम् में मृत व्यक्ति के संस्कार के लिए महापात्र नाई, वृषोत्सर्ग हेतु बैल, शववस्त्र तथा तिल-यव-गुड़-धान्यादि की आवश्यकता की चर्चा हुई है महापात्र की उपस्थिति अन्तिम संस्कार के समय आवश्यक है।[१३१]

दशमस्त्वमसि एकांकी संग्रह के एकांकियों में आधुनिक जीवन का प्रभाव है। 'न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः' की कथा भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन से सम्बन्ध रखती है। नाट्यकर्त्री स्वतन्त्रता प्राप्ति में महात्मा गान्धी की भूमिकाओं से प्रभावित है। स्थान-स्थान पर नाट्यकर्त्री ने विविध पात्रों से गान्धी के प्रभाव को परिलक्षित करने वाले वाक्य भी कहलाए हैं। 'न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः' की नायिका भोली-भाली पार्वती गान्धी को राम-कृष्ण की तरह कोई अवतार मानती है।[१३२] स्वराज्य प्राप्ति में नेतृत्व करने वाले गान्धी के अतिरिक्त जवाहर, पटेल आदि नेताओं, काठियावाड़, साबरमती

आदि स्थानों, दाण्डीयात्रा, नमक कानून, भारत छोड़ो आन्दोलन आदि का भी उल्लेख 'सत्यमेवजयते' में हुआ है।[१३३] नमक कानून तोड़ने के अपराध में जवाहर, पटेल आदि के साथ गान्धी को न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित किया जाता है। **माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः** एकांकी भी आधुनिक स्वतन्त्रता आन्दोलन से सम्बद्ध है। स्वराज्य प्राप्ति विषयक आन्दोलन में गान्धी जी के आह्वान पर वेद प्रकाश अपने अध्ययन को छोड़कर क्रान्तिकारी बन जाता है।[१३४]

निष्कर्षतः मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपकों में प्रवृत्तियों के अन्तर्गत ग्राम्य परिवेश तथा गान्धीवाद का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

आधुनिक युग में नारी-चेतना ने महिला को अपने अधिकारों के प्रति सजग किया है। नारी के प्रति किए जाने वाले पक्षपात एवं अत्याचार ने उसे अपने अधिकारों एवं प्रतिष्ठा के प्रति भी जागरूक बनाया है। ये विचार पौराणिक इति वृत्त वाले रूपक 'भूमिकन्या' मे देखे जा सकते हैं। अपने व्यक्तित्व को राम के व्यक्तित्व में मिला देने वाली सीता राम की प्रतिष्ठा के लिए आत्मशुद्धि की शपथ नहीं लेती प्रत्युत नारी जाति की प्रतिष्ठा के लिए स्वंय की शुद्धता की शपथ लेती है।[१३५] समीक्ष्य रूपक में शम्बूक को अनार्य, दस्यु, शूद्र व आदिवासियों का प्रतिनिधि बनाकर सीता द्वारा उसका समर्थन एवं रक्षा का प्रयास रूपक पर सर्वोदय के प्रभाव को अभिव्यक्त करता है।[१३६]

निर्मला शुक्ला के **यौतुकं पातकं परम्** में वर्तमान काल की प्रमुख दहेज-समस्या को उठाया गया है। मातृगृह से दहेज की पूर्ति न हो पाने से आज भी नववधुएँ अकालकालकवलित हो जाती हैं। आलोच्य एकांकी में क्षेमकरण अपने पुत्र एवं पत्नी के साथ मिलकर पुत्रवधू की हत्या करते हैं तथा पुनः प्रचुर दहेज लेकर अन्यत्र पुत्र का विवाह करने को सन्नद्ध हैं। दहेज में माँगी गई वस्तुएँ आधुनिक सुख सुविधाओं की हैं, यथा—टी०वी०, टेलीफोन, गाड़ी, फ्रिज आदि।[१३७] क्षेमकरण अपनी पूर्व पुत्र वधू की हत्या के अभियोग में, सपरिवार आजीवन कारावास का दण्ड पाता है।[१३८] अपराधियों को पकड़ने के लिए टेपरिकार्डर, कैमरा आदि साधनों का उल्लेख किया गया है। गुप्तचर विभाग का अधिकारी अशोक छद्म रूप से कन्या का पिता बन कर, कन्या का विवाह क्षेमकरण के पुत्र से निश्चित करता है एवं दहेज की द्रव्य राशि को क्षेमकरण को देते हुए फोटोग्राफर से फोटो खिंचवा लेता है। पूर्व पुत्र वधू की हत्या की स्वीकृति सम्बन्धी वार्तालाप को भी गुप्त रूप से टेप में भर लेता है।[१३९] हत्या एवं दहेज के साक्ष्य मिल जाने पर गुप्तचर अधिकारी अपना परिचय-पत्र दिखाकर सभी अपराधियों को बन्दी बना लेता है।

कन्या दिखाने की रस्म आजकल होटलों में होने लगी है। समीक्ष्य रूपक में भी अशोक अपनी कन्या को दिखाने की व्यवस्था 'ममता होटल' मे करता है।[१४०] इस प्रकार यौतुकं पातकं परम् पर पर्याप्त आधुनिक प्रभाव है।

संस्कृत नाट्यकर्त्रियों की रूपक रचनाओं में प्रवृत्ति एवं आधुनिकता के अनुसन्धान से ज्ञात होता है कि स्थानानुरूप एवं पात्रानुरूप वेशभूषा, आचार व्यवहार आदि के वर्णन से रूपकों मे यथार्थबिम्ब उभरे हैं। वेशभूषा में सर्वाधिक विविधता लीलाराव की रूपक रचनाओं में द्रष्टव्य है। इन्होंने आधुनिक पेण्ट शर्ट से विभूषित पात्र से लेकर मछुआरे तक की वेशभूषा वाले पात्रों को रंगमंच पर प्रविष्ट कराया है। प्रादेशिक विविधता भी उनके रूपकों में देखी जा सकती है। 'अनूपः', 'गणेशचतुर्थी', 'होलिकोत्सवः' तथा 'क्षणिक विभ्रमः' में महाराष्ट्रीय ग्राम्य वातावरण एवं 'असूयिनी' में बंग वातावरण मूर्तिमान् हुआ है। महाराष्ट्रिय वातावरण के अनुरूप गणेशचतुर्थी उत्सव, नारिकेल पूर्णिमा महोत्सव, सन्तज्ञानेश्वर की वार्षिक यात्रा आदि को रूपकों में देखा जा सकता है। गणु, रंगु गुणे विट्ठल, रूक्मा शंकरराव आदि नाम भी महाराष्ट्रिय प्रभाव के सूचक है। 'असूयिनी' में कालीमाता व नरबलि का प्रभाव बंगीय प्रभाव है। मट्ठा, पूआ आदि की नाश्ते में व्यवस्था ग्राम्य परिवेश के अनुरूप है। कुछ रूपकों में प्रादेशिक गीत-संगीत भी निबद्ध किये गये हैं। जयन्तुकुमाउनीयाः में छानी बिलौरी एवं वेडुपाको० आदि लोकसंगीत मनोरंजनार्थ प्रस्तुत है। बालविवाह, अनमेल विवाह, विधवा विवाह, पर्दाप्रथा, महानगरों में आवास समस्या को भी क्रमशः बालविधवा, वृत्तशंसिच्छत्रम् तथा मिथ्याग्रहणम् में दिखाया गया है। मिथिलेश कुमारी मिश्रा की आम्रपाली बौद्धयुगीन नियमों, मान्यताओं व वातावरण को प्रकट करती है। 'न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः', 'माताभूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः,' राष्ट्रिय स्वतन्त्रता आन्दोलन से सम्बद्ध होने के कारण गान्धीवाद से प्रभावित है। रमा चौधुरी के अधिकांश रूपक आधुनिक महापुरुषों गान्धी, रामकृष्ण परमहंस, निवेदिता, राजाराममोहन राय, यतीन्द्र आदि से सम्बद्ध होने के कारण वर्तमानकालिक स्थान, घटनाओं एवं व्यक्तियों से प्रभावित है। देशदीपम् में भात, मछली आदि का भोजन बंगीय वातावरण के अनुरूप है। यहाँ आधुनिक शस्त्र पिस्तौल तथा आवागमन के साधन में हवाई जहाज आदि का भी उल्लेख है। लीलाराव के रूपकों में भी मोटरयान, रेलयान तथा वायुयान आदि साधनों का प्रयोग हुआ है। 'पाददण्डः' १९६२ ई० में हुए भारत-चीन युद्ध की विभीषिका को प्रस्तुत करता है। 'गणयज्छागः' के माध्यम से आधुनिक साक्षरता मिशन की कल्पना को साकार किया गया है। 'विवेकानन्दविजयम्' में पाश्चात्य पद्धति के नृत्यगान का वर्णन है व 'नारद्दौत्यम्' में पॉप संगीत पर नाचते युवक-युवतियों की नारद द्वारा निन्दा की गई है। आधुनिकतम् पेय पदार्थ के रूप में चाय, काफी

तथा पाउडर के दूध से बनी चाय का वर्णन क्रमशः 'पाददण्डः', 'मिथ्याग्रहणम्' तथा 'नारददौत्यम्' में हुआ है। दूरस्थ व्यक्ति से वार्तालाप के लिए टेलीफोन का प्रयोग मिथ्याग्रहणम् में कराया है। इसके अतिरिक्त आकाशवाणी वार्ता, रेडियो, द्रुत सन्देश (तार) आदि की व्यवस्था 'पाददण्डः', 'देशदीपम्', आदि रूपकों मे दिखाई गई है। आधुनिक शिक्षा के रूप में महाविद्यालयी एवं विश्वविद्यालयी शिक्षा, विदेश में शिक्षा, नर्सिंग प्रशिक्षण-'गणेशचतुर्थी,' 'पाददण्डः', 'देशदीपम्', 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' में वर्णित है। 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' का नायक तो उच्च शिक्षा प्राप्त एम०ए०, पी-एच्० डी० है। 'यौतुकं पातकं परम्' में वर्तमानकालिक दहेज समस्या के साथ ही आधुनिक सुख सामग्रियों टी०वी०, फोन, कार, फ्रिज की माँग का वर्णन है। गुप्तचर विभाग का अधिकारी टेपरिकार्डर व कैमरे की सहायता से हत्यारों को पकड़ कर हत्या के अभियोग में आजीवन कारावास से दण्डित कराकर आधुनिक न्याय व्यवस्था को प्रदर्शित करता है। पौराणिक इतिवृत्त वाले 'भूमिकन्या' नाटक में नारी चेतना को देखा जा सकता है। यहाँ साम्यवाद से प्रभावित होकर शम्बूक के रूप में अनार्य एवं दस्युओं को समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए सीता ने प्रयास किया है। 'यथार्थ्यगरलम्' आधुनिक शिक्षिता नारी की नौकरी एवं गृहस्थी के मध्य सामंजस्य की समस्या को सुलझाता है। लाटरी का उन्माद तथा उससे उत्पन्न हताशा 'यथार्थ्यगरलम्' में देखी जा सकती है। 'नारददौत्यम्' में भारत के पाश्चात्यीकरण पर चिन्ता प्रकट की गई है।

इस प्रकार अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियाँ अपने रूपकों में आधुनिक जीवन के वैशिष्ट्य को प्रस्तुत कर स्वाभाविकता एवं सजीवता उत्पन्न करने में समर्थ रही हैं एवं उनके रूपक 'समाज के दर्पण' सिद्ध हुए हैं।

संदर्भ

१. शृंगारप्रकाश, १२/पृ० ४५९, ६०.
२. पृथिव्यां नानादेश वेषभाषाचारा वार्ताः रव्यापयतीति प्रवृत्तिः। –नाट्यशास्त्र, १४/३६.
३. तत्रैव योजना देशे-देशे येष्वेव वेषादयो नैपथ्यं भाषा वा आचारो लोकशास्त्र व्यवहारः वार्ता कृषिपशुपाल्यादि जीविका इति तान् प्रख्यापयान्ति पृथिव्यादि सर्वलोक विधा प्रसिद्धिं करोति। प्रवृत्तिः बाह्यार्थे यस्मान् निवेदने निःशेषणवेदने ज्ञाने प्रवृत्तिः शब्दः। – अभिनव भारती, भाग– ३, पृ० २०५, ६.
४. Infact it represents the civilization that differs with provinces.–Lows of Sanskrit Drama, P. 288.
५. देशभाषा क्रिया वेशलक्षणाः स्युः प्रवृत्तयः।
लोकादेवागम्यैताः यथौचित्यं प्रयोजयेत्॥ – दशरूपकम्, २/६३-७१.
६. भावप्रकाशनम्, पृ० १२, ३१०-१३.
७. काव्यमीमांसा, पृ० ९.

८. साहित्यदर्पण,६/१५८-६९.

९. तासामनुपयोगित्वान्नात्रलक्षणमुच्यते। –रसार्णवसुधाकरः,१/२७८.

१०. नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्। –मालविकाग्निमित्रम् १/५

११. नाट्यशास्त्रम्,१२/३७.

१२. भरत एवं भारतीय नाट्यकला,पृ० ४४४.

१३. जहांगीरः–नेदं हिन्दुस्तानम्। इदं भारतवर्षम्, हिन्दुमुसलमानबौद्धखीष्टान्जैन शिखपारसिकप्रमुखाणां सर्वधर्मावलम्बिनां साधारणवासस्थानम्। अत्रास्ति सर्वेषां समानाधिकारो जातिधर्मावलम्बिनां साधारणवासस्थानम्। अत्रास्ति सर्वेषां समानाधिकारोजातिधर्मवर्णनिर्विशेषेण। –देशदीपम्,पृ० ४५.

१४. चम्पकवदनः –(साग्रहम्) ज्येष्ठ तात महोदय। अत्र मम प्राणप्रियो बान्धवः अभ्रः समुपस्थितः,स अस्माकं सुविख्यातमहाविद्यालयस्यश्रेष्ठ छात्रः ... । देशदीपम्,पृ० १४.

१५. रहिमः –गुरुतरावार्ता। आकाशवाण्या माध्यमेन अस्माकं जनप्रियः प्रधानमन्त्री अस्मान् आहूतवान् सर्वस्व त्यागाय। ग्राम मध्ये इयं वार्ता प्रचारयितव्या। –वही, पृ० १४.

१६. पंकजनयना –श्रद्धेयपितरौ! समाप्ताखलु मम शुश्रूषाविद्याशिक्षा। अधुनाहं शुश्रुषाकारिणी पद्वाच्या ... । –वही,पृ० ३०.

१७. अभ्रप्रतिमः – अहं आकाशयानचालको भवितुमिच्छामि। –वही,पृ० २२.

१८. चम्पकवदनः –x x x शत्रून् पराजित्य तस्मिन्नेव स्थाने पावित्रां त्रिवर्णरञ्जितां भारतीयपताकामहमुत्तोलयितुमिच्छामि सगौरवम् ....। –वही,पृ० ४८.

१९. गुप्तचरः –(झटिति पिस्तलं निष्काश्य) x x x गृहाण रे रे पाषण्ड ! गृहाण रे रे दुर्वृत्त ! गृहाण रे रे घातक! तवौद्धत्यस्य समुचितं फलम् (पिस्तलमुत्तोल्य चम्पकवदनमाक्रमति)। –वही,पृ० २२.

२०. स्थानम् –लेडी इसाबेल मार्गसन् महोदयायाः लण्डनस्थ आयेष्ट् एण्ड स्थितः अतिथि-सम्मेलन प्रकोष्ठः (ड्राइंग रूम) अग्न्याधारे प्रज्ज्वलितः अग्निः।
–निवेदितनिवेदितम्,पृ० ६.

२१. ततः प्रविशन्ति त्रस्तव्यस्ताः मिसमागरिट नोब्ल्, मिसम्याकलेड्, मिसेस् ओमित्रुल।
–वही,पृ० ४२.

२२. समयः अपराह्नः नभेम्बरमासः १८९५ खीष्टाब्दः,पृ० ४.

२३. (क) मागरिट x x x अहो अद्य परमशुभदिवसः सेण्टप्याट्रिक्स डे . ... ।
(ख) विवेकानन्दः –विशेष पवित्रो दिवसोऽयम्। यतोऽ द्य Day of Annuciation –निवेदितनिवेदितम्,पृ० ४४,५२.
(ग) वही,पृ० ६२,६९,७२.

२४. सारदा –इंराजीभाषाभिज्ञां भक्तामुद्दिश्य) वत्से! भव त्वं अस्माकं द्विभाषिकपदाभिषिक्ता। –वही,पृ० ४४.

२५. निवेदिता - अहो ! प्लेगरोग प्रशमनाय विविधव्यवस्था अस्माभिर्यथाशक्तिकृता।
यथा –अज्ञकुसंस्कारग्रस्तसाधारण जनागं मध्ये प्लेगरोगप्रतिषेधटीकाग्रहण व्यवस्था। –निवेदित निवेदितम्,पृ० ६४.

२६. यतीन्द्र यतीन्द्रम्– पाटलश्रीः,४ :४,पृ० ३६.

२७. यतीन्द्रः –अहो असीमसौभाग्यम्! परमजनन्याः कृपया अत्यल्पकालमध्ये पीएच्० डी० उपाधि लाभान्तरं इण्डियाआफिसलाइब्रेरीनामधेयस्य

सुप्रसिद्धप्राच्यगवेषणागारस्य संस्कृतपालिविभागे प्रधानवेषकरूपेणाधिष्ठितोऽहम्। अपि च लण्डनविश्वविद्यालयस्य संस्कृतविभागे प्रधानगवेषकरूपेण नियुक्तोऽस्मि। –वही,५ :१,पृ० २५.

२८. (ततः प्रविशति स्नेहाधिकारिणी ल्याण्डलेडी मिसेस् कक्स)

मिसेस् कक्स– भद्रमहोदय ! निरूपांया अहं तस्मादेव वदामि। भवतः साप्ताहिकदेयं नेदानीं मया प्राप्तः ...। –वही,पृ० २२.

२९. यतीन्द्रः –x x x साम्प्रतं कपर्दकशून्योऽहम्। पितृदेवदेयो मासिकार्थो नाद्यापि प्राप्तः।

३०. दत्तः – x x x ततः कथं त्वं अकारणं अस्मिन् 'कोहिनूर' नामधेयभारतीय भोजन गारद्वारे 'मोटरयानम्' अकस्माद् विरामायादिष्टवान्?

–यतीन्द्र यतीन्द्रम्,पाटलश्रीः ५ :१,पृ० २७.

३१. देशदीपम्,पृ० ६.

३२. आराधना-वत्स! किमहं भोजनार्थं तुभ्यं दास्यामि? नारिकेलखण्डमिश्रितं भर्जिततण्डुलमात्रमेव मे सम्बलम्। –वही,पृ० १३.

३३. ब्रह्मबलः –न,न,अहं तव बान्धवार्थं मत्स्यान्वेषणाय गतः। –वही,पृ० १३.

३४. कुक्कटः –अहं कुक्कुटनामधारी मत्स्यविक्रेता। कस्त्वम्? किं ते नाम? का वा जीविका? –वही,पृ० ३४.

३५. ब्रह्मबलः –अस्माकं एककक्षविशिष्टं अतिक्षुद्रं मृत्कुटीरमिदम्। ततः कथं कथं धनिजनयोग्यः समादरः अस्माभिः कर्तुं शक्यते?–वही,पृ० ६.

३६. वही,पृ० २२.

३७. स्थानम् –दक्षिणेश्वरस्थ श्रीरामकृष्णगृहम्

समयः गभीरारात्रि,अमावस्या तिथिः,फलहारिणी कालीपूजादिवसः

रामकृष्णः–अद्य घोरा अमावस्यां, अद्य अशेषशुभा षोडशीपूजा करणीया .... जपमालाञ्च समर्पयति सानन्दम्। –युगजीवनम्,पृ० ६४,६५.

३८. गदाधरः–नाहं सुरापानासक्त जयकालिध्वनि विधानपरः।

केवल सुधापानारक्तः केवलं जननी चरण धरः॥

X X X X

सुरापान करना आमि,सुधाखाई जय काली बले।

आमाय मन माता लकरे सब मद माताले मातालबले॥ –वही, पृ० ३६.

३९. निवेदित निवेदितम्,पृ० ६.

४०. वही,पृ० १९.

४१. वही,पृ० ९९.

४२. निवेदित निवेदितम्,पृ० ६४,७५.

४३. स्थानम् –चट्टग्रामान्तर्गत कब्धुरखिलग्रामस्थं रसिकचन्द्रचतुर्धुरीण महोदयस्य सुवृहत् उद्यानम्। –यतीन्द्र यतीन्द्रम् (पाटल श्रीः ४ :),पृ० ३२.

४४. वही,पृ० ३५.

४५. वही,(पाटली श्रीः ५ :२),पृ० २६.

४६. गजेनः –अहो,अद्य दादाबाबुः परमानन्दमय इव परिलक्ष्यते ....। –वही,पृ० ३२.

४७. तरंगिणी –x x x श्रीलः श्रीयुक्तमार्तण्डमहोदयः प्रबलपराक्रान्तः, परमप्रभाववान्, महावित्तशाली भूम्यधिकारी राजा। कलिकातानगर्यां तस्य असंख्याः सुविशाला,

अट्टालिकाः सन्ति। तथापि स कृपया जन्मभूमिं पल्लीजननीं, न विस्मृतवान् अत्रापि तेन निर्मिता एका सुविशाला अट्टालिका। तत्रैव च निवसति अधुना श्री श्रीदुर्गापूजावकाशे। –पल्लीकमलम्, पृ० १८.

४८. वही, पृ० १९.

४९. वही, पृ० २०.

५०. महाराष्ट्रामण्डलनिविष्टे लोनावलिनाम्निग्रामे x x x गृहाद्बहिर्नारिकेलपैर्णिमामहोत्सव सम्मेलने यात्रीकाणां गतागतम्, ग्रामीणजनालापकलापः श्रूयते क्रेतृविक्रेतृकलकलश्च .. .. । – अनूपः (विश्वसंस्कृतम), पृ० ६.

५१. वही, पृ० ६.

५२. परमेकाकिनी स्वामिनी ह्युद्वेजते। किलप्रायेण विषण्णा प्रतीयते। नारिकेलमहोत्सवयात्रां विहाय नान्यत्र कुत्रापि गच्छति। – वही, पृ० ६.

५३. x x x विदूराज्जयनिर्घोषाः श्रूयन्ते गणपति बापा मोर्या, मोर्या इति।
– गणेशचतुर्थी (मंजूषा, १० :८), पृ० १९८.

५४. समुद्रोपकण्ठवर्ती वासननामा कश्चन ग्रामः ।
– असूयिनी -मजूषा, २ :११, पृ० २९७.

५५. वही, पृ० ३०१.

५६. रेवा– पुष्कलं हि मद्गेहे वर्तते पयः सूर्योदयात्प्रागेव धेनुरहं दोह्मि।
– वही, पृ० ३०३.

५७. वही, पृ० २९८.

५८. वही, पृ० ३०१.

५९. रेवाप्रदीपे तैलविन्दून् निषिञ्चति .... । – वही, पृ० ३०१.

६०. सार्द्रपादुकाहस्तः स्कन्धावलंम्बितजालभारः सुपर्णः प्रविश्य ... । वही, पृ० ३००.

६१.
गुर्जरदेशीय ग्रामटिकायां ग्रामाधिपस्य वासगृहम्।
– कटुविपाक– मंजूषा १० :४, पृ० ८३.

६२. वीरभा– अयमायाति ते पिता। बालिके ! उपनय तक्रादिकं निजपित्रे ... ।
– वही, पृ० ८७-८८.

६३. कृपाणिका– दिव्यज्योतिः फरवरी १९५६, पृ० २९.

६४. स्थानम्– पुण्यपत्तनोपकण्ठगतं कस्यापि निर्धनस्य वासगृहम् x x x मध्ये दोलैका, वामतश्चोपवेशनमंच . . .. ।– क्षणिक विभ्रमः– मंजूषा फरवरी १९५६, पृ० १३९.

६५. गिरिजायाः प्रतिज्ञा– मूंजषा ९ :९, पृ० १४०.

६६. बालविधवा– मंजूषा ९ :१०. पृ० १६९.

६७. जयन्तुकुमाउनीयाः– विश्व संस्कृतम् ४ :४, पृ० ३४६-४८.

६८. वही, विश्व संस्कृतम् ५ :१, पृ० २२.

६९. इन्द्रायिणीनिर्झरिणीतटस्था प्रपद्यतालन्दिपुरी प्रशस्ताम्।
– श्रीज्ञानेश्वरचरितम्– मंजूषा, १६ :४, पृ० ९८.

७०. तुकारामचरितम्– मंजूषा, १० :६, पृ० १६२.

७१. परमभक्त शिवाजिराट्– विश्वसंस्कृतम्, २७ :४, पृ० ५३-५४, ५७-५८.

७२. ज्ञानेश्वरचरितम्, पृ० ११२.

७३. दीपाराधनमंगलोत्सवदिने वृन्दावने ऽलंकृते ... ।
—मीराचरितम्—मंजूषा १४ : १२, पृ० ३०६.

७४. गणु—(पुत्रं प्रति) किमर्थं नवाम्बरं धृतं त्वया ? नूनमचिरादेव दूषयिष्यसि ।
राधिका—का हानिः क्षालयिष्यामि । नहि प्रतिदिनं होलिकोत्सवः ।
—होलिकोत्सवम्—मंजूषा १० : २, पृ० २५.

७५. गणुः—(चिबुकं स्पृशन्) देवालयं गच्छ यदीच्छसि, परं न नर्तितव्यम् त्वया ।
—वही, पृ० २७.

७६. गणुः—त्वयापि कुतो नागम्यते तालायनम्, तत्र समागमिष्यन्ति सर्वे । —वही, पृ० २७.

७७. गणुः—न खलु लेशतोऽपि चिन्ता कार्या, नक्तं भोजनार्थं त्वया ।
नारिकेलमानेष्यामि त्वदशनाय ।—वही, पृ० २७.

७८. गणेशचतुर्थी—मंजूषा १० : ८, पृ० १९८.

७९. वही, पृ० १९५.

८०. हरिः—नूनम् । दृढो मे विश्वासः
कलीराजते प्रायशः कालिजेषु ।
अविद्यालया नैव विद्यालयास्ते ॥ —वही, पृ० १९८.

८१. सर्वं यातु सखे शोको न कार्यं सेयमाहुतिः ।
कल्पिता सत्य देवाय प्रेयो न स हि दास्यति ।
—स्वर्णपुर कृषीवलाः—मंजूषा १२ : २, पृ० १६५.

८२. इन्कलाब जिन्दाबाद, बहिष्कार्यो विदेशीयवस्तूनांक्रयः ।
खादिवस्त्रात्परं वासो नैव धार्य कदाचन ।
—कटुविपाकः—मंजूषा, १० : ४, पृ० ८३.

८३. पराजित्यारिवलान् शत्रून् विजयन्ते महाबलाः ।
शौर्यवीर सुसम्पन्नाः कुमाऊँ सुभटा भटाः ॥
—जयन्तु कुमाउनीयाः वि० सं० ५ : १, पृ० २२.

८४. कपोतालयः—मंजूषा, १० : १०, पृ० २३०.

८५. रत्नः—मुग्धे ! मास्मचिन्तयः । सर्वेषां प्रनष्ट वस्तूनां मूल्यं प्राप्स्यते बीमा कार्यालयात् ।
—वही, पृ० २३२.

८६. रत्नः— x x x अद्य तावच्चित्र पटदर्शनार्थमेव गच्छावः ।
—कपोतालयः—मंजूषा १० : १०, पृ० २३२.

८७. नारकण्डाश्रमः—दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९८०, पृ० १०.

८८. वही, पृ० १०-११.

८९. सरला—प्रभूताः खलु प्रतिवेशिनोऽत्रविशाले हर्म्ये परं नान्योन्यं परिचितास्ते ।
—मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, १० : ६, पृ० १३९.

९०. सरला—आम् ! टेलिफोनद्वारा सूचितं मया तद्गृहे, परं सेवकेनैव केनचिदालपितम् ।
—मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा १० : १६, पृ० १३३.

९१. वही, पृ० १३४-३५.

९२. सरला—न मे मैत्र्यनुरागो वा, केवलमश्वारोहण काले दर्शनमात्रं जायते व्यापृता चाहमासन्ध्यं कार्यालये, सायंच विनोदार्थं क्रीडोद्यानं गच्छामि ।

—मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, १० : ६, पृ० १३८.

९३. वही, पृ० १३१.

९४. (क) भिषक्— अहो ! विचित्रः संयोगो हिन्दुयवनवनितयोः।—वही, पृ० १३४
(ख) वही, पृ० १३९.

९५. अमीना— अभिशापोऽयं मेऽवगुण्ठनस्य येनाज्ञानतमसि चिरं निमग्नास्मि।
—वही, पृ० १३९.

९६. सरला— कष्टास्पदं नूनमभविष्यद् यद्यसावन्यां पर्यणेष्यत्। एतच्च न्याय्यं खलु
अमीना— न्याय्यं ? सर्वथा न्याय्यमेतत् स्त्रीषु।—वही, पृ० १३९.

९७. वही, पृ० १३९.

९८. अति बाल्यदशायां सा गुरुभिः पर्यणाय्यत।
शारदीय विधानात् प्राग् बाल्योद्वाहनिरोधकात्॥
—बालिकोद्वाह संकटम्—कथा पञ्चकम्, ५

९९. बालविधवा—मंजूषा, ९ : १०, पृ० १७६.

१००. गणुः— किं ब्रूषे मधुरहासिनि ! उदरपूर्तिदुष्करा, का कथा वस्त्रादिकानाम्।
बालकस्य शिक्षाशुल्कमपि न प्रदत्तम्। —होलिकोत्सवम्—मंजूषा, १० : २, पृ० २०.

१०१. राधा — x x x स्मरसि ताड़ीसेवनेन सदा वाग्वाणैः सन्तक्षसि मे हृदयम्।
—वही, पृ० २५.

१०२. वही, पृ० ३०.

१०३. अनूपः— अपि स्मरसि निजबालपतिम्
पार्वती— न प्रेक्षितं तन्मुखं मया। स्मरामि यदल्पकालेनैवादिष्टाहं मात्रा।
सौभाग्य कुंकममार्जनाय। —बालविधवा—मंजूषा ९ : १०, पृ० १७१.

१०४. सुहृतं— श्रुतं मया यद् भर्तृबन्धुजनालये दीना सा किंकरीव स्वजीवनयात्रां साधयति।
—वही, पृ० १७०.

१०५. अनूतः —मा क्षुब्धा भूः। प्रिये। अद्यैव क्षणेन संपत्स्यते विवाहविधिः केवलं न्यायाधीशस्य पुरतः प्रतिपादनमावयोः पर्याप्तम्। —वही, पृ० १७६.

१०६. x x x (उलूकस्य धूत्कारः श्रूयते) शंकररावः— अविहा ! ! अविहा ! अनर्थः खल्वेषः
हरिः— किमुलूकशब्देन भीतोभवान् ? शंकररावः— आम् अनिष्टदः एष।
—गणेशचतुर्थी—मंजूषा, १० : ८, पृ० १९६.

१०७. गोधिकायाः कश्चितशुभशंसी चिपुचिपु ध्वनिः श्रूयते।

१०८. द्वितीयपुरोहितः— प्रणतेसति नृपाले प्रभोः मूर्तेः शिरसः सहसा सुमन-गुच्छो निपपात।
प्रथम पुरोहितः— x x x परमेश्वरस्य वृतिरगाधानूनम्।
—परमभक्तशिवाजिराट्—विश्व संस्कृतम्, ७ : ४, पृ० ५२.

१०९. (क) शान्ता — x x x न जाने कुत्र लुप्ता शर्करा युद्धकालेऽपि नासीत्तथाशर्करायाः अभावो यथाद्य युद्धावसानानन्तरम्।—पाददण्डः—सागरिका २०२०, २ : ३, पृ० २५९.
(ख) वही, पृ० २५९, २७१, २७३

११०. शान्ता— भोः पत्रवितरक, शृणु तावत्, अस्ति किञ्चित्पत्रमस्मत्कृते ?
—वही, पृ० २५७

१११. भास्करः x x x अयि, सुप्तोत्थितं मां मधुरोष्ण चायपानपिपासा बाधते ।
—वही, पृ० २५७.

११२. (क) लक्ष्मी—(सस्नेहम्) वत्से, श्री चैतन्यदेवजयन्ती दिने गंगास्नानाय कालीघट्टं गन्तुं कृतमतयो वयम् । यदीच्छसि त्वमप्यायाहि ।

शारदा (आत्मगतम्) तुष्याम्येतया वार्त्तया । गंगातीरे कालीघट्टसमीपे हि दक्षिणेश्वरम् गत्वाभर्त्तारं द्रष्टुमेष एवावसरः ।

—कालीदर्शनम्—संस्कृतप्रतिभा, १२ : २, पृ० १६०.

(ख) वन्देऽहं करुणामूर्तिं रामकृष्णजगद्गुरुम् ।
अम्बां च शारदादेवीं भुक्तिमुक्ति प्रदायिनी ॥

—वही, पृ० १५८.

११३. (अपरात् प्रकोष्ठादाकाशवाणीयन्त्रोत्थः प्रातः कालीनो वन्दनास्वरः श्रूयते)
—प्रतिबुद्धा—मधुराम्लम्, पृ० १०.

११४. प्रातःकाले घटिकायन्त्रस्योद्बोधकध्वनिं श्रुत्वा ललितः सहसोतिष्ठति ।
उत्थाय हस्तनद्धं घटिकायन्त्रं च पश्यति ... ।
—वही, पृ० १०.

११५. सुलेखा—हूहँ ! पूर्वमेव मया सूचितोऽसि गैसविषये । गैसमञ्जूषासमाप्तप्राया स्टोवस्य वैद्युतोष्णाकस्य वा प्रबन्धः समाचरितव्य इति । x x x

ललितः—आश्चर्यम् । गतपक्षे एव नवा गैस मञ्जूषा क्रीता x x x पञ्चदश वासरेभ्यः पूर्वम् x x x नाहमस्मिन् मासे नवां गैस मञ्जूषा क्रेतुं पारयिष्यामि । सम्प्रति आपणेषु गैसस्याभावः इति किं न जानासि ?—वही, पृ० ११.

११६. सुलेखा—(मालाकाराय) चारु मध्यमायां फलाक्सपुष्पाणि, प्रान्तवर्तिनीषु वीथिषु पैन्जीपुष्पाणि, (निर्वर्ण्य) द्रुमभाजनेषु च नास्टर्शियम् पुष्प द्रुमाश्च रोपयितव्याः ...।
—प्रतिबुद्धा (मधुराम्लम्), पृ० १५.

११७. ललितः—हुम् x x x मध्येमार्गे स्कूटरयाने विकृतिः सञ्जाता । अतः स्कूटरं तत्रैवविहाय x x x टैक्सीयानेन कार्यालयं सम्प्राप्तोऽस्मि । —वही, पृ० १७.

११८. वही, पृ० १८.

११९. पूर्णिका—कदा त्वं लाटरीपत्राणि न क्रीणासि ! गृहे भोजनं भवेन्वा, लाटरी पत्राण्यप्रमादमानयसि ।—याथार्थ्यगरलम् (मधुराम्लम्), पृ० २७.

१२०. वही, पृ० २७.

१२१. माधव—चायं भवान् न पिबति, दुग्धपानं क्रियताम्
नीते ! दुग्धमानय
नीता—अधुनैव चूर्णमुष्णजले मिश्रयित्वा आनयामि ।—नारददौत्यम्—मधुराम्लम्, पृ० ४२.

१२२. माधवः—(विहस्य) मुने ! पाश्चात्यमेतन्नृत्यं 'पौपं' इत्युच्यते । अधुना पाश्चात्यनृत्या एवेतस्मिन् देश ख्यातिं प्राप्नुवन्ति । —वही, पृ० ४४.

१२३. नारदः—अहह ! महत् कष्टं भारतभूमौ । बिहारराज्ये तेषु तेषु चान्यभागेषु ईदृश्यां विपन्नावस्थायां कथं कृत्रिमोपग्राहाणां निर्मितिः क्रियते ?—वही, पृ० ४५.

१२४. मन्त्रिमहोदयः—कथं न ? राष्ट्रसमृद्ध्यै तास्ताः पञ्चवर्षीययोजनाः सन्ति । जनसंख्यानियन्त्रणार्थं च परिवारनियोजनम् ।
—वही, पृ० ४६.

१२५. वीरभद्राः— आम्रपालि ! नैतत्सम्भवमस्यां गणराज्यव्यवस्थायामनेन कारणेनाहं बारं-बारं प्रतिवेदयामि त्वदर्थे x x x बाले व्यवस्थेयं यद् या कुमारी अत्र पत्युर्ववरणे विफला भवति सा ...वत्से ! दुर्भाग्यवशात् सा नगरवधूरिति गृह्यते ।
— आम्रपाली, पृ० २५.

१२६. सौवीरः— आर्य पुत्र ! अशोभनमिदं भवच्चिन्तनम् । सर्वथा पुरुषजनवर्जितमुद्यानमेतत् ।
— वही, पृ० १५.

१२७. आनन्दः— किन्तु भगवन् ! प्रागेवाजस्रं भवानुपदिदेश— यन्नारी एव पुरुषस्य मोहासक्तेर्मोक्षद्वारावरोधनस्य च कारणं ... ।— वही, पृ० ४०.

१२८. (मंगलागोदोहन कार्यं समाप्य वत्समुपदिशति) रे वत्स ! सुपुत्रस्त्वसि भारतमातुरेव . ।
— माताभूमि पुत्रोऽहम्पृथिव्याः (दशमस्त्वमसि), पृ० ४२.

१२९. दामोदरः— जयतु जयतु देवः । नेदमाडम्बरमपितु नवग्रहाणामुत्पातशान्तिहेतो रेषा संक्षिप्तापूजा याऽत्रानिवार्या प्रतीयते ।— ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः (दशमस्त्वमसि), पृ० १८.

१३०. ग्राम्या— x x x अहं ते धर्मपत्नी x x x अग्निदेवो हि मे उद्वाहस्य साक्षी किमधुना त्वं मां परित्यज्य रूपाकर्षणादन्यां वरीतुमिच्छसि ।
— उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् (वही), पृ० १४

१३१. अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (वही), पृ० ३०.

१३२. पार्वती— कोऽसौ गान्धी मातः ? किमसौ राम इव कश्चिचदवतारः ?
— न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः, पृ० ४४.

१३३. सत्यमेवजयते (दशमस्त्वमसि), पृ० ३३-३४.

१३४. मंगला (पत्रं वाचयति) पूज्य पितृदेव ! भवत्सुतोऽहमद्या विद्यालयं परित्यज्य महात्मनो गान्धिमहोदयस्याह्वानमवधार्य भारतस्य स्वराज्याभियाने तत्परोऽभवम् ।
— माताभूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः (दशमस्त्वमसि), पृ० ३८.

१३५. सीता— रामराज्यस्य प्रतिष्ठा ? तस्या अधिकं महनीयां प्रतीयते मम स्त्रीजातेः प्रतिष्ठा । रामराज्यं ? कीदृशं रामराज्यं x x x अतएवं निष्कलंकायाः सीतायाः पुनर्पुनर्दिव्यकरणप्रसङ्गोभवति । स्त्रीवर्गस्यैतन्मानखण्डनं न सहेत भूमिकन्या x x x स्त्रीजातेरपमानस्य विध्वंसनार्थमद्यमहं दिव्यं करोमि । — भूमिकन्या, पृ० ११७.

१३६. वही, पृ० ३९-४१.

१३७. क्षेमकरनः— (विहस्य) अस्माकं कापि याचना नास्ति । दैनिकोपयोगीनि वस्तूनि इच्छामः, दूरदर्शनम्, दूरभाषम्, यानं, शीतकरं, हिमकरं च दद्याः ।
— यौतुकं पातकं परम् (पारिजातं अक्टू० १९८४), पृ० १०.

१३८. अशोकः— x x xयूयं मिलित्वा तां लक्ष्मी हतवंतः । हत्यायाः अभियागे यूयंजीवंपर्यन्तम् कारावासं सेवध्वम् । — वही, पृ० १०.

१३९. अशोकः — x x xभोः क्षेमकरन ! मया तव सर्वं वृत्तम् शब्दग्रहणयन्त्रेभरितम् x x x चित्रग्राहियन्त्रेण गृहीतं रूप्यकग्रहणकालस्य चित्रमपि मम समीपे अस्ति ।
— वही, पृ० १२.

१४०. अशोकः— तर्हि परश्वः भवन्तः ममता होटले चतुर्थे कक्षे, सन्ध्या समये पञ्चवादने आगत्य दुहितरं पश्यन्तु ।— यौतुकं पातकं परम्, पृ० १० ।

पंचम प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचनाओं में संवाद-तत्त्व एवं भाषा

संवाद सम् उपसर्ग पूर्वक वद् धातु से घञ् प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुआ है। जिसका तात्पर्य है— मिलकर बोलना, बातचीत तथा कथोपकथन आदि।[१] कथा या चरित्र का विकास करने के लिए प्रायः नाट्यकार जिस पारस्परिक विचार विनिमय का आश्रय लेता है, उसे संवाद कहते हैं। अभिनव नाट्यशास्त्र के अनुसार प्रसंग, आवश्यकता तथा पद के अनुरूप भाषा में दो या दो से अधिक व्यक्तियों की बात-चीत संवाद है।[२] प्राचीन नाट्यशास्त्र में संवाद के स्थान पर पाठ्य या वाचिक अभिनय शब्दों का प्रयोग हुआ है।[३] यहाँ इनके सर्वश्राव्य, अश्राव्य तथा नियत श्राव्य भेदों का भी उल्लेख है।[४] नाट्य में जो अशं सबके सुनने योग्य हो, वह सर्वश्राव्य, कुछ ही व्यक्तियों के सुनने योग्य हो वह नियत श्राव्य तथा जो किसी भी अन्य पात्र के सुनने योग्य नहीं होता उसे अश्राव्य कहा गया है।[५] श्राव्य कथन को प्रकाश तथा अश्राव्य को स्वगत भी कहते हैं। नियत श्राव्य कथन के जनान्तिक और अपवारित[६] दो भेद होते हैं।[७]

इसी प्रसंग में प्राचीन आचार्य एक नाट्यधर्म आकाश भाषित की चर्चा भी करते हैं।[८]

पाश्चात्य नाट्यशास्त्र में एकान्त भाषण (Solilogy) असाइड (Aside) चेतनाधारा (Loude Thinking) आदि नाम भी मिलते हैं।[९] इनके अतिरिक्त आकार, विषय, शैली, कार्य और पात्र प्रयोग की दृष्टि से भी संवाद के अनेक भेद सम्भव हैं। आकार की दृष्टि से लघुसंवाद, दीर्घसंवाद, विषय की दृष्टि से दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक, धार्मिक आदि शैली के आधार पर नाटकीय, उपदेशात्मक तार्किक, परिचयात्मक, भावात्मक, आत्मकथनात्मक आदि संवादभेद सम्भव हैं। सामान्य रूप से संवादों में संक्षिप्तता, सरलता, पात्रानुकूलता, स्वाभाविकता, वाग्वैदध्य, रोचकता, प्रासंगिकता, प्रत्युत्पन्नमतित्व, अभिनेयता, शिष्टता, व्यंग्यात्मकता आदि गुण होने चाहिए। श्री जी० पी० बेकर ने आदर्श संवाद के गुणों का उल्लेख करते हुए उनमें व्यंग्य को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना है।[१०] इन विशेषताओं के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिकता, सजीवता, गत्यात्मकता, उदात्तता आदि भी उत्तम कोटि के संवादों की मुख्य विशेषताएँ हैं। नाट्य में संवाद गद्य व पद्य में लिखे जाते हैं।[११] संस्कृत नाट्यकारों ने अपने संवादों में गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग किया है। भाव या रस की अभिव्यक्ति के लिए पद्य तथा आदेश, प्रस्ताव, वर्णन आदि गद्य में कहे गए हैं। पद्यों का प्रयोग कहाँ तथा किस छन्द में हो, इस सम्बन्ध में कोई निर्देश नहीं मिलता।

कहीं-कहीं पद्यात्मक संवादों की बहुलता से स्वाभाविकता का ह्रास होता है।[१२] अतः आधुनिक नाट्यशास्त्री सिद्धान्त या उपदेश प्रतिपादन की दृष्टि से नाट्य में स्वल्प पद्यों के प्रयोग के ही पक्ष में हैं। गीति-नाट्यों में तो सभी संवाद पद्य में ही होते हैं।

नाट्य में संवाद का सर्वाधिक सशक्त माध्यम भाषा ही है । नाट्य में अन्य संकेतों की स्थिति अपेक्षाकृत भावाभिव्यंजना में गौण है। वे भाषा के सहयोगी व पूरक हैं। नाट्य में प्रयोग की जाने वाली भाषा के स्वरूप के सम्बन्ध में प्रथम विचार तो यह है कि नाट्य रचना जनसामान्य के लिए होने के कारण जनसाधारण द्वारा बोधगम्य भाषा का प्रयोग ही नाट्य में किया जाना उचित है। अर्वाचीन नाट्यशास्त्री नाट्य-भाषा[१३] की सरलता, स्वाभाविकता एवं लोक बोध्यता के ही पक्ष में हैं किन्तु यह भी विचारणीय है कि नाट्य साहित्य का अंग है, अतः उसमें सरलता, साहित्यिकता, शिष्टता तथा कलात्मकता अवश्य होनी चाहिए। उसमें पात्र, परिस्थिति एवं विषय के अनुकूल होना चाहिए। भाषा में स्तरीयता होने के साथ वृत्त एवं चरित्र की सफल अभिव्यंजना की क्षमता होना भी अपेक्षित है। संस्कृत नाट्य शास्त्रियों ने पात्रों की योग्यता के अनुरूप संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश आदि भाषाओं के प्रयोग का विकल्प भी रखा है, जो आधुनिक समय में अप्रासंगिक है। इसीलिए आधुनिक नाट्यशास्त्रियों की मान्यता है कि नाट्य में आद्यन्त एक ही भाषा का प्रयोग होना चाहिए। विभिन्न परिस्थितियों में भाषा के रूप में यत्किंचित् परिवर्तन किया जा सकता है। क्योंकि भाषा वक्ता व श्रोता एवं प्रसंग की सापेक्षिकता रखती है। प्रस्तुत प्रकाश में अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की कृतियों मे प्रयुक्त संवाद एवं भाषातत्व का विश्लेषण करेंगे।

रमा चौधुरी के रूपकों में संवाद, वस्तु को प्रभावशाली और रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। अधिकांशतः संवादों में वक्तव्य तो लम्बे-लम्बे हैं लेकिन वाक्य छोटे-छोटे हैं।[१४] लम्बे संवादों में दार्शनिक गहनता है।[१५] छोटे-छोटे संवादों में कही-कहीं शब्द संगति और दृश्य व्यंजना बड़ी सार्थक है।[१६] संवादों में कहीं-कहीं हास्य एवं व्यंग्य के सुन्दर प्रयोग भी दृष्टिगत हुए हैं।[१७] व्यंग्यात्मक संवादों में मंचीय शक्ति है जो मधुर चोट करती हुई चुटीले व्यंग्य छोड़ती है। उपहास एवं व्यंग्य की अभिव्यक्ति के लिए रमा चौधुरी ने अपने नाटकों में विशेष ध्वनियों एवं पदों का प्रयोग किया है। यथा— हा हा हा, फू फू फू, रे रे रे[१८] एवं कुछ सहज अपशब्दों का भी यथा-कृमिकीट, कुटिल, कृकलास, शठशृगाल,[१९] मर्कट, गर्दभ आदि।[२०]

प्रहसन दृश्यों में तो पात्रों के नाम कुक्कुट, पेचक आदि भी हास्य व्यंजक ही हैं।[२१] द्वन्द्वात्मक स्थिति को सम्प्रेषित करने वाले नाटकीय संवाद प्रभावोत्पादक और आकर्षक रूप में वस्तु को प्रस्तुत करते हैं। इनकी अर्थवत्ता

और दृश्यात्मकता एक संतुलित नाट्यगति में आकर्षक है तथा दर्शकों को बाँधे रखने में समर्थ है। नाटकों के संवाद साहित्यिक एवं भावात्मक हैं। कोई भी पात्र जब कोई संवाद बोलता है तो भावावेश में कथित वाक्य की पुनरावृत्ति भी बहुधा कर बैठता है,[२२] चाहे वह क्रोध हो,[२३] रति हो[२४] अथवा उपहास[२५] आदि अन्य कोई भाव। कहीं-कहीं कल्पना एवं भावुकता के वेग में संवाद काव्यात्मक अधिक हो गए हैं तथा दर्शन व सिद्धान्तों से बोझिल प्रतीत होते हैं[२६] लेकिन अधिकांशतः अलंकृत होने पर इनके संवाद गम्भीर शिष्ट एवं उदात्त भावों की सम्यक् अभिव्यक्ति में सफल रहे हैं। कई नाटकों में उन्होंने एकोक्तियों का प्रयोग किया है। ऐसे स्थल भी भावावेश के कारण काव्यात्मक हो गए हैं। किसी नायक को अकेले रखकर उसके मनोभावों को सुनाने की कला, रस की दृष्टि से पर्याप्त समर्थ है।[२७] इस दृष्टि से रमा चौधुरी के नाटकों में एकोक्तियों का प्रयोग सफल रहा है। निवेदित निवेदितम्[२८] तथा युगजीवनम्[२९] की एकोक्तियाँ उल्लेखनीय हैं। विवाहोपरान्त पत्नी से अपमानित कालिदास की अष्टम दृश्य के आरम्भ में प्रयुक्त तीन पृष्ठ की एकोक्ति कालिदास की मानसिक व्यथा तथा ज्ञान प्राप्ति की लालसा को तो उजागर करती है लेकिन उनका आवश्यकता से अधिक विस्तार नाटक की गति में शिथिलता लाकर वैरस्य उत्पन्न करता है।[३०] इसी प्रकार यतीन्द्र यतीन्द्रम् में यतीन्द्र की एक पृष्ठ की लम्बी एकोक्ति भी अभिनय की गति में बाधक बनी है।[३१]

रमा चौधुरी के नाटकों में सम्बोधन प्रयोग-नाट्यकर्त्री ने अपने नाटकों में माता, पिता, पुत्र, पुत्री भाई, बहिन आदि के लिए पारम्परिक जननि, माताः, पिताः, तात, वत्स, वत्से, पुत्रि आदि सम्बोधनों का प्रयोग तो किया ही है, लेकिन इनके सम्बोधनों की अन्य नाट्यकर्त्रियों से विलक्षणता और मौलिकता यह है कि ये सम्बोधन व्यक्ति विशेष की विशेषता बतलाने के कारण सार्थक हैं। इनसे सम्बोधन करने वाले के मनोभावों की भी प्रतीति होती है। यथा-माता के लिए - परमस्नेह कोमलेमातः, सुधाघने मातः, ममतामधुरे आदि।[३२] पुत्र के लिए प्राणप्रिय पुत्र चम्पकवदन, प्राणाधिक, स्नेहकोमलपुत्रक, प्राणधन पुत्रक आदि।[३३] मित्र के लिए भ्रातृवर, जीवनरस, प्राणप्रियभ्रातः, हृदयभास्कर प्राणप्रिय, जीवनसमभ्रातृवर[३४] आदि। मित्र के पिता के लिए ज्येष्ठतात महोदय,[३५] पिता के लिए परमस्नेहसुशीतलपितः,[३६] भाई के लिए पुण्यश्लाश्लोक भ्रातृमहोदय, जीवन सर्वस्व भ्रातृवर, हृदयालोकभ्रातृवर आदि।[३७] बहिन के लिए सुधास्वरूपिणीभगिनी, ममतामयिभगिनी आदि।[३८] शत्रु के लिए रे रे कुत्सित कुक्कर, रे रे मललिप्त मर्कट, रे रे शठशृगाल, रे रे पाषण्ड, रे रे दुर्वृत्त आदि।[३९] 'देशदीपम्' व 'पल्लीकमलम्' के हास्य दृश्यों में सम्बोधन मित्रता सूचक होने के साथ-साथ हास्योत्पादक हैं। यथा-अरे, रे गर्दभ पुंगव, क्षुरधार जिह्व, पापात्मन्, दुरात्मन् कृष्णहृदयौ आदि।[४०] ये सम्बोधन उन पात्रों की विशेषता मूर्खता दुष्टता

छल आदि के सूचक भी हैं। इस प्रकार रमा चौधुरी के नाटकों में प्रयुक्त सम्बोधन पदों से वक्ता की भावातिरेकता तथा श्रोता के साथ उसके सम्बन्ध की सहज अभिव्यक्ति होती है ।

श्रीमती रमा चौधुरी के रूपकों में **भाषा** मंचीय प्रवाहपूर्ण, सुस्पष्ट तथा कल्पना की प्रचुरता से युक्त है। भाषा का स्वरूप साहित्यिक है एवं सशक्त आकर्षण की क्षमता रखता है।[४१] व्यापक रूप में इसका ध्वन्यात्मक स्वरूप दर्शनीय है। जो प्रेक्षकों में तादात्म्य प्रतीति के साथ भावात्मक आनन्द प्राप्त कराने में सफल है किसी एक भाव पर बल देने के लिए वीप्सा का आश्रय लिया है जिससे काव्य सौन्दर्य में वृद्धि हुई है। ऐसे स्थलों पर भाषा भावमयी होने के साथ अनुप्रास, उपमा, रूपक व उत्प्रेक्षा से अलंकृत हो गई है।[४२] इस आलंकारिता से युक्त होने पर भी भाषा में जटिलता नहीं आई है। दृश्यात्मक कौशल उनमें सहज देखा जा सकता है। हास्य पात्रों द्वारा बोलचाल की चुलबुली गाली-गलौच युक्त भाषा व्यवहार में लाई गई है।[४३] प्रकृति के उद्दीपन स्वरूप का वर्णन करते समय रमा चौधुरी ने विशेष रूप से साहित्यिक व अलंकृत भाषा का प्रयोग किया है । श्रीमती रमा के रूपकों में भाषा का रसानुकूल एवं भावानुकूल प्रयोग भी दिखाई पड़ता है।[४४]

एक ही पात्र क्रोध के अवसर पर क्रोधमयी भाषा का प्रयोग करता है । वही शृंगार के अवसर पर मधुरभाव मयी कोमलकान्त पदावली का प्रयोग करता है। 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में अरुण किरण से बात करते समय कमलकलिका की भाषा काल्पनिक, भावोद्रेक पूर्ण तथा कोमल है।[४५] यही कमलकलिका प्रचण्डप्रताप की उच्छृंखलता, उद्दण्डता तथा मर्यादा का व्यतिक्रमण देख ओजस्वी स्वर में फटकारती है।[४६] समस्त नाटकों में क्रोध, सुख-दुःख, प्रेम, करुणादि विविध प्रकार के भावों के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं भावुकता को अतिशय बढ़ावा देने से तथा दार्शनिकता के निर्वाह से भाषा में नीरसता एवं बोझिलता के साथ अभिनय की गति में शिथिलता आ गई है।[४७] रमा चौधुरी के रूपकों में प्रहसनात्मक दृश्यों में व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग हुआ है। यहाँ चुटीले, तीक्ष्ण व्यंग्य तात्कालिक सामाजिक एवं व्यक्तिगत बुराई के उद्घाटन में समर्थ है। यथा—'देशदीपम्' में मार्ग परिष्कारिका की व्यंग्योक्तियों से प्रकट होता है कि देश युद्ध की विभीषिका से गुजर रहा है। ऐसे समय में कुक्कुट, अपनी सड़ी दुर्गन्ध युक्त मछलियाँ बेचकर तथा पेचक सड़े फल बेचकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे हैं।[४८]

डॉ० रमा चौधुरी के रूपकों में प्रादेशिकता का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। अनेक स्थलों पर उन्होंने बंगला भाषा के पदों एवं सम्बोधनोक्तियों को यथावत् ग्रहण किया है, यथा—कालुदादा, झाडूदार दादा, दादाबाबु, दिदिमणि आदि[४९] कुछ नाटकों में बंगीय कहावतों लोकोक्तियों एवं पद्यों का संस्कृत

रूपान्तरण किया गया है, यथा—आकाशचन्द्रः पतितः करे मे, स्वयं स्मरति नोद्वाहं न निद्रा पल्लिवाम्सिनांकुक्षौ क्षुधा मुखे लज्जा । पथिठक्कुर आद्रियमाणो मस्तके आरोहति ।[५०] मनस्त्वं कृषिविद्याहीनम्,[५१] कदाभविष्यति सप्रेम सञ्चारः[५२] नाहं सुरापानसक्तः जयकालि ध्वनिविधानपरः[५३] आदि ।

संस्कृत एवं बंगला भाषा के शब्दों के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग भी रमाजी के नाटकों में दृष्टिगत होता है , यथा—चकोरी, चुम्बक, दुत्तेरी, लुकोचरि, कुलकुलनाद, वाटर, पानि, आल्ला, गॉड,[५४] चाचारहिम, खोदाताला, छुछुन्दरि आदि ।[५५]

रमा चौधुरी के रूपकों में पद्य प्रयोग—रमा चौधुरी ने अपने नाटकों में गीतों एवं पद्यों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है । प्रायः सभी नाटकों में दृश्यों का आरम्भ अनेकशः एकांकी पात्र के संगीत से अथवा समवेत संगीत से हुआ है । संगीत का प्रयोग लोकरंजन को ध्यान में रख कर किया गया है । कहीं-कहीं आवश्यकता न होने पर भी जनरंजन की दृष्टि से संगीत का मध्य में भी प्रयोग है । यह संगीत गायन रूप से तो है ही साथ ही कहीं-कहीं वाद्य एवं नृत्य परक भी है । ऐसे स्थल 'पल्लीकमलम्' तथा 'युगजीवनम्' में द्रष्टव्य है । यह संगीत प्रायः स्तुति प्रधान है । 'कविकुलकोकिलम्' में ७५ श्लोकों में से २४ पद्य, 'देशदीपम्' में ९० श्लोकों में से ४० श्लोक स्तुति परक हैं। 'निवेदितनिवेदितम्' में १६ वन्दनाएँ तथा 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' में १२ वन्दनाएँ विविध श्लोकों के माध्यम से गाई गई हैं । 'पल्लीकमलम्' के ९९ श्लोकों में से ४५ श्लोक विविध वन्दनाओं से पूर्ण हैं । 'मेघमेदुरमेदनीयम्' के ६४ में से २५ श्लोक तथा 'युगजीवनम्' के १८० श्लोकों में से ६३ श्लोक स्तुतिपरक हैं । 'शंकरशंकरम्' में १२० श्लोकों में से ३३ श्लोक स्तुति के हैं। इनमें अधिकांशतः परम्परागत, जगन्माता तथा भारतमाता की वन्दना से सम्बद्ध पद्य हैं। दूसरा स्थान गुरु वन्दना का है। इनके अतिरिक्त सूर्य, प्रकृति, नदी, बस्ती, बंगाली की स्थानीय नदी एवं पल्ली, शिव माया, गंगा आदि से सम्बद्ध संगीतमय स्तुतियों की अवतारणा भी हुई है ।[५६] इन वन्दनाओं में स्तुतियों के दो रूप देखने को मिलते हैं । प्रथमतः पात्र किसी व्यक्ति स्थान व संगठन आदि से इतना अधिक प्रभावित हो जाता है कि भावावेश में उसका गुणगान करने लगता है । 'देशदीपम्', 'शंकरशंकरम्', 'यतीन्द्रयतीन्द्रम्', 'निवेदितनिवेदितम्' तथा 'युगजीवनम्' स्तुतियाँ इसी प्रकार की हैं । दूसरे प्रकार के अन्तर्गत किसी पात्र की प्रशंसा अथवा पूजा में स्तुतियाँ प्रयुक्त हुई हैं । प्रथम प्रकार की स्तुतियों में स्तुत्य रंगमंच पर उपस्थित हो अथवा न हो, प्रथम पात्र भावोद्रेक में उसकी महिमा का यशोगान करता है, लेकिन स्तुतियों के दूसरे रूप में जिस पात्र की महिमा का यशोगान हो रहा है वह रंगमंच पर उपस्थित रहता है ।[५७]

इन स्तुतिपरक संगीतमय श्लोकों के अतिरिक्त भी रमा चौधुरी ने अन्य पद्यों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है। इन पद्यों में पात्रों की मानसिक स्थिति का भावुकता पूर्ण बिम्ब उभरा है। पद्यों का प्रयोग निम्नलिखित दृष्टियों से किया गया प्रतीत होता है—

वातावरण की सृष्टि के लिए, कथा प्रसंग की अनुकूलता के लिए, विविध भावों के उद्दीपन के लिए, पात्रों के मनोभावों का चित्रण करने के लिए, नाटक में रोचकता उत्पन्न कर मनोरंजन के लिए।

वातावरण की सृष्टि के लिए पद्यों की योजना उन प्राकृतिक स्थलों पर की गई है जहाँ पात्र उस स्थान विशेष से प्रभावित होकर बरबस गीत गाने लगता है। यहाँ गीत वातावरण के माध्यम से पात्र की मानसिक स्थिति को प्रचुर मात्रा में प्रभावित करता है अथवा किसी प्रसंग विशेष के पूर्व तदनुरूप गीत का प्रयोग किया गया है ताकि सामाजिक प्रस्तावना स्वरूप उस गीत के माध्यम से उस प्रसंग विशेष से तादात्म्य स्थापित कर सके।[५८] कथा प्रसंग की अनुकूलता की दृष्टि से पद्यों व गीतों का प्रयोग संवाद भाग में प्रतिपादित भावों की पुनरावृत्ति के स्वरूप हुआ है।[५९] रमा चौधुरी के रूपकों में ऐसे पद्य स्थल भी दृष्टिगत होते हैं जहाँ पद्य पात्रों के विविध भावों को उद्दीप्त करने का कारण बनता है, यथा— शास्त्र निपुणा विद्यावती का विवाहोपरान्त शास्त्र चर्चा के लिए किया गया पद्य कालिदास में भय भाव को उद्दीप्त कर रहा है।[६०] नाटकों में पात्रों की मानसिक स्थिति तथा विविध मनोभावों के प्रदर्शन के लिए भी पद्यों का प्रयोग दृष्टिगत हुआ है। 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में सूर्य एवं कमल के दृष्टान्त से कहा गया अरुणकिरण का पद्य नायिका कमलकलिका से मिलन रूप औत्सुक्य भाव को प्रदर्शित करता है।[६१] कहीं-कहीं तो रमा चौधुरी का गीतों के प्रति मोह इतना अधिक हो गया है जिससे नाटक की गति एवं स्वाभाविकता में व्यवधान उपस्थित हो गया है। गीतों के अधिक प्रयोग से 'शंकर-शंकरम्' तथा 'युगजीवनम्' में अनेक स्थलों पर अभिनेयता अवरुद्ध हो गई है।

डॉ० रमा चौधुरी के नाटकों में विविध पारम्परिक एवं आधुनिक छन्दों का प्रयोग हुआ है। पारम्परिक छन्दों में अनुष्टुप्, इन्द्रवज्रा, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, द्रुतविलम्बित, भुजंग प्रयात, मन्दाक्रान्ता, मात्रा, मालिनी वंशस्थविलम्, शार्दूलविक्रीडितम्, शालिनी, शिखरिणी, हरिणी, स्रग्धरा, पज्झटिका तथा इन्द्रवंशा का प्रयोग हुआ है। आधुनिक विषम वृत्तों का प्रयोग भी दृष्टिगत हुआ है।[६२] श्रीमती रमा चौधुरी एक उच्चकोटि की नाट्यकर्त्री होने के साथ-साथ श्रेष्ठ कवयित्री भी हैं। यह तथ्य उनके नाटकों में प्रयुक्त पद्यावलोकन से भी परिपुष्ट होते हैं। रस-भाव-भाषा-अलंकारों से उनके पद्य अभिमण्डित हैं। यद्यपि स्वरचित पद्यों का प्रयोग ही हुआ है तथापि कुछ स्थलों पर नीति परक एवं

स्तुतिपरक पद्यों का आहरण अन्य काव्यों से किया गया है। चरित प्रधान नायकों में चरितनायक द्वारा विरचित काव्यों में भी पद्यों का आहरण किया गया है।

'शंकरशंकरम्' में कुछ श्लोक[६३] शंकराचार्य विरचित गुर्वष्टकम्, भवान्यष्टकम्, शिवाष्टकम्, गंगास्त्रोत्रम् तथा निरंजनाष्टकम् से लिये गये हैं।[६४] 'निवेदित निवेदितम्' गीता के द्वितीय अध्याय से दो श्लोक, तथा वृहदारण्यकोपनिषद् से दो मंत्र लिये गये हैं।[६५] सुत्तनिपातक-करणीय-मैत्री सूत्र से तीन श्लोक आहृत हैं।[६६] 'कविकुलकमलम्' में कुमारसम्भवम्, मेघदूतम्, रघुवंशम् तथा ऋतु-संहारः के प्रथम श्लोकों का प्रयोग हुआ है। 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्'[६७] यतीन्द्र विमल चौधुरी विरचित श्री श्री मातृलीला-तत्त्वम्, श्री श्री जननीतत्वम् तथा श्री राधा स्तुति तथा एक श्लोक शंकराचार्य विरचित मोहमुद्गरम् से लिया गया है। रमा चौधुरी के रूपकों में संस्कृत के अतिरिक्त पालि भाषा के तीन श्लोक[६८] तथा आंग्ल भाषा के कुछ वाक्यों का भी प्रयोग हुआ है।[६९] संक्षेप में रमा चौधुरी की भाषा सशक्त, मधुर, अलंकृत तथा पूर्णतः समृद्ध है।

लीलाराव के रूपकों में संवाद छोटे-छोटे दैनिक जीवन के व्यवहारानुरूप हैं। ये साहित्यिकता एवं कृत्रिमता से रहित हैं। कहीं-कहीं इनमें मधुर हास्य एवं चुटीली व्यंग्योक्तियाँ भी पायी जाती हैं।[७०] अलंकारों के बोझ से बोझिल न होने के कारण संवाद अत्यन्त स्वाभाविक व सहज प्रतीत होते हैं। उदाहरण के लिए 'असूयिनी' एकांकी में कर्कशा सास का बहू के प्रति आक्रोश स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त हो रहा है।[७१] भाषा अत्यन्त सरल है जिससे अल्प संस्कृत जानने वाले के लिए भी सहज बोधगम्य है। लीलाराव के संवादों का एक प्रधान गुण उनकी व्यापार प्रधानता है। संवादों के पूर्व में, मध्य में तथा अन्त में पर्याप्त नाट्य निर्देश भी दिए गए हैं, फलस्वरूप उनमें अभिनेयता भी आ गई है। संवाद पात्रों की मनोवृत्ति के अनुरूप हैं। 'होलिकोत्सवम्' में अपनी पत्नी के केयूर को रंगु के पास देखकर, पाने के लिए रंगु से कहा गया गणु का वाक्य अत्यन्त स्वाभाविक तथा मनोवैज्ञानिक है।[७२] संवादों में कहीं अस्वाभाविकता भी आ गई है लेकिन ऐसे स्थल अत्यल्प हैं, जैसे—कृपाणिका में पति के मरणासन्न होने पर व्याकुल उर्मिला की भाषा काव्यमयी व अलंकृत हो गई है।[७३] लीलाराव के रूपक लोकनाट्य के रूप में विकसित हुए हैं, अतः उनमें इस प्रकार का साहित्यिक प्रयोग विशेष रूप से अस्वाभाविक लगता है परन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं है। कहीं-कहीं आलंकारिकता के प्रयोग से संवाद की स्वाभाविकता नष्ट नहीं हुई है, यथा—

'भिषक् - किं तस्याचरणे परिवर्तनं भवत्योपलक्षितम्' ?

मीरा—एवम्, तत्काले किमपि चिन्तासन्तानं ज्वालामुख-पर्वत इव तद्-हृदि जाज्वल्यमानं तुमुलविग्रहं सततं विधत्ते स्म । (जलं पिबन्ती) तन्निर्गमनोत्तरं नर्तकी सम्बन्धेन भवितव्यमिति व्यतर्कि मया ।[७४]

लीलाराव ने कहीं-कहीं पात्रों का एकालाप (Solology) भी प्रस्तुत किया है । इस प्रकार के एकालापों में स्वाभाविकता तथा पात्रों की मनोवृत्ति को ध्यान में रखा है । कृपाणिका के प्रथम दृश्य में उर्मिला की एकोक्ति उसकी आन्तरिक पीड़ा की परिचायक है। दीर्घ होने पर भी यह एकोक्ति अरुचिकर नहीं लगती ।[७५]

'होलिकोत्सवम्' के तृतीय दृश्य में एक स्थल पर स्वगत संवाद का प्रयोग हुआ है । तकनीकी दृष्टि से यह स्थल स्वगत संवाद का न होकर एकालाप अथवा एकोक्ति का है । स्वगत भाषण रंगमंच पर अन्य पात्रों की उपस्थिति में किया गया आत्म कथन होता है जबकि एकालाप में रंग मंच पर अन्य पात्रों का अभाव रहता है । गणु जब राधा को पीट-पीट कर घर से निकाल देता है, तब उसके चले जाने पर उसके द्वारा किए गए विश्वासघात जन्य दुःख की पराकाष्ठा में वह एकाकी ही स्त्री-चरित्र की दुर्गमता के विषय में सोचता है । यह कथन एकालाप ही है, स्वाभाविकता की दृष्टि से भी यह उचित है क्योंकि व्यक्ति आनन्दातिरेक व दुःखातिरेक में स्वयं से ही वार्तालाप करने लगता है ।[७६]

लीलाराव के रूपकों में 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' तथा 'क्षणिक विभ्रमः' में दो स्थानों पर स्वगत भाषणों का प्रयोग हुआ है । 'क्षणिक विभ्रमः' में गोविन्द का स्वगत कथन अनावश्यक लगता है, क्योंकि उसे प्रकाश में कहने पर भी उसमें न तो अस्वाभाविकता प्रतीत होती, न ही प्रकाश कथन से किसी गोपनीयता का प्रकाशन होता । रूपक की कथागति में भी किसी प्रकार का अन्तर न आता । अतः स्वगत भाषण इस स्थल पर महत्वपूर्ण नहीं है ।[७७] 'मायाजालम्' 'क्षणिक विभ्रमः' आदि कुछ एकांकियों में कौतूहल की अभिव्यक्ति के लिए 'ततस्ततः' पद का प्रयोग प्रचुरता से किया गया है । वस्तुतः लीलाराव के एकांकियों में आख्यान (Nerations) अधिक हैं, अतः दूसरे पात्र के पास ततस्ततः कहने के अतिरिक्त कुछ बचता ही नहीं है ।[७८]

कहीं-कहीं अपनी माता पं० क्षमा राव रचित मूलकथा में से नाट्यकर्त्री ने संवादों को यथावत् ग्रहण कर लिया है ।[७९] इसी प्रकार 'नारकण्डाश्रमः' के अधिकांश संवाद अभिज्ञान शाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक से यथावत् ग्रहण किए गए हैं । 'मायाजालम्' में अन्य रूपकों के संवादों की अपेक्षा भिन्नता दृष्टिगत होती है । यहाँ प्रत्येक पात्र लम्बे-लम्बे वक्तव्य देता है, वाचिक अभिनय की प्रधानता के कारण यह कथा अधिक लगता है, नाट्य कम । यद्यपि उनकी कथा

के प्रति उत्सुकता तथा जिज्ञासा तो बनी रहती है लेकिन अभिनय की दृष्टि से देखा जाए तो यहाँ व्यापारों का अभाव है। नाट्य प्रभाव उत्पन्न करने के लिए 'ततस्ततः' 'हुम्' 'कष्टंखलु' आदि पदों का प्रयोग किया है।[८०]

'तुलाचलाधिरोहणम्' में प्रत्येक पात्र अपना-अपना वक्तव्य दे रहा है। यहाँ संवादात्मकता का अभाव है। इस एकांकी में हिमाचल-प्रार्थना के पद्यों का संकलन होने के कारण वर्णना ही अधिक है, अभिनय तत्त्व बहुत कम।[८१] 'मीराचरितम्,' 'ज्ञानेश्वर चरितम्' (बालयोगी), 'तुकारामचरितम्', 'परमभक्त शिवाजिराट्' तथा हरिसिंहः संगीत नाट्य (ऑपेरा) हैं। इनमें पद्यात्मक संवाद प्रयुक्त हुए हैं। पूरे श्लोक को अथवा श्लोकांशों को संवाद रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'मीराचरितम्' में पात्र शार्दूलविक्रीडितम् में संलाप कर रहे हैं।[८२] 'तुकारामचरितम्' व 'मीराचरितम्' में कहीं कहीं बहुत अल्पमात्रा में गद्य संवाद भी आये हैं जो छोटे-छोटे सहज बोधगम्य तथा भावानुकूल संवाद योजना में कहीं-कहीं व्यंग्य तथा विनोद का पुट भी मिलता है। 'मिथ्याग्रहणं' में अमीना अपने पति शेख को सरला में अनुरक्त जानकर सरला को दोषी समझकर व्यंग्य वाणों से भेदती है।[८३] शिष्ट विनोद 'कपातालयः' में द्रष्टव्य है। रत्न द्वारा बनवाये गए पत्रकोश को कंचना द्वारा कबूतर खाना कहना हास्योत्पादक है।[८४]

लीलाराव के रूपकों की भाषा अत्यन्त सरल व लोक व्यवहार की भाषा है। इसमें समासों का या तो अभाव है अथवा छोटे-छोटे बोधगम्य समास प्रयुक्त हुए हैं। भाषा भावों के सम्प्रेषण में पूर्णतः समर्थ है। यथा-'वीरभा' में महिलाओं के जुलूस को तितर-बितर करने वाले रक्षाकर्मियों की भाषा उनके अनुरूप अपशब्दों से पूर्ण सर्वथा स्वभाविक है।[८५] वाक्य रचना भी सुगठित तथा छोटी है। संस्कृत का अल्पज्ञान रखने वालों को भी वाक्यों का भाव ग्रहण करने में कोई कठिनाई नहीं होती। लीलाराव की भाषा पात्रानुकूल एवं भावानुकूल है। इनमें रोष, दैन्य, निराशा, ग्लानि व करुणा के भावों के अनुरूप भाषा का प्रयोग क्रमशः 'कृपाणिका', 'बालविधवा', 'अनूपः', 'होलिकोत्सवम्' तथा 'क्षणिकविभ्रमः' रूपकों में दृष्टिगोचर हुआ है। भाषा के प्रयोग में देश काल को भी ध्यान में रखा गया है। यही कारण है कि इनके रूपकों में ग्राम[८६] व नगर[८७] का वातावरण पूर्णतः सजीव हो उठा है। लीलाराव ने पात्रानुकूल, भावानुकूल एवं देशकालानुरूप भाषा का प्रयोग किया है, जो सामाजिकों को रसास्वाद कराने में समर्थ है। भाषा को सशक्त व प्रभावशाली बनाने के लिए अनेक स्थलों पर सुभाषितों, लोकोक्तियों, लौकिकन्यायों एवं वाग्व्यवहारों का प्रयोग भी किया है। कुछ उदाहरण निम्नांकित हैं—[८८]

(क) काकोऽपिमरालायते (लोकोक्ति), (ख) कोषे काणवराटिकाऽपि न स्यात् (लोकोक्ति), (ग) काकतालीयवदेव प्राप्तो मोहमय्या भिषग्वरः (लौकिकन्याय), (घ) अतिस्नेहपरिष्वंगाद्वर्तिराद्रापि दह्यते (सूक्ति), (ड) भर्तुः किल परित्यागो नृशंसः केवलस्त्रियाः (सूक्ति)।

अव्यक्त ध्वनियों के लिए नवीन शब्दों की रचना की गई है। यथा-बर्वरायसे[८९] (बड़बड़ाना), किलकिलायन्ते[९०] (पक्षियों का कलरव) कलहायन्ते।[९१]

कुछ अंग्रेजी भाषा तथा अन्य भाषाओं के आधुनिक शब्दों के लिए संस्कृत शब्दों का निर्माण किया गया है। यथा—लघुविमानम् (हेलिकॉप्टर), हिमपादुका (Snow Shoo) टेनिसपादुका, धनदान पुस्तिका (चैक-बुक), वीणा (वायलिन), हैमी (फउण्टेन पैन), गणना पट्टम् (बैलेन्सशीट) विद्युद्दीपकम् (बल्ब), विमान-संचालकः (Pilot), समाचारपत्रम्, गुलिकापातः, द्विचक्रिकायानम् (साइकिल), तन्तुचक्रम् (चरखा), तुरंगरथम् (तांगा), धूम्रयानम् (रेलगाड़ी), शब्दयन्त्रम् (टेलीफोन), द्वारघण्टिकानाम् (Bell) अधररागम् (लिपिस्टिक), मुखशाला (बैठक), तर्कु (चरखा) तर्कुनादः (चरखाध्वनि), स्वदेशीय मण्डल (कॉंग्रेस) आदि।[९२] कुछ स्थलों पर आंग्ल भाषा के शब्दों को यथावत् ग्रहण किया गया है, यथा—बीटिंग रिट्रीट, थिमय्या मार्च, फ्रास्ट बाइट, जनरल, कर्नल मेजर, रम, अदीमा आदि।[९३]

कुछ स्थलों पर उर्दू तथा कुछ प्रादेशिक भाषा के शब्दों का यथावत् प्रयोग है, यथा- खद्दरवेष्टित, इन्कलाब जिन्दाबाद,[९४] चौरबाझारे (मराठी),[९५] गणपतिवापामोर्या[९६] (मराठी), छानीबिलौरी (कुमाऊनीय) वेडुपाको बारामासो (कुमाउनीय) आदि।[९७]

सम्बोधन प्रयोग—लीलाराव ने अधिकांशतः पारम्परिक सम्बोधनों का ही प्रयोग किया है। माता के लिए अम्ब, मातः, जननि तथा पिता के लिए पितः, तात पदों का प्रयोग सम्बोधन के रूप में हुआ है। माता-पिता द्वारा पुत्री के लिए या तो नामतः अथवा दुहितः, पुत्रि, वत्से का तथा पुत्र के लिए वत्स, तात, पुत्र अथवा नाम का सम्बोधन में प्रयोग किया गया है। पत्नी के द्वारा पति के लिए स्वामिपादाः प्राणवल्लभ, नाथ, प्राणेश्वर आदि[९८] का तथा पत्नी के लिए सुभगे, मुग्धे, सुतनु, प्रिये, कल्याणि, मधुरहासिनी[९९] पद प्रयुक्त हुए हैं। कहीं-कहीं पति-पत्नी परस्पर नामतः सम्बोधन देते हैं। यह नाट्यकर्त्री पर आंग्ल प्रभाव का परिचायक है। पति के मित्र के द्वारा उसकी पत्नी के लिए देवि, कल्याणि, भगिनि के , भवति, भद्रे, भगवति, आर्य [१००] पद सम्बोधन में कहे गए हैं। पत्नी के द्वारा पति के मित्र के लिए भवान् पद् का प्रयोग किया गया है। बच्चे पिता के मित्र को पितृव्य कहते हैं,[१०१] जो सम्भवतः आंग्ल भाषा के ळहम्त से प्रभावित प्रतीत होता है। सेवक व सेविका को नामतः सम्बोधन किया गया है, यथा—गंगे, रामू।[१०२]

कहीं-कहीं पात्रों की विविध मनोवृत्तियों के अनुसार उन्हें सम्बोधित किया गया है। असूयिनी में सास अपनी सन्तानहीन पुत्र-वधू के लिए कर्कश एवं कर्णकटु चुभते हुए सम्बोधन करती है, यथा—निरपत्यके, उदरम्भरिके, दुर्जाते[१०३] आदि। 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' में ग्रामाधिप रेवा को भद्रे, आर्ये आदि आदरणीय सम्बोधन कर फुसलाता है, लेकिन जब उसे अनुभव होता है वह किसी भी स्थिति में कर नहीं देगी तो उसे चण्डि, दुर्दमें आदि पदों से सम्बोधित कर खीज प्रकट करता है। रेवा सहनशील महिला है। राज्यपाल तथा ग्रामाधिप जैसे देशद्रोहियों के प्रति आक्रोश होने पर भी रेवा उन्हें महाभाग, भद्र आदि सम्माननीय शब्दों से सम्बोधित करती है, जो उसकी सहनशीलता तथा सौम्यता के परिचायक हैं।[१०४]

लीलाराव के रूपकों में पद्य प्रयोग—श्रीमती लीलाराव दयालु ने संगीत के प्रति जनमानस की रुचि देखकर अपनी नाट्यरचना में गेय पद्यों का प्रयोग किया है। ये पद्य या तो रामायण, महाभारत तथा विविध काव्यों से उद्धृत किए गए हैं या उनकी माता पं० क्षमाराव की रचनाओं से उद्धृत हैं। कतिपय पद्य स्वयं लीलाराव द्वारा विरचित हैं लेकिन ऐसे पद्यों की संख्या बहुत कम है। ये पद्य उपदेशात्मक, नीतिपरक, भावोद्दीपक तथा राष्ट्रीयता के ओजस्वी स्वर से युक्त हैं। 'वीरभा', 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' तथा 'कटुविपाकः' के पद्यों में राष्ट्रीयता का स्वर मुखर हुआ है, जो राष्ट्र के प्रति व्यक्ति के त्याग एवं प्रेम को पुष्ट करते हैं। यहाँ स्वार्थ तथा व्यक्तिगत प्रेम को देश-प्रेम पर न्यौछावर किया गया है। राष्ट्र प्रेम की प्रांजल तथा जाज्वल्यमान रूपरेखा 'वीरभा' के सत्याग्रह के जुलूस के प्रयाण में मिलती है।[१०५] देश स्वातन्त्र्य का भावी जयघोष 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' में प्राप्त होता है।[१०६] देशहित के लिए स्वार्थ त्याग तथा स्वदेशी भावना 'कटुविपाकः' में द्रष्टव्य है।[१०७] देशप्रेम के अतिरिक्त मानवीय प्रेम की अभिव्यंजना भी लीलाराव के रूपकों में प्रयुक्त पद्यों में दृष्टिगत हुई है। विशेष रूप से पति प्रेम के उद्दीपक श्लोक उद्धृत किए गए हैं। ये श्लोक पति प्रेम के अभिव्यंजक तो हैं ही, साथ ही पति भक्ति का आदर्श प्रस्तुत करते हैं तथा लोकोदेश परक हैं।[१०८] श्लोक प्रायः तथ्य प्रतिपादक, प्रशंसा परक, उपदेशपरक तथा भावोद्दीपक हैं।

'तुकारामचरितम्', 'मीराचरितम्', 'ज्ञानेश्वरचरितम्' तथा 'हरिसिंहः' नामक संगीतिकाओं में समस्त श्लोक पं० क्षमाराव विरचित 'तुकारामचरितम्', 'मीरालहरी', 'ज्ञानेश्वरचरितम्' तथा 'हरिसिंहः' (कथापंचकम्) से उद्धृत किए गए हैं। 'परमभक्त शिवाजिराट्' रूपक में श्लोकों का उपजीव्य पं० क्षमाराव विरचित 'श्रीरामदास-चरितम्' है। इसी रूपक के चतुर्थ दृश्य में पं० क्षमाराव रचित 'तुकारामचरितम्' के आठवें सर्ग से चार श्लोकों का आहरण किया गया है।[१०९] प्रारम्भिक दो श्लोक तथा अन्तिम श्लोक शंकराचार्यकृत 'देव्यपराधक्षमापन

स्तोत्र' से लिए गए हैं।[११०] 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा', 'बालविधवा' के श्लोक पं० क्षमा रचित कथापंचकम् की 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' तथा 'बालिकोद्वाहसंकटम्' से लिए गए हैं। 'जयन्तुकुमाउनीयाः' के पद्यों का स्रोत बाल्मीकि रामायण,[१११] गीता[११२] तथा पं० क्षमाराव का श्रीरामदासचरितम्[११३] काव्य है। 'नारकण्डाश्रमः' के श्लोक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्'[११४] से लिये गए हैं। 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' तथा 'बालविधवा' के श्लोकों का आहरण कथापंचक की 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' तथा 'बालिकोद्वाहसंकटम्' से किया गया है। 'तुलाचलाधिरोहणम्' के पद्यों का उपजीव्य कुमारसम्भवम्,[११५] बाल्मीकि रामायण[११६] तथा उत्तर रामचरितम्[११७] हैं। 'वीरभा', के चार श्लोक पं० क्षमाराव विरचित सत्याग्रह गीता से लिए गए हैं।[११८] क्षणिक विभ्रमः का एक मात्र श्लोक महाभारत से उदधृत है।[११९]

संवाद रचना में **कमलारत्नम्** का द्विविध प्रयत्न रहा है—श्रव्य अथवा ध्वनि-नाट्य के अनुरूप संवाद रचना अथवा ध्वनि नाट्य के अनुरूप ध्वनि-निर्माण करना। अपने दोनों ही प्रयत्नों में वह सफल रही हैं। 'विवेकानन्द स्मृतिः', 'नचिकेता यमसंवादम्', 'गणयञ्छागः' तथा 'विवेकानन्दविजयम्' उनके रेडियो नाट्य हैं। इनमें भी 'विवेकानन्दस्मृतिः' तो पूर्णतः ध्वनि नाट्य है, जबकि 'नचिकेतो यम-संवादम्' 'विवेकानन्दविजयम्' तथा 'गणयञ्छागः' 'विक्रमवेतालनाटिका' के समान रंगमंच पर भी खेले जा सकते हैं। इस दृष्टि से इन संवादों की योजना अभिनेय व प्रभावशाली है। इन रूपकों में संवादों की मुख्यतः तीन विशेषताएँ दृष्टिगत होती हैं - (१) संवाद अभिनेय हैं, (२) वे अधिक लम्बे नहीं हैं। (३) उनके द्वारा पात्रों के चरित्र का पूर्ण विकार हो पाया है।

छोटे-छोटे संवादों के द्वारा कमलारत्नम् ने नाटकीय वातावरण का सफलता पूर्वक निर्माण किया है। यथा—

"............ सोमप्रभा पृष्ठतः गत्वा अम्बायाः ग्रीवायां बाहू निक्षिपति, सखी च समीपे उपविशति

सोमप्रभा—अम्ब ! त्वां किञ्चिद्वक्तुकामास्मि

माता— (आरतीं कुर्वती एव) कथय किमिच्छति ?

सोमप्रभा—प्रथमं मां प्रतिशृणु, श्रुत्वा न कुप्यसि।

माता—किमर्थं कोपयिष्यामि, कथय किमीप्सितं त्वया ?

सोमप्रभा—मातः, मया पितरौ प्रति अपराद्धम्।

माता—(आश्चर्येण—आरतीदीपं भूमौ निधाय) कथम् ?"[१२०] ए३वम्

यहाँ छोटे-छोटे वाक्य पूर्णतः अभिनेय, लोकबोध्य एवं नाटकीय वातावरण की सृष्टि में सफल हैं। सोमप्रभा का आन्तरिक, सन्ताप सफलतया अभिव्यक्त

हुआ है। माता के द्वारा कहे गए 'एवम्' पदम् में प्लुत स्वर का प्रयोग आश्चर्य के अतिरेक को व्यंजित कर रहा है।[१२१]

कहीं-कहीं संवाद लम्बे अवश्य हो गए हैं। ऐसा प्रायः सूच्य प्रसंगों में तथा दार्शनिक तथ्यों के प्रतिपादन में हुआ है, किन्तु उनमें शिथिलता नहीं दिखाई देती है।[१२२] 'विवेकानन्दस्मृतिः' में संवाद सूचनामात्र हैं। स्वराघात, बलाघात सहित वाचिक अभिनय होने से इन्हें संवाद कह सकते हैं। छोटे-छोटे वाक्यों में ये सूचनाएँ चार वाचक एवं वाचिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत की गई हैं। एक वाचक द्वारा एक सूचना देकर विरत हो जाने पर दूसरा वाचक अन्य सूचना देता है। ऐसा नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किया गया है। एक ही पात्र के स्वर में समस्त सूचनाएँ दी जाती तो अवश्य नीरसता आ जाती।[१२३]

स्वगत संवादों का प्रयोग भी नाट्यकर्त्री ने कुशलता से किया है। 'विक्रमवेतालनाटिका' में स्वगत संवाद दो बार, 'नचिकेतो यम-संवादम्' में एक बार तथा 'विवेकानन्दविजयम्' में तीन बार प्रयुक्त हुए हैं। विक्रमवेतालनाटिका में शव को बोलते देख कर सर्वश्राव्य रूप से नहीं, स्वगत कथन से राजा के सम्भ्रम को प्रकट किया है, जो उसके धीरोदात्तत्व के योग्य है।[१२४] इसी रूपक में एक अन्य स्थल पर राजा स्वगत कथन से वेताल के सम्मुख उसे श्मशान ले जाने का उपाय सोचता है।[१२५]

'नचिकेतो यम-संवादम्' में पिता द्वारा स्वयं को मृत्यु के लिए दिए जाने की बात सुनकर नचिकेता का आश्चर्य तथा चिन्तन स्वगत कथन से प्रस्तुत है।[१२६] इसी नाट्य में एक स्थल पर नाट्यधर्म जनान्तिक द्वारा यमराज नचिकेता की आत्मज्ञान-निष्ठा की प्रशंसा करते हैं।[१२७] इस स्थल पर यमराज व नचिकेता दो ही पात्र उपस्थित हैं। यमराज का कथन यहाँ नचिकेता के लिए ही अश्राव्य है, अतः यहाँ जनान्तिक के स्थान पर स्वगत कथन का प्रयोग होना चाहिए। 'विवेकानन्द-विजयम्' के प्रथम अंक में नरेन्द्र रामकृष्ण परमहंस की चर्चा से प्रभावित हैं। वह अपने इस भाव को अन्य पात्रों पर अभिव्यक्त करना नहीं चाहता, अतः यहाँ स्वगत कथन से उस प्रभाव की सूचना दी गई है।[१२८] इसी प्रकार तृतीय अंक में उद्धत कोटि का पात्र रहमान प्रकट में तो स्वामी विवेकानन्द का प्रभाव मानने को तैयार नहीं है किन्तु आन्तरिक रूप से उनका प्रभाव मानता है। इसी भाव की अभिव्यक्ति स्वगत कथन से की गयी है।[१२९] स्वगत भाषण के ये तीनों ही स्थल उपयुक्त हैं।

सम्बोधन प्रयोग—कमला रत्नम् ने प्रायः पारम्परिक सम्बोधन प्रयोगों का ही चयन किया है। माता के लिए अम्ब, मातः[१३०] पिता के लिए तात या पितः स्वामी के लिए भर्तः पुत्र के लिए वत्स, स्वामिनी के लिए भट्टिनी या स्वामिनि, पति के लिए आर्यपुत्र, पत्नी के लिए देवि[१३१] कहीं कहीं आजीविका व गुण के आधार पर सम्बोधन किये गये हैं। यथा यमराज की वाहन रक्षिका के लिए

महिषसेविके, यमराज के लिए मृत्युदेव, यमराज के द्वारा नचिकेता के लिए ब्राह्मण पुत्र। 'विक्रमवेतालनाटिका' में शूर के लिए शूर, विज्ञानी के लिए विज्ञानिन् तथा ज्ञानी के लिए भद्र युवक सम्बोधन किया गया है।[१३२] इस प्रकार सम्बोधन का पारम्परिक रूप ही कमलारत्नम् के रूपकों में दृष्टिगत हुआ है।

भाषा—कमलारत्नम् के रूपक भाषा की दृष्टि से अत्यन्त सरल है। उन्होंने कहीं भी भाषा को क्लिष्ट नहीं होने दिया है। उनका नाट्य रचना का उद्देश्य संस्कृत भाषा का प्रचार प्रसार करना है, अतः उन्होंने भाषा में सप्रयत्न सरलता रखी है। इनके रूपकों में शब्दों की अपेक्षा भावों का विशेष महत्व है। सरल शब्दों में मार्मिक भावों की व्यंजना इनकी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है। 'विक्रमवेतालनाटिका' में कन्या के खो जाने के कारण माता-पिता का शंका भाव सरल शब्दों में भली भांति अभिव्यंजित है।[१३३] भाषा में छोटी-छोटी वाक्यावलियाँ नाटकोचित एवं भावमयी हैं। 'नचिकेतोयमसंवादम्' में भूखे प्यासे नचिकेता के यमलोक में तीन दिन व्यतीत करने के कारण यमराज की अतिथि सत्कार में शिथिलता होने से उत्पन्न आशंका सफलतापूर्वक अभिव्यक्ति हुई है।[१३४] सम्यक् नाट्य निर्देशों से नाटकीयता व अभिनेयता भी दिखायी पड़ती है। भाषा समास रहित व अल्प समास वाली है। सर्वत्र उन्होंने पात्रों के स्तर एवं भावों के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। आध्यात्मिक वृत्ति प्रधान स्वामी विवेकानन्द की भाषा दार्शनिक पदावली से युक्त है।[१३५] सोमप्रभा से विवाह के इच्छुक विज्ञानी, शूर एवं ज्ञानी की भाषा क्रमशः दर्पयुक्त, ओजस्वी तथा मृदु है। नचिकेता के पिता की भाषा बालहठ को देखकर उपेक्षापूर्ण व झुंझलाहठ से भरी है।[१३६] आत्मज्ञान के उपदेशक रूप में यमराज की भाषा दार्शनिकतापूर्ण है।[१३७] अपनी भाषा को सहज एवं स्वाभाविक बनाने के लिए विविध स्थलों पर लोकोक्ति, मुहावरों एवं सूक्तियों का प्रयोग किया गया है। ऐसे प्रयोगों में एक ऐसी ध्वनि है जो अर्थ गाम्भीर्य के साथ-साथ नाटकीय वातावरण की सृष्टि एवं चरित्र विकास में सहायक है।[१३८] यथा—कर्णौ उद्घाट्य श्रूयताम्। स्ववीर्य गुप्ता हिमनोप्रसूतिः। पित्रा मात्रा सुतेन च पृथक्-पृथक् कृशरा पाचिता। सर्वबलानामुपरि तिष्ठति बाहुबलम्।

कहीं कहीं प्रतिष्ठित ग्रन्थों की पंक्तियाँ उद्धृत करके भाषा में प्रौढ़ता एवं प्रभाव उत्पन्न किया गया ह[१३९]—भाषा को सप्रयत्न सरल बनाया गया है, यथा - अस्पष्ट वाणी के लिए बुदबुदायते, रोटी बेलने के लिए बेलयिष्यामि,द्वार खटखटाने के लिए खटखाटयति आदि[१४०] आदि।

संस्कृतेतर भाषा-प्रयोग—श्रीमती कमलारत्नम् संस्कृत के अतिरिक्त हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला तथा अन्य विदेशी भाषाओं की ज्ञाता भी थी। इनके रूपकों में हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला आदि भाषाओं का प्रयोग भी दिखाई पड़ता है। 'विक्रमवेतालनाटिका' में तो इन्होंने एक सम्पूर्ण अनुच्छेद हिन्दी में लिखा

है ।[१४१] कई स्थलों पर संस्कृत संवादों के मध्य हिन्दी के संवाद डाल दिए गए हैं ।[१४२] 'विवेकानन्दविजयम्' में दो बंगला गीतों का प्रयोग हुआ है ।[१४३] इसके अतिरिक्त लन्दन, अक्टूबर मास, योरूप, अमेरिकायाः आदि आंग्ल भाषा के शब्दों का ग्रहण किया है ।[१४४] मौलवी, नमाज आदि उर्दू के पद भी यथावत् प्रयुक्त हैं ।[१४५] 'विवेकानन्द-स्मृतिः' में भी व्यक्ति वाचक संज्ञा, नगर तथा देश के नामों को यथावत् लिया गया है, यथा—कोलम्बो नगरात्, मद्रासनगरी, इंग्लैण्डदेशे, जोसेफीन, शिकागोतः लव इण्डिया आदि ।[१४६]

पद्य प्रयोग—कमलारत्नम् के नाट्य साहित्य में स्वरचित एवं उद्धृत दोनों ही प्रकार के छन्दों का प्रयोग उपलब्ध होता है । इनके द्वारा कही हुई बात का समर्थन, नैतिक अथवा आध्यात्मिक उपदेश दिया गया है । व्यावहारिक ज्ञान की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए प्रमाण स्वरूप श्लोक उद्धृत किया है ।[१४७] रेडियो नाट्य का प्रचुरता से प्रणयन करने के कारण रूपक को प्रभावी एवं मनोरंजक बनाने के लिए नेपथ्य संगीत का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है ।[१४८]

'गणयज्छागः' में नान्दी के अन्तर्गत तीन तथा दृश्यों में चार श्लोक प्रयुक्त हैं ।[१४९] इनमें गणना की महत्ता बतलाई है । द्वितीय दृश्य के द्वितीय श्लोक में छन्दोभंग हुआ है । अन्तिम श्लोक प्राणिमात्र की मंगल कामना से सम्बद्ध है । श्लोकों मे अनुष्टुप्, बसन्ततिलका तथा मालिनी छन्दों का प्रयोग हुआ है । ये सभी श्लोक स्वरचित हैं । 'विवेकानन्दस्मृतिः' में तीन पद्य नाट्यकर्त्री के स्वरचित दो मंत्र उपनिषदों से तथा एक पद्य भर्तृहरि के नीतिश्लोकों से उद्धृत हैं ।[१५०] इसी रूपक में कुछ पद्यांश शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा के २६वें अध्याय तथा कठोपनिषद् से उद्धृत हैं । 'विक्रमवेतालनाटिका' में छः अनुष्टुप् स्वरचित हैं । एक मंत्र ऋग्वेद से उद्धृत है ।[१५१] 'नचिकेतोयमसंवादम्' में कठोपनिषद् से उन्नीस मंत्र विषय की प्रामाणिकता के लिए ग्रहण किए गए हैं ।[१५२] एवं 'विवेकानन्दविजयम्' में सत्रह श्लोक श्रीधर भास्कर वर्णेकर विरचित 'विवेकानन्दविजयम्' से यथावत् ग्रहण किए गये हैं ।[१५३] इस प्रकार कमलारत्नम् के इन स्व रचित श्लोकों से काव्य कौशल का तथा उद्धृत श्लोकों से शास्त्र ज्ञान की विशदता का परिचय प्राप्त होता है ।

कमलारत्नम् की रचनाओं में कतिपय व्याकरणात्मक त्रुटियाँ भी दिखाई पड़ती हैं । 'तदाशूरः मत्सहायः तम् अयोधयत्'[१५४] इस वाक्य में लङ्लकार की विवक्षा में अयोधयत् के स्थान पर अयुध्यत शुद्ध रूप बनेगा क्योंकि युध सम्प्रहारे धातु आत्मने पदी तथा अनिट् होती है । 'सार्वधातुकमपित्'[१५५] से दिवादिभ्यः श्यन् को ङितवत् मान लेने से गुण भी नहीं होगा । साथ ही यह धातु अकर्मकतया प्रयुक्त होती है ।[१५६] जिसके साथ युद्ध किया जाता है उसमें 'सह' के योग में तृतीया विभक्ति का विधान किया जाता है ।[१५७]

'वेतालं स्कन्धेवहन्' [१५८] में वह् धातु द्विकर्मक है।[१५९] अतः द्विकर्मक धातु के योग में अकथितं च सूत्र से 'स्कन्ध' द्वितीयान्त होना चाहिए। सप्तम्यन्त नहीं। "सूत्रधारः—[१६०] तस्यवचनं अश्रुत्वैव छागः नर्तमानः गायति"[१६१] में नर्तमानः के स्थान पर नृत्यन् प्रयोग होना चाहिए। शानच् प्रत्यय 'तङ्नावात्मनेपदम्' से आत्मनेपदी धातुओं से होता है। नृती गात्रविक्षेपे धातु परस्मैपदी है अतः इससे शतृ प्रत्यय का विधान होगा। ये अशुद्धियाँ नाट्यरचनाओं के गुणों को देखते हुए अत्यल्प हैं। अतः नाटकीयता में अवरोध न करने से नगण्य हो गई हैं।

श्रीमती वनमाला भवालकर के गद्य प्रधान रूपकों में संवाद बड़े-बड़े होते हुए भी वाक्य संरचना के छोटा होने के कारण बोध्यता एवं अभिनेयता बनी रहती है, जिससे प्रभावशालिता बढ़ी है, कथानक को गति मिली है तथा पात्रों के चरित्र का क्रमिक विकास हुआ है। व्यंग्य-विनोद से युक्त कथनों में वाग्वैदग्ध्य चमत्कार को उत्पन्न करता है।[१६२] प्रथम दृश्य में शान्ता सुधीर के भविष्य के प्रति चिन्तित है तथा भास्कर चाय पान को उत्सुक है । यहाँ शान्ता के कथन में व्यंग्य तथा भास्कर के वचन में विनोद की अनुभूति होती है।[१६३] बाल एकांकी होने से 'अन्नदेवता' के संवाद अपेक्षाकृत सरल तथा छोटे हैं।[१६४] उपदेशात्मक स्थलों पर छोटे-छोटे वाक्यों में एक ही पात्र के लम्बे-लम्बे भाषण चलते हैं।[१६५] संवादों में पात्रों की मनोवृत्ति पूर्णतः अभिव्यक्त हुई है, यथा—'पाददण्डः' में निशा के संवाद से आत्महीनता की ग्रन्थि तथा सुधीर की प्रेयसी ललिता के प्रति ईर्ष्या अभिव्यक्त हुई है। [१६६]

भाषा—वनमाला भवालकर के रूपकों में भाषा भावुकतापूर्ण, साहित्यिक एवं अलंकृत होने पर भी सरल तथा सहज बोधगम्य है।[१६७] पात्र-भेद तथा विषय-भेद से भाषा परिवर्तित भी हुई है। भास्कर की भाषा सर्वत्र उसकी विनोदी तथा विश्वासी प्रकृति के अनुरूप हास्यपूर्ण तथा आशामयी है।[१६८] शान्ता की भाषा सर्वत्र सुधीर की चिन्ता से युक्त होने के कारण चिन्ता व निराशा से भरी है।[१६९] 'अन्नदेवता' में लीला की भाषा बालहठ के अनुरूप अभीष्ट वस्तु के प्रति आग्रहपूर्ण है।[१७०] अवस्था भेद से भी पात्रों की भाषा परिवर्तित हुई है यथा - आरम्भ में ललिता की भाषा सुधीर के प्रति स्नेहमयी है परन्तु जब वह सुधीर को विश्वासघाती मानती है तब सुधीर के प्रति उसकी भाषा में आक्रोश सहज देखा जा सकता है। भाषा में नाटकीयता तथा व्यावहारिकता उत्पन्न करने के लिए संवादों से पूर्व पर्याप्त नाट्य निर्देश दिए गए हैं[१७१] जैसे - सोद्वेगम्, सरोषम्, साश्रुकण्ठा, सलज्जम्, ससंभ्रमम्, सस्मितम्, सोत्साहम्, सहास्यम्, कर्णौपिधायसहर्षम्, गाम्भीर्येण, साश्चर्यम्, सचिन्तम्, निश्वस्य, खिन्नं, हसित्वा आदि। बालनाटिका होने से 'अन्नदेवता' की भाषा अपेक्षाकृत सरल व बोल चाल के निकट है। 'पाददण्डः' में स्थान-स्थान पर लोकोक्तियों, मुहावरों एवं

लौकिक-न्यायों के प्रयोग से भाषा को मण्डित किया है—हम् ते हि नो दिवसागताः।[१७२] हम् ममेदमाकाशभाषितं कस्यापिश्रवण-पुट-प्रवेशमपि नार्हति।[१७३] परिहीयते गमनवेला।[१७४] अलं दूराधिरोहिण्या एवमाशया।[१७५] भवतु ते मुखं शर्करापूरितम्।[१७६] शान्ते ! अरुण्यरुदितमेव समुपाश्वासनम्।[१७७]

सम्बोधन प्रयोग :— सम्बोधन प्रयोगों में पारम्परिक एवं अर्वाचीन दोनों ही प्रकार के सम्बोधन देखने को मिलते हैं। भावानुरूप भी सम्बोधनों में परिवर्तन दिखाई पड़ता है। पति भास्कर के द्वारा पत्नी को नामतः सम्बोधन किया जाता है लेकिन पत्नी शान्ता ने बिना किसी सम्बोधन के भवत् शब्द से ही काम चलाया है किन्तु ऐसे प्रयोग में भी अस्वाभाविकता नहीं प्रतीत होती। सुधीर भास्कर को आर्य कहता है जो उसका साला है। शान्ता तथा भास्कर उसे तात पद से सम्बोधित करते हैं। सुधीर शान्ता (बहिन) को अक्क कहता है। सुधीर अपनी प्रेयसी ललिता को नामतः पुकारता है। ललिता अपने प्रेमी सुधीर को नामतः सम्बोधन करती है। उसके सम्बोधन में आधुनिकता की छाप है। कहीं-कहीं वह अति स्नेहवश व सुधीर को सुधी तथा सुधीर उसे ललि कहता है। क्रोध में सुधीर के प्रति ललिता के सम्बोधन बदल जाते हैं तथा वह अनार्य, दुष्ट, कृतघ्न आदि सम्बोधन पदों का प्रयोग करती है।

पद्य प्रयोगः—'पाददण्डः' में नाट्यकर्त्री ने स्वरचित दो गीतों का प्रयोग किया है। भावोद्रेक की दृष्टि से दोनों गीत महत्वपूर्ण हैं। निशा सुधीर से प्रेम करती है लेकिन सुधीर उससे नहीं करता है। वह अपनी इस मनोव्यथा को गीत के रूप में व्यक्त करती है।[१७८] इस गीत के दोनों पद्य पादाकुलिका छन्द में निबद्ध हैं। अन्तिम पद्य आधुनिक गीति है। ललिता एवं सुधीर के मध्य प्रेम विषयक भ्रान्ति के निराकरण से सुधीर द्वारा ललिता को पत्नी रूप में स्वीकार करने पर उल्लसित ललिता शान्ता एवं सुधीर के आग्रह पर गीत सुनाती है। यह गीत उसके आन्तरिक हर्षातिरेक का सूचक है।[१७९]

अन्नदेवता में चार पद्य प्रयुक्त हैं प्रथम पद्य नाट्यकर्त्री का स्वरचित है जो बालिका लीला की शीघ्र युवती बनने कीआतुरता का सूचक है।[१८०] अन्य तीन पद्यों में से दो पद्य अन्न का आदर करने के उपदेश के रूप में प्रस्तुत हैं। अन्तिम उद्धृत पद्य प्राणिमात्र की हितकामना का प्रतिपादक भरत वाक्य है। नाट्यकर्त्री द्वारा रचित पद्य उसकी कवित्व शक्ति के परिचायक हैं।

संगीतिकाओं की भाषा—संगीत नाट्य 'रामवनगमनम्', 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' तथा 'सीताहरणम्' पूर्णतः पद्यात्मक है। 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' की भाषा कालिदास के समान ही सरल एवं माधुर्यगुण विशिष्ट है। बहुधा कालिदास के पद्यों का ही छन्द परिवर्तन कर अथवा उनमें कतिपय शब्दों का परिवर्तन कर प्रस्तुत किया गया है,[१८१] यथा—

"जयतु जयतु नगराजो हिमवान्
जयतूत्तरदिग्देवतात्मकः ।
पूर्वापरजलनिधीवगाह्य
स्थितः पृथिव्या मानदण्ड इव ॥ - पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० १ ।"

मूलकाव्य के पद्यों में किया गया परिवर्तन नाट्यकर्त्री के काव्य कौशल को तो प्रकट करता ही है, उसमें व्यापारात्मकता उत्पन्न कर देने से नाट्य - नैपुण्य को भी व्यक्त करता है।[१८२]

'रामवनगमन्' रामायण की तथा 'पार्वतीपरमेश्वरीयम् कालिदास के कुमारसम्भव की छाया प्रतीत होते हैं। इस दृष्टि से श्रीमती भवालकर को छाया कवि कह सकते हैं।[१८३] संगीत -नाट्यों की भाषा न तो अधिक क्लिष्ट है और न ही अति सरल। छन्दों को विविध रागों एवं तालों में बाँधा गया है। गीत के साथ ही छन्द, राग व ताल का निर्देश किया गया है। एक छन्द में निबद्ध एक अथवा एकाधिक पद्यों के समूह को एक गीत कहते हैं। वह पूरा पद्य समूह (सन्दानितक, कलापक कुलक आदि) एक ही प्रकार के राग एवं ताल से सम्बद्ध हैं। इस प्रकार 'रामवनगमनम्' में कुल ४० गीत हैं जो ४० विभिन्न रागों में निबद्ध हैं। २२ छन्दों का प्रयोग किया गया है - पादाकुलक, उपजाति, अनुष्टुप्, मन्दाक्रान्ता, हरिणी, वियोगिनी, वंशस्थ, मालिनी, आर्या, द्रुत विलम्बित, विद्युन्माला, भुजंग प्रयात, शार्दूलविक्रीडितम्, इन्द्रवज्रा, मत्तमयूर, अष्टपदी भ्रमरावर्तनी गीति, अष्टपदी अग्न्यावर्तनी, शिखरिणी, पृथ्वी, बसन्त तिलका, अष्टपदी, पद्यावर्तिनी तथा स्रग्धरा।

४० राग हैं - यमन, हमीर, सारंग, पटदीप, पीलु, बसन्त, खमाज, देशकार, माण्ड, आसावरी, नायकी कान्हडा, पूरिया धनाश्री, विहाग, अडाणा, शंकरा, केदार, तिलंग, देस,कलावती, तिलककामोद, खम्बावती, जोगी, दुर्गा, सोहनी, देशी, जयजयवन्ती, कर्नाटकी, मिश्रपीलू, भीमपलासी, बहार, दरबारी कान्हडा, मुलतानी, वागेश्री, तोडी, मधकोंस, मिश्रमाण्ड, मालकोंस तथा भैरवी।

तालों में त्रिताल, झपताल, दादरा, धुमाली, कहरावा, एकताल, तीव्रा, दीपचन्दी कुल आठ तालों का प्रयोग हुआ है। 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' में बत्तीस छन्द, पैसठ गीत, पैसठ राग व ग्यारह तालों का प्रयोग हुआ है।

सीताहरणम् में भी ६५ पद्य इन्हीं रागों व तालों में बद्ध हैं। संवादों का पूर्ण अभाव है। नाट्यनिर्देश भी नहीं दिए गए हैं। नाट्यकर्त्री के कथ्य पर ही पात्र मूकभावाभिनय करते हैं।

रागों के चयन में नाट्यकर्त्री ने पात्रों के मनोभावों, अवस्था एवं प्रकृति के औचित्य को ध्यान में रखा है, जैसे—

'सीताहरणम्' एवं 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' में बसन्त ऋतु का वर्णन वसन्त राग में है।[१८४] पार्वतीपरमेश्वरीयम् में ही रति विलाप वियोगिनी छन्द तथा जोगिया राग में है।[१८५] रामवनगमन के अवसर पर खिन्न कौशल्या की प्रतिक्रिया गम्भीर प्रकृति के सोहनी राग में निबद्ध है।[१८६] यही कौशल्या की व्यथा दुःखान्त प्रकृति के राग तोड़ी के माध्यम से प्रस्तुत है।[१८७] इस प्रकार के प्रयोग नाट्यकर्त्री के संगीत नैपुण्य के परिचायक हैं।

संवादयोजना– संगीतिकाओं की संवादयोजना गीतिनाट्य शैली के अनुरूप है। संवाद पूर्ण रूपेण पद्यात्मक है अर्थात् एक पात्र पद्य में बोलता है और दूसरा पात्र भी पद्य में ही उत्तर देता है।[१८८] संवाद सरस हैं एवं शैथिल्य रहित हैं। कहीं-कहीं एक ही पद्य के विभिन्न चरण भिन्न-भिन्न पात्रों के संवाद के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। पद्यात्मक संवादों के माध्यम से ही कथा तथा चरित्र का विकास कुशलता से किया गया है।[१८९]

देवकी मेनन् के रूपकों में कुचेलवृत्तम् तथा सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् में संवाद अधिकांशतः पद्य में ही प्रयुक्त हैं। गद्य का प्रयोग बहुत ही कम मात्रा में हुआ है। इनके गीत आरभि, धन्यासि, मुखारि, हुसेनि, कल्याणी, काम्बोदि, चेञ्चुरुट्टि मणिरंगु आदि दक्षिण भारतीय रागों में निबद्ध है, जो नाट्यकर्त्री के दक्षिण भारतीय संगीत नैपुण्य के परिचायक हैं। गद्य संवाद सरल तथा सुबोध हैं। वाक्य छोटे छोटे तथा भावानुकूल हैं।[१९०] इनके संवादों का प्रधान वैशिष्ट्य यह है कि संवाद कथावस्तु को आगे बढ़ाने के साथ मुख्य पात्र के चरित्रोद्घाटन में सहायता करते हैं। संवादों मे आंगिक अभिनेयता कम तथा वाचिक अभिनेयता अधिक है।[१९१]

'कालीदर्शनम्' में स्वगत एवं एकोक्तियों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है। रामकृष्ण परमहंस की उन्मत्तावस्था की वार्ता सुनकर शारदा देवी का अपने पति से मिलने के लिए उत्कण्ठित होना स्वगत भाषण से अभिव्यक्त किया है।[१९२] अन्यत्र महिलाएँ चैतन्य जयन्ती पर शारदा को गंगास्नान के लिए कालीघाट चलने को कहती हैं। इससे उत्पन्न शारदा देवी की प्रसन्नता व सन्तुष्टि आत्मगत कथन से अभिव्यक्त हुई है। वस्तुतः अपने से अधिक अवस्था वाली महिलाओं के सामने वह अपनी पति दर्शन की उत्कण्ठा व सन्तुष्टि को अभिव्यक्त नहीं कर सकती थी।[१९३] द्वितीय अंक में गंगा-स्नान को जाती हुई शारदा को ज्वराक्रान्त होने से रात्रि में मार्ग में ही विश्राम करना पड़ता है। यहाँ प्रियतम के दर्शन के लिए उत्कण्ठित शारदा की एकोक्ति के लिए नाट्यकर्त्री ने आत्मगत नाट्य निर्देश दिया है।[१९४] भावुकतापूर्ण यह एकोक्ति कथावस्तु के अनुरूप तथा प्रभावशाली है। द्वितीय अंक में सोती हुई शारदा की प्रशंसा देवी काली करती है। सोते हुए व्यक्ति के सम्मुख एकालाप अस्वाभाविक लगता है अतः यहाँ

स्वगत कथन ही उचित है।[१९५] स्वप्न में देवी के साक्षात्कार तथा स्पर्श से उल्लसित शारदा एकालाप करती हैं। यहाँ भी नाट्यकर्त्री ने 'आत्मगतम्' नाट्यनिर्देश दिया है जो स्वगत न होकर एकोक्ति है।[१९६]

भाषाः—नाट्यकर्त्री की भाषा सुगठित, सशक्त निर्दोष तथा सहज बोध्य होने से सरल है। अलंकरण एवं साहित्यिकता रहित होने पर भी यह दर्शकों पर प्रभाव डालने में समर्थ है। यथा—"शारदा-शान्तं पापम्। यत्र-यत्र गम्यते तत्र तत्रैषा वार्तैव हृदयशल्यायमाना श्रवणपथं प्रविशति। उत्कण्ठितास्मि पतिं द्रष्ट्वा तस्य शरीरस्थितिं तत्त्वतो ज्ञातुम्।"[१९७]

संगीतिकाओं की भाषा भी सरल, सरस तथा प्रभावशाली है। कहीं-कहीं वह अप्रयत्न निर्वृत्य अलंकार-प्रयोग तथा भावावेग से युक्त है।[१९८]

सम्बोधन प्रयोग—नाट्यकर्त्री ने पारम्परिक सम्बोधनों का ही प्रयोग किया है, यथा—वयोवृद्ध महिलाओं, पिता एवं कालीदेवी के द्वारा शारदा के लिए 'वत्से' पद का प्रयोग किया गया है। शारदा अपने पति को तात कहती है। महिलाएँ एक दूसरे को नाम से तथा आर्ये पद से सम्बोधन करती हैं।

पद्य प्रयोग—'कालीदर्शनम्' में स्वरचित पाँच अनुष्टुप् एवं एक मालिनी छन्द का प्रयोग हुआ है। रूपक के आरम्भ में नान्दी के अन्तर्गत चार अनुष्टप् देवी, रामकृष्ण परमहंस तथा शारदा देवी की स्तुतिपरक नेपथ्य से प्रस्तुत किए गए हैं। नाट्य के अन्त में रामकृष्ण परमहंस का भरत वाक्य मालिनी छन्द में नेपथ्य से प्रस्तुत किया गया है। एक अन्य अनुष्टुप् काली देवी द्वारा सोती हुई शारदा देवी की प्रशंसा में व्यक्त किया है।[१९९]

श्रीमती रत्नमयी दीक्षित ने संवादों के आरम्भ में पर्याप्त नाट्यनिर्देश दिए हैं। पात्रों के संवाद लम्बे-लम्बे होने के कारण संवादों में अस्वाभाविकता आ गई है तथा अभिनय की गति भी शिथिल हो गई है। अनेक स्थानों पर संवाद भाषण जैसा हो गया है,[२००] किन्तु यह कमी तो मूल मराठी नाटक की है। रत्नमयी दीक्षित तो उसकी संस्कृत रूपान्तरकार हैं। अतः यह उनका दोष नहीं कहा जा सकता। जहाँ रत्नमयी ने छोटी-छोटी उक्ति-प्रत्युक्तियों को रखा है, वहाँ वे प्रभावशाली हैं। ऐसे प्रयोग अपेक्षाकृत कम हैं।[२०१] 'भूमिकन्या' में संवादों द्वारा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्घाटन प्रधानतः किया गया है। द्वितीय अंक के प्रथम दृश्य के सीता-शम्बूक संवाद में सीता के संवाद सरलता, सौम्यता, सहृदयता, उदारता तथा सांवेगिक कोमलता के परिचायक हैं, जबकि शम्बूक के संवाद उसकी उत्पीड़ित शोषित मनोवृत्ति के द्योतक हैं। इसी प्रकार विजय(सेवक) के संवाद उसके स्वार्थीपन, क्रूरता एवं निष्ठुरता के सूचक हैं।[२०२] राजगुरु के संवाद उन्हें अहंकारी क्रूर एवं दम्भी सिद्ध करते हैं।[२०३] उर्मिला के संवाद आरम्भ से अन्त तक भाग्यहीना नारी के आक्रोश एवं विवशतापूर्ण अन्तर्द्वन्द्व के परिणाम हैं, जिनमें कहीं ओज भी है कहीं हीनता भी है।[२०४] लक्ष्मण

के संवाद भ्रातृप्रेम के, बालमीकि के संवाद प्राणिमात्र के प्रति मंगलेच्छा के, राम के संवाद लोकाराधन की बाध्यता से सीता के प्रति कोमल भाव होने पर भी निष्ठुरतापूर्ण हैं। जो पात्र जैसे मनोभाव वाला है उसके वैसे ही संवाद रखे गए हैं। यथा—आरम्भ में सीता राम के प्रति सुकोमल एवं उल्लसित भावों से युक्त हैं[२०५] किन्तु बाद में अकारण परित्याग जन्य खिन्नता से आक्रोशपूर्ण हैं।[२०६] सम्पूर्ण भूमिकन्या में भावुकतापूर्ण संवादों की प्रचुरता है। पात्रों की मानसिक उथल-पुथल से सभी कथोपकथन अत्यन्त रोचक व मार्मिक हैं।

सम्पूर्ण नाटक में स्वगत संवाद का प्रयोग चतुर्थ दृश्य में दो बार हुआ है। प्रथम स्वगत भाषण भरी सभा में राम द्वारा सीता परित्याग सम्बन्धी बारह वर्ष पूर्व की घटनाओं के स्मरण रूप में हैं।[२०७] द्वितीय स्थान पर सीता निष्कासन के बाद राम का स्वगत भाषण सीता के प्रति उनकी विह्वलता, अपराध बोध तथा प्रेम को प्रकट कर रहा है।[२०८] वस्तुतः स्वगत कथन द्वारा राम की हृदयावस्था का परिचय देना गरिमापूर्वक उनके चरित्र के अनुकूल है। मुखर अभिव्यक्ति में इस औदात्य का ह्रास हो जाता है। द्वितीय अंक में सीता का स्वगत कथन अत्यन्त सुन्दर है। शम्बुक के प्रति राजगुरु की क्रूरता देखकर तथा उसे तप से वंचित करने की प्रवृत्ति देखकर सीता विश्वामित्र का स्मरण करती हुई राजगुरु के व्यवहार के प्रति किंचित् हतप्रभ होती है। उसके इस भाव की अभिव्यक्ति नाट्यकर्त्री ने आत्मगत अथवा स्वगत कथन से करके 'आत्मगतमिव' कथन से की है। जो अधिक सुन्दर प्रतीत होती है।[२०९] यह कथन प्रकाश में होने पर भी अन्य पात्र से न कह कर स्वयं से कहा गया है जिसे दूसरा सन्निकटस्थ पात्र भी सुन लेता है।

सम्बोधन प्रयोग—नाटक में रामायण की प्रख्यात कथावस्तु का गुम्फन होने से तदनुरूप सम्बोधन भी पौराणिक हैं। सीता के लिए आर्ये, देवि, राम के लिए राजन्, भगवन्, देव आदि सीता के द्वारा राम को आर्यपुत्र आदि सम्बोधन प्रयुक्त हैं। छोटे को वत्स, तात तथा नाम लेकर सम्बोधन दिया गया है। सर्वत्र सम्बोधनों का ऐसा ही सामान्य रूप है। वक्ता या श्रोता की विशेषता को प्रकट करने वाले विशेष सम्बोधन दृष्टिगत नहीं होते हैं।

भाषा—रत्नमयी की भाषा सरल एवं साहित्यिक प्रयोगों से रहित है। लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग भी नहीं हुआ है। यहाँ पात्रों के मनोभावों के अनुसार भाषा में कोमलता या ओजस्विता की अभिव्यंजना शक्ति द्वारा मार्मिक भावों को सरसता के साथ प्रस्तुत किया गया है। ऐसे स्थलों पर काव्य सौन्दर्य भी व्यक्त हुआ है।[२१०] कथावस्तु के गम्भीर होने से नाटक में हास्य के लिए अवकाश नहीं है परन्तु व्यंग्यात्मक प्रयोग गम्भीरता एवं भावुकतापूर्ण हैं।[२११] निष्कर्षतः भूमिकन्या में भाषा सरल सुबोध होने के साथ सशक्त है।

पद्य प्रयोग—भूमिकन्या में नाट्यकर्त्री द्वारा रचित पद्यों का प्रयोग नहीं हुआ है। तीसरे एवं चतुर्थ अंक के आरम्भ में कथावस्तु से सम्बद्ध बाल्मीकि रामायण के कतिपय श्लोकों को उद्धृत किया गया है। राम के द्वारा परित्यक्त सीता को बाल्मीकि द्वारा सान्त्वना दिए जाने के अवसर पर ये तीनों श्लोक नेपथ्य से पढ़े जाते हैं।[२१२] चतुर्थ अंक के आरम्भ में भी तीन श्लोकों का नेपथ्य से रामचरित के गान के रूप में वटुकों द्वारा पाठ हुआ है जो राम के भावोद्दीपक हैं।[२१३] उन्हें सुनकर उन्हें सीता की स्मृति हो आती है। इस प्रकार उद्धृत पद्य पात्र के मनोभावों की गहनता को उद्दीप्त करने में सफल रहे हैं।

श्रीमती वीणापाणि पाटनी के रूपकों में संवाद सामान्य रूप से आधुनिक एकांकी शिल्प के अनुरूप ही संक्षिप्त, तीव्र गति तथा प्रभावोत्पादक हैं।[२१४] सरलता एवं स्वाभाविकता से पूर्ण ये संवाद चरित्रों के उद्घाटन के साथ ही कथासूत्र को आगे बढ़ाने में सफल हैं। पात्रों की प्रकृति एवं चरित्र के अनुरूप ही उनका निर्माण हुआ है, यथा—'प्रतिबुद्धा' एकांकी में ललित द्वारा दिया गया घड़ी का एलार्म छः बजे के स्थान पर सात बजे बजता है। अतः कार्यालय जाने में विलम्ब होने से एलार्म का समय बदलने वाले के प्रति उसका क्रोध स्वाभाविक है।[२१५] यहाँ ललित के संवाद उसकी झुँझलाहट पूर्ण प्रकृति के अनुरूप हैं। संवाद सहज, अभिनेय एवं शिष्ट हास्य व्यंग्य से सम्पन्न भी हैं। 'निम्बपत्राणि' में पकते हुए चावलों में से निकलती वद-वद की ध्वनि को सुनकर व्याकरण की सृष्टि से उसे अशुद्ध मानने वाले वैदुल के संवाद इस स्थल पर शिष्ट हास्य के उदाहरण हैं।[२१६] विषय को प्रभावी बनाने के लिए संवादों में स्थान-स्थान पर अनेक प्रसिद्ध ग्रन्थों की उक्तियों को आवश्यकतानुसार ग्रहण किया है,[२१७] यथा—सत्यं वद, धर्म चर, स्वाध्यान्मा प्रमदः, सत्यं ब्रूयात, प्रियं ब्रूयात, विप्रतिषेधे परं कार्यम्, यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पुत्र पठ व्याकरणम्, प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेतसी, आयुर्वैधृतमति, न भुञ्जीत क्षार-लवण-मधुमांसानि आदि।

'मधुराम्लम्' में एकोक्तियों एवं स्वगत संवादों का सुन्दर प्रयोग समुदित हुआ है। निम्बपत्राणि के द्वितीय दृश्य में वैदुल की, तथा तृतीय दृश्य में शारद्वत की एकोक्तियाँ हास्योत्पादक तथा नाटकीय दृष्टि से प्रभावी हैं। वैदुल पकते हुए चावलों मे से लट् लकार 'वदामि' के स्थान पर लोट लकार की 'वद वद' ध्वनि को अशुद्ध मानकर परेशान होकर एकाकी सम्भाषण करता है।[२१८] शारद्वत 'घृते पात्रं चेत् न' विषय पर अकेले ही चिन्तन व तर्क करता है तथा घी, को नष्ट कर देता है।[२१९] 'नारददौत्यम्' में दो स्थलों पर स्वगत भाषण का प्रयोग हुआ है। नारद की योजना गुप्तरूप से भारतीयों के क्रिया-कलापों का ज्ञान प्राप्त कर उनकी सूचना इन्द्र को देना है जिसके लिए वे स्वंय को अदृश्य रखने का विचार करते हैं। इसी को स्वगत कथन के माध्यम से कहा गया है ताकि अन्य पात्रों को

उनके नारद होने का ज्ञान न हो,[२२०] जो नाट्यदृष्टि से सर्वथा उचित है। दूसरा स्वगत कथन भी इसी गुप्त योजना का अंग है।[२२१]

भाषा—श्रीमती वीणापाणि पाटनी के एकांकियों में भाषा सामान्य रूप से एक स्तरीय होते हुए भी पात्र, विषय परिस्थति देश व काल के अनुरूप परिवर्तित होती गई है। दो पात्रों की भाषा में उनके स्वभाव, स्तर एवं योग्यता की दृष्टि से सामाजिक अन्तर स्पष्टत : ज्ञात होता है। 'निम्बपत्राणि' में वैदुल, शारद्वत तथा जीवक, 'प्रतिबुद्धा' में ललित व सुलेखा की 'यथार्थ्यगरलम्' में देवदत्त एवं पूर्णिमा की, कवि कालिदासीयम् में कालिदास तथा अन्य कवियों की भाषा में स्पष्टतः अन्तर प्रतीत होता है। यथा—निम्बपत्राणि में शारद्वत नैयायिक है। अतः उसकी भाषा तार्किक है, वैयाकरण वैदुल व्याकरणानुरूप भाषा का प्रयोग करता है। वैद्य जीवक की भाषा सर्वत्र पथ्य-कुपथ्य की चिन्ता से युक्त दिखाई पड़ती है।[२२२] श्रमती पाटनी की भाषा का एक प्रमुख गुण है— उसकी व्यावहारिकता। दैनिक जीवन में व्यवहृत पदावली का उन्होंने बहुलता से प्रयोग किया है। इससे भाषा में स्वाभाविकता आई है एवं नाटकीयता उत्पन्न हुई है। प्रतिबुद्धा एकांकी में भोजन पकाने की गैस समाप्त हो जाने पर पति- पत्नी के कलह को स्वाभाविक भाषा में प्रस्तुत किया गया है।[२२३]

भाषा को समृद्ध एवं प्रभावी बनाने के लिए स्थान-स्थान पर सुन्दर मुहावरों कहावतों और न्यायों का प्रयोग किया गया है।[२२४] यथा—प्रथमग्रासे मक्षिकापातः। क्षुत्क्षामकण्ठस्योदरे मूषकाः यातायातं कुर्वन्ति। भित्तीनामपि श्रोत्राणि भवन्ति। न्यूनेऽपि कालातिपाते वज्रमिव पातयति। हन्त। अद्य कस्य मुखं वीक्ष्य जागरम्। निद्राभावे गगनस्थानि नक्षत्राणि गणयन् रात्रीः यापायिष्यामि। ते ते महानुभावा ....ज्योतिषधौरीणामुपकण्ठं मक्षिका गुडमिवपरितोभ्रमन्ति। मा ढपोरशङ्खो भूया। वदाम्येव ददामिनो। प्रवालोदय एव कुठाराघाता सर्वे कारावासस्य वातमनुभविष्यामः। स्थालीपुलाकेन स्तोकेनैव सर्वमवगतम्।

पद्य प्रयोग—नाट्यकर्त्री ने पद्यों का प्रयोग स्तोत्र रूप में किया है।

जैसे—मंगलं भगवान् विष्णुर्मंगलं गरुणध्वजः।
मंगलं पुण्डरीकाक्षो मंगलायतनो हरिः ॥[२२५]

कार्यारम्भ के पूर्व में मंगलाचरण के रूप में यह पद्य 'निम्बपत्राणि' एकांकी के आरम्भ में नान्दी के रूप में पढ़ा गया है। 'प्रतिबुद्धा' में प्रातःकाल में एलार्म घड़ी से उद्बोधक ध्वनि सुनाई पड़ रही है तथा रेडियों से वन्दना गान की ध्वनि आ रही है। यही भाव पद्य में व्यक्त है।[२२६]

'यथार्थ्यगरलम्' में प्रथम नान्दी पद्य नीराजन सम्बन्धी है, एकांकी का आरम्भ भी नीराजना से ही होता है लेकिन यह नान्दी पद्य पूर्वरंग का अंग न होकर दृश्य का ही अंग है।[२२७] 'नारददौत्यम्' में तीन पद्य हैं। प्रथम पद्य नेपथ्य से गाई नान्दी है।[२२८] दूसरा पद्य भी वातावरण के अनुरूप नेपथ्य से प्रस्तुत है।[२२९] गायन्ति देवा-पद्य को गाते हुए नारद स्वर्ग लोक से भारतभूमि पर उतरते हुए स्वयं को धन्य मानते हैं। परन्तु बाद में यहाँ की स्थिति से अत्यन्त दुःखी होते हैं। नाट्यकर्त्री ने सम्भवतः भारत की वर्तमान दशा की तुलना के लिए ही इसे उद्धृत किया है। दूसरा श्लोक स्वर्ग से भूमि पर आते ही पृथ्वी स्पर्श करने के कारण पृथिवी से क्षमायाचना करते हुए नारद ने कहा है।[२३०] 'कविकालिदासीयम्' में सात पद्य हैं प्रथम पद्य कवि की प्रशंसा परक हैं।[२३१] अन्य पद्य राजा भोज की गोष्ठी में कवि गणों द्वारा कवित्व प्रदर्शन अथवा समस्यापूर्ति के लिए पढ़े गए हैं। इनको भोज प्रबन्ध[२३२] तथा रघुवंश[२३३] से ग्रहण किया गया है।

सम्बोधन प्रयोग—'कवि कालिदासीयम्' में पारम्परिक सम्बोधन ही दृष्टिगत होते हैं, यथा—राजन्, कविशिरोमणे, महाकवे, कवे, स्वामिन्, आर्यपुत्र, प्रिये, महामात्य आदि। अन्य एकांकियों में सम्बोधन प्रयोगों में नवीनता दृष्टिगत हुई है। ललित अपने नौकर को नामतः पुकारता है। नौकर से अप्रसन्न होने पर अरे आज्ञा-पुत्र (आज्ञा के बच्चे), मूर्ख, चिरकारिन् आदि पदों से सम्बोधित करता है। ललित अपनी पत्नी सुलेखा को 'प्रिये' कहता है, जिसमें प्रणयपूर्ण चाटुकारिता है। क्रोध में अयिसुलेखे, कभी व्यंग्य परक देवि और कभी श्रीमती सम्बोधन करता है। ललित तथा आशुतोष दोनों मित्र एक दूसरे को नाम लेकर पुकारते हैं। आशुतोष ललित की पत्नी को भ्रातृजाये कहता है। अपनी बुद्धिमत्ता पर गर्वयुक्त देवदत्त अपनी पत्नी को अबुद्धिमती मानकर अयिमुग्धे सम्बोधन करता है। इस प्रकार 'मधुराम्लम्' में पारम्परिक सम्बोधनों के अतिरिक्त विषय भाव तथा परिस्थितियों की आधुनिकता के अनुसार नवीन सम्बोधनों का विधान भी किया गया है।

विविध भाषाओं का प्रयोग—श्रीमती पाटनी ने अपने एकांकियों में आधुनिक दैनिक जीवन में प्रचलित आंग्लभाषा के शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया हैं। कहीं-कहीं विदेशी शब्दों के साथ संस्कृत के पदों को संयुक्त किया गया है।[२३४] यथा—'प्रतिबुद्धा' में गैस विषये, गैस मंजूषा, टाइप यन्त्रस्य, सपादकिलोमितम्, रजिस्टरपत्राणि, सिगरेट भाजनम्, स्कूटरयाने, 'नारददौत्यम्' में टैक्सीयानेन, न्यूक्लियर युगस्य, क्लबभवने आदिः[२३५] 'याथार्थ्यगरलम्' में लाटरीपत्रम्, कमिश्नरवर्याणां, बेगम महोदया आदि।[२३६] कहीं-कहीं बिना किसी संस्कृत पद के योग के ही विदेशी भाषा के शब्दों के साथ विभक्तियाँ जोड़ी गई हैं, यथा—आलूनि, स्टोवस्य, गैसस्य, चायम् आदि।[२३७] कहीं कहीं विदेशी भाषा

के शब्दों का पूर्णतः संस्कृतीकरण किया गया है, यथा—घटिकायंत्रम, उद्बोधक ध्वनि, वैद्युतोष्णाक (हीटर), श्मश्रूकूर्चिका, विद्युतघण्टिका, हस्तनद्धघटिकायंत्रम्, मंचस्थघटिका यन्त्रम् आदि।[२३८] इस प्रकार विदेशी भाषा के शब्दों के ग्रहण से भाषा को समृद्ध एवं स्वाभाविक तथा अर्थ को सुग्राह्य व प्रभावशाली बनाया गया है।

डॉ० नलिनी शुक्ला की संवाद योजना साहित्यिक होते हुए भी लोक बोध्य हैं। चुटीली व्यंग्योक्तियाँ पात्रों के व्यक्तित्व को प्रभावपूर्ण बनाती हैं। 'मुक्तिमहोत्सवः' में संवादों के माध्यम से पात्रों का चरित्र विशेष रूप से निखरा है। विशाखा एक परम्परानुगामिनी नारी है जो नारी स्वातन्त्र्य का समर्थन नहीं करती। उसके संवाद इस परम्परानुप्रियता को ही सर्वत्र प्रकट करते हैं। रंगमंच पर नृत्य-गान करती बालिकाओं को वह धृष्ट एवं निर्लज्ज मानती है।[२३९] इसके विपरीत वसुन्धराके संवाद परम्पराओं के प्रति श्रद्धा रखते हुए भी नारी स्वातन्त्र्य के पक्ष को प्रकाशित करते हैं।[२४०] कहीं-कहीं व्यंग्य भौंडा बनकर रह गया है तथा शिष्ट नहीं लगता। स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर कार्यक्रम देखने वाले सेठजी की तोंद देखकर अनुराग का कहना किस 'पहिले किसी को ज्ञात नहीं था, नहीं तो झण्डारोहण से पूर्व बाँस गाड़ने के लिए गड्ढा खोदने की क्या आवश्यकता थी इनकी नाभि से ही काम चल जाता।'

राधानुनयः में संवादपूर्णतः पद्य रूप में आये हैं। यहाँ राधा की व्यंग्योक्तियाँ मधुरतम सरस तथा नाट्यानुरूप हैं। पार्वतीतपश्चर्या में प्रधानता पद्य संवादों की है। लेकिन कहीं - कहीं गद्य का प्रयोग भी दृष्टिगत होता हैं।[२४१]

डॉ० नलिनी शुक्ला की भाषा शैली जयदेव कृत गीत गोविन्द से साम्य रखती है।[२४२] रसानुरूप मनोरम पद शय्या तथा सुकुमार वर्णों की योजना में नाट्यकर्त्री सिद्धहस्त है। उदाहरणार्थ—

राधा -न जाने कान्तारे मधु- ऋतु - रसाले सुललिते
सुशीते शेफाली-बकुल-कुसुमाली कुसुमिते।
पलाशच्छायान्ते विहगकुलकूजस्वरभृते
मनः किं सन्तापं समधिकतरं प्राप्य दहति ॥[२४३]

यहाँ विप्रलम्भ शृंगार के अनुरूप कोमल कान्त पदावली की रचना है। नलिनी शुक्ला की भाषा में विलक्षण माधुर्य तथा प्रसाद गुण हैं जिससे पद्यों का अर्थ अनायास ही स्पष्ट हो जाता है।[२४४] भाषा में सर्वत्र अनुप्रासों का प्रयोग पर्याप्त शब्द सौन्दर्य उत्पन्न करता है परन्तु कहीं भी अस्वाभाविकता एवं क्लिष्टता नहीं आयी है। संगीतिकाओं में पद्यों को गीतों का रूप दिया गया है। ये गीत भाव, समय तथा परिस्थति के अनुरूप विविध रागों, जैसे—मालकोंस, खमाज, सोहिनी, पूरिया, भटियार, बसन्त, काफी तथा यमन आदि रागों में वर्णित

है। नृत्य में राग एवं छन्द के अनुरूप ही दादरा, त्रिताल आदि का निर्धारण किया गया है।[२४५] सोहिनी राग गम्भीर प्रकृति का राग है, अतः विरह का वर्णन इस राग में प्रस्तुत है। दोनों ही रूपकों में कहीं-कहीं नृत्य व तालों के आधार पर गीत-रचना की गई है तथा कहीं-कहीं नृत्य के बोलों को यथावत् ग्रहण कर लिया गया है।[२४६] कहीं-कहीं गीत गोविन्द के विहरति हरिरिह सरस वसन्ते[२४७] (वसन्त राग, आदि ताल) की तरह गीत रचना कर एक छन्द की समाप्ति पर ध्रुवपद अथवा टेक में पुनः प्रथम पंक्ति का उच्चारण किया गया है।

यथा -विहरति माधव इष्य समीरे
नृत्यति गोपिजनेन वृतः सखि ! सरसित यमुना तीरे
विहरति माधव इष्य समीरे .... ।[२४८]

इस प्रकार नलिनी शुक्ला की भाषा शैली पर गीत गोविन्द का पर्याप्त प्रभाव है। 'मुक्त महोत्सवः' में एक गीत का प्रयोग हुआ है, जो गर्भांक नाटक में प्रस्तुत किया गया है।[२४९] इस गीत में राष्ट्रीय भावना एवं स्वतन्त्रता दिवस की स्मृति को सजीव किया गया है।

मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपकों में संवाद अत्यन्त सरल संस्कृत में छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं। दुर्बोधता का इनमें सर्वथा अभाव है।[२५०] सामाजिक में उत्सुकता जागृत करने वाले ये संवाद मनोभाव तथा देश व काल के अनुरूप भी हैं।[२५१] संवादों में कौतुहलता की वृद्धि के लिए कई स्थलों पर संवाद वाक्यों को अधूरा छोड़ दिया गया है। 'आम्रपाली' के द्वितीय अंक में आम्रपाली स्वयंवर में पतिवरण करने में असफल होती है। इस निर्णय की घोषणा करते समय वीरभद्र द्वारा वाक्य को अधूरा छोड़ देना परिणाम के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करता है।[२५२] आम्रपाली तथा दशमस्त्वमसि एकांकी संग्रह में ऐसे अनेक स्थल हैं जहाँ वाक्य की समाप्ति के पूर्व ही संवाद को विराम दे दिया गया है तथा दूसरे पात्रों की भावपूर्ण अभिव्यक्ति से पूर्ण किया गया है। यथा— 'आम्रपाली' के द्वितीय अंक में अजातशत्रु द्वारा वैशाली पर आक्रमण की धमकी देने पर महामात्य वीरभद्र राष्ट्र मर्यादा के लिए पौर-वासियों का आह्वान करना चाहता है। उसके आह्वान के पूर्व ही पौरवासी उसके वाक्य को काटकर रण नियन्त्रण को स्वीकार करते हुए अपने उत्साह भाव को अभिव्यक्त करते हैं।[२५३] कहीं-कहीं एक पात्र के वाक्य को दूसरा पात्र बीच में ही काट कर उसके भाव को पूरा कर देता है।[२५४] कहीं-कहीं संवादों में सहसा मौन का आश्रय लेकर अभिव्यक्ति को तीव्र व स्पष्ट बनाया गया है। ऐसे स्थलों पर व्यंजना द्वारा वह प्रभावोत्पादकता उत्पन्न हो गई है, जो मुखर सम्वादों से सम्भव नहीं थी। यथा—अजातशत्रु की अनुपस्थिति में आम्रपाली द्वारा किसी का वरण न करने पर वीरभद्र असमंजस में पड़ जाता है। गणराज्य के विधान के अनुसार उसे नगरवधू बना दिया जायेगा। अतः वह चाहता है कि पौरवासियों में से कोई

आकर उसका वरण कर ले। यहाँ आम्रपाली मुखर स्वीकृति नहीं देती, मौन रह जाती है। उसके मौन से अजातशत्रु के प्रति आसक्ति का भाव होने के कारण अन्य के वरण के लिए अनिच्छा, गणराज्य के दुर्विधान के प्रति घृणा व अपनी विवशता आदि भावों की कुशलतापूर्वक अभिव्यंजना की गई है।[२५५]

संवाद अत्यन्त सरल, सरस, लोकबोध्य व स्वाभाविक है। कहीं-कहीं उनमें आलंकारिकता भी है लेकिन अलंकारों के प्रयोग से वे बोझिल नहीं है, उनकी स्वाभाविकता एवं सर्वग्राह्यता में कोई कमी नहीं आई है।[२५६] मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपकों में प्रयुक्त कथोपकथन तीव्र संवेगों से पूर्ण हैं। वाग्वैदग्ध्य व हास्य व्यंग्य का पुट भी इनमें दिखाई पड़ता है।[२५७] पात्रानुकूल संवादों के प्रभाव से रूपक विशेष प्रभावशाली प्रतीत होता है। अजातशत्रु के कथ्यों में उसके राजसी स्वभाव के अनुरूप उद्दण्डता, अधिकार भाव तथा अन्यों के प्रति उपेक्षाभाव की अभिव्यक्ति हुई है[२५८] तो आम्रपाली के कथनों में विनय मिश्रित ओजस्विता तथा दृढ़ता अभिव्यक्त हुई है। ऐसे स्थलों पर संवाद संक्षिप्त, व्यावहारिक तथा प्रवाहमय हैं। प्रथम दृश्य में आम्रपाली के स्वर व रूप सौन्दर्य पर आसक्त अजातशत्रु के कथोपकथनों में कोमलता का समावेश है। द्वितीय अंक में आम्रपाली द्वारा प्रत्याख्यान किए जाने पर अपमान की ज्वाला में दग्ध अजातशत्रु के संवादों का स्वर कटु हो जाता है।[२५९] परिस्थिति के अनुरूप आम्रपाली के कथोपकथनों में प्रथम अंक में कोमलता, द्वितीय अंक में ओजस्विता, तृतीय अंक में उदासीनता व वितृष्णा, चतुर्थ एवं पंचम अंक में क्रमशः दार्शनिकता तथा वैराग्य झलकता है। इस प्रकार पात्रानुकूल एवं परिस्थितियों के अनुरूप नाट्यकर्त्री संवाद निर्माण में सफल रही है।

भाषा—मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपकों में सरल तथा पात्रानुकूल भाषा में कृत्रिमता का अभाव है। पात्र यदि उत्तमकोटि के हैं तो उनकी भाषा में औदात्य है। ऐसे स्थलों पर पद, विशेषण उपमान आदि के लिए पद-चयन पात्रों के स्वभाव को सूचित करते हैं।[२६०] 'सत्यमेव जयते' में गान्धी की भाषा में दृढ़ता एवं सत्य के प्रति ध्रुव निष्ठा स्पष्टतया अभिव्यक्त हुआ है। मध्यम एवं निम्नकोटि के पात्रों की भाषा तदनुरूप व्यक्तित्व को प्रकाशित करती है। 'सचाप्यस्ति रजक एव' में राजुल एवं कञ्चन के विवाद में रजकों के अनुरूप ग्राम्यभाषा व अपशब्द प्रयुक्त हुए हैं।[२६१] इनके रूपकों में भाषा की एक अन्य विशेषता उसका भावानुकूल होना है।

'सत्यमेव जयते' में जब वायसराय गाँधी को समझौते के लिए बुलाता है तो आरम्भ में उसकी भाषा उपेक्षापूर्ण एवं गर्वपूर्ण रहती है।[२६२] स्वयं के द्वारा प्रदत्त प्रलोभनों का गान्धी पर कोई असर न देख कर उसकी भाषा क्रोधमयी हो जाती है।[२६३] क्रोध में मृत्यु दण्ड की धमकी देने पर भी गान्धी को निर्भय देख कर उसकी भाषा विस्मय तथा खीज भरी हो जाती है।[२६४] इस प्रकार अधिकार,

प्रलोभन, क्रोध, विस्मय खीज आदि भावों की अभिव्यक्ति में भाषा पूर्ण सफल रही है। कहीं-कहीं मुहावरे एवं लोकोक्तियों के सुन्दर प्रयोगों से भाषा में प्रभावशालिता आई है। यथा—(१) रोमहर्षश्च मे जायते साम्प्रतम्,[२६५] (२) मक्षिकापात इव विघ्नभयम्,[२६६] (३) असौ तु सर्पनाथः अयं तु नागनाथः,[२६७] (४) काणचक्षुरिव निरर्थकोऽसि,[२६८] (५) नापि त्वया बहुजनहिताय बहुजनसुखाय चापि प्रयतितम्।[२६९]

इस प्रकार मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपकों की भाषा सरल व पात्र स्वभावानुकूल होने से भाव सम्प्रेषण में सर्वथा समर्थ है।

पद्य प्रयोग—मिथिलेश कुमारी मिश्रा ने अधिकांशतः प्राचीन छन्दों का ही प्रयोग किया है। 'आम्रपाली' में नान्दी सहित पाँच गीत तथा २१ पद्यों में वसन्त तिलका, शिखरिणी, मालिनी, अनुष्टुप् छन्द रूपों का प्रयोग हुआ है। एकांकी संग्रह में संख्या की दृष्टि से अनुष्टुप् छन्द का बहुलता से प्रयोग किया गया है। अन्य छन्दों में उपजाति, वसन्त तिलका, वंशस्थ शार्दूल तथा दो गीतों में भी पद्य प्रयोग हुआ है।

पद्यों का प्रयोग नाट्यकर्त्री ने भावोद्रेक की अवस्था में[२७०] लोक प्रचलित रीति या उपदेश का वर्णन करने में[२७१] अथवा दार्शनिकता की अभिव्यक्ति के लिए किया है।[२७२] आम्रपाली को देखकर अजातशत्रु का हृदयोद्गार श्लोक रूप में फूट पड़ता है। जो वस्तु प्राप्त होनी होती है वह भाग्यवशात् ही मिलती है को निम्नांकित वाक्य में सुस्पष्ट किया गया है—

यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च ।
यावच्च यत्र च शुभाशुभमात्मकर्म ।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च
तावच्च तत्र च विधातृवशादुपैति ॥[२७३]

नाटिका में प्रयुक्त गीत रूपक को मधुर बनाते हैं तथा उनका प्रयोग कथावस्तु के औचित्य को ध्यान में रखते हुए किया गया है। जैसे—प्रथम दृश्य के आरम्भ में आम्रपाली के द्वारा गाए गए गीत का उद्देश्य अजातशत्रु को उसकी ओर उन्मुख करना है। साथ ही इस गीत से आम्रपाली के भावी वैराग्य की सूचना भी मिलती है।[२७४] इसी प्रकार द्वितीय अंक में दृश्यारम्भ से पूर्व स्वयंवर में आए लोगों के मनोरंजन के लिए शृंगाररस सिक्त गीत प्रस्तुत किया गया है।[२७५] तृतीय अंक में नगरवधू के जीवन से संतप्त आम्रपाली तथागत की शरण में जाना चाहती है। उसके इस वैराग्य भाव की अभिव्यक्ति नेपथ्य के गीत से हुई है।[२७६] पंचम अंक में बुद्ध द्वारा आम्रपाली को भिक्षुणी बनने की दीक्षा दिए जाने पर पूर्ण मनोरथा वह नृत्य सहित गीत गाती है। इस प्रकार गीतों में पात्र एवं वातावरण की स्थिति को ध्यान में रखते हुए, भावोद्दीपन के रूप में गीतों

का प्रयोग हुआ है।[२७७] 'सचाप्यस्ति रजक एव' में गाए एक मात्र गीत का कथावस्तु की दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रहा है। 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' में गाया गीत नायिका की देशभक्ति को प्रकट करता है। एकांकी संग्रह में प्रयुक्त मुक्तकों का प्रयोग भावोद्दीपक, तथ्यप्रतिपादक तथा कुछ कथ्य समर्थनात्मक दृष्टि से किया गया है।

सम्बोधन प्रयोग—आम्रपाली में पात्र सम्बोधन पारम्परिक नाट्यशास्त्र के अनुरूप ही प्रयोग किए हैं। नट सूत्रधार को भाव कहकर तथा सूत्रधार नट को सखे अथवा भद्र कहकर सम्बोधित करते हैं। सौवीर सेनापति है, वह अजातशत्रु को महाराज, राजकुमार तथा आर्यपुत्र कहकर सम्बोधित करता है। अजातशत्रु उसे सेनाधीश, वीर, सेनापते, भद्र तथा सखे कहकर सम्बोधित करता है। सम्बोधनों में भावानुरूप परिवर्तन भी हुआ है। प्रथम अंक में जब अजातशत्रु के हृदय में आम्रपाली के प्रति पूर्वराग का अंकुर फूटता है तब वह आम्रपाली को देवि तथा महादेवि पदों से सम्बोधित करता है। एक स्थल पर नामतः भी सम्बोधन किया गया है। यही अजातशत्रु आम्रपाली द्वारा अपमानित होने पर उसे अधमे, चञ्चले वारनारि कहता है। बाद में आम्रपाली की सेवा से उसके अधीन हुआ अन्तिम अंक में आर्ये, हृदयेश्वरि आदि सम्बोधन कर प्रणय याचना करता है।

इस प्रकार दशमंस्त्वमसि एकाकी संग्रह में यद्यपि सामान्यतः सम्बोधनों में कोई वैचित्र्य नहीं है, यथा—तपस्वियों के लिए भक्तश्रेष्ठ, तपोधन, भक्तराज आदि सम्बोधन दिए गए हैं। नारद के लिए साधो, देवर्षे, देवमुने, महर्षे, भगवन् आदि सम्बोधन प्रयुक्त हुए हैं। स्वामी सेवक को किं रे कहकर या नाम से सम्बोधित करता है। सेवक स्वामी को स्वामिन्, देव, महाशय, प्रभो आदि से सम्बोधित करता है। पति पत्नी को आर्ये या नाम से सम्बोधित करता है। पत्नी पति को आर्य, स्वामिन् कहती है। पिता-पुत्र के लिए वत्स या तात, पुत्रवधू के लिए वत्से सम्बोधन करता है। पुत्र व पुत्रवधू पिता के लिए तात या पितृदेव कहकर सम्बोधन करती है।

भाव विशेष से सम्बोधनों में परिवर्तन भी हुआ है। नारद के प्रति खीजा हुआ तपस्वी नारद के लिए पाखण्डिन, दम्भिन्, मिथ्यावादिन्, दुर्बुद्धे सम्बोधन करता है। नौकर की मूर्खता से क्रुद्ध स्वामी उसे वैशाखनन्दन जैसे पद से भी सम्बोधित करता है। स्वदेशवासी गान्धी के लिए जहाँ महात्मन् पद प्रयुक्त करते हैं। वहीं अंग्रेज न्यायाधीश अपमान करते हुए, गान्धिन्, रेवाचाल सम्बोधन करते हैं। वाइसराय भी अपमानजनक ढंग से रे नग्नभिक्षुक, नग्न साधो आदि पदों से सम्बोधित करता है। इस प्रकार सम्बोधनों में परिवर्तन द्वारा नाट्यकर्त्री ने वक्ता के भावों की सम्प्रेषणीयता बढ़ा दी है।

स्वगत कथन—मिथिलेश कुमारी मिश्रा ने स्वगत कथनों का बहुत कम प्रयोग किया है। आम्रपाली के प्रथम अंक में नाट्य व्यापार की दृष्टि उचित चार स्थलों पर अत्यल्प स्वगत भाषण है। आम्रपाली एवं अजातशत्रु में प्रथम दर्शन जन्य विकार की अभिव्यक्ति स्वगत भाषण में कराई है।[२७८] यहाँ दोनों के आकर्षण को आंगिक या वाचिक अभिनय से प्रदर्शित करने की अपेक्षा स्वगत भाषण से व्यक्त करना गरिमामय है। 'सत्यमेव जयते' में एक स्थल पर गान्धी की ओजस्विता से हतप्रभ वाइसराय का विस्मय स्वगत भाषण में प्रकट हुआ है।[२७९] वस्तुतः शासक होने के कारण शासित की ओजस्विता का वर्णन मुखर संवाद में नहीं किया जा सकता था।

'अलक्ष्यं दूरदर्शनम्' में पात्र कञ्चन की एक एकोक्ति भी नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से सुन्दर प्रतीत होती है।[२८०] कञ्चन का स्वामी हमेशा दूरदर्शिता पूर्वक कार्य करने की सलाह देता था। अतः दूरदर्शिता दिखाने के फेर में सिर दर्द से पीड़ित स्वामी की मृत्यु की कल्पना करके अन्तिम संस्कार करने की सोचता है।

संस्कृतेतरभाषा का प्रयोग—एकांकी संग्रह के 'सत्यमेव जयते'[२८१] में अंग्रेजी भाषा के शब्दों का ग्रहण किया गया है, यथा—ब्रिटिश, वाइसराय, यूरोप, लन्दन आदि। 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' में पाने को स्थानम् कहकर उसका संस्कृतीकरण किया गया है।[२८२]

विजयलक्ष्मी त्रिवेदी, ब्रह्मचारिणी वेला देवी, भक्ति सुधा मुखोपाध्याय, आशा, चिन्मयी, अर्चना तथा **निर्मला शुक्ला** आदि नाट्यकर्त्रियों ने अपने रूपकों की रचना बालकों की दृष्टि से ही करी है। उनके द्वारा इनका अभिनय भी कराया है इसीलिए इनमें भाषा एवं संवाद प्रयासपूर्वक सरल बनाए गए हैं। कहीं-कहीं तो सन्धिकार्य भी नहीं किया गया है। प्रायः संवाद लघु,[२८३] कथ्यबोध देने वाले[२८४] तथा रोचक हैं।[२८५] सांकेतिक अथवा प्रश्नगर्भित संवादों की योजना प्रायः नहीं की गई है। पात्रानुरूप प्रयुक्त संवाद ध्वनिव्यंजक एवं नाट्यस्थितियों के निर्माण में सक्षम हैं। यथा—'नचिकेतश्चरितम्' में आश्रम में क्रीडारत मुनि बालकों की खेल में रुचि तथा अध्ययन से पराङ्मुखता, बालोचित तथा नाटकीय वातावरण में सक्षम है।[२८६] 'महात्मा दधीचिः' में गभस्तिनी तथा मुनि के एवं 'कः भेदः' 'महीयसी गार्गी', 'नचिकेतश्चरितम्' के द्वन्द्वात्मक दार्शनिक संवाद भी भावमय एवं गहन अनुभूति देते हैं।[२८७] 'नचिकेतः कुत्रगतोऽसि' 'शठेशाठ्यं समाचरेत्' आदि कुछ रूपकों में कतिपय स्थलों पर संवादों में नाटकीय व्यंग्य तीव्रता से उभरा है।[२८८] वस्तुतः इन संवादों में पात्रानुकूलता, भावानुकूलता तथा देशकालानुकूलता का ध्यान रखा गया है।

भाषा का प्रयोग अपेक्षाकृत सरल, सहज तथा अभिनेय है। साधारण संस्कृत का ज्ञाता भी रूपकों में प्रयुक्त संस्कृत का सहज अवबोध करने में समर्थ है। भावावेश के क्षणों में भाषा किंचित् साहित्यिक एवं अलंकृत हो गई है

तथापि वहाँ क्लिष्टता का अभाव है[२८९] तथा कथ्य स्पष्टतः प्रगट है । कहावतों, मुहावरों वाग्व्यवहारों एवं लौकिक न्यायों का प्रयोग भी यत्र तत्र किया गया है । प्रचुर नाट्य निर्देशों के कारण भाषा अभिनेयता मंचीय कौशल तथा गत्यात्मकता से युक्त दृष्टिगत होती है ।[२९०]

सम्बोधनों में तात, पितः, सखे, वत्स, आदि पारम्परिक रूप ही प्रायः दृष्टिगत हुए हैं लेकिन उनमें अवस्थानुरूप परिवर्तन भी हुआ है । 'नचिकेतश्चरितम्' में पद्य प्रयोग प्रायः कठोपनिषद् से किया गया है । विराड्गृहम् के पद्य नाट्यकर्त्री के स्वरचित हैं । भरत वाक्य के रूप में में प्रयुक्त पद्य 'अमी वेदी परितः' कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तल से उद्धृत है । श्लोकों का प्रयोग प्रायः कथित अर्थ की पुष्टि, उपदेश देना अथवा स्तोत्र के रूप में हुआ है ।

निष्कर्षतः आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की रूपक रचनाओं में अपेक्षाकृत संवाद सरल एवं लोक-बाध्य हैं । भाषा व्यावहारिक, समासरहित अथवा अत्यल्प समास वाली है । आवश्यकतानुरूप लोकोक्तियाँ, मुहावरों, सूक्तियों एवं लौकिक न्यायों के प्रयोग से भाषा में भाव उत्पन्न करने का प्रयास किया गया है । साहित्यिक प्रयोगों को करने से भी भाषा में क्लिष्टता नहीं आई है । भाषा स्तरीय होने के साथ-साथ पात्रों के चरित्र एवं घटना की अभिव्यंजना करने में सफल रही है । कहीं विदेशी एवं स्थानीय भाषाओं के शब्दों का यथावत् ग्रहण, कहीं उनका संस्कृतीकरण किया गया है। वस्तुतः भाषा में दृश्यात्मक कौशल, अर्थ-लय-निर्भर व अभिव्यंजना शिल्प इन नाट्यकर्त्रियों की नाट्यभाषा के प्रमुख गुणों के रूप में दिखाई पड़ते हैं । इनके रूपकों में छोटे-छोटे चुस्त संवाद अपनी दृश्य वत्ता और यथार्थ मूलकता से पाठकों एवं दर्शकों के हृदयों को छूते हैं । सम्वादों की गहन अभिव्यंजना स्थायी प्रभाव उत्पन्न करती है । सम्बोधन में प्रायः पारम्परिक पदों का प्रयोग हुआ है। ये सम्बोधन पात्रों की मनोवृत्ति के अनुरूप परिवर्तित भी हुए हैं, जो श्रोता के व्यक्तित्व एवं गुणों के प्रकटीकरण में सहायक हैं। संवादों में संक्षिप्तता, सरलता, पात्रानुकूलता व्यंग्यात्मकता आदि विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं । संवादों में प्रयुक्त वाक्य भी छोटे-छोटे, व्यापार प्रधान होने से नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ हैं। पद्यों का प्रयोग सामान्यतया लोकरंजन, तीक्ष्ण भावातिरेक की अभिव्यक्ति, उपदेश देने अथवा कथ्य समर्थन के लिए किया गया है। पद्यों में प्राचीन छन्दों का प्रयोग अधिकांशतः हुआ है । रमा चौधुरी तथा वनमाला भवालकर ने आधुनिक गीतों का भी प्रयोग किया है । संगीतिकाओं में प्रयुक्त पद्य विविध तालों एवं रागों में निबद्ध हैं, जो नाट्यकर्त्रियों के संगीत नैपुण्य के परिचायक हैं । स्वगत कथन भी प्रायः ऐसे स्थलों पर किया गया है, जहाँ मुखर अभिव्यक्ति में किसी पात्र के चरित्र

एवं कथावस्तु के औदात्य का ह्रास हो सकता था। नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में अनेक श्लोक विविध प्रतिष्ठित ग्रन्थों से उद्धृत हैं। उद्धृत श्लोक नाट्यकर्त्रियों के गहन अध्ययन एवं विविध शास्त्रज्ञान के परिचायक हैं। स्वरचित श्लोकों में उनका कवित्व प्रस्फुटित हुआ है। संवादों के पूर्व में प्रचुर नाट्य निर्देश दिए गये हैं, जिससे रूपक में अभिनेयता एवं गति आ गई है तथा वे दर्शकों को बाँधे रखने में सफल हैं। वस्तुतः इस प्रकार के संवाद एवं भाषा से रंगमंचीय भाषा को एक सार्थक आयाम मिला है।

संदर्भ

१. संस्कृत हिन्दी कोश, पृ० १०४८.
२. पात्रानुकूलं कथाचरितविस्तारकं लोकबोध्योत्तरप्रत्युत्तरसम्पन्नोचित-परिमाणयुक्तसंवादः।
–अभिनवनाट्यशास्त्रम्, १२/१५५, पृ० ३८०.
३. जग्राहपाठ्यं ऋग्वेदात्–नाट्यशास्त्रम्, १/११.
४. दशरूपकम्, ३/६३.
५. सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यात् अश्राव्यं स्वगतम् मतम्। –वही, पृ० ३/६४.
६. वही, १/६५.
७. वही, पृ० १/६६.
८. साहित्यदर्पणः, ६/१४०.
९. समीक्षाशास्त्र, पृ० ४३३-३४, ९४७.
१०. Dramatic Techniqe, p. 407.
११. समीक्षाशास्त्र, पृ० ११.
१२. पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धान्त, पृ० २७५.
१३. गीतिनाट्ये छन्दोबद्धसंवादः।– अभिनव नाट्यशास्त्र १२/१५९/पृ० ३९३.
१४. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ९.
१५. कविकुलकोकिलम्, पृ० ९.
१६. तरुणतपनः–(सकौतुकम्) सखे अरुणकिरण! कथमरुणकिरणरञ्जितप्रभातगगनमिव विशेषेण समुज्ज्वलं, समुत्फुल्लं, समुत्कृष्टं जातम् सहसा तव मंजुमुखमद्य ... तव कल्पनाकामिन्याः? –वही, पृ० ८, ९.
१७. यतीन्द्रयतीन्द्रम्–पाटलश्रीः, १०/पृ० २९.
१८. देशदीपम्, पृ० ३७-३९.
१९. कविकुलकमलम्, पृ० ९.
२०. पल्लीकमलम्, पृ० ३८-४१.
२१. देशदीपम्, पृ० ३७.
२२. विशिष्टा–(क्रन्दनातुरा) अधन्यं मम जन्म शून्यं मम गृहम्, खिन्नं मम स्वजनवृन्दम्। सन्तानहीनायाः ममशीर्णाः, प्राणाः दीर्णं मनः जीर्णम् जीवनम्।
–शंकरशंकरम्, पृ० ८

२३. कविकुलकोकिलम्, पृ० ९.
२४. पल्लीकमलम्, पृ० ३०.
२५. वही, पृ० ५.
२६. कालिदासः—(सहसा भावाविष्टः) शृणोतु भवान्, शृणोतु कृपया। अन्धकारमृतिकाभयन्तर प्रोथितं वीजमद्य मुक्तिमलभत। चतुर्दिकस्थकठिन कठोरवेष्टिनीं भित्वा चतुर्दिकस्थ घनघोरतिमिरं छित्वा... पितः! किं नैष परमानन्दजनकः संवादः? परमाशा व्यञ्जिका वार्ताच।—कविकुलकोकिलम्, पृ० ९-१०.
२७. आधुनिक संस्कृत नाटक, पृ० १०८५.
२८. निवेदित निवेदितम्, पृ० ९३.
२९. युगजीवनम्, पृ० २६.
३०. कविकुलकोकिलम्, पृ० ५७-५९.
३१. यतीन्द्रयतीन्द्रम्—पाटलश्रीः ५ः२, पृ० ३१.
३२. देशदीपम्, पृ० २०, २२.
३३. वही, पृ० १४, ४५, ५२.
३४. वही, पृ० ३४-३५.
३५. वही, पृ० १४.
३६. वही, पृ० ८, १३, ५६.
३७. वही, पृ० ७, ५२-५३.
३८. वही, पृ० १३, ५२-५३.
३९. वही, पृ० ४४-४५.
४०. वही, पृ० ३७-३९.
४१. मागरिट्—अहो! मनोहरः खल्वयं दिवसः। मधुरमोहनो ग्रीष्मकालः समायातः। तस्य कनककिरणशरैर्निमेषेणपलायिता करालकुटिलशीतस्य कृष्णकलुषकुज्झटिका सभ्यम् . . गुञ्जन्ति मञ्जुकुञ्जे भ्रमरपुञ्जा मञ्जीरतानाः। कूजन्ति विहगाः कोमलरणनाः काशन्ते कुसुमकलिकाः केलिमनाः।—निवेदितनिवेदितम्, पृ० ३३-३४.
४२. अरुणकिरणः—अहो मधुरिममयी इयं पूर्णिमा रजनी, मम अन्तरानन्दस्य बाह्यप्रतिमूर्तिरिव। निर्मलनील-गगने हसति प्रसन्नपूर्णचन्द्रः दीप्तदशदिक्षुवरेण्य-वनस्पतिशाखायां गायति चारूचञ्चलचकोरी। अहो इदं हसनम्, इदं खेलनम्, इदम् नर्तनम्, इदं गीतं च न प्रकृति देव्याः परन्तु ममैव ममैव x x x अद्य सहसा मम प्राणप्रदीपः पूर्ण प्रदीपः पूर्ण प्रज्ज्वलितः, सहसा मम मनोवीणा पूर्णझंकृता, सहसा मम जीवनशतदलं पूर्णप्रस्फुटितम्।—मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० २८-२९.
४३. देशदीपम्, पृ० ३७.
४४. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १३, १७, ४३.
४५. कमलकलिका—अरुणकिरणः, अरुणकिरणः, अरुणकिरणः। सुमधुरतम सुयोग्यतमं हि नामेदं अरुणकिरणः। सत्यं नु अरुणकिरणवत् वरेण्यः, अरुणकिरणवत् सुधन्यः अरुणकिरणवत् अनन्यो ममारुणकिरणः ...।—मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १३.
४६. कमलकलिका—(सरोषम्) किं कथयति भवान्? किं न जानातिभवान् नारीणां सम्मानम्? नारी न हेलन वस्तु, खेलन सामग्री, विलासोपकरणं वा x x x दूरं गच्छ, दूरं गच्छ रे दुर्वृत्त मा कुरु मम मार्गावरोधनम्। न कामये अहं तव विलासद्रव्याणि... । —वही, पृ० १७.

४७. युगजीवनम्, पृ० ४६.
४८. देशदीपम्, पृ० ३७.
४९. यतीन्द्रयतीन्द्रम्–पाटलश्रीः,५ : २, पृ० ३१-३३.
५०. (क) पल्लीकमलम्, पृ० १९.
(ख) वही, पृ० ११.
(ग) वही, पृ० २०.
(घ) वही, पृ० २४.
५१. मन ! तुमि कृषि काज जानना– युगजीवनम्, पृ० २५.
५२. कत दिन हवे से प्रेम सञ्चारः ।–वही, पृ० २७.
५३. सुरापानकरिना आमि सुधारवाइ जयकाली वले
आमाय मन माताले मातालकरे
सबमद माताले मातालवले ।–वही, पृ० ३६.
५४. वही, पृ० १३, १६, २१, ४६, ८९.
५५. देशदीपम्, पृ० १३, १९, ३६.
५६. षडङ्गादिवेदोमुखे शास्त्रविद्या, कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति ।
गुरोरंध्रि पद्मेमनश्चेन्नलग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥
विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषुधन्यः सदाचारवृत्तेषु मत्तो न चान्यः
X X X X
यशो मे गतं दिक्षुदानं प्रतापो जगद्वस्तु सर्वं करेयत् प्रसादात् ॥
–शंकरशंकरम्, पृ० २०.
५७. (प्रविशति गायन वैतालिकः कुवेर वन्दना)
शंकरकिंकरवर नरवाहनपर देवः ।
X X X X
भर्जितरिपुरुर्जितवपुरच्छकषिपुदृप्तः ॥
–मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ३६.
५८. कविकुलकोकिलम्, पृ० २१.
५९. पल्लीकमलम्, पृ० २१.
६०. ललितमधुरः प्रेमालापो न मे स्वदते लघुः
स किल सरल ग्रामीणानां कृते सरसो विधिः
मम तु निखिलज्ञानाढ्यायास्त्वया विदुषा सह
प्रसरतु कथाशास्त्रव्याख्यात्मिका विवुधोचिता ॥–कविकुलकोकिलम्, पृ० ५१.
६१. अधिनिशमुपयान्त्या मुद्रणामन्धकारे
विरहकृशशरीरं धारयन्त्या नितान्तम्
अरुणकिरणकान्तं चिन्त्यन्त्या सखेदम्
कमलकलिकया हा नीयते रात्रिकालः ॥–मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १३.
६२. कदाभविष्यति स प्रेम सञ्चारः
भूत्वापूर्णकामो वदिष्यामि हरिनाम
पतिष्यति नयनयोः प्रेमाश्रुधारः ॥–युगजीवनम्, पृ० २७.

६३. शंकरशंकरम्, ३/३०-३२, ४/४३-४४, ४८, ६/६०, ८/७७, पृ० २०, २७, ३०, ३३, ३९, ४०, ४६.

६४. श्रीमद्भागवदगीता, ४/८, २/४७.

६५. वृहदारण्यकोपनिषद, १/४/८, १/३/२८.

६६. सुन्तनिपातकरणीय मैत्रीसूत्र, ४, ५, ८.

६७. यतीन्द्रयतीन्द्रम्–पाटलश्रीः, पृ० १/३४, २/३९, ४/२२.

६८. ये केचिपाणा भूतत्थि तबासा थाववा.वा अनवेससा

X X X X

अद्धूंअधो च तिरियञ्च असम्बाधं अवेरं असपत्तम् ॥ –निवेदितनिवेदितम्, पृ० १०२.

६९. (क) Day of Annuciation.

(ख) The boat is sinking, but I shall see the sun rise.

–निवेदितनिवेदितम्, पृ० ५२, १०४.

७०. कपोतालयः–मंजूषा, जून १९५६, पृ० २३२.

७१. गोपिका–(क्रोशन्ती) रे उदरम्भरिके ! यथा यथा तवापत्यानि नश्यन्ति तथा तथा तत बुभुक्षा वर्धते ।

रेविका–(सकम्पम्) क्षम्यतां मातः कुतो मां बन्ध्येति व्यपिदिशसि प्रतिवत्सरं प्रसुवे पुत्रमहम्

गोपिका–ननु बहून्यपत्यानि प्रसूतानि, किन्तु जातं जातं त्वयैव स्तन्यविशेण भस्मीकृतम् (नितरां कासते) ।

–असूयिनी–मंजूषा, जूलाई १९५८, प-० २९८.

७२. होलिकोत्सवम्–मंजूषा, १० : २, पृ० ३०-३१.

७३. उर्मिला–अहो मुमूर्षौ हृदयेश्वरे कथं नाम निर्दयं जनेनानेन सुखमुपभुज्येत। (सगद्गदम्) सहृदया चन्द्रिकापि मामनुकम्पमाना मन्दं मन्दं द्युर्तिवाष्पोदकं गोप्तुमिव मेघाम्बरेणात्मानमवगुण्ठयति । –कृपाणिका–दिव्यज्योति; अक्टूबर १९७६, पृ० २४.

७४. अनूपः, पृ० १४-१५.

७५. कृपाणिका–दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९७६, पृ० २४

७६. समीक्षाशास्त्र, पृ० ९४७-४८

७७. गोपालः–(आत्मगतम्) अहो ! विचित्रः प्रसङ्गः (प्रकाशम्) ततस्ततः ।

–क्षणिक विभ्रमः–मंजूषा, १० : ६, पृ० १४९.

७८. वही, पृ० १४९.

७९. (क) कृपाणिका, पृ० २८.

(ख) तापसस्यपारितोषिकम्–कथामुक्तावली, पृ० १२, १३.

८०. मायाजालम्–विश्वसंस्कृतम्, ११ : १, ४, पृ० ७१-७२.

८१. मीराचरितम्–मंजूषा, अगस्त १९६०, पृ० २९०.

८२. तुकारामचरितम्–मंजूषा, फरवरी १९५६, पृ० १५९.

८३. मिथ्याग्रहणम्–मंजूषा, १० : ६, पृ० १३६.

८४. रत्नः–x x x (कञ्चनां प्रति) अपि पश्यसि ? अपि पश्यसि ? अपि पश्यसि मे बुद्धिवैभवम्

कंचना–(विलोक्य सविस्मयं) हा! किमिति कपोतपालिकैषा निर्मापिताभवता किमतिमात्रं धनं वर्तते?

–कपोतालयः–मंजूषा, १० : १०, पृ० २२९.

८५. वीरभा–मंजूषा, ११ : ३, पृ० १४०-४१.

८६. गणेशचतुर्थी–मंजूषा, १० : ८, पृ० १९८.

८७. मिथ्याग्रहणम्–मंजूषा, फरवरी १९५६, पृ० १३३.

८८. (क) कटुविपाकः, पृ० ८९.

(ख) कपोतालयः, पृ० २३०.

(ग) कपोतालयः पृ० ३०७.

(घ) कृपाणिका, पृ० २६.

(ङ) वही, पृ० २६.

८९. कपोतालयः, पृ० २३२.

९०. कृपाणिका, पृ० २९.

९१. जयन्तुकुमाउनीया, पृ० ३५२.

९२. (क) जयन्तुकुमाउनीयाः, पृ० ३५१.

(ख) कपोतालयः, पृ० २३०-३२.

(ग) तुलाचलाधिरोहणम्, पृ०

(घ) वीरभा, पृ० १३४.

९३. जयन्तुकुमाउनीयाः, पृ० २४८, ३५३, ३४९.

९४. कटुविपाकः, पृ० ८३.

९५. होलिकोत्सवम्, पृ० ३०.

९६. गणेशचतुर्थी, पृ० १९४, १९५.

९७. जयन्तुकुमाउनीयाः, पृ० ३४६-४७.

९८. (क) वीरभा, पृ० १३७-३८.

(ख) असूयिनी, पृ० ३०४.

९९. असूयिनी, पृ० ३०४.

१००. (क) क्षणिक विभ्रमः, पृ० १४०-४१.

(ख) अनूपः, पृ० ७, ८.

१०१. अनूपः, पृ० ७.

१०२. (क) अनूपः, पृ० १२.

(ख) कपोतालयः, पृ० २२७.

१०३. असूयिनी–मंजूषाः, १२ : ११, पृ० २९८.

१०४. स्वर्णपुरकृषीवलाः–मंजूषा, १२ : २, पृ० १६३.

१०५. अनुजग्मुश्च तामन्या सोत्साहाः ग्रामयोषितः।

वन्देमातरमित्यादिजयघोषपुरस्सरम्॥–वीरभा, पृ० १४०.

१०६. जन्मसिद्धाधिकारोऽयं स्वातन्त्र्यं नाम देहिनाम्।

वयंच तत्पुनः प्राप्य शीर्षमूर्ध्वं वहामहे॥–स्वर्णपुरकृषीवलाः, पृ० ४.

१०७. खादिवस्त्रात्परं वासो नैवधार्यं कदाचन।

स्वार्थत्यागात्स्वदेशार्थं नान्यच्छ्रेयो हि विद्यते ॥—कटुविपाकः पृ० ८३.

१०८. कृपाणिका— दिव्य ज्योतिः, अक्टूबर १९७६, पृ० २२.

१०९. तुकारामचरितम् ८/१२,२२,१९ तथा २३.

११०. देव्यापराधक्षमापन स्तोत्र— दुर्गासप्तशती, १,२ तथा ३, पृ० २२६,२८.

१११. बाल्मीकि रामायण—५/३७/५२,५२,५४-५५,१/३७/३२,४/१/१२,७/३५/११, २/२७/७, २/२४/७, २/२४/२५, २/२७/९, २/२४/२६, २/२३/६, ४/८/८, ६/६३/२७, ४/४५/१४, ६/१२/१५, ६/२/६, ४/७/१३, २/१०५/१७, २/२७/६,६/११०/२५,६/२२/४५.

११२. श्रीमद्भगवद्गीता—१/२९,२/२२,३/४,४३.

११३. श्रीरामदासचरितम्—११/१,११/३६,१३/४.

११४. अभिज्ञानशाकुन्तलम्— १/१,४/३-९,१२,१५,१७-२० तथा २२

११५. कुमार सम्भवम्, १/१-५,७-१०,१६.

११६. बाल्मीकि रामायण, ४/२८/५,१/३५/१३,४/२८/१८,२०,३७.

११७. उत्तरचरितम्, २/२९,३/३८.

११८. सत्याग्रहगीता, १/१६,१७/१५,१९,३१.

११९. महाभारतम्, २११०/२६/३१.

१२०. विक्रमवेतालनाटिका— पारिजातम्, १ :७, पृ० ६-७.

१२१. वही, पृ० ७.

१२२. विवेकानन्दविजयम्— पारिजातम्, आषाढ सं० २०४३, पृ० ४१.

१२३. विवेकानन्दस्मृतिः— संविद् १५ अक्टूबर, १९८४, पृ० २७.

१२४. विक्रमवेतालनाटिका— पारिजातम्, १ :६, पृ० ४.

१२५. वही।

१२६. नचिकेतोयमसंवादम्— पारिजातम्, ३ :१,२, पृ० १४.

१२७. वही, पृ० २०.

१२८. विवेकानन्दविजयम्— पारिजातम्, ४ :१२, पृ० ३१.

१२९. वही, पृ० ३१.

१३०. विक्रमवेतालनाटिका, पृ० ६.

१३१. नचिकेतोयम-संवादम्, पृ० १३-१५.

१३२. विक्रमवेतालनाटिका— पारिजातम्, १:६-८, पृ० ५-१२,

१३३. पत्नी—(अप्युद्विग्ना बहिरायाति) अविहा, अविहा ॥ गृहाभ्यन्तरे सोमप्रभा नास्ति xxx मया तु सर्वं गृहमन्विष्टम्, देवायतनम्, चित्रायतनम्, विद्यायतनम्, मातृकक्षस्वकक्षमहानसादिकञ्च यावत्। कुत्रापि नास्ति सा। अथ प्रसाधनकक्षेऽपि प्रविश्य मया सान्विष्टा तत्रापि नास्ति सा।—वही, पृ० १३.

१३४. नचिकेतोयमसंवादम्— ३ :२, पृ० १६.

१३५. विवेकानन्दविजयम्— पारिजातम्, ४ :१२, पृ० ४.

१३६. नचिकेतोयम-संवादम्— पारिजातम्, ३ :१,२, पृ० १४.

१३७. वही, पृ० २२-२३.

१३८. विक्रमवेतालनाटिका— पारिजातम्, १ :८,१ :९, पृ० १६,१६,१२,१६.

१३९. शरण्युः– आर्यपुत्र ! यस्य गृहे अतिथिः ब्राह्मण पुत्रोऽनशनन् वसति तस्य आशाप्रतीक्षे इष्टा पूर्वे विनश्यते । इति शास्त्रवचनं कृत्वा बिभेमि ।
–नचिकेतो यम संवादम्–पारिजातम्,३ :१,२,पृ० १६.
१४०. विक्रमवेतालनाटिका–पारिजातम्,१ :९,पृ० ११.
१४१. अरे भाई ! हिन्दी में सुनना चाहते हो तो सुनो । सोमप्रभा की बात सुनकर हरि स्वामी अभी सोच ही रहा था ...लगता है मंत्री महोदय को एक दामाद मिल गया ।
–विक्रमवेतालनाटिका–पारिजातम्,१ :७,पृ० ७.
१४२. वही,पारिजातम्,१ :६,८,पृ० ४,१२.
१४३. विवेकानन्दविजयम्–पारिजातम्,४ :१२,पृ० ३४.
१४४. नचिकेतोयमसंवादम्–पारिजातम्,३ :१,२,पृ० ११,१२.
१४५. विवेकानन्दविजयम्–पारिजातम्,४ :१२,पृ० ३७.
१४६. विवेकानन्दस्मृतिः,पृ० ३०,३३.
१४७. विक्रमवेतालनाटिका–पारिजातम्,१ :८,पृ० ११.
१४८. नचिकेतोयमसंवादम्–पारिजातम्,३ :१,२,पृ० २१.
१४९. कठोपनिषद्,१/२/१८,१/३/१४.
१५०. निन्दन्तुनीतिनिपुणा,नीतिशतक,श्लोक ८४.
१५१. ऋग्वेद,१/३५/२.
१५२. कठोपनिषद्– २/३/१९,१/१/२३,२५,२७,२/४,७,१८,२०,३/३,४,९,१४, २/२/९,१०,११,१५,१९,२०.
१५३. विवेकानन्दविजयम्–प्रस्तावना, पृ० १-५,४/७,९,१९,२४,२७,२८.५ पृ० ५५, ५/१३,१५,१७.
१५४. विक्रमवेतालनाटिका–पारिजातम्,१:९,पृ० १४.
१५५. अष्टाध्यायी,१/२/४.
१५६. लघुसिद्धान्तकौमुदी-भैमी व्याख्या-द्वितीय भाग,पृ० ४४३.
१५७. युध्यस्वविगतत्रासः सर्वै सार्धं महाबल । –रामायण ७/३७,१२१.
१५८. विक्रमवेतालनाटिका–पारिजातम्,१ :६-८,पृ० १६.
१५९. दुह्याच्पच्दण्ड्रुधिप्रच्छिचिब्रूशासुजिमथमुषाम् ।
कर्मयुक् स्यादकथितं तथा स्यान्नीहृकृषवहाम् ॥–लघुसिद्धान्तकौमुदी, अकथितं की वृत्ति ।
१६०. अष्टाध्यायी,१/४/५१.
१६१. गणयञ्छागः– दिव्यज्योतिः,जुलाई १९७६,पृ० ९.
१६२. अष्टाध्यायी,१/४/१००.
१६३. शान्ता (सोद्वेगम्) .... गृहस्वामिनः शासने स्थितायामपि मयि तस्य पिपासाशमनाय नास्ति गृहे शर्करा ।

भास्करः– अलं मिथ्याकदेन। भवादृश्या सुगृहिण्याः कोष्ठागारे शर्करा नास्ति संचितेति को विश्वसेत् ।

शान्ता–(सरोषम्) कुतः संचीयते। किं नहि जानाति महाभागः आपणे शर्करा दुर्लभेति । तव तु प्रतिदिनं द्विहोरापर्यन्तं वृत्तपठनं कालापव्यय एव प्रतिभाति मे । न जाने कुत्र लुप्ता शर्करा। युद्धकालेऽपि नासीत्तथा शर्कराया अभावो यथाद्य युद्धावसानानन्तरम् । –पाददण्डः–सागरिका,२ :३,पृ० २५८.

१६४. अन्नदेवता (हस्तलिखित), पृ० ११.

१६५. वही, पृ० ८,९.

१६६. पाददण्डः, पृ० २६२.

१६७. शान्ता—(साश्रुकण्ठा) कुपिते भगवति किं मम कोपेन

भास्करः—हम् विदितम्। शान्ते अरण्यरुदितमिव मे समुपाश्वासनम्। तदुपेक्ष्य त्वं मुहुरेकमे मार्गमनुधावसि। लंघितासि पुनः सन्तापेन। x x x समरव्यसनेन विपन्नस्तव भ्रातेति बहुलीभूतेन वृतान्तेन प्रवर्तितस्तवाश्रुप्रवाहो भगवत्प्रसादेन प्रमार्जितः। बहुशोचितस्तवानुजो यमसदनमिव प्रविश्य सकुशलः प्रत्यागतः।—पाददण्डः, पृ० २५९।

१६८. वही, पृ० २५८।

१६९. वही, पृ० २५९।

१७०. लीला—आम्! अहं यदा चलच्चित्रदर्शनाय् उत्सुका तदा तातो झटिति वदति अल्पवयस्का बालिकासित्वम्। चलचित्रं बालैर्न द्रष्टव्यम्। किन्तु यदाऽहं यदाऽहं मिष्ठान्नं याचे तदा तु अहं बाला।—अन्नदेवता, पृ० २.

१७१. पाददण्डः, पृ० २५८-५९, ६२-६७, ७५।

१७२. वही, पृ० २५७।

१७३. वही।

१७४. वही, पृ० २६०।

१७५. वही।

१७६. वही, पृ० २६१।

१७७. वही, पृ० २५९।

१७८. तमसान्तरितं गगन वितानम् x x x

सुधया संजीवयसि नहि निशाम्॥—पाददण्डः, पृ० २६२.

१७९. नन्दनं प्रियरञ्जनम्। कलमञ्जुल मञ्जीरशिञ्जितं मानसहंसी विभ्रमम्...।

—वही, पृ० २८३।

१८०. बालाहं नवा बाला नाहं जाने ममस्थितिम्।

इतो नास्मि ततो नास्मि प्रभो मां युवती कुरु॥—अन्नदेवता, पृ० २.

१८१. कुमारसम्भवम्, १/१.

१८२. (क) कुमारसम्भव, ५/८६.

(ख) पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० २७.

१८३. छायोपजीवी पदकोपजीवीपादोपजीवी सकलोपजीवी।

भवेदथ प्राप्तकवित्वजीवी स्वोन्मेषतो वा भुवनोपजीवी॥ —कविकण्ठाभरणम्, पृ० २/१.

१८४. (क) सीताहरणम्, पृ० १.

(ख) पार्वती परमेश्वरीयम्, पृ० २१.

१८५. पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० १२,१३.

१८६. रामवनगमनम्, पृ० १०.

१८७. वही, पृ० १५.

१८८. वही, पृ० ६.

१८९. वही, पृ० ७.

१९०. स्त्रीष्वेका तरुणी– आर्ये लक्ष्मि, किं भवती श्यामसुन्दरीदेव्याः पुत्र्याः
शारदायाः पतिं मनसिकृत्वा एवमाह धार्मिकम्
लक्ष्मीः– अथकिम् !
तरुणी– मयातु वार्तान्तरं श्रुतम्
लक्ष्मी – किमिव ? x x x
तरुणी–(सगौरवं) श्रुतं मया सह दक्षिणेश्वरे काली मन्दिरसमीपे उन्मतः सन् इतस्ततो भ्रमन्नास्ते इति । – कालीदर्शनम्– संस्कृत प्रतिभा, १२ : २, पृ० १५९.

१९१. वही, पृ० १६१.

१९२. कालीदर्शनम्, पृ० १५९.

१९३. शारदा–(आत्मगतम्) तुष्याम्येतया वार्तया। गंगातीरे काली-घटट्-समीपे हि दक्षिणेश्वरम् अतः दक्षिणेश्वरं गत्वा भर्तारं द्रष्टुमेष एवावसरः। – वही, पृ० १६०.

१९४. वही, पृ० १६०-६१.

१९५. वही, पृ० १६२.

१९६. वही, पृ० १६२-६३.

१९७. वही, पृ० १५९.

१९८. रुक्मिणी– भृशं कृशाङ्गोऽपि महान्तरङ्गः सुचेलहीनोऽपि रुचेरहीनः।
कोऽयं द्विजातिस्त्वयि भक्तिनम्रः सत्वं गुणो मूर्त इवाभ्युवैति ॥
– कुचेलेतिवृत्तम्– संस्कृत प्रतिभा, ३ : २, पृ० २३४.

१९९. कालीदर्शनम्, पृ० १६२.

२००. भूमिकन्या, पृ० ८८, ८९.

२०१. वही, पृ० १०९, १०.

२०२. वही, पृ० ३५.

२०३. वही, पृ० ३७.

२०४. उर्मिला–(मलिनहास्येन) मम शिरच्छेदं करिष्यति ? करोत्वार्यपुत्रस्तमेव। एतदस्तिमे शिरस्तवाग्रे। जानात्वेतद्भवान्। सीतायाः पक्षमादाय वाक्कलहं कर्तुमागतास्मि। आजन्मं मूका इवावर्ते। परमद्य मुखं विवृणोमि . . . दोषहीनां निजपत्नीं निर्दयं त्यक्ष्यति च। अत एवाद्य ईदृशी निर्लज्जता कर्तव्याऽभून्मया। – वही, पृ० ६८.

२०५. वही, पृ० १३.

२०६. वही, पृ० ११२.

२०७. भूमिकन्या, पृ० ९७.

२०८. वही, पृ० १०९.

२०९. वही, २/पृ० ४१-४२.

२१०. सीता– मातावद् उर्मिले। अद्याहं अतीव विह्वलाऽस्मि। तस्य वनवासकालस्यानन्दं स्मरन्त्यै मह्यमेतानि राजकीयवैभवानि दुस्सहानि प्रतीयन्ते। अस्य हृदयदाहिन्यां पावकज्वालायां घृताहुतिं मा कुरु वत्से। – वही, पृ० २९.

२११. उर्मिला– ततः किं भवतो रक्तं नौष्माणं भजति ? भवदंशेनोत्पन्नौ आत्मजौ पश्यतः आर्यस्य हृदयं किं तौ प्रति न धावितम् ? (रामस्य व्याकुलं मुखं निर्दिश्य) पश्य ! भवतो मुखमुद्रैव कथयति सत्यं देव। किमिदं श्वासनिरोधेन वात्मानमभिद्रुह्यति ? . .।

–भूमिकन्या, पृ० १०४.

२१२. वही, ३/पृ० ९२.

२१३. वही, ४/पृ० ९५.

२१४. माधवः स्वामिन् ! नृत्यमेतन्नव्यषद्धितिमनुसृत्य विधीयते

नारदः– नृत्यमेतत् ? न हि पश्यामि वराकस्य मुनेः भरतस्य नाट्यनृत्यादीनाम् संगतिः कुत्रापि । व्याघ्रभीता इवैतानार्यः पुरुषान् गृहीत्वा पलायमाना इवदृश्यन्ते । हुंह एतदेव संगीतकम् । कृतार्थोऽस्मि संवृत्तः, प्रस्थितोऽस्मि ।

माधवः–स्वामिन् ! क्षणं विरम्यतां भवान् । मध्ये प्रस्थानं संगीत कौतुकेषु न शोभते ।

–नारददौत्यम्–मधुराम्लम्, पृ० ४४.

२१५. प्रतिबुद्धा–मधुराम्लम्, पृ० ११.

२१६. निम्बपत्राणि, पृ० ५.

२१७. निम्बपत्राणि–मधुराम्लम्, पृ० २-८.

२१८. वही, पृ० ५.

२१९. वही, पृ० ५-६.

२२०. नारददौत्यम्–मधुराम्लम्, पृ० ४२.

२२१. वही, पृ० ४३.

२२२. निम्बपत्राणि, पृ० २, ३.

२२३. ललितः– ...कीदृशं चायमानीतवत्यसि ?

सुलेखा–(ईषद्रोषेण) कीदृशम् ?

ललितः–कवोष्णं कषायं धूमगन्धि च

सुलेखा –(कोपना भूत्वा) हुं हुं । पूर्वमेव मया सूचितोऽसि गैसविषये । गैसमञ्जूषा समाप्त-प्राया स्टोवस्य वैद्युतोष्णाकस्य वा प्रबन्धः समाचरितव्य इति प्रातः कालादारभ्य जीर्णाङ्गाष्टिकायां अङ्गारान् मुखवायुना प्रज्वालयन्ती क्षारदिग्धाङ्गी सञ्जाता । (अंगेभ्यः क्षारचूर्णानिमार्जयति)–प्रतिबुद्धा, पृ० ११.

२२४. मधुराम्लम्, पृ० ४, ९, ८, ५३, १४-१५, २२, ३०, ३५, ३६, ५५.

२२५. निम्बपत्राणि, पृ० १.

२२६. प्रतिबुद्धा, पृ० १०.

२२७. याथार्थ्यगरलम्, पृ० २५.

२२८. नारददौत्यम्, पृ० ३७.

२२९. वही, पृ० ४०.

२३०. वही, पृ० ४१.

२३१. कविकालिदासीयम्, पृ० ५०.

२३२. भोजप्रबन्ध, ७६-७७, ८६, ११३, १५४, १६१.

२३३. रघुवंश, ६/६७.

२३४. प्रतिबुद्धा, ११-१२, १५, १७.

२३५. नारददौत्यम्, ४१-४३.

२३६. याथार्थ्यगरलम्, २७, २९, ३१.

२३७. मधुराम्लम्, पृ० ६-७, ११, १९.

२३८. वही, पृ० १०, ४९, ५३, ४३.

२३९. मुक्तिमहोत्सव (हस्तलिखित जीरोक्स प्रति), पृ० ५.

२४०. वही, पृ० ४.

२४१. हिमालयः– अये पश्य देवर्षि नारद इत एवागच्छति । ...
मैना (अपवार्य हिमालयं प्रति) स्वामिन् ! सर्वज्ञा खलु श्रूयन्ते ऋषिजनाः स्वपुत्र्याः भाग्यलक्षणानि पृष्टव्यानि ।– पार्वतीतपश्चर्या, पृ० ३.

२४२. राधानुनयः, पृ० २६

२४३. वही, पृ० १०.

२४४. वही, पृ० २०

२४५. वही, पृ० ११.

२४६. (क) पार्वतीतपश्चर्या (हस्तलिखित जीरोक्स), पृ० १०.
(ख) राधानुनयः, पृ० ८-९.

२४७. गीतगोविन्दम्, १/९.

२४८. राधानुनयः, श्लोक १६-१७

२४९. मुक्तिमहोत्सवः (हस्तलिखित जीरोक्स), पृ० ६.

२५०. बुद्धः– भदन्त ! किमत्रमन्त्रिवासस्यसूचनाऽवगताऽऽम्रपाल्या ?
भदन्तः– महात्मन् ! नगरवधूराम्रपाली अद्यैव इहागच्छति तथागतदर्शनार्थम् ।
बुद्धौ– भदन्त ! आम्रपाली नैव नगरवधूः ।
भदन्तः– तत्का हि सा भगवान् !
बुद्धः– भदन्त ! का हि सा इत्यवाङ्मनसगोचररहस्यम् ।– आम्रपाली, ४/पृ० ३९.

२५१. वही, २/पृ० २५.

२५२. वही ।

२५३. वीरभद्रः– प्रतीयते खलु मगधराजस्याजातशत्रोस्ताण्डवलीलैषा । संग्रामवेला समायाता साम्प्रतं वयमपि कटिबद्धाभवामो नूनमन्यथा राष्ट्रमर्यादा .. (इत्यर्धोक्ते)
पौरजनाः–(समवेतस्वरेण) स्वीकृतमिदं रणनिमन्त्रणं मगधराजस्य जयतु वैशाली, जयतु वृज्जिसंघोऽस्माकञ्च । – वही, २/पृ० २९.

२५४. वही, पृ० २७.

२५५. वही, पृ० २५-२६.

२५६. आम्रपाली, पृ० २१.

२५७. वही, पृ० २८.

२५८. वही, पृ० २०, २७, २८.

२५९. अजातशत्रुः–(सक्रोधम्) पश्य रे वारनारि ! ममासिधारम् ! पुनः पुनरपि स्मर च मे संकल्पम् । मम निराशाकशाघातेन विनष्टा भविष्यसि । ततश्चिन्तयैकवारम् पुनरपि ।
– वही, पृ० २७.

२६०. गान्धी–(विहस्य) स्वीकृतं मया महर्ष तत् । भारतराष्ट्र विमुक्त्यर्थं का कल्पना कष्टस्य ? कारागारे एव कृष्णस्य जन्म बभूव । तेन च कंसवधः कृतः अतएव वरदानमिव तत्कारागृहनिवेषणम् ।
– सत्यमेव जयते (दशमस्त्वमसि), पृ० ३७.

२६१. कञ्चनः– किं रे राजुल ! किमसौ अस्माकं गर्दभ एव मूढत्वं प्रतीक इवलोके वेदे च कुख्यातः ? कथान्नान्ये पशवस्तथा ?

राजुलः–मन्ये, गर्दभ संगतिस्त्वां भृशं परिभवति, रजकश्चासि यतः ।

X X X X

कञ्चनः–इत्थं ते साहसं, नाहं मूर्खोऽस्मि, त्वं मूर्ख श्रेष्ठः, ते पिता मूर्ख शिरोमणिः तस्यापि पिता मूर्खसम्राडासीत् किमेतत् न सत्यम् ।

–सचाप्यस्तिरजकएव (दशमस्त्वमसि), पृ० ७.

२६२. वाइसरायः–किं कथयसि रे नग्नभिक्षुक ! जानासि त्वं मिथ्याप्रलपनफलम् ।

–सत्यमेव जयते (दशमस्त्वमसि), पृ० ३६.

२६३. वही, पृ० ३६.

२६४. वाइसराय (सविस्मयम् स्वगतम्) परम साहसी जीवोऽयं, यन्न विभेति ब्रिटिश शासनात्किंकिदपि। निखिला भारतीय ह्यस्यानुयायिनः सन्ति। मन्येऽहं यदयमात्मबल सम्पन्नोऽस्ति ।

वही, पृ० ३७.

२६५. आम्रपाली, पृ० ३७.

२६६. ज्ञानेनहीनाः पशुभिस्समाना (वही), पृ० १९.

२६७. वही, पृ० २०.

२६८. अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (वही), पृ० ३२.

२६९. उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम् (वही), पृ० १५.

२७०. वरयते आम्रपाली वरं मामस्ति तद्वरम् ... ।

नो चेत्त्वां नाशयिष्यामि वैशालीं चापि निश्चयः ॥–आम्रपाली, पृ० २७.

२७१. आम्रपाली, पृ० १७.

२७२. वही, पृ० १८.

२७३. वही, पृ० १९.

२७४. चल सखि ! यत्र वसति चिरसत्यम्

विहरति यत्र सदा मधुमासः

प्रसरति दिशि दिशि यत्र सुवासः

प्रतिपलमेव विचित्रविलासस्तत्र सुखं ह्यत्यन्तम् ॥–वही, पृ० १४.

२७५. वही, पृ० २२.

२७६. वही, पृ० ३१-३२.

२७७. आम्रपाली, पृ० ५२

२७८. वही, पृ० १८,१९.

२७९. सत्यमेव जयते (दशमस्त्वमसि), पृ० ३७.

२८०. अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (दशमस्त्वमसि), पृ० ३०.

२८१. सत्यमेव जयते, (दशमस्त्वमसि), पृ० ३४-३६.

२८२. माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः (वही), पृ० ४१.

२८३. कः भेदः–लोकसंस्कृतम्, १ :४, पृ० १०

२८४. सखा सुदामा–लोकसंस्कृतम् फाल्गुन २०४५, ५ : १, पृ० ११.

२८५. विराड्गृहम्, पृ० ३८.

२८६. पुण्डरीकः–कुत्रास्तिनचिकेताः ? अस्माकं क्रीडायां तस्यानुपस्थितिः मनसि मे दुःखं जनयति ।

उत्पलः– सत्यं पुण्डरीक ! क्रीडायां तस्यासक्तिर्नास्ति, अध्ययनात् अतिरिक्तं किमपि स न जानाति, न क्रीडां, न वा कौतुकादिकम् । केवलं अध्ययनं अध्ययनं, अध्ययनम् (अवज्ञां व्यंजयति) ।

–नचिकेतश्चरितम्, पृ० २.

२८७. (क) महात्मादधीचिः–लोकसंस्कृतम्, ४ : ३, पृ० २०-२१.

(ख) कः भेदः–लोकसंस्कृतम्, १ : ४, पृ० १०-११.

(ग) महीयसी गार्गी, पृ० ३१-३२.

२८८. (क) नचिकेतः कुत्रगतोऽसि–पारिजातम्, अगस्त सितम्बर १९८४, पृ० ३४-३५.

(ख) शठेशाठ्यं समाचरेत्–लोकसंस्कृतम् २ : ४, पृ० १३, १४.

२८९. प्रतिहारी–पञ्चशर ! अयमत्रभवान् देवराजः येन त्वं स्मृतिपथं गतः ।

मदनः–जयतु जयतु महाराज ! x x x अद्य मम महान् सौभाग्योदयः यदहं भवता स्मृतिपथमारूढः... । –मदनदहनम्–विश्वभाषा ५ : ४, पृ० २२.

२९०. अशोकः–अहं भवतः कां सेवां करवाणि (शब्दग्रहणयन्त्रं सक्रियं करोति)

क्षेमकरनः–(हसन् सगर्वम्) अलं केवलं एकविंशतिसहस्ररूप्यकाणि मह्यं प्रथमदर्शने दद्याः ।

अशोकः–भवता अल्प दक्षिणायाचनेन अहं लज्जितो जातः (अजलिंबद्धवा) आम् x x x (रूप्यकाणि निःसार्य ददाति चित्रकारः तस्य चित्रं गृह्णाति) ।

–यौतुकं पातकं परम्–पारिजातम्, अक्टूबर १९८४, पृ० ११.

षष्ठ प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों का आकार, मंचसज्जा और अन्वितित्रय

नाट्य रंगमंचीय विधान है। अतः रूपककार रंगमंच की आवश्यकता के अनुसार घटनाओं को दृश्यों या अंकों में विभक्त करके रंगमंच पर प्रस्तुत करता है। एक दृश्य को दूसरे दृश्य से पृथक् करने के लिए ही दृश्यों अथवा अंकों की योजना की जाती है। नाट्यकार दर्शकों को आकृष्ट करने के लिए मंचसज्जा के सम्बन्ध में विविध नाट्य निर्देश भी देता चलता है। नाट्य मण्डप में प्रधानतः दो प्रकार के दृश्य विधान प्रस्तुत किए जाते हैं। एक दृश्य विधान तो रंग मण्डप की सज्जा का अंग होता है तथा दूसरा नाट्यवृत्त के अनुरोध से प्रस्तुत किया जाता है। भरत ने प्रथम प्रकार के लिए अनेक रमणीय वस्तुविधानों की कल्पना की है, जैसे– रंगशीर्ष शुद्धादर्शतलाकार हो, उसमें वज्र, वैदूर्य, स्फटिक एवं स्वर्ण का कार्य हो, मत्तवारिणी एवं षड्दारूक विधान हो। स्तम्भों पर शालभंजिकाएँ व पुष्पलताएँ आदि उत्कीर्ण हों।[१] वस्तुतः रंगमंच की साज-सज्जा नाट्य प्रयोग को आकर्षक बना देती है।

रूपकों में इतिवृत्त के अनुरोध से भी अनेक नयनाभिराम दृश्यों की योजना होती है। तदनुरूप ग्राम, नगर, उपवन, तपोवन प्रासाद, दुर्ग, दुर्गमकान्तार, नदियाँ, पर्वत आदि की पृष्ठभूमि तैयार की जाती है। मनुष्य का जीवन जिस रूप में प्रकृति के परिवेश में विकसित होता है, भरत ने उसी के अनुरूप वनों, ग्रामों, नगरों आदि की भव्य रमणीय दृश्यावली के मध्य नाट्य प्रयोग का विधान किया है। भरत ने आहार्य अभिनय की पुस्तविधि से प्राकृतिक दृश्य व वन्य पशुओं को नाट्यमण्डप में प्रस्तुत करने का स्पष्ट संकेत दिया है। कुछ वस्तुओं को आकृति के अनुरूप वस्त्रादि में लपेट कर प्रस्तुत करने का विधान है।[२] भरत ने इन दो विधानों के अतिरिक्त कक्ष्याविधि का भी वर्णन किया है।[३] कक्ष्याविभाग में रंगमंच पर काल्पनिक वन, उपवन, नगर आदि की कल्पना कर ली जाती है तथा स्थान आदि का समायोजन कर लिया जाता है। अतः यह मंच सज्जा का संकेतात्मक विधान है।[४] अभिज्ञानशाकुन्तलम् में रथ की तीव्र गति, मृग का पलायन तथा सप्तम अंक में दुष्यन्त के स्वर्गारोहण के दृश्य इसी कक्ष्याविधि के माध्यम से प्रस्तुत किए गए हैं । यद्यपि आधुनिक नाट्यकार दृश्य अथवा अंक के आरम्भ में मंच सज्जार्थ पर्याप्त निर्देश दे देते हैं तथापि कुछ दृश्यों की सज्जा के लिए भरत निरूपित कक्ष्याविधान अथवा कृत्रिम आकृतियों का प्रयोग ही उपयुक्त है क्योंकि सीमित रंगमंच पर नाट्य की असीमित घटनाएँ सजीव नहीं

की जा सकती। नाट्य में मंच सज्जा अपेक्षित है। क्योंकि मंच सज्जा कथ्य के सम्प्रेषण तथा नाटकीय स्थिति के अभिनय के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि तथा वातावरण का निर्माण करती है।[५]

रंगसज्जार्थ सामग्री दो प्रकार की होती है। मंच सामग्री एवं पात्र सामग्री। मंच सामग्री जैसे— मेज, कुर्सी, कालीन, पर्दे, फूलदान आदि। पात्र सामग्री, यथा— कलम, छाता, ब्रीफकेस, चश्मा, पिस्तौल आदि।

आज के वैज्ञानिक युग में प्रकाश व्यवस्था भी रंगमंच की सज्जा का विशेष अंग है। प्रकाश के माध्यम से रंगमंच पर प्रातः, सांय, रात्रि अथवा चाँदनी रात अथवा बरसात आदि का वातावरण उपस्थित किया जा सकता है वस्तुतः प्रकाश के नियन्त्रित उपयोग द्वारा अभिनीत हो रहे दृश्य से मनःस्थिति एवं वातावरण का परिवर्तन किया जा सकता है।[६] जब किसी महत्वपूर्ण नाट्यस्थिति के प्रभाव को बढ़ाने के उद्देश्य से मंच के कार्यस्थल को पूर्ण दीप्ति में रखते हैं और शेष भाग को दीप्ति की ओर धीरे-धीरे कम करते हैं तो दर्शक का ध्यान धीरे-धीरे दीप्त क्रिया स्थल पर केन्द्रित हो जाता है। दर्शक इस सूक्ष्म परिवर्तन को लक्ष्य नहीं कर पाते हैं किन्तु उनके अवचेतन पर अनजाने ही इस परिवर्तन का अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

नाट्यकार अन्वितित्रय के निर्वाह का भी पक्षपाती होता है। लघु रूपकों तथा एकांकी आदि में तो अन्वितित्रय अर्थात् स्थान, काल एवं व्यापारों की एकता सम्भव भी है परन्तु जीवन चरितात्मक बड़े नाटकों में यह प्रयत्न साध्य है। प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्रियों ने एक अंक की वस्तु के लिए एक दिन का समय निर्धारित किया है।[७] आधुनिक पाश्चात्य नाट्यशास्त्रज्ञों का भी यही मत है। यद्यपि स्थान की एकता का संकेत भी नाट्यसाहित्य में मिलता है परन्तु यह कठिन है। इसीलिए प्रायः प्राचीन एवं अर्वाचीन नाटकों में संकलनत्रय का पूर्ण निर्वाह नहीं मिलता। देश एवं काल का नाट्य में निर्वाह करते समय इतना ही ध्यान रखना चाहिए कि एक से दूसरे अंक अथवा दृश्यों की घटनाओं के स्थान एवं क्रम में कोई विरोध नहीं हो।[८] इस प्रकार रूपकों में संकलनत्रय का निर्वाह परम आवश्यक न होते हुए भी एक सीमा तक मान्य है।

प्रस्तुत अध्याय में अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं का मंच सज्जा व अन्वितित्रय की दृष्टि से अध्ययन किया जा रहा है।

डॉ० रमा चौधुरी के अधिकांश नाटक जीवन चरित्र प्रधान है। विस्तृत जीवन की समस्त प्रमुख घटनाओं का समायोजन करने के लोभ में उनके द्वारा अन्वितित्रय का पूर्णतः निर्वाह नहीं हुआ है तथा रंग सज्जा भी अत्यन्त श्रम साध्य हो गई है। इनके समस्त नाटक दृश्यों में विभक्त हैं।

कविकुलकोकिलम् की वस्तुयोजना दस दृश्यों में है। दृश्यों में प्रयुक्त अवान्तर दृश्यों को पट परिवर्तन नाम से कहा गया है। दृश्यों में स्थलों की

बहुलता एवं विविधता से देशान्विति का अभाव है तथा मंच सज्जा कठिन हो गई है। प्रथम दृश्य एवं तृतीय दृश्य का प्रथम उपदृश्य कालिदास के पिता के घर का है। द्वितीय दृश्य घर से सटे उद्यान से सम्बद्ध है। तृतीय दृश्य में द्वितीय उपदृश्य तथा पंचम दृश्य भयंकर वन का तथा तृतीय उपदृश्य वन पथ का है। चतुर्थ तथा अष्टम दृश्य राजकन्या विद्यावती के प्रसाधन गृह में तथा इसी का अन्य उपदृश्य तथा षष्ठ दृश्य स्वयंवर सभागृह में घटित हुआ है। अष्टम दृश्य की घटनाएँ गहन वन में सरस्वती कुण्ड के समीप घटित हुई है। नवम दृश्य दो भागों में विभक्त है। प्रथम उपदृश्य वन पथ का तथा द्वितीय उपदृश्य विद्यावती के कक्ष का है। दशम दृश्य की घटनाओं का स्थल सम्राट विक्रमादित्य का सभामण्डप है।[१] नाट्यकर्त्री ने मंच सज्जा के लिए संकेत नहीं दिये हैं। इन सभी दृश्यों के लिए पर्याप्त श्रम अपेक्षित होने से मंच सज्जा श्रम - द्रव्य-सापेक्ष हो गई है।

कुछ दृश्यों में घटनाएँ क्रमशः घटित हुई हैं तथा कुछ में दिवसों अथवा वर्षों का अन्तराल है। प्रथम दृश्य प्रातःकाल तथा द्वितीय मध्याह्न काल में घटित हुआ है। तृतीय दृश्य कुछ वर्ष बाद का है जब पिता की मृत्य के कारण कालिदास आजीविका के लिए चिन्तित हैं। इस दृश्य के तीनों उपदृश्य क्रमशः प्रातःकाल, मध्याह्न एवं अपराह्न में सम्पन्न हुए हैं। पंचम दृश्य अगले दिन प्रभात का है। षष्ठ दृश्य कुछ दिनों बाद प्रभात काल से सम्बद्ध है। सप्तम दृश्य की घटनाएँ उसी दिन रात्रि में घटित हुई हैं, जब विवाहोपरान्त कालिदास पत्नी से अपमानित होते हैं। अष्टम दृश्य भी रात्रि का है, यहाँ वह सरस्वती को प्रसन्न करके आशीर्वाद स्वरूप ज्ञान प्राप्त करते हैं। नवम दृश्य में दूसरे दिन प्रातः काल कालिदास ज्ञान प्राप्त करके वापस विद्यावती के पास पहुँचते हैं। दशम दृश्य अनेक वर्ष पश्चात् का है जब विक्रमादित्य की सभा में कालिदास को सार्वभौम कवि की उपाधि प्राप्त होती है। इस प्रकार अनेक वर्षों की घटनाएँ दस दृश्यों में व्यवस्थित हैं। अनावश्यक घटनाओं को यहाँ स्थान नहीं दिया गया है, अतः व्यापारान्विति का निर्वाह हुआ है।

देशदीपम् में नाट्यकर्त्री ने समस्त दृश्यों के आरम्भ में स्थान एवं काल का संकेत किया है। कथा वस्तु को दस दृश्यों में विभक्त किया गया है। द्वितीय तथा नवम दृश्य में दो उपदृश्य हैं। प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ व दशम दृश्यों का कार्यस्थल ब्रह्मबल की कुटिया का है। द्वितीय दृश्य का प्रथम भाग, तृतीय दृश्य व सप्तम दृश्य पल्ली के विशाल प्रांगण व मार्ग के हैं। अष्टम दृश्य का स्थान हिमालय के निकट भारतीय युद्धशिविर का है। नवम दृश्य का पूर्वार्द्ध युद्ध भूमि का तथा उत्तरार्द्ध भारतीय शिविर के चिकित्सालय का है।

प्रथम दृश्य का घटना समय सायंकाल का, द्वितीय दृश्य अगले दिन प्रभातकाल का, तृतीय दृश्य इसी दिन सायंकाल का और चतुर्थ व पंचम दृश्य

अगले दिन प्रातःकाल का है । षष्ठ दृश्य पंचम दृश्य की अपेक्षा कुछ माह बाद का है क्योंकि पंकजनयना नर्सिंग का प्रशिक्षण प्राप्त करके युद्धभूमि में जाना चाहती है । सप्तम दृश्य प्रातःकाल में सम्पन्न हुआ है । अष्टम दृश्य कुछ दिनों पश्चात् उषःकाल में तथा नवम दृश्य सन्ध्या काल में घटित हुआ है । नवम दृश्य का उपदृश्य सूर्यास्त के समय का है । दशम दृश्य प्रातःकाल का है । इस प्रकार नाट्यकर्त्री ने स्थान एवं काल का समायोजन करने का प्रयास किया है। अधिकांश घटनाओं का स्थान गाँव एवं तत्रस्थ ब्रह्मबल का घर है । मंच सज्जा द्रव्य निरपेक्ष है लेकिन श्रम-सापेक्ष है । सम्पूर्ण नाटक का घटनाचक्र एक वर्ष में घटित हुआ है ।

सप्तम दृश्य को छोड़कर अन्य सभी दृश्यों में व्यापारान्विति है । समस्त पात्र देश हित की भावना से अपने-अपने कार्यों में संलग्न हैं । यहाँ सप्तम 'कौतुक दृश्य' की अवतारणा विस्तार-मात्र प्रतीत होती है ।

निवेदितनिवेदितम् के प्रत्येक दृश्य के आरम्भ में स्थान एवं समय का निर्देश किया गया है । रूपक में प्रथम से चतुर्थ दृश्य पर्यन्त घटना स्थल लन्दन है । प्रथम दृश्य लेडी ईसावेल के घर की बैठक का है । चतुर्थ दृश्य सभागार का और तृतीय दृश्य लन्दन में विवेकानन्द के आवास की बैठक का है । चतुर्थ दृश्य मार्गरिट् के घर का एक प्रकोष्ठ है । पंचम दृश्य का घटना स्थल कलकत्ता के वाग्बाजार में श्रीशारदामणि के घर का है । षष्ठ दृश्य की घटनाएँ कलकत्ता में नीलाम्बर मुखोपाध्याय के उद्यानस्थ एक मन्दिर में घटित हो रही हैं । सातवें दृश्य का कार्यस्थल वाग्बाजार में पल्ली १६, बोस्पाड़ा लेन में तथा अष्टम दृश्य वाग्बाजार के पल्ली पथ में सम्पन्न हुआ है । नवम दृश्य १६ बोस्पाड़ा लेन में स्थित निवेदिता-बालिका-विद्यालय का है । दशम दृश्य बेलूरमठ में घटित हुआ है । एकादश दृश्य कलकत्ता में १७ बोस्पाड़ा लेन में भगिनी निवेदिता के निवास से सम्बद्ध है । अन्तिम दृश्य का घटना स्थल दार्जिलिंग में रायभिला नामक स्थान है । इस प्रकार समस्त दृश्यों की घटनाएँ अलग-अलग स्थलों पर घटित हुई हैं । फलस्वरूप मंच सज्जा जटिल हो गई है । मंच सज्जा के लिए विशेष संकेत भी नहीं दिये गये हैं । प्रथम दृश्य में बैठक के दृश्य में आतिशदान में अग्नि प्रज्वलन का उल्लेख हुआ है । विदेशी गृह एवं बैठक की सज्जा के लिए भी पर्याप्त श्रम व द्रव्य अपेक्षित है ।

प्रथम दृश्य नवम्बर १८९५ के सायंकाल से तथा द्वितीय दृश्य मई १८९६ के सायंकाल से सम्बद्ध है । तृतीय दृश्य उसके दूसरे दिन प्रातः काल का है । पंचम दृश्य १७ मार्च १८९८ को प्रातः काल घटित हुआ है । षष्ठ दृश्य २५ मार्च १८९८ के ब्राह्ममुहूर्त का है । सप्तम दृश्य की घटनाएँ मई १८९८ के मध्याह्न में सम्पन्न हुई है । अष्टम दृश्य भी मई १८९८ के प्रातः काल का है । नवम दृश्य १३ नवम्बर १८९८ से तथा दशम दृश्य २ जुलाई १९०२ बुधवार

को घटित हुआ है। एकादश दृश्य नौ साल बाद सन् १९११ के प्रातःकाल का है। द्वादश दृश्य १३ अक्टूबर १९११ को घटित हुआ है। इस प्रकार सम्पूर्ण नाटक का घटनाचक्र नवम्बर १८९५ से १९११ ई० अर्थात १६ वर्षों में घटित हुआ है। दृश्यों की अवान्तर कथा से कालक्रम में विच्छेद नहीं हुआ है। रूपक की समस्त घटनाएँ विवेकानन्द से प्रभावित होकर निवेदिता के भारत आने तथा भारत की सेवा में जीवन-अर्पण करने से सम्बद्ध हैं। अतः यहाँ व्यापारान्विति है।

पल्लीकमलम् का विभाजन नौ दृश्यों में है। प्रथम, तृतीय, चतुर्थ तथा सप्तम् दृश्य की घटनाएँ मायाविनी नदी तट पर स्थित मधुमालती पल्ली में ब्रह्मपद के घर पर घटित हुआ है द्वितीय, पंचम तथा नवम दृश्य की घटनाओं का स्थल मायाविनी नदी का तट है। षष्ठ दृश्य की घटनाओं का स्थान मधुमालती पल्ली है। इन दृश्यों की सज्जा के लिए विशेष श्रम व सामग्री की अपेक्षा नहीं है। दृश्य-परिवर्तन में भी जटिलता नहीं है। अष्टम दृश्य की सज्जा कुछ श्रम-द्रव्य सापेक्ष है। यहाँ फ्लैश बैक द्वारा दो अवान्तर दृश्यों की योजना की गई है। अष्टम दृश्य का आरम्भ राजसभा से होता है। प्रथम पश्चावर्तन दृश्य स्वच्छ सलिला नामक नदी का तट है। अवान्तर दृश्य की समाप्ति पर पुनः राजसभा का दृश्य है। पश्चावर्तन कौशल द्वारा यहाँ राज प्रासाद के उद्यान से संलग्न स्वच्छसलिला नदी तट का पूर्व दृश्य प्रस्तुत किया गया है तथा पटपरिवर्तन द्वारा राजसभा का दृश्य पुनः उपस्थित किया गया है। इस प्रकार दो परदों से दृश्यों के परिवर्तन द्वारा मंचसज्जा को रोचक व सरल बनाया गया है। प्रत्येक दृश्य के आरम्भ में दिये गये काल के संकेत से ज्ञात होता है कि समीक्ष्य रूपक में कालान्विति का सफल निर्वाह हुआ है। कमलकलिका के जीवन की सत्रह वर्ष पूर्व की घटना का समायोजन पश्चावर्तन कौशल (फ्लैश बैक तकनीक) के माध्यम से कुशलतापूर्वक किया है। समस्त घटनाएँ तीन दिन में घटित हुई हैं। प्रथम, द्वितीय व चतुर्थ दृश्य एक ही दिन क्रमशः उषःकाल तथा प्रभात काल से सम्बद्ध हैं। पंचम दृश्य दो दिन बाद का है। द्वितीय दृश्य में नायक रूपकुमार दो दिन बाद आने वाली पूर्णिमा पर कमलकलिका को अपनी नौका पर आमन्त्रित करता है।[१०] पंचम दृश्य की घटनाओं का समय पूर्णिमा की अर्धरात्रि है। षष्ठ एवं सप्तम दृश्य अगले दिन मध्याह्न में सम्पन्न हुए हैं। अष्टम दृश्य उसी दिन अपराह्न में घटित हुआ है। सप्तम दृश्य में बन्दी बनाए गए ब्रह्मपद को राजसभा में उपस्थित किया जाता है। अन्तिम दृश्य इसी दिन संध्याकाल का है।

षष्ठ दृश्य को छोड़कर अन्य सदृश्यों में व्यापारान्विति देखी जा सकती है। समस्त दृश्यों की घटनाएँ कमलकलिका की आन्तरिक-बाह्य कोमलता के साथ दृढ़ता को प्रकट करता है। षष्ठ दृश्य प्रहसन दृश्य है। यद्यपि कर्कट, मर्कट के संवाद से ज्ञात होता है कि राजा के चरित्र के सम्बन्ध में कोई रहस्य खुलने

वाला है, लेकिन इस सूचना मात्र के लिए इस दृश्य की आवश्यकता नहीं थी। अनवसर पर इस दृश्य की योजना से व्यापारान्विति में शैथिल्य उत्पन्न हुआ है।

मेघमेदुरमेदनीयम् में मंचीय सुविधा के लिए वस्तु को नौ दृश्यों में उपस्थापित किया है। मेघदूत के पूर्व तथा पश्चात् के आख्यान को कौशलपूर्ण रंग शिल्प से संतुलित ढंग में सम्प्रेषित किया गया है। रंग-सज्जा के लिए कुल छह दृश्यों की अवतारणा सज्जा की दृष्टि से किंचित् श्रमसाध्य एवं कठिन हैं। ये छह स्थल हैं— नूपुर निक्वणा नदी तट, मायामदिरा वन, कमलकलिका का घर, यक्ष का घर, कुबेर की राजसभा तथा रामगिरि आश्रम। नदी, कुंज, सरोवर आश्रम की सज्जा के लिए पर्याप्त श्रम तथा कुबेर की राजसभा की सज्जा को सजीव करने के लिए प्रचुर सामग्री अपेक्षित है। प्रथम दृश्य, द्वितीय दृश्य तथा तृतीय दृश्य एक ही दिन क्रमशः अरुणोदय से प्रातः तक के हैं। चतुर्थ दृश्य पूर्णिमा की रजनी का तथा पंचम दृश्य अगले दिन प्रातःकाल का है। षष्ठ दृश्य इसी दिन संध्याकाल से सम्बन्ध रखता है। सप्तम दृश्य आठ माह बाद प्रभात में घटित हुआ है। अष्टम तथा नवम दृश्य की घटनाओं के मध्य चार माह का अन्तराल है। नवम दृश्य में एक वर्ष पश्चात् दम्पती का मिलन हुआ है। इस प्रकार सम्पूर्ण नाट्य का घटना चक्र एक वर्ष दो दिन का है। समस्त घटना चक्र नायक-नायिका के मिलन, विरह तथा पुनः शाश्वत मिलन की ओर उन्मुख है। इस प्रकार काल एवं व्यापारों का अन्वय पूर्णरूपेण तथा स्थान का एकत्व आंशिक रूप से हुआ है।

युगजीवनम् में वस्तु-योजना समुचित मंचसज्जा से युक्त, रोचक, सशक्त व प्रभावोत्पादक है। वस्तु को दस दृश्यों में विभक्त किया गया है। षष्ठ और सप्तम दृश्य में तीन-तीन अवान्तर दृश्य हैं। अष्टम में आठ तथा दशम में चार उपदृश्य हैं। मंच सज्जा की दृष्टि से प्रधानतः तीन दृश्य बन्ध हैं—दक्षिणेश्वर का काली-मन्दिर, दक्षिणेश्वर में रामकृष्ण का कक्ष व काली मन्दिर के समीप का गंगातट तथा पंचवटी उद्यान। स्थानान्विति के निर्वाह में नाट्यकर्त्री को सफलता मिली है। कालान्विति का निर्वाह यहाँ कुछ जटिल हो गया है। एक ही दृश्य के उपदृश्यों में भिन्न कालक्रम दृष्टिगत होता है। यथा—षष्ठ दृश्य का प्रथम उपदृश्य प्रभात का द्वितीय उपदृश्य अगले दिन उषःकाल का तृतीय उपदृश्य उसी दिन प्रातः काल का तथा चतुर्थ उपदृश्य तीन दिन बाद रात्रि का है। वस्तुतः जीवन व्यापिनी घटनाओं के समायोजन में कालान्विति का निर्वाह कठिन ही होता है। आलोच्य रूपक में व्यापारान्विति देखी जा सकती है। समस्त घटनाओं के निवेश का उद्देश्य भी रामकृष्ण परमहंस के व्यक्तित्व की लोकोत्तरता के प्रदर्शन से उनकी महिमा प्रकट करना है।

शंकर शंकरम् की वस्तु-योजना को चौदह दृश्यों में विभक्त किया गया है। शंकराचार्य के जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त ३२ वर्ष के विस्तृत आख्यान को

कौशलपूर्ण रंग शिल्प द्वारा सन्तुलित ढंग से प्रस्तुत किया गया है। अतः नाट्यकर्त्री ने व्यापारों की एकता का ध्यान रखा है। दृश्यों की अवान्तर घटनाओं में काल क्रम का सतत प्रवाह है। प्रथम दृश्य से लेकर सप्तम दृश्य की घटनाएँ आठ वर्ष की हैं तथा अष्टम से लेकर चतुर्दश दृश्यों का घटनाचक्र १६ से लेकर ३२ वर्षों का है। स्थानान्विति कुछ जटिल हो गई है। क्योंकि शंकराचार्य का जीवन ही गतिमान रहा है। समस्त दृश्यों की घटनाएँ भिन्न-भिन्न स्थलों पर घटित हुई हैं। प्रथम दृश्य केरलस्थ काला डी ग्राम के मार्ग का है। द्वितीय दृश्य इसी गाँव में ओलाई नदी के तट का है। तृतीय दृश्य सुदूर नर्मदा नदी के तट पर ओंकारनाथ नामक प्रदेश में स्थित एक गुफा में घटित हुआ है। चतुर्थ दृश्य वाराणसी के मार्ग का है। पंचम दृश्य बदरिकाश्रमस्थ व्यास तीर्थ का है। षष्ठ दृश्य का घटना-स्थल गोमुखी का भू-भाग है। सप्तम दृश्य उत्तरकाशी में घटा है। अष्टम दृश्य का प्रथम उपदृश्य प्रयाग का, द्वितीय उपदृश्य नालन्दा बौद्ध विहार का, तृतीय उपदृश्य पुनः प्रयाग का है। नवम दृश्य का स्थान माहिष्मती नगरी में मण्डन मिश्र के घर का है। दशम दृश्य का स्थान कृष्णा तथा तुंगभद्रा नदी के संगमस्थल के समीप शैलतीर्थ का है। एकादश दृश्य का घटनाचक्र काश्मीर के शारदापीठ में घटित हुआ है। द्वादश दृश्य का स्थल प्राग्ज्योतिषपुर है। त्रयोदश दृश्य नेपाल के पशुपति मन्दिर का है। चतुर्दश दृश्य केदार धाम में केदारनाथ मन्दिर का है। नदीतट,शैल, गुफा आदि की मंच सज्जा आकर्षक तो है किन्तु श्रमसाध्य भी है।

'यतीन्द्रयतीन्द्रम्' में एकादश दृश्य हैं। इनमें एम०ए० उत्तीर्ण कर विदेशगमन से लेकर मृत्युपर्यन्त की घटनाएँ यतीन्द्र विमल के निर्मल व्यक्तित्व एवं कर्तव्य को प्रकाशित करती है, इससे व्यापारों में एकत्व देखा जा सकता है। कालान्विति एवं स्थानान्विति में अंशतः सफलता मिली है। इसी प्रकार द्वादश दृश्यात्मक अभेदानन्दम्, रामचरितमानसम् व भारताचार्यम्, पंचदृश्यात्मक चैतन्यचैतन्यम् व भारत पथिकम्, छह दृश्यात्मक भारततातम्, आठ दृश्यात्मक कविकुलकमलम्, दशदृश्यात्मक प्रसन्नप्रसादम् आदि रूपकों में चरितनायकों के जीवन की विस्तृत चारू चरितावली प्रस्तुत की गई है। इनमें व्यापारान्वयन का निर्वहण करने में तो नाट्यकर्त्री सफल रही है, परन्तु काल एवं स्थान के अन्वय में शैथिल्य आ गया है। मंचसज्जा द्रव्यनिरपेक्ष किन्तु श्रम सापेक्ष है।

चरित प्रधान रूपकों को छोड़कर लीलाराव के अधिकांश रूपक मंचसज्जा की दृष्टि से श्रम-द्रव्य-निरपेक्ष हैं तथा इनमें अन्वितित्रय का निर्वाह भी हुआ है। 'अनूपः' रूपक का प्रथम दृश्य लोनावली ग्राम में मीरा के घर का है।[११] द्वितीय दृश्य की घटनाएँ रेल गाड़ी के डिब्बे में घटित हुई है[१२] तृतीय दृश्य एक कुष्ठालय के कक्ष का है।[१३] प्रत्येक दृश्य की कथा अपने में पूर्ण है, अतः स्थानान्विति का निर्वाह हुआ है। समीक्ष्य रूपक में कालान्विति का भी ध्यान

रखा गया है। सम्पूर्ण एकांकी की कथावस्तु बारह-तेरह घण्टे की है। प्रथम दृश्य सायंकाल का, द्वितीय दृश्य मध्य रात्रि का तथा तृतीय दृश्य अगले दिन प्रातः काल लगभग साढ़े सात बजे का है। रूपक में व्यापारों की एकता भी है। प्रथम दृश्य की घटनाओं में गुणे के क्रिया कलापों एवं वार्तालाप का उद्देश्य मीरा को अनूप के पास ले जाने के लिए हुआ है। दूसरे दृश्य में अनूप के पास जाते हुए मीरा व गुणे रेल गाड़ी के डिब्बे में तत्सम्बन्धी वार्तालाप करते हैं। तृतीय दृश्य में अनूप की कुष्ठग्रस्तता जानकर मीरा विलाप करती है। इस प्रकार रूपक में समस्त घटनाचक्र एवं क्रिया कलाप अनूप के लिए हुआ है। मंच सज्जा भी सरल है। प्रथम दृश्य मध्यवर्गीय परिवार के एक कक्ष का है। दीवार पर केवल दीवार घड़ी का विशेष उल्लेख हुआ है।[१४] द्वितीय दृश्य रेल के डिब्बे का है। यहाँ कम्बल सुराई व गिलास का उल्लेख है।[१५] तृतीय दृश्य एक कुष्ठालय का है, जहाँ अनूप लेटा है। रेलगाड़ी के दृश्य को सजीव करने के लिए कुछ श्रम की आवश्यकता हो सकती है। ध्वनि निर्देशों में ग्रामीणों का कोलाहल, खरीदने बेचने वालों का कोलाहल, नदी के प्रवाह का स्वर, रेल की आवाज, नारिकेल पूर्णिमा का नेपथ्य गीत आदि हैं।

असूयिनी एकांकी की कथावस्तु को नाट्यकर्त्री ने चार दृश्यों में विभक्त किया है। प्रस्तावना व उपसंहार को भी यदि मंच सज्जा की दृष्टि से अलग दृश्य मान लिया जाए तो दृश्य-संख्या छह हो जाती है। प्रथम दृश्य एवं उपसंहार की घटनाओं में पाँच वर्षों का अन्तराल है। इस समय को पश्चावर्तन तकनीक द्वारा सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। प्रथम दृश्य से चतुर्थ दृश्य की घटनाएँ प्रदोष काल से प्रभात तक घटित होने से समयान्विति का निर्वाह हुआ है। स्थानान्विति की दृष्टि से एकांकी में तीन स्थल हैं। प्रस्तावना एवं उपसंहार की कथा का स्थल समुद्रतट है।[१६] प्रथम एवं तृतीय दृश्यों का स्थान रेवा का घर है। द्वितीय एवं चतुर्थ दृश्यों की घटनाएँ दुर्गा के घर में घटित हुई हैं। यहाँ व्यापारान्विति का भी ध्यान रखा गया है क्योंकि समस्त घटनाएँ सन्तान-प्राप्ति से सम्बन्ध रखती है। मंच सज्जार्थ सामग्री में चूल्हा, बटलोई, चारपाई, बर्तन स्टेण्ड, खिड़की आदि की आवश्यकता है। अतः मंचसज्जा के लिए अधिक श्रम व द्रव्य कीअपेक्षा नहीं है।

कटुविपाकः के दोनों दृश्यों का घटनास्थल ग्रामाधिप के घर का है।[१७] स्थानान्विति के साथ-साथ कालान्विति का भी ध्यान रखा गया है। समस्त घटनाएँ एक ही दिन से सम्बद्ध है। प्रथम दृश्य प्रातःकाल के मध्याह्न तक का है। ग्रामाधिप समाचार पत्र लेने गया है। इसी दृश्य में ग्रामाधिप के लौटने पर उसके मध्याह्न भोजन की व्यवस्था का उल्लेख हुआ है। द्वितीय दृश्य में प्रदोष के समय वीरभा रेवा की प्रतीक्षा करती है।[१८] जब वीरभा घर छोड़कर जाती है तो रात्रि हो चुकती है क्योंकि ग्रामाधिप सेवक को अलिन्द में सोने का निर्देश देता है।[१९]

शत्रु की सेवा करने वाला अपने व्यक्तियों का ही शत्रु बन जाता है। अतः अंग्रेजों का भक्त होने के कारण ग्रामाधिप का परिवार उसे छोड़ देता है। समस्त घटनाएँ एक ही उद्‌देश्य से अन्वित हैं। अतः यहाँ व्यापारान्विति का प्रयोग भी देखा जा सकता है।

कपोतालयः के दोनों दृश्यों में अनुपात की दृष्टि से कोई समानता नहीं है। प्रथम दृश्य अधिक विस्तृत है। द्वितीय दृश्य में केवल छह सम्वाद हैं। मंच सज्जा प्रसंगानुरूप एवं मनोरम है। प्रथम दृश्य मध्यवर्गीय परिवार की बैठक का है। तदनुरूप चौकी तथा कुर्सियाँ पड़ी हैं। रेडियों से गाने की आवाज आ रही है।[२०] द्वितीय दृश्य का स्थान भी यही है लेकिन प्रथम दृश्य की वस्तुएँ चोरी चले जाने से उनका अभाव है। सज्जार्थ उपकरण सहज ही जुटाए जा सकते हैं। समस्त घटनाएँ रत्न की बैठक में घटित होने से स्थानान्विति भी है। सम्पूर्ण रूपक की घटनाएँ लगभग पाँच घण्टे की है। रत्न कार्यालय से आता है। थोड़ी नोक झोंक के बाद पति-पत्नी सिनेमा देखने जाते हैं। सिनेमा से लौटते ही प्रकाश करते हैं। इस प्रकार सिनेमा जाने तथा वहाँ से लौटने में सायं पाँच बजे से दस बजे तक का समय पर्याप्त है। घटनाओं का उद्‌देश्य लकड़ी के कबूतर-खाने (रैक) के महत्व को प्रकट करने में है, अतः व्यापारान्विति की भी पूर्णतया प्रतीति होती है।

कृपाणिका में भी अन्वितित्रय का ध्यान रखा गया है। दोनों दृश्य एक ही स्थान पर घटित हुए हैं। उर्मिला के गृह-प्रकोष्ठ में उसका पति शय्या पर लेटा है।[२१] दोनों दृश्यों के मध्य चार घण्टे का अन्तराल है।[२२] प्रथम दृश्य रात्रि भोजन से सम्बद्ध है।[२३] द्वितीय दृश्य की घटना भी रात्रि में ही घटित होती है जिसकी समाप्ति उषःकाल में होती है। व्यापारों का उद्‌देश्य उर्मिला के पातिव्रत के महत्व को प्रदर्शित करना है। मंच सज्जा श्रम-द्रव्य निरपेक्ष है।[२४]

क्षणिकविभ्रमः में एक ही दृश्य होने से घटनाओं का स्थल सुनीति का घर है। समस्त पात्र अपनी-अपनी क्रियाएँ अभ्यागत (सुनीति के पति) के परिचय एवं चरित्र दर्शाने के लिए कर रहे हैं। काल का यद्यपि निर्देश नहीं हुआ है तथापि समस्त घटनाएँ क्रमिक रूप से घटित हो रही हैं, यथा—गोविन्द का कारागार से मुक्त होना, घर आना, माँ का देवालय जाना, उसकी अनुपस्थिति में अभ्यागत का आना, माँ का देवालय से वापस आना, गोविन्द द्वारा पिता को माँ से छिपाना, अपने प्रति सुनीति की घृणा जानकर अभ्यागत का चुपचाप घर छोड़कर चले जाना आदि। इस प्रकार सम्पूर्ण एकांकी में अन्वितित्रय का पालन हुआ है। मंच सज्जा प्रसंगानुरूप है। निर्धन सुनीति के आँगन का दृश्य है। जेल से मुक्त होकर आने वाले पुत्र के स्वागतार्थ प्रवेश द्वार पर अशोक वृक्ष के पत्तों का वन्दनवार बनाया गया है। कोने में देवता की प्रतिमा है। मंच पर सुनीति के पति का मित्र रामदास शान्ति-पर्व पढ़ रहा है. मंच के बीचों बीच एक

झूला है । मन्दिर में होते हुए घण्टानाद तथा खेलते हुए बच्चों के कोलाहल का भी नाट्य निर्देश हुआ है ।[२५]

गणेशचतुर्थी की कथावस्तु दो अंकों में विभक्त है । प्रथम दृश्य रात्रि का है, जिनमें शंकरराव तथा रुक्मा चतुर्थी के चाँद से बचने का प्रयास कर रहे हैं। द्वितीय दृश्य दूसरे दिन प्रातःकाल का है । प्रथम दृश्य की घटना शंकरराव के घर की तथा द्वितीय दृश्य की घटना थाने पर घटित हुई है । समग्र एकांकी चन्द्रदर्शन के परिणामस्वरूप मिथ्या कलंक रूप विश्वास की पुष्टि करती है । इस प्रकार अन्वितित्रय का यहाँ पालन हुआ है । प्रथम दृश्य की मंच सज्जा एक सामान्य कृषक परिवार की बैठक की है । बैठक के एक कोने में देवमूर्ति के समक्ष दीपक जल रहा है । कक्ष के मध्य में बिछे गद्दे पर बैठकर शंकरराव अपनी पुत्री को गणपतिस्तोत्र सुना रहा है ।[२६] गणेश चतुर्थी के दृश्य को सजीव बनाने के लिए नाट्यकर्त्री ने कुछ ध्वनिनिर्देश दिए हैं, जिसे—नेपथ्य से गणेश का जयजयकार, कीर्तन तथा मंजीरों की ध्वनि आदि । द्वितीय दृश्य थाने के एक कक्ष का है, यहाँ मंच सज्जार्थ किसी उपकरण का निर्देश नहीं है ।[२७] अतः मंचसज्जा में श्रम व द्रव्य की अधिक अपेक्षा नही है ।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा एकांकी की समस्त घटनाओं का स्थान गिरिजा के घर का प्रकोष्ठ तथा समीपस्थ कूप है ।[२८] समग्र घटना का कार्यकाल आधे घण्टे का है । गोप गिरिजा को दूध देकर उसके लिए नये पुष्प लेने चला जाता है और जब लौटता है तो आधा घण्टा व्यतीत हो चुकता है ।[२९] बन्दी को शरण देना तथा दया करके मुक्त करना आदि घटनाएँ इसी मध्य घटित हुई हैं । एकांकी के समस्त व्यापार पुत्र हन्ता से बदला लेने से सम्बद्ध गिरिजा की भीषण प्रतिज्ञा से सम्बन्ध रखते हैं । इस प्रकार यहाँ स्थान, काल एवं व्यापारों की एकता है । मंचसज्जा में विशेष उपकरणों व श्रम की आवश्यकता नहीं है । ध्वनि प्रभाव उत्पन्न करने के लिए विशेष प्रयास आवश्यक हैं, यथा—झंझावात की ध्वनि, जंजीरों की ध्वनि, कूँए के जल की ध्वनि आदि ।

जयन्तु कुमाउनीयाः में भी मंचसज्जा सरल है । युद्धादि के दृश्य को साकार करने के लिए नेपथ्य से गुलिका नाद आदि का निर्देश अवश्य किया गया है । तीनों दृश्यों का घटना स्थल एक ही है—हिमालय की तलहटी में स्थित देवी का मन्दिर तथा वहीं बनाया गया सैनिकों का शिविर ।[३०] व्यापारों का उद्देश्य कुमाऊ रेजीमेण्ट के वीरों के शौर्य से सम्बद्ध है । इस तरह स्थान एवं व्यापार का एकत्व तो देखा जा सकता है लेकिन कालान्विति के निर्वाह में शिथिलता आ गई है । प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में तो काल का व्यवच्छेद नहीं हुआ है लेकिन तृतीय दृश्य की घटनाएँ द्वितीय दृश्य की अपेक्षा छह महीने बाद की है, जहाँ युद्ध में मृत पात्र उसी शिविर स्थल पर मिलते हैं । यह वर्णन कुछ अस्वाभाविक भी लगता है ।

तुलाचलाधिरोहणम् में अन्वितित्रय देखी जा सकती है। दृश्य के आरम्भ में उठा पर्दा एकांकी की समाप्ति पर ही गिरता है। स्थान है—हिमालय की तलहटी। यहीं क्रमशः प्रत्येक पात्र आकर हिमालय की महत्ता के समक्ष नतमस्तक हो अपने उद्‌गार प्रकट करता है। पात्रों के प्रवेश एवं निर्गमन में काल का व्यवधान नहीं है। ध्वनिनिर्देशों में निर्झर-निनाद, पशुपक्षियों का कलरव, विमान के आने तथा दुर्घटनाग्रस्त होने की घर्घर ध्वनि तथा आहत यात्रियों के आर्तनाद आदि का उल्लेख है।

नारकण्डाश्रमः में भी समस्त घटनाएँ एक ही स्थल पर एक ही क्रम में घटित हुई हैं, जो शकुन्तला के पति गृह गमन से सम्बद्ध है। मंच सज्जा साधारण तथा सहज साध्य है। आश्रम के दृश्य को सजीव करने के लिए मंत्र पाठ तथा पक्षियों के कलरव का वर्णन है।

मायाजालम् के एकमात्र दृश्य का घटनास्थल किसी रमणीय शैलशिखर पर विहार स्थल है। समीप में ही एक देवी का मन्दिर है।[३१] सायंकाल मन्दा, मध्या, मोहिनी इसी उपवन में एकत्र होकर अपने साथ घटित घटना को क्रमशः सुनाती हैं । काल का अन्तराल न हाने से कालान्विति एवं स्थानान्विति यहाँ देखी जा सकती है किन्तु एकांकी में व्यापारों का अभाव है।

मिथ्याग्रहणम् में संकलनत्रय देखा जा सकता है। प्रथम दृश्य अहमदाबाद के अमीना के बगीचे का है।[३२] द्वितीय दृश्य बम्बई में सरला के घर की बैठक का है। देशान्विति में सामंजस्य स्थापित करने के लिए दोनों दृश्यों के मध्य काल का लम्बा अन्तराल दिखाया गया है। प्रथम दृश्य में दोनों सखियों के मध्य वार्तालाप के लिये एक घण्टे का समय यथेष्ट है। द्वितीय दृश्य का घटनाचक्र सायंकाल सात बजे से लेकर रात के आरम्भ होने तक का है।[३३] सायंकाल ऑफिस बन्द होने के बाद सरला घुड़सवारी के लिए जाती है। कार्यालय पाँच बजे बन्द होना सम्भव हैं तथा घुड़सवारी के लिए एक घण्टे का समय पर्याप्त है। क्षत-विक्षत शेख-साहब को घोड़े से गिरा पाकर सरला उन्हें समीपस्थ अपने घर ले आती है। इसके बाद की घटनाएँ इस दृश्य में वर्णित हैं। शेख साहब की चिकित्सा, उनकी पत्नी को सूचित करना, विलम्ब से उसका आना, सरला अमीना का परस्पर वार्तालाप आदि के लिए दो घण्टे पर्याप्त हैं। अतः सात बजे से नौ बजे रात्रि तक इस दृश्य की घटनाएँ घटित हुई हैं। एकांकी के समस्त व्यापार अमीना तथा सरला के मैत्री सम्बन्धों को द्योतित करते हैं प्रथम दृश्य में उनकी मित्रता, द्वितीय दृश्य के आरम्भ में उत्पन्न भ्रान्ति व उसका निराकरण किया गया है। दृश्य सज्जा के लिए बैठक के अनुरूप सामग्री सहज उपलब्ध हो सकती हैं।[३४] दृश्य को प्रभावी बनाने के लिए ध्वनि संकेत भी दिये गये हैं, जैसे—मोटर यातायात, पथिकों का कोलाहल तथा टेलीफोन की ध्वनि आदि।

बालविधवा के तीनों दृश्यों के लिए मंच-सज्जा अल्प द्रव्य-साध्य एवं प्रसंगानुरूप है। एकांकी की समस्त घटनाएँ बालविधवा पार्वती की दुर्दशा के प्रति सामाजिकों की सहानुभूति उत्पन्न करती हैं। तीनों दृश्य अलग-अलग स्थानों से सम्बद्ध हैं। प्रथम दृश्य धुल्लिकापुर के सार्वजनिक उपवन में स्थित कूप का है।[३५] द्वितीय दृश्य पूना में रेलवे स्टेशन के विश्रामालय का[३६] तथा तृतीय दृश्य गाँव में पार्वती के घर का है। अलग-अलग दृश्यों की परस्पर सम्बद्धता एवं विश्वसनीयता दर्शाने के लिए किया गया समय का अन्तराल स्वाभाविक लगता है। यद्यपि प्रथम दृश्य के आरम्भ में दिए गए नाट्यनिर्देश से समय का ज्ञान नहीं हो पाता, तथापि इस दृश्य की घटनाएँ सायंकाल की प्रतीत होती है। ललनाएँ जल लेने कूए पर पहुँचती हैं। वहीं अनूप व पार्वती के वार्तालाप में पूजा का समय हो जाता है। द्वितीय एवं प्रथम दृश्य की घटनाओं में एक दिन का अन्तराल है। द्वितीय दृश्य प्रदोष काल का है। द्वितीय एवं तृतीय दृश्य में भी एक दिन का अन्तर है। तीसरा दृश्य दूसरे दिन सायंकाल का है, जब कि अन्धकार घिरने वाला होगा। थोड़ी देर बाद पार्वती की देवरानी उसे डाँट-डपट कर घर से निकालती है तो वह अन्धकार में विलीन हो जाती है। द्वितीय दृश्य की घटनाओं से समय का कुछ विरोध परिलक्षित होता है। दृश्यारम्भ में प्रदोष काल का उल्लेख हुआ है। सम्भवतः प्रातः से सायं तक का समय अनूप को पुरोहित खोजने में लग गया। पुरोहित ने विवाह के लिये अपने आने का समय मध्याह्न में एक बजे का बताया। यह समय मध्याह्न का न होकर रात्रि का होना चाहिए क्योंकि मध्याह्न के बाद तो उसे पुरोहित ही मिला था। इस प्रकार कालान्विति के निर्वाह में नाट्यकर्त्री सफल नहीं हो पायी है। निर्देशों में जल निकालने का शब्द घण्टानाद, रेलवे स्टेशन पर यात्रियों के आवागमन का कोलाहल, फल बेचने वालों की पुकार, तथा रेल की सीटी आदि का उल्लेख किया गया है।[३७]

वीरभा के तीनों दृश्य गुजरात प्रान्त के बोरसद गाँव में हरिदास नामक किसी कृषक की कुटी पर घटित हुए हैं। यहाँ पालना, दो चारपाई, चूल्हा और चर्खे का उल्लेख मंच सज्जार्थ किया गया है, जो प्रसंगानुरूप एवं स्वाभाविक है।[३८] अतः स्थानान्विति है एवं मंचसज्जा भी सुकर है। प्रथम दृश्य की घटनाएँ प्रदोषकाल की, द्वितीय दृश्य की घटनाएँ सूर्योदय की व तृतीय दृश्य की घटनाएँ द्वितीय दृश्य के दो घण्टे बाद की है, जो सम्भवतः मध्याह्न तक समाप्त हो गई होंगी। इस प्रकार सम्पूर्ण रूपक के घटनाचक्र को १७-१८ घण्टों में सीमित करके कालान्विति का पालन किया गया है। यहाँ प्रदर्शित समस्त व्यापार वीरभा के चारित्रिक उत्कर्ष को प्रकट करते हैं। इस प्रकार यहाँ तीनों अन्वितियों के दर्शन किए जा सकते हैं। ध्वनि निर्देशों में गुलिकानाद, महिलाओं का चीत्कार, गायों के रँभाने का स्वर, बालक के रुदन आदि का उल्लेख हुआ है।

वृत्तशंसिच्छत्रम् में व्यापारान्विति का ध्यान रखते हुए मीरा एवं अनूप के स्थायी मिलन के लिए समस्त घटनाओं का संयोजन हुआ है। स्थानान्विति की दृष्टि से प्रथम, तृतीय एवं चतुर्थ दृश्यों की घटना रथ्याग्राम में पुरोहित के घर में तथा द्वितीय दृश्य का घटना स्थल खड्की नामक स्थान पर नदी किनारे जम्बू वृक्ष के नीचे है। मंच सज्जा सहज सम्भव है। प्रथम एवं द्वितीय वर्ष की घटनाओं के मध्य अठारह वर्ष का अन्तर है तथा दूसरे व तृतीय दृश्य के मध्य तीन घण्टे का अन्तर है। तृतीय एवं चतुर्थ दृश्य के मध्य तो काल का एकत्व है परन्तु प्रथम एवं द्वितीय दृश्य की १८ वर्ष पूर्व की घटनाओं के समायोजन के लिए दो पात्रों की विषकम्भक में बात-चीत दिखाई है। द्वितीय एवं तृतीय दृश्यों में इस प्रकार की संगति बैठाई जा सकती है कि खड्गी ग्राम व रथ्याग्राम की दूरी अधिक होने से वहाँ पहुँचने में तीन दिन लग गये होंगे।

हरिसिंहः व्यापार, काल एवं स्थान का एकत्व है। प्रथम दृश्य सायंकाल से पूर्व, द्वितीय दृश्य सूर्यास्त के समय तथा तृतीय दृश्य एवं चतुर्थ दृश्य अर्धरात्रि का है। मंच सज्जा सरल, सादी एवं प्रकरणानुरूप है।

होलिकोत्सवम् के तीन दृश्यों में से प्रथम व तृतीय दृश्य एक मत्स्यजीवी गणु की कुटिया का है।[३९] द्वितीय दृश्य ग्राम कुसीदक[४०] रंगु के आँगन का है। यहाँ दानों ही दृश्यों में मंच सज्जार्थ किसी उपकरण का निर्देश नहीं किया गया है। वर्णन के आधार पर द्वितीय दृश्य का घटना-स्थल ताड़ीघर रहा होगा, जहाँ जुआ भी खेला जाता होगा। रूपक की समस्त घटनाएँ होली के दिन प्रातःकाल से सायंकाल पर्यन्त घटित होती हैं। प्रथम दृश्य में मत्स्यजीवी परिवार का प्रसन्न वातावरण, गणु की सुरापान से हुई उन्मत्तता के कारण दुःख में बदल जाता है। फलतः हँसता-खिलखिलाता परिवार नष्ट हो जाता है। यहाँ समस्त घटनाएँ होली के पर्व से अन्वित हैं। इस प्रकार समीक्ष्य रूपक संकलनत्रय से युक्त है एवं अल्प द्रव्य एवं श्रम से अभिनीत किया जा सकता है।

स्वर्णपुरकृषीवलाः में भी तीनों अन्वितियाँ प्राप्त होती हैं। प्रथम दृश्य रेवा के घर का एवं द्वितीय दृश्य वन मार्ग का है। रेवा अपने घर का समस्त सामान पहिले ही दूसरे गाँव भिजवा चुकी है, अतः मंच सज्जा के लिए विशेष सामग्री नहीं चाहिए। दोनों दृश्यों की घटनाएँ रेवा की देशभक्ति को पुष्ट करती हुई संध्याकाल से अर्धरात्रि तक की है। दोनों दृश्यों के मध्य आधे घण्टे का अन्तर नाट्य निर्देशों से सूचित किया गया है।

मीराचरितम्, 'ज्ञानेश्वरचरितम्', 'तुकारामचरितम्' व 'परमभक्त शिवाजिराट्' चरित्र प्रधान रूपक हैं। इनमें चरितनायक के जन्म से मृत्यु-पर्यन्त घटनाओं को निबद्ध करने का लोभ संवरण न कर पाने के कारण इनमें न तो स्थान का एकत्व है न काल एवं व्यापारों की ही एकता है। कहीं-कहीं तो एक

दृश्य में दो अथवा दो से अधिक उपदृश्यों की योजना की गई है, जिससे रूपक का बन्ध शिथिल सा हो गया है।

इस प्रकार लीलाराव कुछ रूपकों को छोड़कर सर्वत्र अन्वितित्रय के पालन में सफल रही है। उद्यान नाट्यों के रूप में इनके रूपक विकसित होने से इनमें मंच सज्जा अधिकतर श्रम-द्रव्य-निरपेक्ष ही है।

गणयज्छागः में दो दृश्य हैं : मंच सज्जा सादा एवं द्रव्य निरपेक्ष है। क्योंकि मंच पर वन, जलाशय तथा गंगानदी का दृश्य सजीव करने के लिए कुछ श्रम अपेक्षित हैं। रूपक में संकलनत्रय का भी पालन हुआ है। व्यापारों की दृष्टि से एक छाग गिनती करता हुआ अन्य पात्रों को भी गिनती सीखने की प्रेरणा देता है। सभी क्रियाकलाप इसी गणना से सम्बद्ध हैं। कालान्विति की दृष्टि से दोनों दृश्यों के मध्य काल का व्यवधान नहीं है। प्रथम दृश्य की समाप्ति पर निर्दिष्ट पात्र ही दूसरे दृश्य में भी प्रविष्ट होते हैं। प्रथम दृश्य एक सरोवर के तट का है तथा द्वितीय दृश्य गंगा तट का है।[४१] सम्भवतः गंगातट जलाशय से अधिक दूर नहीं है। इस प्रकार समीक्ष्य रूपक में तीनों ही अन्वितियाँ विद्यमान हैं।

नचिकेतोयमसंवादम् में तीन दृश्य हैं,[४२] रेडियो रूपक होने से यहाँ विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए गायों के रंभाने का स्वर कुत्तों के भोंकने का शब्द तथा नेपथ्य संगीत का उल्लेख किया गया है । समीक्ष्य एकांकी अन्वितित्रय से युक्त है ।

रूपक के समस्त व्यापार नचिकेता की आत्मज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा से उत्पन्न होकर आत्मज्ञान प्राप्त कराकर ही विरत होते हैं। स्थान की दृष्टि से प्रथम दृश्य भूमण्डल पर नचिकेता के घर का तथा द्वितीय तथा तृतीय दृश्य क्रमशः यमराज की गृहवाटिका तथा अध्ययनकक्ष का है। रूपक में काल का कोई व्यतिक्रम नहीं है। प्रथम दृश्य में नचिकेता वाजश्रवा से यम के पास जाने की अनुमति माँगता है। द्वितीय दृश्य प्रथम दृश्य की घटनाओं से तीन दिन पश्चात् का है। यमपत्नी यम को बताती है कि तीन दिन से एक बालक उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। इसी दृश्य में नचिकेता के सत्कार के बाद यम के साथ उसका संलाप होता है तथा सूर्यास्त तक समाप्त हो जाता है। द्वितीय व तृतीय दृश्य के मध्य एक रात्रि का अन्तर है। तृतीय दृश्य में ब्रह्ममुहूर्त में यम नचिकेता को आत्मज्ञान का उपदेश करते हैं। उपदेश के मध्य सूर्योदय हो चुकता है। इस प्रकार सम्पूर्ण रूपक की घटना चार-पाँच दिन में घटित हुई है। भूलोक से यमलोक तक गमन नचिकेता के अलौकिक आत्मबल से ही सम्भव है। इस प्रकार स्थान, काल एवं व्यापारों में समायोजन किया गया है।

विक्रमवेतालनाटिका में वस्तु को प्रस्तुति के लिए चार दृश्यों में रखा गया है। मंच सज्जा प्रभावशाली व आकर्षक है। श्मशान, वेताल का वृक्ष, उपवन, अमात्य का घर आदि की सजावट के लिए पर्याप्त श्रम की आवश्यकता है।

श्मशान के भय एवं सन्नाटे की आकर्षक प्रस्तुति के लिए छायाकर्णयन्त्र से प्रकाश व्यवस्था का संकेत किया है ।[४३] वेताल और राजा के वार्तालाप के बाद मूल कथा हेतु दृश्य परिवर्तन के लिए रंग पर अन्धकार करने का निर्देश दिया है । इसी प्रकार मूल कथा के एक दृश्य की समाप्ति कर अथवा बीच में प्रविष्ट वेताल और राजा के प्रसंग में छाया प्रयोग तथा प्रकाश व्यवस्था का उल्लेख है । इससे मंच सज्जा श्रम-साध्य हो गई है ।

समीक्ष्य रूपक में संकलनत्रय का भी निर्वाह नहीं हो पाया है । राजा वेताल को ले जाना चाहता है लेकिन वेताल जाना नहीं चाहता है । ये दोनों पात्र अपने इसी कृत्य में लगे हैं । मुख्य कथा में सभी पात्र माता पिता तथा पुत्र अपनी-अपनी खिचड़ी पकाते दृष्टिगत होते हैं । माता ज्ञानी के साथ पिता विज्ञानी के साथ तथा भाई, शूरवीर के साथ सोमप्रभा का विवाह करना चाहता है । रूपक में सम्पन्न होती हुई घटनाओं से परिणाम का अनुमान नहीं होता । कालान्विति के निर्वहण में भी नाट्यकर्त्री सफल नहीं हुई है । वेताल राजा को सोमप्रभा से सम्बद्ध अतीत काल की कथा सुना रहा है, लेकिन जब सोमप्रभा का विवाह शूरवीर से होता है तो वेताल और राजा वहाँ ग्रन्थि बन्धन की रीति पूरी करते हैं । राजा ज्ञानी, विज्ञानी तथा शूरवीर के विवाद में निर्णायक बनता है । स्थानान्विति की दृष्टि से रूपक सफल नही हैं । प्रस्तावना में श्मशान तथा राज्यसभा का दृश्य एक साथ प्रस्तुत करना, अन्य दृश्यों में भी श्मशान के दृश्य के साथ कभी उज्जयिनी, कभी दक्षिण भारत, कभी उपवन, कभी अमात्य का घर दिखाना अथवा पटीक्षेप द्वारा बारम्बार दृश्य परिवर्तन करना कुछ जटिल कार्य हो गया है ।

विवेकानन्दस्मृतिः ध्वनि नाट्य है । वृत्तचित्र होने से यहाँ स्थान, काल तथा व्यापारों के एकत्व का अभाव है । विवेकानन्द के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त प्रधान-प्रधान घटनाओं की वाचक वाचिकाओं के द्वारा सूचना दी गई है ।[४४] अतः संकलनत्रय में यहाँ विरोध नहीं है । रूपक को रोचक बनाने के लिए आरम्भ, मध्य एवं अन्त में नेपथ्य से संगीत का प्रयोग करना भी आकर्षक है ।

विवेकानन्दविजयम् रेडियोनाट्य है। इसे मंच पर भी कुशलता से अभिनीत किया जा सकता है । सफल मंचन की दृष्टि से यहाँ अन्वितित्रय का ध्यान रखा गया है ।[४५] मंचीय सुविधा की दृष्टि से वस्तु को तीन अंकों में विभक्त किया गया है। श्रीधरभास्कर वर्णेकर के महानाटक को नाट्यनैपण्य द्वारा संतुलित ढंग से प्रस्तुत करने में नाट्यकर्त्री सफल रही है। प्रस्तुति का आरम्भ एवं अन्त सशक्त है। विवेकानन्द के आध्यात्मिक उत्कर्ष की प्रदर्शक घटनाएँ प्रत्येक अंक में काल के समन्वय के साथ प्रस्तुत की गई हैं । प्रथम दृश्य नरेन्द्र के घर में देवगृह से, द्वितीय दृश्य दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर से तथा तृतीय दृश्य मार्ग से सम्बद्ध है।[४६] एक स्थल से दूसरे स्थल की दूरी एवं काल का

समायोज़न करने के लिए विषकम्भक की योजना से समीक्ष्य रूपक में संकलनत्रय का पालन हुआ है।

वनमाला भवालकर विरचित **पाददण्डः** में वस्तु को संतुलित ढंग से दृश्यों में विभक्त किया गया है। समस्त घटनाओं का कार्यस्थल भास्कर का घर है। प्रथम, तृतीय व पंचम दृश्य इसी घर के द्वार देश से तथा द्वितीय, चतुर्थ व षष्ठ दृश्य इसी घर के एक कक्ष से सम्बद्ध है। मंच-सज्जार्थ द्वार देश पर एक चौकी तथा कक्ष में एक पलंग तथा कुछ कुर्सियों की आवश्यकता है। अतः मंच सज्जा सहज प्राप्य तथा यथार्थमूलक स्थानान्विति के साथ-साथ कालान्विति का भी निर्वाह हुआ है । प्रथम दृश्य अपराह्न का है, शान्ता पत्र-वितरक की प्रतीक्षा कर रही है[४७] तथा भास्कर को मध्याह्न में सोकर उठने के बाद चाय पीने की इच्छा है।[४८] द्वितीय दृश्य की घटनाओं की अवधि डेढ़ घण्टे की है। यहाँ सुधीर को आश्चर्य है[४९] कि चार बज गये लगता है आज भी ललिता का पत्र नहीं आया इसी दृश्य में साढ़े पाँच बजने का उल्लेख हुआ है।[५०] तृतीय, चतुर्थ, पंचम व षष्ठ दृश्यों में समय का संकेत नहीं है। दृश्यों की घटनाएँ क्रमिक रूप से घटित होती हैं। समस्त क्रियाएँ ललिता एवं सुधीर के स्थायी मिलन की दिशा में उन्मुख होने से यहाँ व्यापार की अन्विति भी विद्यमान है।

पार्वतीपरमेश्वरीयम् में वस्तुबन्ध तीन दृश्यों में व्यवस्थित है। यहाँ काल एवं व्यापारों के समायोजन में नाट्यकर्त्री सफल रही है। परन्तु स्थानान्विति के निर्वाह में कुछ शैथिल्य आ गया है। प्रथम दृश्य हिमालय का सुसज्जित प्रासाद-कक्ष है।[५१] राजमहल के अनुरूप सजावट तथा सिंहासन आदि की व्यवस्था द्रव्य-साध्य है। द्वितीय दृश्य तपोवन मार्ग तथा तपोवन भूमि से सम्बद्ध है, इसकी सज्जा कुछ श्रम-साध्य है। तृतीय दृश्य भी तपोवन का है, लेकिन द्वितीय दृश्य से भिन्न है।[५२] मंच सज्जा के लिए एक कुटिया तथा शिलातल का निर्देश किया गया है। दृश्यों को प्रभावी बनाने के लिए प्रकाश का संकेत दिया गया है। प्रकाश की विशेष तकनीक द्वारा विविध रंगों के दृश्य एक के बाद एक प्रदर्शित किये जा सकते हैं। संगीत प्रधान रूपक होने से राग, ताल आदि में गीतों को निबद्ध करना, उनका अभ्यास करना तथा तदनुरूप नृत्य प्रस्तुत करना अभ्यास-साध्य है। संगीतिका की सफल प्रस्तुति तभी सम्भव है।

रामवनगमनम्[५३] में तीन दृश्य-बन्ध है। इस संगीतिका में स्थान, काल एवं व्यापारों की एकता का पूर्ण ध्यान रखा गया है। मंचसज्जा श्रम-द्रव्य निरपेक्ष है। प्रथम दृश्य में प्रातःकाल कैकेयी राम के राज्याभिषेक से प्रसन्न दिखाई पड़ती है। आगे की घटनाएँ, यथा—मन्थरा द्वारा कैकेयी को भड़काना, दशरथ से वर माँगना, राम का वनगमन आदि क्रमशः घटित हुई हैं। संगीतिका में नाट्यकर्त्री ने स्थानों का संकेत नहीं दिया है। वर्णन के द्वारा अनुमान लगाना पड़ता है कि प्रथम एवं तृतीय दृश्य कैकेयी के तथा द्वितीय दृश्य कौसल्या के भवन का है।

समस्त व्यापारों का सूत्र राम के वनगमन से जुड़ा है । इस प्रकार अन्वितित्रय का सम्यक्तया नियोजन हुआ है ।

सीताहरणम् के एक ही दृश्य है । नाट्य निर्देशों का पूर्णतः अभाव है ।[५४] प्रसंग के आधार पर ही अनुमान करना पड़ता है कि दृश्य तपोवन में राम सीता की कुटी का है ।[५५] गोदावरी नदी का तट तथा पर्णकुटी में शिलातल की संरचना से मंच आकर्षक तथा प्रसंगानुरूप हो गया है[५६] जो सहज साध्य है । घटनाएँ प्रातः काल से सम्बद्ध है क्योंकि यहाँ सीता अपना शृंगार करने के लिए गजरा गूँथती दिखाई देती हैं । तभी स्वर्ण मृग का आना, राम का उसे पकड़ने जाना, राम पर विपत्ति जानकर सीता द्वारा लक्ष्मण को भेजना, रावण का आना तथा सीताहरण-कार्य एक ही स्थान पर एक ही समय में सम्पन्न होते हैं। इनका उद्देश्य भी रावण द्वारा सीता-हरण से सम्बद्ध हैं। अतः यहाँ संकलनत्रय विद्यमान है ।

अन्नदेवता[५७] में एक दृश्यबन्ध है । मंचसज्जा आडम्बर विहीन एवं सादा है । अन्वितित्रय पूर्णतः विद्यमान है । स्थान लीला के शयन कक्ष का है । मिठाई न मिलने से खिन्न लीला यहाँ ही सो जाती है । स्वप्न में देवदूती से अन्न के महत्व को जानकर जागने पर अन्न का अपमान न करने का निश्चय करती है । घटनाएँ एक ही स्थान पर, एक ही कालक्रम में क्रमशः घटित हुई हैं, अतः अन्वितित्रय विद्यमान है । स्वप्न दृश्य के माध्यम से अन्न के महत्व को प्रकट करने में नाट्यकर्त्री सफल रही है । इस प्रकार का दृश्य बन्ध उसके नाट्य नैपुण्य को प्रकट करता है । स्वप्न में देवदूती के प्रकट होते समय अन्धकार से प्रकाश की की गई व्यवस्था भी प्रभावशाली है ।

कालीदर्शनम् में वस्तु को दो छोटे-छोटे अंकों में विभक्त किया गया है । मंच-सज्जा सरल-सहज है । प्रथम दृश्य जयरामवाटिका ग्राम में सरोवर के किनारे तथा द्वितीय दृश्य मार्ग में एक मन्दिर के विश्रामालय का है । दोनों दृश्यों में काल की संगति है । प्रथम दृश्य प्रातःकाल का है क्योंकि कुछ महिलाएँ सरोवर पर जलाहरण करती दिखाई गई हैं ।[५८] द्वितीय दृश्य प्रथम दृश्य के कुछ दिन बाद रात्रि का है, जब ज्वराक्रान्त शारदा को कालीमाता स्वप्न में दर्शन देकर कृतार्थ करती हैं । रूपक का मुख्य व्यापार शारदादेवी को कालीमाता के दर्शन कराकर उनके चरित्र को ऊँचा उठाना है । अन्य क्रिया कलाप इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए निबद्ध है ।

सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् में दो दृश्य हैं । प्रथम दृश्य कुब्जा के सादगीपूर्ण भवन का है । सैरन्ध्री के समक्ष उसके द्वारा बनाए गए कृष्ण के एक चित्रफलक का मंच सज्जा के लिए निर्देश किया गया है ।[५९] दूसरा दृश्य एक राजपथ का है । अतः स्थानान्विति के पालन के साथ-साथ मंच सज्जा साधारण एवं सहज साध्य है । दोनों दृश्यों के मध्य काल का कोई अन्तर नहीं है । प्रथम दृश्य में प्रातःकाल

सैरन्ध्री व सुशीला कृष्ण के मथुरा आगमन का समाचार सुनती है तथा द्वितीय दृश्य में वे दोनों अपराह्न में कृष्ण के दर्शन के लिए निकल पड़ती हैं।[६०] रूपक की घटनाओं का उद्देश्य सैरन्ध्री की कृष्ण के प्रति भक्ति को प्रकट करना है। अतः यहाँ तीनों अन्वितियाँ विद्यमान हैं।

कुचेलवृत्तम् में छोटे-छोटे सात अंक हैं। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अंकों का घटनास्थल कुचेल के जीर्ण गृह में भगवदाराधना का स्थान है। पूजा की सामान्य सामग्री के अतिरिक्त अन्य मंचीय उपकरणों की आवश्यकता नहीं है। चतुर्थ अंक द्वारकापुरी में राजपथ तथा रुक्मिणी के अन्तःपुर का है। पंचम अंक पुनः राजपथ का षष्ठ अंक सुदामा के ऐश्वर्य सम्पन्न भवन में विशाल चतुश्शाला का तथा सप्तम दृश्य मंगल दीपादि से सज्जित कृष्ण मन्दिर का है। मंच-सज्जा के लिए विशेष संकेत नहीं दिये गये हैं परन्तु चतुर्थ एवं षष्ठ अंक की भव्य सज्जा के लिए पर्याप्त सामग्री अपेक्षित है। तृतीय एवं चतुर्थ अंक के मध्य तथा पंचम एवं षष्ठ अंकों के मध्य सुदामा के द्वारका गमन एवं आगमन में होने वाले स्थान एवं काल के व्यतिक्रम को 'नेपथ्ये' शीर्षक से कथा की सूचना देकर जोड़ा गया है।[६१] रूपक में व्यापारान्विति विद्यमान है।

भूमिकन्या में कथावस्तु को चार अंकों में व्यवस्थित किया गया है।[६२] द्वितीय अंक में तीन दृश्य हैं। प्रथम अंक राम के अन्तःपुर में शय्यागृह का है। मंच सज्जा के लिए एक चौकी, चादर तथा एक वल्कल वस्त्र अपेक्षित है चादर पर कलंक होने से उस पर वल्कल वस्त्र बिछा दिया गया है। चादर पर कलंक सीता के भावी कलंक को तथा वल्कल वस्त्र पुनः वनवास की ओर इंगित करता है। द्वितीय अंक का प्रथम दृश्य भी इसी अन्तःपुर का है। द्वितीय दृश्य राजप्रासाद का मार्ग है और तृतीय दृश्य पुनः अन्तःपुर का है। तृतीय अंक में गंगातट पर स्थित बाल्मीकि आश्रम का दृश्य है तथा चतुर्थ अंक राम की यज्ञशाला का है। स्थानों की बहुलता होने से मंच सज्जा कुछ जटिल हो गई है। लेखिका ने य़वनिका परिचय में प्रथम एवं द्वितीय अंक की घटनाओं में पन्द्रह दिन के अन्तर का निर्देश किया है। इस निर्देश में तथा नाटक की घटनाओं में विरोध परिलक्षित होता है। प्रथम अंक में वासन्ती सीता से मातृगृह जाने की अनुमति लेती है। द्वितीय अंक के प्रथम दृश्य में विजय कुशिका नामक सेविका से विवाह का प्रस्ताव करता है। वह पत्नी वासन्ती के आगमन से पूर्व इस सम्बन्ध में कुशिका का निर्णय जानना चाहता है। उसके कथन से ज्ञात होता है कि वासन्ती मातृगृह से वापस आ रही है जिसे गये हुए तीन मास व्यतीत हो चुके हैं। इस प्रकार प्रथम एवं द्वितीय अंकों की घटनाओं के मध्य तीन मास का अन्तराल निर्दिष्ट करना चाहिए था। द्वितीय अंक के तीनों दृश्यों में काल-व्यतिक्रम नहीं है। द्वितीय अंक तथा तृतीय अंक की घटनाएँ भी क्रमशः घटित हुई हैं किन्तु तृतीय एवं चतुर्थ अंक की घटनाओं में बारह वर्षों का अन्तर

है। समीक्ष्य रूपक में देश एवं काल की एकता का पूर्णतः पालन न होने पर भी क्रियान्विति का निर्वाह देखा जा सकता है। आरम्भ में वासन्ती एवं विजय द्वारा कलंक पर वल्कल ढँक कर सीता विषयक कलंक तथा भावी परित्याग की सूचना देता है। इसी तरह वासन्ती के शम्बूक के साथ भ्रातृ सम्बन्ध के कारण राजगुरु द्वारा विजय को पत्नी-परित्याग का सुझाव देने से राम द्वारा सीता के परित्याग की भूमिका तैयार की गई है। इस प्रकार समस्त व्यापार सीता परित्याग की दिशा में हुआ है।

ब्रह्मचारिणी वेलादेवी रचित **नचिकेतश्चरितम्** में आठ दृश्य हैं। प्रथम दृश्य बालकों की क्रीड़ाभूमि का, द्वितीय दृश्य ऋषि उद्दालक की यज्ञशाला का, तृतीय दृश्य यमपुर द्वार का, चतुर्थ दृश्य इन्द्रसभा का, पंचम दृश्य यमपुर द्वार का, षष्ठ दृश्य इन्द्र सभा का, सप्तम दृश्य यमराज के प्रासाद द्वार का तथा अष्टम दृश्य यमराज के एकान्त कक्ष का है।[६३] प्रथम दृश्य की सज्जा के लिए किसी संसाधन की आवश्यकता नहीं है। द्वितीय दृश्य में यज्ञशाला की सजीवता के लिए विशेष सामग्री की अपेक्षा तो नहीं है लेकिन श्रम आवश्यक है। तृतीय दृश्य की सज्जा के लिए विशेष प्रकाश व्यवस्था चाहिए। चारों ओर अन्धकार तथा एक स्थान पर प्रकाश को केन्द्रित करने का निर्देश नाट्यकर्त्री ने किया है। यमपुर का यह द्वार सुमण्डित तोरण से अलंकृत है।[६४] चतुर्थ इन्द्रसभा के दृश्य के लिए एक सिंहासन तथा अन्य सुसज्जित चौकियों की आवश्यकता है। पंचम दृश्य तृतीय दृश्य के समान है। यहाँ सूर्य, चन्द्र, वरुण आदि देवों के प्राकृतिक उपद्रवों को प्रदर्शित करने के लिए भी प्रकाश व्यवस्था तथा छायाकर्णन यन्त्र की आवश्यकता है।[६५] षष्ठ दृश्य चतुर्थ दृश्य के समान है। सप्तम एवं अष्टम दृश्य की सज्जा के लिए विशेष श्रम व द्रव्य आवश्यक नहीं है। इस प्रकार सम्पूर्ण रूपक में मंच सज्जा आकर्षक होने के साथ-साथ अल्प साधनों व स्वल्प श्रम की अपेक्षा से युक्त है। कथावस्तु व पात्र दिव्यकोटि के होने से भूलोक से स्वर्गलोक गमन आदि के क्रिया कलापों में स्थान एवं काल की अन्विति है। रूपक में किसी भी अनावश्यक घटना को स्थान न मिलने से व्यापारान्विति भी है।

महीयसी गार्गी में पाँच दृश्य हैं। मंच सज्जा श्रम-द्रव्य-निरपेक्ष है। रूपक में घटनाओं के निवेश का प्रयोजन गार्गी की सूक्ष्म विवेचना क्षमता, तार्किक शक्ति एवं आध्यात्मिक ज्ञान की प्रखरता से उसकी महनीयता सिद्ध करना है। अपने इस लक्ष्य में नाट्यकर्त्री सफल भी रही है। प्रथम व द्वितीय दृश्य गर्ग मुनि के आश्रम का, तृतीय दृश्य जनक राज के स्थान मण्डप का तथा चतुर्थ दृश्य पुनः गर्ग मुनि के आश्रम का व पंचम दृश्य जनक की राजसभा का है।[६६] मंच सज्जा के लिए कोई विशेष संकेत नहीं किया गया है। दृश्यों की अवान्तर घटनाओं से भी समय का व्यवधान नहीं होता है। इस प्रकार यहाँ संकलन-त्रय का सफल निर्वाह है।

विराड्गृहम् में छह दृश्यों की योजना की गई है। मंच सज्जा सुन्दर, मनोमोहक तथा थोड़े श्रम व द्रव्य की अपेक्षा रखती है। प्रथम दृश्य विराड्राज के अन्तःपुर का है, जहाँ रानी सुदेष्णा का भव्य पर्यङ्क बिछा है, दो सखियाँ चँवर डुला रही हैं। द्वितीय दृश्य नृत्यशाला का है, तृतीय दृश्य का घटना स्थल अन्तःपुर का आलिन्द है। चतुर्थ दृश्य रन्धनशाला का है। पंचम दृश्य पुनः नृत्यशाला का है तथा षष्ठ दृश्य विराट् के सभा भवन का है।[६७] इस प्रकार सभी दृश्यों का घटना-स्थल अलग है, जिससे पट परिवर्तन की व्यवस्था दुःसाध्य हो गई है। यद्यपि दृश्यों की अवान्तर घटनाएँ स्वयं में पूर्ण हैं परन्तु दो दृश्यों के मध्य समय का दीर्घ अन्तर है। इसकी संगति के लिए किसी प्रकार का नाट्य-निर्देश नहीं किया गया है। समस्त व्यापार पाण्डवों के अज्ञातवास के समय विराट-गृह में घटित होने से एकसूत्र में गुँथे हुए हैं।

श्रीमती वीणापाणि पाटनी के **निम्बपत्राणि** में चार दृश्यबन्ध हैं। प्रथम दृश्य एक आश्रम में जम्बु वृक्ष के नीचे तथा द्वितीय व तृतीय दृश्य मार्ग में घटित हुआ है। चतुर्थ दृश्य बाजार में शाक-वीथी का है। मंच सज्जा सुन्दर, आकर्षक लेकिन कुछ श्रम सापेक्ष है। प्रथम दृश्य में जामुन के पेड़ के नीचे एक शिला पड़ी है।[६८] चतुर्थ दृश्य में सब्जी मण्डी के दृश्य को सजीव करने हेतु गाजर, आलू, सीताफल, सर्षप, ककड़ी आदि सब्जियों को जुटाने की आवश्यकता है।[६९] रूपक में कालान्विति का सतत क्रम विद्यमान है। प्रथम दृश्य प्रातःकाल में तथा द्वितीय दृश्य उसी दिन मध्याह्न काल में घटित हुआ है। तृतीय तथा चतुर्थ दृश्य में भी कालक्रम टूटा नहीं है।[७०] घटनाएँ व्यावहारिक ज्ञान शून्य सैद्धान्तिक ज्ञान की निःसारता को प्रकट करती हैं, जिनके कारण तीनों स्नातक अपने भोजन की सामग्री नष्ट कर बैठते हैं।

प्रतिबुद्धा एकांकी में कथावस्तु को तीन दृश्यों में व्यवस्थित किया गया है। एकांकी में देशकाल एवं व्यापार की अन्विति पर ध्यान रखा गया है। प्रथम दृश्य मध्यम वर्गीय परिवार के एक प्रकोष्ठ का है। जिसमें एक शय्या बिछी है। शय्या के समीप ही चौकी पर अलार्म घड़ी रखी है। कक्ष में एक खिड़की है जिस पर पर्दा पड़ा है। पर्दा हटाने पर सूर्य की किरणें कमरे के अन्दर आने लगती है।[७१] दूसरे दृश्य का घटना स्थल भी एक प्रकोष्ठ है, जहाँ वस्तुएँ अव्यवस्थित पड़ी हैं।[७२] तृतीय दृश्य पूर्वोक्त प्रकोष्ठ में ही घटित हुआ है। पूर्व दृश्य की अव्यवस्थित वस्तुएँ यहाँ सुव्यवस्थित कर दी गई हैं। प्रकोष्ठ में गमले भी रखे हैं, जिनमें पुष्प लगे हैं।[७३] इस प्रकार मंच सज्जा मोहक सरल तथा सुलभ सामग्री से युक्त है। एकांकी में काल की अन्विति का भी ध्यान रखा गया है। प्रथम दृश्य-काल सात बजे का है। घड़ी में प्रातः सात बजे का अलार्म बज रहा है। द्वितीय दृश्य उसी दिन सायंकाल से सम्बद्ध है। तृतीय दृश्य दूसरे दिन सायंकाल का है।[७४] समस्त व्यापार सुलेखा द्वारा गृह और कार्यालय के कार्यों के मध्य समायोजन करने की दक्षता प्रमाणित करने के लिए है।[७५]

याथार्थ्यगरलम् में चार दृश्यों में कथावस्तु विभक्त है। मंच-सज्जा श्रम-द्रव्य-निरपेक्ष है तथा स्थान, समय व व्यापारों की एकता भी दृष्टिगत होती है। प्रथम दृश्य देवदत्त के जर्जर प्रकोष्ठ का द्वितीय व चतुर्थ दृश्य देवदत्त के गृह-प्रांगण का एवं तृतीय दृश्य कमिश्नर साहब के घर के अतिथिकक्ष का है। मंच सज्जा के लिए विशेष निर्देश नहीं दिये गये हैं। प्रथम दृश्य में देवदत्त भगवान् की आरती करता हुआ दिखाई पड़ता है। अतः तदनुरूप भगवान् का चित्र, पुष्प, आरती की थाली आदि सामग्री मंच-सज्जा के लिए मेज तथा कुछ कुर्सियों से काम चलाया जा सकता है। तृतीय दृश्य में कमिश्नर के अतिथिकक्ष की सज्जा के लिए भी कुछ सामग्री अपेक्षित है। एकांकी में प्रथम दृश्य प्रातःकाल से एवं द्वितीय उसी दिन अपराह्न से सम्बद्ध है।तृतीय दृश्य दस दिन बाद सायंकाल में सम्पन्न हुआ है। चतुर्थ दृश्य अगले दिन प्रभात से सम्बद्ध है।[७६] नाट्यकर्त्री ने सर्वत्र काल का निर्देश किया है। एकांकी की घटनाएँ भी देवदत्त की वित्तेषणा की परिचायक हैं। इस प्रकार अन्वितित्रय का सफल निर्वाह यहाँ देखा जा सकता है।

नारददौत्यम् में पाँच दृश्य हैं। प्रथम एवं पंचम दृश्य देवलोक में इन्द्र की सभा का है। द्वितीय दृश्य भारत में बम्बई के एक मार्ग का और बाद में नीता के घर का है। तृतीय दृश्य एक क्लब तथा चतुर्थ दृश्य दिल्ली में गृहमन्त्री के आवास का है।[७७] यद्यपि यहाँ स्थानान्विति नारद की अलौकिक शक्ति के कारण सम्भव है परन्तु मंच सज्जा में देवसभा का दृश्य, मन्त्री महोदय के आवास तथा क्लब भवन के दृश्य को सजीव करने के लिए यथेष्ट सामग्री और पर्याप्त श्रम आवश्यक है। स्वर्गलोक से भूलोक पर आना तथा बम्बई से दिल्ली पहुँचने में समय का समायोजन भी नारद की अलौकिक शक्ति के कारण हो जाता है। व्यापारों में एकता दृष्टिगोचर होती है। नाट्य की समस्त घटनाएँ भारत में फैलते भौतिकवाद को प्रकट करने में समर्थ है।[७८]

कविकालिदासीयम् में सात दृश्य हैं। सभी दृश्य अलग-अलग स्थलों पर घटित हुए हैं।[७९] यहाँ काल के एकत्व का ध्यान नहीं रखा गया है। व्यापारों की एकता देखी जा सकती है। समस्त नाट्य-व्यापारों का उद्देश्य कालिदास की श्रेष्ठता प्रतिपादित करना है।[८०]

डॉ० नलिनी शुक्ला द्वारा रचित संगीतनाट्य–**राधानुनय** में पाँचों दृश्य एक ही सघन वन के निकुंज में सम्पादित किये गये हैं।[८१] लता वृक्षों के कुंज आदि से मंचसज्जा को आकर्षक एवं प्रभावी बनाने के लिए यथेष्ट श्रम अपेक्षित है। संगीतिका में अन्वितित्रय निर्वाह दृष्टिगत होता है। वसन्त ऋतु के प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए प्रकाश-व्यवस्था की आवश्यकता है। प्रथम दृश्य के आरम्भ में सूर्योदय का उल्लेख हुआ है। आगे के दृश्यों की घटनाएँ क्रमशः

घटित हुई हैं। व्यापारों में भी एकत्व है। आरम्भ में राधा का मान करना, कृष्ण द्वारा अनुनय करना तथा मानभंग होना आदि घटनाएँ यहाँ प्रदर्शित की गई है।

पार्वतीतपश्चर्या में वस्तु तीन दृश्यों में विभक्त है। प्राकृतिक दृश्यों की सज्जा पर्याप्त श्रम की अपेक्षा रखती है। मंचसज्जा आकर्षक है तथा एक ही दृश्य में हिमालय का भवन एवं एक पर्वत शिखर पर तपस्या करते हुए शिव दिखाई देते हैं।[८२] विशेष सामग्री वांछित नहीं है। कामदेव व रति के नृत्य, वसन्त आदि के प्रसंगों के लिए प्रकाश व्यवस्था की आवश्यकता है। संकलनत्रय का यहाँ पालन हुआ है। दोनों ही संगीतिकाओं की गीत योजना भी अत्यन्त मधुर है। आद्यन्त स्वर लहरी सुनाई पड़ती है।

मुक्ति महोत्सव में कथावस्तु तीन दृश्यों में प्रभावी रूप से प्रस्तुत की गई है। मंच-सज्जा सीधी सादी एवं सरल है, विशेष श्रम व द्रव्य की अपेक्षा नहीं है। द्वितीय दृश्य में गर्भांक की योजना की गई है। जहाँ विशाखा अनुराधा रागिनी आदि पात्र स्वतन्त्रता दिवस पर बच्चों का ध्वजारोहण व सांस्कृतिक कार्यक्रम देखने जाते हैं। यहाँ रंगमंच पर ही कुछ पात्र दर्शक भी बनते हैं। यह दृश्य किंचित् जटिल है। व्यापारों का सूत्र नारी मुक्ति से सम्बद्ध है। इस प्रकार अन्वितित्रय के निर्वाह में नाट्यकर्त्री सफल रही है।

मिथिलेश कुमारी मिश्रा द्वारा रचित **आम्रपाली** में मंचीय सज्जा कलात्मक एवं आकर्षक है, जो अल्प व्यय साध्य किन्तु श्रम-सापेक्ष हैं। यह पाँच अंकों की नाटिका है। प्रथम एवं चतुर्थ अंक का कार्य स्थल राजोद्यान है[८३] किन्तु दोनों ही उद्यान पृथक-पृथक हैं। प्रथम दृश्य का उद्यान पुरुष-प्रवेश-वर्ज्य है तथा चतुर्थ अंक के उद्यान में सभी प्रवेश कर सकते हैं। दृश्य को स्वाभाविक एवं प्रभावोत्पादक बनाने के लिए तदनुरूप पुष्पित लता, वृक्ष, गुंजन करते भ्रमर, कोयल आदि पक्षियों के कलरव का निर्देश किया गया है। द्वितीय अंक राजभवन के विशाल प्रांगण का है, जहाँ मंच पर स्वयंवर में आये राजकुमार बैठे हैं।[८४] तृतीय अंक की घटनाएँ राजमार्ग पर घटित हुई हैं[८५] तथा पंचम अंक आम्रपाली के भवन का प्रांगण है।[८६] प्रत्येक अंक की घटना अपने में पूर्ण होने से नाट्य में स्थानान्विति है।

आम्रपाली का प्रथम अंक प्रातःकाल का है जिसमें देवी पूजा के लिए पुष्प चयन का उल्लेख है।[८७] द्वितीय अंक दूसरे दिन स्वयम्वर का है। प्रथम अंक में आम्रपाली अगले दिन होने वाले स्वयम्वर का वर्णन करती है।[८८] दूसरा दृश्य स्वयम्वर से प्रारम्भ होता है। यदि यहाँ संगीताचार्य के गीत को तात्कालिक स्थिति का बोधक मानें जैसा कि नाट्य निर्देशन में स्वीकार किया है।[८९] तो स्वयम्वर का समय रात्रि का होता हैं।[९०] द्वितीय एवं तृतीय अंकों की घटनाओं में कुछ दिनों का अन्तर है। द्वितीय अंक में अजातशत्रु युद्ध की धमकी देता है तथा तृतीय दृश्य में सूचना मिली है कि युद्ध में पराजित अजातशत्रु आम्रपाली

की सेवा से स्वस्थ होकर पाटलिपुत्र चला गया है ।[९१] युद्ध होने तथा स्वस्थ होने में कुछ समय तो अवश्य लगा ही होगा । तृतीय एवं चतुर्थ दृश्य की घटनाओं में एक या दो दिन का अन्तर हैं । यहाँ इन दिनों में आम्रपाली के प्रति तथागत की कृपादृष्टि की सूचना दी गई है ।[९२] चतुर्थ एवं पंचम दृश्य में एक दिन का अन्तर हैं । चतुर्थ दृश्य में बुद्ध आम्रपाली को दीक्षा देने का आश्वासन देते हैं तथा पंचम अंक में उसे दीक्षा देते हैं ।[९३] इस प्रकार नाट्यकर्त्री अंकों की घटनाओं में कालक्रम का निर्वाह करने में सफल रही है ।

नाटिका के समस्त व्यापार क्रमिक रूप से हुए हैं । आरम्भ में आम्रपाली का अजातशत्रु के प्रति पूर्वराग, काल के प्रवाह में वैराग्य रूप में परिणत हुआ है । अतः यहाँ व्यापारान्विति भी है ।

दशमस्त्वमसि एकांकी-संग्रह में समस्त एकांकी मंच सज्जा की दृष्टि से श्रम-द्रव्य-निरपेक्ष हैं ।[९४] मंच सज्जार्थ नाट्यकर्त्री ने किसी प्रकार का निर्देश नहीं किया है । एकांकियों में दृश्य/उपदृश्य के विभाजन का अथवा पटीक्षेप का भी उल्लेख नहीं हुआ है । प्रसंग के आधार पर ही दृश्य परिवर्तन की कल्पना करनी पड़ती है ।[९५] अतः साज-सज्जा आदि उपकरणों से रहित होने के कारण साधारण मंच पर अथवा नुक्कड़ नाट्यों के रूप में भी इन्हें खेला जा सकता है ।

अलक्ष्यं दूरदर्शनम् में प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में घटनास्थल महेश का घर, तृतीय दृश्य में वैद्य के घर, चतुर्थ दृश्य में राजमार्ग तथा पंचम दृश्य में पुनः महेश का घर है ।[९६] घटनाओं में काल का कोई व्यतिक्रम नहीं है तथा समस्त घटनाएँ कंचन के मूर्खतापूर्ण कार्य एवं तज्जन्य दुष्परिणाम को प्रदर्शित करती हैं ।[९७] इस प्रकार यहाँ तीनों प्रकार की अन्वितियाँ प्रयुक्त हैं ।[९८]

उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् में दो दृश्य हैं । प्रथम दृश्य भूलोक पर एक मार्ग का तथा द्वितीय दृश्य स्वर्ग में नन्दन वन का है ।[९९] दोनों दृश्यों की घटनाओं में कालक्रम भी भंग नही हुआ है । नारद ग्रामीण को भूलोक से स्वर्ग लोक में ले जाते हैं । व्यापारों में भी संगति है । नारद को प्रसन्न करके एक ग्रामीण उनके साथ स्वर्ग तो पहुँच जाता है तथा नन्दन-वन में पत्नी द्वारी पिटाई की विकल्पना का परिणाम भोगता हैं ।[१००] इस प्रकार व्यपारों में कहीं भी विरोध परिलक्षित नहीं होता ।

चराचरं संचितकर्मयन्त्रितम् में पाँच दृश्य हैं । प्रथम एवं चतुर्थ दृश्य मार्ग में वटवृक्ष के नीचे,[१०१] द्वितीय एवं पंचम गंगातट पर[१०२] तथा तीसरा वैकुण्ठ में घटित हुआ है ।[१०३] घटनाओं के क्रमशः घटित होने से स्थानान्विति के साथ-साथ कालान्विति का सफल प्रयोग है । समस्त व्यापार भक्ति की महत्ता बतलाते हैं । सुव्रत की भक्ति के कारण भगवान को स्वयं बनाया गया नियम तोड़ना पड़ता है । इस प्रकार तीनों ही अन्वितियाँ यहाँ द्रष्टव्य हैं ।

दशमस्त्वमसि के एकमात्र दृश्य का घटनास्थल नदी के दोनों तट हैं।[१०४] अतः स्थानान्विति की पूर्णता के साथ सज्जा की दृष्टि से श्रम व द्रव्य की भी अपेक्षा नहीं है। नदी के एक तट पर नाव की प्रतीक्षा में बैठे दस मुनि नाव के आने पर दूसरे तट पर पहुँच कर एक मुनि के खोजने की आशंका से खिन्न हैं। अतः घटनाएँ अविरल क्रम में चल रही हैं तथा इनमें समय का व्यवधान न होने से व्यापारान्विति तथा कालान्विति भी यहाँ विद्यमान है ।

न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः के दोनों दृश्य मंच सज्जा की दृष्टि से सरल हैं। दोनों ही दृश्यों की घटनाएँ एक साधारण ग्रामीण वृद्धा के घर पर सम्पन्न हुई हैं।[१०५] अतः स्थान की अन्विति देखी जा सकती है।

प्रथम एवं द्वितीय दृश्य में कुछ दिनों का अन्तर है। गावं से शहर लौटकर गोपाल आन्दोलन में बन्दी बना लिया जाता है। उसके बाद द्वितीय दृश्य प्रारम्भ होता है दृश्यों की आन्तरिक घटनाएँ क्रमशः सम्पन्न होने के कारण काल की एकता विद्यमान है। प्रथम दृश्य में पार्वती का गोपाल से विवाह, गोपाल का शहर जाना, आन्दोलन में बन्दी होना आदि घटनाएँ पार्वती की चिरप्रतीक्षा की हेतु हैं तथा कहानी को उसी ओर मोड़ती हैं। इस प्रकार समीक्ष्य एकांकी में देश, काल की अन्विति है।

भक्तराजः में प्रथम दृश्य बैकुण्ठ, द्वितीय दृश्य श्रेष्ठि की दुकान तथा तृतीय दृश्य किसी गाँव में एक कृषक की कुटी का तथा चतुर्थ दृश्य राजमार्ग का है। प्रथम दृश्य प्रचण्ड ग्रीष्म की मध्याह्न वेला का है।[१०६] इस दृश्य के तत्काल बाद नारद तथा विष्णु भूमण्डल पर सेठ की दुकान पर पहुँचते हैं।[१०७] यह समय सूर्यास्त से कुछ समय पूर्व दुकान बन्द करने का रहा होगा क्योंकि सेठ पैसे की गणना में संलग्न है। यहाँ से चलकर सूर्यास्त के समय नारद तथा विष्णु भक्तराज की कुटी पर पहुँचते हैं। चतुर्थ दृश्य तृतीय दृश्य के तत्काल बाद घटित हो रहा है।[१०८] एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचने में काल एवं स्थान की अन्विति का समायोजन दोनों की दिव्य शक्ति से सम्भव है। इसीलिए वैकुण्ठ से भूलोक आने में तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचने में समय नहीं लगा होगा। समस्त व्यापार भक्त की महिमा प्रदर्शन के लिए किए गये हैं। सेठ के प्रसंग की अवतारणा भी तुलनात्मक दृष्टि से निर्धन महत्ता प्रदर्शित करती है। इस प्रकार एकांकी में काल स्थान एवं घटनाओं में संकलन है।

माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः की मंच सज्जा के लिए विशेष श्रम व द्रव्य अपेक्षित नहीं है। रूपक के तीनों दृश्यों का घटना स्थल एक वृद्ध किसान का घर है।[१०९] स्थानान्विति के साथ-साथ व्यापारों की एकता पर भी ध्यान रखा गया है। सभी घटनाएँ पारिवारिक सुख की अपेक्षा देश हित को प्रमुखता देती हैं। एतदर्थ समस्त पात्र प्रयत्नशील हैं। समयान्विति की दृष्टि से प्रथम दृश्य प्रातःकाल का है ; क्योंकिं मंगला पिता को स्नानादि कर देवपूजन करने को

कहती है।[११०] द्वितीय दृश्य व प्रथम दृश्य की घटनाओं में कुछ दिनों का अन्तर नाट्यकर्त्री ने स्वयं निर्दिष्ट किया है।[१११] तृतीय दृश्य भी द्वितीय दृश्य के कुछ दिन बाद रात्रि को सम्पन्न हुआ है।[११२] प्रत्येक दृश्य की घटनाएँ काल की दृष्टि से अवच्छिन्न व पूर्ण हैं।

सचाप्यस्ति रजक एव में दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य नदी व नदीतट[११३] का तथा द्वितीय दृश्य बैकुण्ठ लोक का है।[११४] अतः स्थान की एकता है। समस्त घटनाएँ एक ही कालक्रम में घटित हुई हैं और भगवद् विश्वास को पुष्ट करती हैं। अतः कालान्विति व व्यापारान्विति भी है।

सत्यमेवजयते की कथावस्तु तीन दृश्यों में विभक्त हैं। प्रथम दृश्य महात्मा गाँधी के घर का, द्वितीय दृश्य न्यायालय का व तृतीय दृश्य वायसराय के भवन का है।[११५] मंच सज्जा के लिये उपकरणों का निर्देश नहीं किया गया है। न्यायालय तथा वायसराय के भवन के दृश्यों की सजावट के लिये अधिक श्रम व सामग्री की आवश्यकता हो सकती है। रूपक के समस्त व्यापारों का उद्देश्य गान्धी जी का सत्य के प्रति निष्ठा एवं आग्रह को प्रकट करना है। इसमें नाट्यकर्त्री पूर्णतः सफल रही है। प्रथम दृश्य में जनता गान्धी के नेतृत्व में नमक कानून तोड़ने के लिए सत्याग्रह का निश्चय करती है। द्वितीय दृश्य में गान्धी सत्याग्रह करने के कारण बन्दी बनाए गये हैं।[११६] द्वितीय तथा तृतीय दृश्यों में भी कुछ दिनों का अन्तर है। न्यायालय से मुक्त गान्धी को वायसराय अपने भवन में बुलाता है।[११७] यहाँ नाट्यकर्त्री ने दिनों अथवा समय का उल्लेख न कर 'कालान्तरे' पद का प्रयोग किया है। दृश्यों की अवान्तर घटनाएँ एक ही कालक्रम में घटित हुई हैं।

ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः में एक दृश्य हैं, जिसका घटना स्थल दामोदर का घर है। मंचसज्जा में न अधिक द्रव्य चाहिए और न अधिक श्रम।[११८] एकांकी के आरम्भ में रघुराज के कथन से ज्ञात होता है कि उसने सेवक को प्रातःकाल ज्योतिषी के पास भेजा था जो अभी तक नहीं लौटा है। सम्भवतः उसे गये हुए दो-तीन घण्टे हो गये हैं तभी रघुराज को क्रोध आ रहा है। एकांकी की समाप्ति पर अपने पशुओं को खोजती हुई एक वृद्धा के कथन से ज्ञात होता है कि दोपहर हो गई है और उसके पशु भूखे होंगे। अतः यह समय मध्याह्न[११९] भोजन का रहा होगा। इस प्रकार सम्पूर्ण घटनाएँ तीन-चार घण्टे के अन्दर सम्पन्न हुई हैं। इस प्रकार यहाँ स्थान एवं काल की अन्विति विद्यमान है। गोपाल, उसके तीनों भाई एवं पिता अपने मूर्खता पूर्ण कार्यों से पशुवत् दण्ड पाते हैं। एकांकी के समस्त व्यापार एक दिशा में ही उन्मुख होने से एकांकी में व्यापारान्विति भी है।

इस प्रकार मिथिलेश कुमारी मिश्रा के रूपक अन्वितित्रय की दृष्टि से सफल तथा मंचसज्जा की दृष्टि से अत्यल्प श्रम-द्रव्य साध्य हैं। मंच सज्जा के लिए उन्होंने कहीं सामग्री का निर्देश नहीं किया है। कल्पना से ही उसकी प्रसंगानुरूप सज्जा की जा सकती है।

इस प्रकार अर्वाचीन संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के इन रूपकों में मंच-सज्जा, प्रकाश व्यवस्था तथा संगीत योजना का प्रयोग बढ़ा है। प्रकाश आदि के नवीन उपकरणों में प्रस्तुति में प्रभाव व आकर्षण उत्पन्न हुआ है। आरम्भ में जिन दृश्यों को मंच पर दिखाना कठिन था, उन्हीं को अब प्रकाश एवं छाया आदि के द्वारा रोचक ढंग से सहज ही मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। 'विक्रमवेतालनाटिका' में श्मशान का दृश्य तथा राजमहल आदि के दृश्य, 'पार्वती परमेश्वरीयम्' में, प्रकृति की विविध ऋतुओं के चित्र 'नचिकेतश्चरितम्' में पानी, आँधी आदि के दृश्य नवीन तकनीक से प्रस्तुत किए गए हैं। लीलाराव, मिथिलेश कुमारी मिश्रा, वनमाला भवालकर एवं नलिनी शुक्ला के रूपक व्यावसायिक मंचों पर तथा अव्यावसायिक मंचों पर यथा— विद्यालय/महाविद्यालय के मंचों या चौराहे व नुक्कड़ों पर सहज अभिनेय हैं। लीलाराव के रूपक प्रचुर ध्वनि निर्देश तथा संगीत योजना के कारण आकाशवाणी पर भी सफलता से प्रसारित किए जा सकते हैं। मंचसज्जा की दृष्टि से रमा चौधुरी के रूपक अवश्य कुछ श्रम-द्रव्य सापेक्ष है। संगीत के प्रयोग से इनके रूपकों की प्रस्तुति भी प्रभावशाली है। इससे संकलन-त्रय की शिथिलता भी अरुचिकर नहीं लगती। अन्य नाट्यकर्त्रियों के एकांक रूपकों में तो सर्वत्र संकलन-त्रय को देखा जा सकता है। वास्तविकता तो यह है कि नये मंचीय उपकरण संकलन-त्रय की कमी को खटकने नहीं देते। इनमें सुन्दर मंच सज्जा और संगीत नृत्य का प्रयोग आद्यन्त सामाजिकों को नाट्य प्रयोग से बाँधे रखने में सफल है।

संदर्भ

१. नाट्यशास्त्र, २/७३-८५.

२. वही, २१/१९६-२०१.

३. यद् द्रव्यं जीवलोके तु नानालक्षणलक्षितम्।
तस्यानुकृतिसंस्थानं नाट्योपकरणं भवेत्॥
प्रासादगृहयानानि नाट्योपकरणानि च।
न शक्यानि तथा कर्तुं यथोक्तानीह लक्षणैः॥
लोकधर्मी भवेत्वन्या नाट्यधर्मी तथा परा।
स्वभावो लोकधर्मी तु विभावो नाट्यमेव हि॥—नाट्यशास्त्र, २१/१९१-१९३.

४. भरतोक्त प्रकारेण रचिते नाट्यमण्डपे

नगरार्णव शैलादेः स्वर्गादेः भुवनस्य च
स्थानप्रवेशयोरेषां व्यवस्थापरिकल्पनम्
यन्नाट्ये क्रियते कक्ष्याविभागः सोऽभिधीयते ॥– भरतकोष, पृ० ८१०.

५. नाट्यप्रस्तुति, एक परिचय, पृ० ९१.

६. वही, पृ० ९९.

७. एकाहा चरितैकार्थमित्थमासन्नायकम् ।
पात्रैस्त्रिचतुरैरङ्कं तेषामन्तेऽस्य निर्गमः ॥– दशरूपकम्, ३/३६.

८. देशकालपात्र संस्कारेण स्थान योजना ।– अभिनव नाट्यशास्त्रम् १/१०९, पृ० २८५.

९. कविकुलकोकिलम्, पृ० ४, १४, २१, २३, २५, २९, ३२, ३९, ४०, ५०, ५५, ६४-६५, ६९.

१०. रूपकुमारः–(आश्चर्यान्वितः) कथं मम पुनर्दर्शनं भवत्या याच्यते दीनदरिद्रजनोऽहम् । भवतु परश्वः पूर्णिमा रजनी मम 'मयूरवमालिकायाः' शुभजन्मोत्सव दिवसः । सा भवतीं सादरं आमन्त्रयति । कृपया आगच्छतु भवती मध्यरात्रे अत्रैव स्थाने ... ।
–पल्लीकमलम्, पृ० १५.

११. दृश्यम्–महाराष्ट्रमण्डलनिविष्टे लोनावलिनाम्नि ग्रामे, मीरानुपयोर्वासगृहम् ।
–अनूपः, पृ० ६.

१२. दृश्यम्–धूम्रयानस्य प्रकोष्ठ, मीराभिषजौ ह्याभि xxx –वही, पृ० १३.

१३. दृश्यम्–परेद्युः प्रातः मुम्बापुरोपकण्ठस्थे माटुङ्गनाम्नि ग्रामे रुग्णालयस्योद्यानम् कोष्ठस्य मध्यभागे शय्यायामनूपं वीक्ष्य । –वही, पृ० १६.

१४. भित्तौ महत्यां पुरातन यन्त्र घटिकायां नववादनशंसिनामाकर्ण्य । –अनूपः, पृ० १२.

१५. तल्प कम्बलादि साधु प्रसार्य ....।–वही, पृ० १५.

१६. (क) दृश्यम्–पञ्चभ्योऽब्देभ्यः पूर्वम् ।– असूयिनी–मंजूषा, १२ : ११, १, पृ० २९८.
(ख) वर्षपञ्चकानन्तरं समुद्रतटे मिथः संलपन्त्यौ धीवरललने दृश्येते । –वही.

१७. (क) स्थानम–गुर्जरदेशीयग्रामटिकायां ग्रामाधिपस्य वासगृहम् ...।
–कटुविपाक–मंजूषा, १० : ४, पृ० ८३.
(ख) प्रदोषकालः वीरभा स्वगृहगवाक्षे किंकरेण संलपन्ती दृश्यते । –वही, पृ० ९ ९१.

१८. वीरभा–व्यतीतामहती बेला नातिदूरे वर्त्मनि ।
गतस्य ते पितर्गेहादानेतुं वृत्तपत्रिकाम् ॥–वही, पृ० ८३.
(ख) वही, पृ० ८७.
(ग) वही, पृ० ९१.

१९. वही, पृ० ९६.

२०. xxx तदभ्यर्थये महानुभावान्–(रेडियोध्वनिमाकर्ण्य) अहो ! कथं मधुर गीतध्वनयः श्रूयन्ते । कदाचिदत्रैव रत्नमहोदयस्य मञ्चवेत्रासनादि भूषितायां मुखशालायां स्थापितस्य वाद्ययन्त्र विशेषस्या ध्वनिरेषः ।-कपोतालयः–मंजूषा १० : १०, पृ० २२९.

२१. कृपाणिका– दिव्यज्योतिः अक्टू० १९७६, पृ० २२, २५.

२२. होरा चतुष्टयं व्यतीतं, पटावर्तन समये ... ।–वही, पृ० २५.

२३. उर्मिला–x x x सहृदया चन्द्रिकाऽपि मामनुकम्पमाना मन्दमन्द द्युतिर्बाष्पोदकं गोप्तुमिव मेघाम्बरेणात्मानमवगुण्ठयति । (शयनागारस्य द्वारमुदघाट्य भोजनपात्रहस्तः सेवकः प्रविशति ।)– वही, पृ० २४.

२४. वही, पृ० २९.
२५. स्थानं पुण्यपत्तनोपकण्ठगतं कस्यापि निर्धनस्य सुक्षितस्य गृहम्। मुखशालायां भित्तिगत फलकेषु निर्णिज्य स्थापितानि ताम्रपत्राणि, प्रवेशद्वाराग्रमंगलसूचकाशोकद्रुममालाविभूषितं गोमयालिप्तं अजिरं, तस्य च कोणे स्थापिता कुलदेवतायाः प्रतिमा। मध्ये दोलैका, वामतश्चोपवेशनमञ्चः। समीपवर्तिदेवालयादनवरतघण्टानिनादः सायन्तनः समाकर्ण्यते। क्वचिदर्भकाणामाक्रोशः क्वच्चिापरक्रीड़मानानां कोलाहलः श्रूयते।
—क्षणिकविभ्रमः—मंजूषा, १० : ६, पृ० १३९.
२६. गणेशचतुर्थी—मंजूषा, १० : ८, पृ० १९४.
२७. वही, पृ० १९९.
२८. दृश्यं—पुण्यपत्तनसमीपे गिरि प्रदेशे गिरिजायाः वासकोष्ठः, सामान्यजनोपयोग्योपकरणोपन्नः। भित्यां तत्पुत्रस्य विशालचित्रं सुमनोमालाविभूषितम्। भूमावेका मंजूषा, देवमूर्तिः, पूजासामग्री शय्या चैका।—गिरिजायाः प्रतिज्ञा—मंजूषा, ९ : ९, पृ० १३८.
२९. गोपालः—पुष्पमालामाददानः साश्चर्यं विकीर्णजातं ..शोकमग्नां गिरिजां पश्यन् x x x होरार्धात् प्राग नैवं संतप्ता आसीनूनम्।—वही, पृ० १४७.
३०. हिमनीहारसंवृत्ते कस्मिंचिद् विविक्तस्थले समरशिविरम्।
—जयन्तुकुमाउँनीयाः—विश्वसंस्कृतम्, ४ : ४, पृ० ३४६.
३१. कस्मिंश्चिद् रमणीयशैलशिखरे बिहारस्थानम्। एकस्मिन् विविक्तकोणे कश्चिद् दैवज्ञः समुपविष्टो दृश्यते। देवालयात् पुरोहितानां स्तोत्रगायनं श्रूयते।
—मायाजालम्—विश्वसंस्कृतम् ११ : १-४, पृ० ६८.
३२. अहमदनगरे अहमदनाम्नः कस्यचिद् यवनस्य हर्म्योद्याने तत्कन्यकाया विवाहमण्डनादिप्राथमिक सम्भारोऽनुष्ठीयते।—मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, १० : ६, पृ० १३१.
३३. वही, पृ० १३२.
३४. मुखशालायां पीठयुग्मं वेत्रासनचतुष्टयं काष्ठफलकं चैकं कोफी जलपान संभारायायोजितम्। दक्षिणतश्च शयनागारं सूक्ष्मपटान्तर्हितम्, यत्र परिभ्रमन्त्याः प्रमदायाश्छाया दृश्यते। वारं-वारं पथिकानां कोलाहलो मोटरयानयातायातशब्दाश्चश्रूयन्ते।—वही, पृ० १३२.
३५. धुल्लिकापुरे सार्वजनिकोपवनम्। दक्षिणतो वापी यत्र जलाहरणार्थं समवेता ग्रामललना दृश्यन्ते। कूपाज्जलास्फालनध्वनिश्च श्रूयते। उपवनमञ्चोपविष्टौ युवानौ मिथः संलपतः।—बालविधवा—मंजूषा, ९ : १०, पृ० १६९.
३६. वही, पृ० १७३.
३७. वही, पृ० १७८.
३८. दृश्यम—गुर्जरदेशे बोरसदग्रामान्तरे हरिदासनाम्नः कस्यचित् कृषकस्य कुटीरम् x x x शिलोपविष्टा तर्कुहस्ता वृद्धाजननी x x x दक्षिणतः च कुटीरे स्वल्पसम्भारसंयुक्तः प्रकोष्ठ, यत्र दोलेका, खट्वायुग्मं चुल्लिका, कानिचिद्भाण्डानि च विद्यन्ते। क्वचित् गवां हम्बारवः श्रूयते, क्वचित् तर्कुनादश्च। प्रदोषकालः।
—वीरभा—मंजूषा ११ : ३, पृ० १३३.
३९. होलिकोत्सवदिने राधिका स्वकुटीरे गृहकर्मव्यापृता वर्तते।
—होलिकोत्सवम्—मंजूषा १० : २, पृ० २३.

४०. वही, पृ० २७.
४१. (क) कश्चिच्छागः वने क्रीडन् जलाशये स्वप्रतिबिम्बं दृष्ट्वा अवोचत्।
—गणयञ्छागः—दिव्य ज्योति, जुलाई १९७६, पृ० १०.
(ख) अथ सर्वे पशवः परस्परं अनुधावन्तः बंगप्रदेशे जाह्नवी तटं आगच्छति. . .।—वही, पृ० १२.
४२. नचिकेतोयमसंवादम्—पारिजातम्, ३ : १२, पृ० ११, १३, १५, २४.
४३. (यथायथा वेतालः पठति छायाकर्णयन्त्रस्य दृश्यं परिवर्तते उभे सख्यौ परस्परं आलपतः)—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम्, जन० १९८३, १/पृ० ५.
४४. राजा सोमप्रभायाः हस्तं शूरस्य हस्ते ददाति, वेतालश्च पृष्ठतः तयोः ग्रन्थिबन्धनं करोति विवाहसूचकं संगीत च श्रूयते।—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम्। : ९, पृ० १६.
४५. ध्वनिरूपकस्यान्ते पुनः 'मूर्तमहेश्वरः' इति संगीतध्वनिः श्रूयते।
—विवेकानन्दस्मृतिः—संविद्, नवम्बर, १९८४, पृ० ३९.
४६. (क) ततः प्रविशति देवगृहे पूजां निवर्तयन्ती नरेन्द्रस्य माता भुवनेश्वरी।
—विवेकानन्दविजयम्—पारिजातम् ४ : १२, पृ० २८.
(ख) वही, पृ० ३१.
४७. शान्ताः—भो पत्रवितरक, श्रृणु तावत अस्तिकिंचित्पत्रमस्मत्कृते।
—पाददण्डः—सागरिका २ : ३, पृ० २५७.
४८. भास्करः— x x x अयि, सुप्तोत्थितं मां मधुरोष्णचायपानपिपासा बाधते। मध्याह्ननिद्रानन्तरमुद्घारितनयनस्य ...प्रिया ? —वही, पृ० २५७.
४९. (घटिकायन्त्रेचतुर्वादनध्वनिः)
सुधीरः—हम्, किं चतुर्वादनवेला संजाता x x x पत्रवितरकादप्राप्तं पत्रमद्यापि।
—वही, पृ० २६३.
५०. सुधीरः—अहो, सार्ध पंचवादन वेला समुपस्थिता) मुहूर्तेनागन्तव्यं तया।
—वही, पृ० २६८.
५१. नगराजहिमालयस्य प्रासादे सुसज्जितकक्षः। मंगलवाद्यघोषः।—पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० १.
५२. वही, पृ० १०-११.
५३. मुहूर्त रंगमंच के प्रकाशविरामः। तन्त्री वाद्यस्वरानन्तरं पुनःप्रकाशः।—वही, पृ० १९.
५४. मंगलवाद्यघोषानन्तरं प्रविशति प्रासादगवाक्षाद् राजमार्गमवलोकयन्ती प्रमुदिता कैकेयी। रामवनगमनम्, पृ० १.
५५. वही, पृ० ९, १५.
५६. पुण्यमयी गोदावरी तटी, तपोभूमिरेषा पञ्चवटी
इयं रघुपतेरिह पर्णकुटी, परितः सीतारचिता वाटी।—सीताहरणम्, १/१.
५७. अन्नदेवता, पृ० ५.
५८. जयरामवाटिकाग्रामे सरस्तीरं। ग्रामवासिन्यः काश्चित् स्त्रियः घटेषु जलाहरणाय प्रविशन्ति।—कालीदर्शनम्—संस्कृतप्रतिभा, १२ : २, पृ० १५८.
५९. मधुरायां सैरन्ध्यर्याः त्रिवक्रायाः आडम्बररहितं भवनम्। x x x स्वयं लिखितस्य चित्रफलके मुरलीधरस्य भगवतः रूपं अभिनन्द्य गायति।—सैरन्ध्री प्रेक्षणक—संस्कृत-प्रतिमा, ५ : २, पृ० २०२.

६०. वही, पृ० २०५.
६१. कुचेलवृत्तम्—संस्कृतप्रतिभा ३ : २, पृ० २३२;-३३, ३६-३७.
यवनिका परिचयः
६२. प्रथमोऽकः—सीतारामयोर्विश्रामकक्षा—रामाभिषेकानन्तरं कानिचिन्मासानि व्यतीतानि
द्वितीयोऽङ्कः—प्रथमाङ्कस्य पञ्चदशदिवसानन्तरम्—प्रथमदृश्यः-सीतादेव्याः अन्तः पुरम्
द्वितीयदृश्यः—राजप्रासाद मध्ये एकोऽङ्कणः
तृतीयदृश्यः—श्रीरामदेवस्य विश्रामकक्षा
तृतीयोऽङ्कः—द्वितीयाङ्कान्तरदिवसः बाल्मीकेराश्रमस्य निकटतमा वनभूमिः।
चतुर्थोऽङ्कः—द्वादशवर्षानन्तरम् श्रीरामस्य यज्ञशालायाः एको विभागः।
—भूमिकन्या-प्रस्तावना, पृ० ड
६३. नचिकेतश्चरितम्, पृ० २, ४, ६, ८, ९, १०-११, १२.
६४. यमपुरम् तिमिरावगुण्ठितालोकोद्भासः, सुमण्डितं विपुलं तोरणम्। वही, पृ० ३.
६५. दृश्येऽस्मिन् कोऽपि आलापो न वर्तते। दृश्यात् दृश्यान्तरं दर्शकानां पुरतः आविर्भवति।
—वही, पृ० ९.
६६. महीयसी गार्गी—पृ० २३, २६, २८, २९, ३०.
६७. विराड्गृहम्, पृ० ३७, ३९, ४२, ४४, ४५, ४७.
६८. जम्बूपादपस्याधस्तने वात्स्यायनो गुरुः शिलामध्यास्ते ... ।—निम्बपत्राणि, पृ० १.
६९. वही, पृ० ६.
७०. वही, पृ० १, ४-६.
७१. प्रतिबुद्धा, पृ० १०.
७२. वही, पृ० १७.
७३. वही, पृ० २१.
७४. वही, पृ० १०, १७, २१.
७५. वही, पृ० २४.
७६. याथार्थ्यगरलम्, पृ० २५, २८, ३०, ३४.
७७. नारददौत्यम्, पृ० ३७, ४१, ४३, ४४, ४७.
७८. नारदः—देवराज! अद्यन्तनीयं भारतं न पुरातनभारतसदृशं वरीवर्ति ... तत्र यन्त्रनिष्पन्ने दुग्धचूर्णे जलं मिश्रयित्वा दुग्धं विधीयते।—नारददौत्यम्, पृ० ४८.
७९. कविकालिदासीयम्, पृ० ५०, ५२, ५३, ५६, ५९, ६१, ६३.
८०. राजा—x x x कवे! क्षान्तास्तेऽपराधाः। त्वर्यतामधुना राजगृहाय तत्र कवयः कलाविदश्च भवन्तं द्रष्टुं समुत्सुकाः सन्तः प्रतीक्षन्ते। अद्य प्रभृति कविकुलशिरोमणिपदेनलंकृतः अस्मत्सभायाः देदीप्यमानमणिस्त्वम्।—वही, पृ० ६४.
८१. प्रातःकाले सूर्योदयवेलायां सघन वन निकुञ्जस्थे मन्दिरे नृत्यगीतमयोल्लसिते वातावरणे भगवदाराधनम्।
—राधानुनयः, पृ० १.
८२. नगाधिराज हिमालयस्य वन्यप्रदेशः, समीप एव हिमवतः पर्वतीयो राजभवनः, तस्मादेव स्थानाद् दृश्यमाने सुदूरवर्तिनि पर्वत शिखरस्य उपान्ते x x x विरचिताश्रमे भगवान् शंकरः तपश्चर्यानिरतः।—पार्वतीतपश्चर्या (हस्तलिखित), पृ० १.

८३. आम्रपाली, पृ० १४,३९.
८४. वही, पृ० २२.
८५. वही, पृ० ३०.
८६. वही, पृ० ४६.
८७. कञ्चना–वसुमति ! तावदावां देव्याः पूजार्थं पुष्पचयन करवावः ।–वही, पृ० १७.
८८. आम्रपाली–मगधराज ! x x x श्वः एव मे स्वयंवरः किमवगतं न वा । –वही, पृ० २०.
८९. संगीतगुरुणा सत्यव्रताचार्येण स्थित्यनुसारं शृंगाररससिक्तं गीतं गीयते । वही, पृ० २२.
९०. चन्द्रमाराजते तारिकाभिर्युतो वर्तते सर्वतश्चन्द्रिकाचारुता ...।–वही, पृ० २२.
९१. वही, ३/पृ० ३५.
९२. वही, ३/पृ० ३८.
९३. वही, ५/पृ० ४६.
९४. अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (दशमस्त्वमसि), पृ० २७.
९५. वही, पृ० २९.
९६. वही, पृ० २९.
९७. वही, पृ० ३०.
९८. वही, पृ० ३१.
९९. उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्, पृ० १२,१४.
१००. नारदः भो कर्षक! पूर्वमेव विस्तरेण मयोक्तं यद् कामनापूरणः तरुरयम्। उच्चासनस्थेनापि त्वया तत्र याचितं येन तव लोकजीवन सार्थकत्वं गच्छेत् x x x अत एषा दुर्दशा दृश्यते । –उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्, पृ० १५.
१०१. चराचरं सञ्चितकर्मयन्त्रितम्–दशमस्त्वमसि, पृ० २,६.
१०२. वही, पृ० १,५.
१०३. वही, पृ० ३.
१०४. वही, पृ० ५०,५२.
१०५. न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः–दशमस्त्वमसि, पृ० ४४.
१०६. स्थिति–प्रचण्ड ग्रीष्मकाले मध्याह्न वेलायां एकं निर्मीयमाणं भवनं भगवान् विष्णुः स्वयं निरीक्षमाणोऽस्ति ...। भक्तराजः १/पृ० २०.
१०७. स्वर्णकारः–(सक्रोधं) दूरमपसरतम् । किन्न पश्यथः यदहं स्वर्णमुद्रागणनायां संलग्नः। एष एव युवयोर्याचना कालः ... ।–वही, २/पृ० २३.
१०८. उभौ एकस्मिन् ग्रामे आयातौ अस्तं गते सूर्ये ।–वही, ३/पृ० २३.
१०९. स्थितिः–कान्यकुब्जदेशस्य कस्मिंचिद्ग्रामे एकः कर्षकपरिवारः ।
–माताभूमिपुत्रोऽहं पृथिव्याः (दशमस्त्वमसि), पृ० ३८.
११०. मंगला–x x x अधुना परित्यज्य विषादं स्नानादिक्रियां च विधाय देवपूजनं करोतु . ।
–वही, पृ० ४०.
१११. वही, पृ० ४०.
११२. वही, पृ० ४१.
११३. स चाप्यस्ति रजक एव–दशमस्त्वमसि, पृ० ७.
११४. वही, पृ० १०.

११५. सत्यमेव जयते (दशमस्त्वमसि), पृ० ३३-३५.

११६. ततो जवाहर पटेलादिभिः सह गान्धीसत्याग्रहं प्रत्युद्यतोऽभवत् तत्र सर्वेः सार्धमसौ बन्दीकृतो न्यायाधीश समक्षमानीतश्च ...। सत्यमेव जयते, पृ० ३४.

११७. इत्युक्त्वा वहिर्गच्छति यत्र जयति महात्मागान्धी इति तुमुल ध्वनिना तस्य स्वागतमभवत्। कालान्तरे स पुनः वाइसराय महोदयेन आहूतो वाइसरायभवने विराजते।—वही, पृ० ३५.

११८. ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः—दशमस्त्वमसि, पृ० १७.

११९. शारदा—x x x पशवो मे अत्रैवागताः परन्न निवर्तिताः, यद्यपि मध्याह्न कालोऽयमागतः।—वही, पृ० २१.

सप्तम प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में पुरुष-पात्र

नाट्य में नेता का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा अनिवार्य है। यह नाटकीय कथावस्तु के बीज को निर्दिष्ट कार्य तक ले जाता है और फल की प्राप्ति करता है।[१]

संस्कृतनाट्यशास्त्र में कथावस्तु के पश्चात् नेता को दूसरा प्रमुख भेदक तत्त्व माना गया है।[२] पात्र अथवा नेता अर्थ में ही नायक पद का प्रयोग हुआ है। अतः नेता या नायक पद से सभी प्रमुख भूमिकाओं का बोध होता है। इनमें मुख्य नायक उपनायक, अनुनायक प्रतिनायक, तथा नायिका आदि सभी पात्र समाहित हो जाते हैं।[३] नेता शब्द की व्याख्या करते हुए डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी नेता का अर्थ नाट्य के मुख्यपात्र अथवा नायक से ग्रहण करते हैं।[४] भरत मुनि के अनुसार रूपक की चरम परिणति का प्रापक ही नायक होता हैं।[५] आचार्य धनंजय, हेमचन्द्र सागर नन्दी रामचन्द्र-गुणचन्द्र आदि कथानक में व्यापकता लाने वाले, फल प्राप्ति करने वाले तथा नाट्य को समाप्ति पर्यन्त ले ज़ाने वाले को नायक मानते हैं।[६] विश्वनाथ ने नायक को सम्पूर्ण कार्य व्यापार की आत्मा तथा मुख्यरस का आलम्बन स्वीकार किया है।[७] प्रायः समस्त आचार्यों ने नायक के सामान्य गुणों का समान रूप से उल्लेख किया है। सामान्यरूप से नायक को विनीत मधुर, त्यागी दक्ष, प्रियंवद, रक्तलोक, शुचि, वाग्मी, रूढ़वंश, स्थिर, युवा, बुद्धिमान, प्रज्ञावान्, स्मृतिसम्पन्न, दृढ़, तेजस्वी, धार्मिक, उदार, लालित्ययुक्त तथा कृतज्ञ आदि होना चाहिए।[८] सामान्य गुणों की न्यूनाधिकता के साथ स्वभाव के भेद से नायकों को चार वर्गों-उदात्त, उद्धत, ललित व शान्त में विभक्त किया गया है।[९] भारतीय नाट्यशास्त्री सभी प्रकार के नायकों में धीरता गुण को अपरिहार्य मानते हैं।[१०] भरत मुनि ने चारों भेदों को उत्तम, मध्यम तथा अधम कोटि का माना है। नाट्यशास्त्र के अनुसार नायक भेद संक्षेप में निम्न प्रकार से किया जा सकता है—

१. स्वभावभेद से[११]- धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित तथा धीरप्रशान्त

२. प्रकृति भेद से[१२]- उत्तम, मध्यम तथा अधम

३. श्रृंगारी वृत्ति के आधार पर[१३]- अनुकूल, दक्षिण, शठ और धृष्ठ

प्रधान पुरुष पात्रों के शोभा, विलास, माधुर्य, स्थैर्य, गाम्भीर्य, ललित औदार्य एवं तेज नामक आठ सात्विक गुण बतलाते हैं।[१४] नायक के अनेक सहायक भी होते हैं। उनमें पीठमर्द का स्थान महत्वपूर्ण होता है।[१५] नायक के सहयोगियों में विदूषक तो प्रायः प्रत्येक प्रकार से नायक का सहायक होता है किन्तु विट, चेट, शकार इत्यादि नायक भेद से सहायक हुआ करते हैं। अन्य सहायक पात्रों में

शृंगारसहाय, अर्थचिन्तासहाय, धर्मसहाय, दण्डसहाय, अन्तःपुर सहाय तथा दूत भी अपना स्थान रखते हैं।[१६] नाट्य में नायक विरोधी प्रतिनायक होता है।[१७] इसके भी नायक के सहायकों के समान सहायक हो सकते हैं। उनमें भी प्रतिनायक के समान गुण होते हैं।

पाश्चात्य नाटकों में घटनाओं की प्रधानता होने के कारण यह आवश्यक नहीं कि नायक धर्म का ही प्रतिनिधि हो और सदैव विजय का ही अधिकारी हो। यहाँ साधारण अथवा असाधारण कोई भी व्यक्ति नायक हो सकता है लेकिन नायक का सद्गुणी होना पाश्चात्य आलोचक भी स्वीकार करते हैं। पाश्चात्य नाटकों का प्रभाव आज भारतीय साहित्य पर भी पड़ा है। युग के बदलाव ने नायक-नायिका के प्रतिमान बदल दिए हैं। अतः आज के नाटकों में नायक विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने लगे हैं। कुछ नायक आदर्शवादी होते हैं और कुछ यथार्थवादी। कुछ पात्र स्थिर होते हैं तथा कुछ पात्र गतिशील। स्थिर नायक आदर्शोन्मुख होता है और गतिशील नायक घटनाचक्र के आघात को सहता हुआ पराजित होकर या विजय पाकर पुनः घटना चक्र में उलझ जाता है। सामाजिक आधार पर किये गये नायक भेदों में अभिजातवर्ग के अन्तर्गत विलासी, उत्पीड़क, सामन्तवादी तथा राजवर्ग के नायक होते हैं,मध्यवर्गीय नायक विद्रोही, शोषक, पथभ्रष्ट, यौनकुण्ठाग्रस्त दिखाई देते हैं एवं निम्नवर्गीय नायक जागरूक, आदर्शोन्मुखी भ्रष्ट, चाटुकार, कुण्ठित, लम्पट, नीच आदि होते हैं। कामवर्ग के नायकों की अनेक श्रेणियाँ की जा सकती है—कुण्ठाग्रस्त, आदर्शोन्मुख, दुर्बल व्यक्तित्व वाले, व्यक्तिवादी उन्मुक्त, समाज प्रेरक, प्रणयी आदि। प्रस्तुत प्रकाश में उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं के नायक चरित्र का विश्लेषण करेंगे। इनकी रचनाओं में एक ओर संस्कृत नाट्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के अनुसार धीरोदात्तादि नायक मिलते हैं तो दूसरी ओर आधुनिक विचारकों के अनुरूप रूपकों में कृषक आदि सामान्य वर्ग के नायक भी दिखाई देते हैं।

श्रीमती रमा चौधुरी के कविकुल कोकिलम् में बीस पुरुष पात्र हैं। चरित्र चित्रण की दृष्टि से कालिदास ही प्रधान हैं। संस्कृत नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से यह धीर प्रशान्त नायक हैं। यद्यपि षष्ठ दृश्य पर्यन्त उनमें नायक के सामान्य गुण विनय, मधुरता आदि प्रकट नहीं हुए हैं किन्तु सप्तम दृश्य से ये सभी गुण स्पष्टतः देखे जा सकते हैं।[१८]

बचपन में इनकी वृत्ति अध्ययन पराङ्मुखी थी, पाठशाला में शैतानी, उद्यानों से पुष्प चोरी करना इनकी गतिविधियाँ रही।[१९] न पढ़ने के कारण ही उन्हें काष्ठविक्रेता बनकर उपहास का पात्र बनाना पड़ा था।[२०] प्रकृति के प्रति उनमें कोमल भावना है। अपनी मूर्खता के कारण वह विद्यावती से अपमानित होते हैं। फलतः ज्ञान प्राप्ति करके उत्कृष्ट कवित्व शक्ति प्राप्त करते हैं।[२१] इस

प्रकार ऊर्ध्वमुखी वृत्ति को प्राप्त करते हैं। अन्य पात्रों में कालिदास के पिता सदाशिव, पाठशाला का क्रोधी शिक्षक, काष्ठविक्रेता, सम्राट तथा राजकन्या से विवाह के इच्छुक व शास्त्रार्थ करने वाले विपुल विक्रम, ज्ञानमार्तण्ड, कुबेर कुंजर और भक्तिरत्नाकर भी कथावस्तु के विकास में योगदान करते हैं। कुछ और पात्र भी हैं, जैसे–कालिदास के आश्रयदाता विक्रमादित्य, उनके दरबार में स्थित धन्वन्तरि, बराहमिहिर, घटकर्पर, अमर सिंह वररुचि, जो थोड़ी-थोड़ी देर के लिये मंच पर आते हैं। ये सभी पात्र कालिदास की श्रेष्ठता स्थापित करने के लिये हैं। इनके अतिरिक्त– दो भद्र महोदय बालक कालिदास की उद्दण्डता से पीड़ित, काष्ठविक्रेता का उपहास करने वाले दो युवक तथा एक दौवारिक भी पुरुष पात्र हैं।

देशदीपम् में दस से अधिक पुरुषपात्र हैं। चम्पकवदन नाटक का नायक है। माता के आशीर्वाद से वह देश के लिये अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के कारण 'देशदीप' होने का गौरव प्राप्त करता है। चम्पक वदन एक सुखी ग्राम्य परिवार का प्रतिभावान्, देशभक्ति भावना से ओतप्रोत युवक है। इसकी माँ आराधना, पिता ब्रह्मबल तथा बहिन पंकज नयना भी देशभक्त हैं। देशभक्ति की भावना के कारण ही चम्पकवदन अपना परिवार छोड़कर देश के लिए युद्ध करने वाले जोयान संगठन में भर्ती होकर एक कुशल सैनिक बनता है।[२२] यह परमवीर, दृढ़संकल्पी, निर्भीक[२३] तथा अदम्य साहसी है।[२४] अतः पूर्णतः सचेत होकर शिविर की रक्षा करता है। शत्रु के गुप्तचर को पहचान कर उसे पराजित करता है। अन्त में युद्ध में अपूर्व साहस का परिचय देकर अमरत्व लाभ करता है।

अन्य सहयोगी पात्रों में पिता ब्रह्मबल, अभ्रप्रतिम (मित्र) रहीम, जहाँगीर पात्रों की सर्जना हुई है. प्रतियोगी पात्रों मे विपुल विक्रम का चरित्र विशेष उल्लेखनीय है। प्रारम्भ में यह अभिमानी, क्रोधी तथा चारित्रिक बल से रहित तथा देशभक्ति भावना से रहित है।[२५] वह नायिका पंकजनयना के असीम सौन्दर्य पर मुग्ध है। अन्त में पंकजनयना के देशभक्ति भावना से प्रभावित होकर अपने कृत्य पर पश्चात्ताप करता है।[२६] खद्योत इसका सहयोगी तथा चाटुकार है अन्य गौण पुरुष पात्रों में ग्राम्यवासी, हास्योत्पादक कुक्कट व पेचक हैं।

निवेदितनिवेदितम् में विवेकानन्द, सेवक, शिवानन्द, सदानन्द, आत्मानन्द, यदुनाथ, शारदानन्द, ब्रह्मानन्द, जगदीशचन्द्र वसु तथा कतिपय युवक पुरुष पात्र हैं जिनमें से विवेकानन्द के चरित्र का ही विकास हो पाया है। स्वामी विवेकानन्द आध्यात्मिक तथा भगिनी निवेदिता के गुरु हैं।[२७] अपने गुरु रामकृष्ण के प्रति गुरुभक्ति भावना से ओतप्रोत हैं। ये आकर्षक अद्भुत तेजस्वी तथा तार्किक शक्ति से सम्पन्न हैं[२८] तथा गम्भीर प्रज्ञाशील व गूढ़ तत्त्व विचारक हैं।[२९] इन्हें भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति से अपार स्नेह है अतः उसके प्रचार प्रसार के लिए विदेश

भ्रमण करते हैं । इतना होने पर भी इन्हें नाटक का नायक नहीं कहा जा सकता है 'निवेदित निवेदितम्' नायिका प्रधान नाटक है । नायिका निवेदिता के गुणों के प्रकटीकरण में इनकी मुख्य भूमिका होने से नाटक में इस पात्र का विशेष महत्व है ।

पल्लीकमलम् का नायक रूपकुमार एक अनाथ ग्रामीण, दरिद्र नौकाचालक, किन्तु सुन्दर युवक हैं ।[३०] कमलकलिका उसके दर्शन मात्र से मुग्ध होकर प्रेम करने लगती है । रूपकुमार लौकिक चिन्ताओं से मुक्त, भावजगत में विचरण करने वाला तथा प्राणबन्धु-मनोमानुष की खोज में भटकने वाला, निर्द्वन्द्व युवक है ।[३१] जब उसे ज्ञात होता है कि कमलकलिका राजकुमारी है तो वह उससे विमुख होना चाहता है । इससे वह निःस्वार्थ तथा स्वाभिमानी है । अपनी नौका मयूखमालिका उसे प्राणों से भी अधिक प्रिय है, अतः उसका जन्मोत्सव मनाता है ।[३२]

मार्तण्ड **पल्लीकमलम्** रूपक का खलनायक है । यह अभिमानी उद्धत, क्षिप्रकारी क्रोधी प्रतिहिंसा परायण है ।[३३] कमलकलिका के साथ विवाह का इच्छुक वह उसके द्वारा मना किए जाने पर उसे धमकी देता है तथा उसके पिता को कर न देने के मिथ्या अभियोग में फँसाकर दण्डित कराना चाहता है ।[३४] यह राजा का पुत्र है ।

अन्य पात्रों में कमलकलिका को पुत्रवत् पालने वाले ब्रह्मपद, राजा प्रभंजन, मार्तण्ड का भाई चण्ड, कुछ ग्रामवासी, प्रहरी एवं हास्योत्पादक कर्कट मर्कट आदि भी रंगमंच पर दिखाई पड़ते हैं । इनके कार्य प्रधान पात्र के चरित्रोत्कर्ष के लिए हैं ।

मेघमेदुरमेदनीयम् का नायक अरुणकिरण वीर साहसी तथा निडर युवक है । अतः नदी में से रक्षा के लिए आती पुकार सुनकर शीघ्र कमलकलिका की रक्षा के लिए नदी में कूद पड़ता है ।[३५] यह सुन्दर, सभ्य, शालीन, निःस्वार्थ सेवी तथा सद्गुणी हैं ।[३६] अतः प्रचण्ड प्रताप को कमलकलिका के साथ अभद्र व्यवहार करते देख फटकारता है ।[३७] अरुणकिरण कर्मकुशल, विश्वस्त तथा कर्तव्यपरायण है । अतः यक्षराज कुबेर तथा उनकी पत्नी के विशेष स्नेह एवं आदर का पात्र है ।[३८] उसे माया मदिरा जलाशय के कमलवन की रक्षा के लिए नियुक्त किया गया है प्रचण्ड प्रताप बदले की भावना से उसको नष्ट कर देता है ।[३९] उसकी रक्षा में असमर्थ होने से वह एक वर्ष के लिए अलकापुरी से निर्वासन का दण्ड पाता है ।[४०]

प्रचण्डप्रताप नाटक का प्रतिनायक है । यह क्रूर,[४१] द्वेषी, दम्भी, दुर्धर्ष, प्रतिहिंसापरायण,[४२] छद्मी, क्रोधी, आत्मश्लाघी[४३] तथा उद्धत राजपुत्र है । कमल कलिका को प्राप्त करने में असमर्थ होकर प्रतिहिंसा से दग्ध वह अरुणकिरण

द्वारा रक्षित पद्मवन में हाथियों के झुण्ड को छोड़ देता है।[४४] और उसे दण्डित कराता है।

अन्य पात्रों में अरुणकिरण का सखा तरुणतपन कमलकलिका का पिता, अरिन्दम, अलकापुरी का राजा कुबेर जो कथावस्तु के विकास में योग देते हैं।

यतीन्द्रयतीन्द्रम् में बीस से अधिक प्रमुख एवं अप्रमुख पात्र-यतीन्द्रविमल, रसिकचन्द्र, तेजेन्द्रलाल, मि. राइल्याण्डस्, डॉ० रार्णार, डॉ० रयान्डेल, सैनिक, दत्त, गृहभृत्य गृह परिष्कारक समाहवायक, योगेन्द्रनाथ, सातकडिमुखोपाध्याय, पण्डित वर्ग प्राच्यवाणी के कुछ सदस्य, कुछ छात्र, पण्डित महाशय, भृत्य गजेन तथा स्वामी महोदय हैं। यतीन्द्र विमल को छोड़कर किसी भी पात्र की अवतारणा एक से अधिक अंकों में नहीं हुई है। इन पात्रों की अवतारणा का उद्देश्य चरित्रनायक के व्यक्तित्व को उभारना है।

यतीन्द्रविमल नाटक के नायक हैं। यह मातृभक्त तथा संस्कृत भाषा के प्रेमी हैं।[४५] संस्कृतभाषा के प्रचार प्रसार के लिए ही विदेश जाते हैं।[४६] गुरुजनों के प्रति[४७] अनन्य आदरभाव के करण हँसी में भी उनके प्रति अशिष्टता सहन नहीं करते। यतीन्द्र विमल संस्कृत के श्रेष्ठ कवि तथा गायक हैं।[४८] लन्दन से इन्होंने संस्कृत विषय में पी-एच्०डी० उपाधि प्राप्त की है। ये कर्मठ मधुर भाषी तथा श्रद्धालु हैं। शोध में इनकी गहन रुचि हैं। संस्कृत की सेवा के लिए प्राच्यवाणी संस्था की स्थापना करते हैं[४९] तथा कलकत्ता राजकीय संस्कृत महाविद्यालय का अध्यक्ष पद ग्रहण करते हैं। यह अत्यन्त विनीत तथा आडम्बरहीन हैं। अतः पण्डितों की सभा के मध्य इनके बचपन के नौकर इनसे मिलने आते हैं तो इनसे आदर से मिलते हैं। संक्षेप में वे विद्वान् प्रतिभावान्, कवि तथा नाट्यकार, योग्य तथा विनोदी प्रकृति के हैं।

युगजीवनम् में गदाधर (स्वामी रामकृष्ण परमहंस) मथुरानाथ दो पण्डित, दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर के दो कर्मचारी, रामचन्द्र, वैष्णवचरण, गौरीनाथ, तोतापुरी, नरेन्द्र, कालीप्रसाद, तथा गिरीश चन्द्र पुरुषपात्र हैं। गदाधर, हृदय, मथुरा नाथ, तोतापुरी तथा नरेन्द्र के अतिरिक्त अन्य पात्रों के चरित्र गौण हैं तथा गदाधर के चारित्रिक महत्त्व के प्रकटीकरण की दृष्टि से रचे गये हैं। गदाधर का चरित्र विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है।

गदाधर देवी के अनन्यभक्त हैं। गुरुदेव श्री तोतापुरी से दीक्षा के बाद रामकृष्ण के रूप में जाने जाते हैं।[५०] अलौकिक भाव भूमि में विचरण करने के करण इन्हें परमहंस भी माना जाता है। भावावेश में ये देवी के साथ हँसते-बोलते तथा खाते हैं।[५१] यहाँ तक कि मूर्ति को अपना उच्छिष्ट भी खिलाते हैं। देवी के दर्शन की अभिलाषा में इनकी दशा उन्मत्तवत हो गई है। लौकिकता के भान से रहित इन्हें लोग पागल समझते हैं। राग-द्वेष से रहित अत्यन्त विनयी तथा गर्वहीन हैं। वेदान्तादि शास्त्रों के ज्ञाता होने पर भी वह स्वयं को अज्ञानी ही

समझते हैं। इनके स्पर्श मात्र से लोगों में अपूर्वभाव की सृष्टि होती है। स्वहित की अपेक्षा प्राणिमात्र के हित को महत्व देते हैं।[५२] अतः अपने निर्वाण से पूर्व अपनी अलौकिक शक्तियों को नरेन्द्र में संक्रान्त कर देते हैं।[५३] वस्तुतः इन्होंने लोक कल्याण के लिए ही जन्म धारण किया है।

शंकरशंकरम् में शिवगुरु, ग्रामवृद्ध, ग्रामयुवक, सर्वज्ञ, महादेव, शंकर, राजशेखर, दोयति, गोविन्दपाद, पद्मपाद, सनन्दन, चाण्डाल तथा इसके कुछ अनुचर, आनन्दगिरि, ब्राह्मण, वेदव्यास, कुमारिल तथा उसके कुछ शिष्य, धर्मपाल धर्मकीर्ति, मण्डनमिश्र, उनके कुछ शिष्य, क्रकच, उग्रभैरव अभिनवगुप्त इनके कुछ शिष्य, कुछ बौद्ध श्रमण नेपाल राज, हस्तामलक, सुरेश्वर, सौरव्यवादी, जैनवादी, बौद्ध, नैयायिक, वैशेषिक, मीमांसक, बौद्ध मतावलम्बी तथा मन्दिर पुरोहित आदि लगभग चालीस पुरुषपात्र रंगमंच पर आते हैं। चरित्रचित्रण की दृष्टि से शंकराचार्य का ही चरित्र प्रमुख हैं। इनके पिता शिव गुरु तथा माता विशिष्टा हैं। भगवान् शिव के आशीर्वाद से इन दोनों को अल्पायु तथा सर्वज्ञपुत्र के रूप में शंकर की प्राप्ति हुई है।[५४] ये भगवान् शिव के साक्षात् अवतार हैं। शास्त्रार्थ में जैन, बौद्ध आदि विविध मतावलम्बियों को परास्त कर दिग्विजय करते हैं। शंकर स्वभावतः विनम्र तथा क्षमाशील हैं। अतः स्वयं के प्रति अभिचार क्रिया करने वाले कापालिकों को भी क्षमा कर देते हैं। यह निःस्पृही[५५] एवं बालब्रह्मचारी हैं। आठ वर्ष की अवस्था में संन्यास लेकर ३२ वर्ष की अल्पायु में ही वेदान्त का प्रचार-प्रसार कर ब्रह्मलीन हो जाते हैं।[५६]

कुमारिल भट्ट, मण्डन मिश्र आदि पात्र ऐतिहासिक हैं तथा शंकराचार्य शास्त्रार्थ में इन सभी प्रतियोगी पात्रों को पराजित कर अपना वर्चस्व सिद्ध करते हैं। रमा चौधुरी के जीवन चरितात्मक रूपकों में चैतन्य-चैतन्यम्, रामचरितमानसम्, भारताचार्यम्, अग्निवीणानाटकम्, भारतपथिकम्, भारततातम्, गणदेवतानाटकम्, प्रसन्न प्रसादम्, लेनिनविजयम्, भारतवीरम्, तानतनुः क्रमशः अपने चरितनायकों चैतन्यमहाप्रभु, तुलसीदास, सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, बंगाल देश के महाकवि नजरुल्लिस्लाम, राजा राम मोहनराय, महात्मा गान्धी, बंगाल के महान् उपन्यासकार, ताराशंकर वंद्योपाध्याय, बंगाल विश्रुत गायक श्रीराम प्रसाद, रूस के शासक लेनिन, शिवाजी तथा तानसेन के जीवन के उज्ज्वल पक्ष को प्रस्तुत करते हैं। इन रूपकों में प्रसिद्ध धार्मिक, राजनीतिक, समाजसुधारक, दार्शनिक, कवि, गायक, संगीतकार आदि को नायक बनाया गया है। रमा चौधुरी के नाट्य चक्र में पात्रों के चारित्रिक विश्लेषण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने सर्वथा लौकिक पात्रों को अपने नाटक का नायक बनाया है लेकिन मेघमेदुरमेदनीयम् में यक्षजाति के दिव्य पात्र की सृष्टि हुई है। इन रूपकों में जहाँ सामन्तवर्ग एवं राजवर्ग नायक रूप में हैं, वहीं पल्लीकमलम् आदि कुछ रूपकों में रूपकुमार के रूप में अत्यन्त सामान्य वर्ग के व्यक्ति भी नायक बने हैं। प्राचीन

भारतीय नाट्यशास्त्र परम्परा में अधिकारी के वध का सूच्य अथवा दृश्य दोनों ही रूपों में निषेध किया गया है लेकिन रमा चौधुरी के रूपकों में अधिकारी नेता की मृत्यु रंगमंच पर दिखाई गई है यथा– देशदीपम् में चम्पकवदन की तथा युगजीवनम् में रामकृष्ण परमहंस की, यतीन्द्रयतीन्द्रम् की मृत्यु रंगमंच पर ही प्रदर्शित की गई है ।

लीलाराव दयाल के **'अनूपः'** रूपक का नायक अनूप, यद्यपि रंगमंच पर अन्तिम दृश्य में कुछ समय के लिए ही आता है तथापि उसकी उपस्थिति समग्र नाटक में प्रतिक्षण प्रतीत होती है। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से यह त्यागी, कृती, कुलीन आदि सामान्य गुण से युक्त हैं। नायिका के प्रति व्यवहार की दृष्टि से इसे अनुकूल नायक कहा जा सकता है। अनूप अपनी पत्नी मीरा में पूर्णतया अनुरक्त है। कुष्ठ रोग की विवशता के कारण वह अपने परिवार का परित्याग करता है। वह अनुपमशील से युक्त तथा दयालु है।[५७] परिवार का परित्याग करने पर भी वह उसके भरण पोषण की व्यवस्था करता है।[५८] भिषक् के अनुसार वह सन्त पुरुष और रुग्णालय के अधिकारी के अनुसार प्रसन्नचित, मधुरवक्ता और सज्जन है।

गुणे एकांकी का अन्य प्रमुख पात्र है। कथा के विकास में उसकी प्रधान भूमिका है। वह मित्र स्नेही, परोपकारी तथा सदाचारी है।

अन्य गौण पात्रों में दो बच्चे एवं रुग्णालय का अधिकारी भी है। स्वल्प समय के लिए रंगमंच पर आते हैं।

असूयिनी नायिका प्रधान एकांकी है। इसमें रेवा का पति सुपर्ण, दुर्गा का पति तथा दो बच्चे थोड़ी देर के लिये रंगमंच पर आये हैं। सुपर्ण मातृभक्त है, अतः अपनी पत्नी के प्रति प्रेम होने पर भी माता के कहने पर दूसरे विवाह के लिए तैयार हो जाता है।[५९] रेवा के असूयिनी बनने में सुपर्ण का दूसरे विवाह के लिए तैयार होना ही मुख्य कारण है। कथावस्तु के विकास की दृष्टि से मेरे मत में, दुर्गा के पति की अवतारणा की कोई आवश्यकता न थी। इस पात्र के बिना भी कथावस्तु यथावत् विकसित हो सकती थी।

कटुविपाकः का नायक ग्रामाधिप है। नाट्यकर्त्री ने इसका नामकरण नहीं किया है। यह शारीरिक रूप से स्थूलकाय एवं दीर्घबाहु है।[६०] वह दुराग्राही,[६१] शठ, क्रूर[६२] एवं स्वार्थी है। उसकी दृष्टि में देशदम्भी ही स्वराज्य की आकांक्षा करते हैं। अंग्रेज सरकार का भक्त होने से ग्रामाधिप का परिवार उसका साथ छोड़ देता है। गौण पात्रों में देशभक्त मोहन एवं स्वामिभक्त ग्रामाधिप का सेवक अत्यल्प समय के लिए रंगमंच पर आते हैं।

कपोतालयः का नायक रत्न पाश्चात्य वेशभूषा से मण्डित, व्यवसाय से क्लर्क, सीमित आय वाला मध्यवर्गीय व्यक्ति है। उसका बैंक का खाता मासान्त

तक समाप्त हो जाता है । ऐसी स्थिति में पत्नी कंचना उसका उपहास करती है । रत्न उसके उपहास तथा कटु वचनों का बुरा नहीं मानता। वह हँसमुख, धैर्यशाली तथा मस्त युवक है ।[६३] विषम आर्थिक परिस्थितियों में भी मधुर हास्य की सृष्टि करता है ।

कृपाणिका में पुरुष पात्रों की स्थिति गौण है । उर्मिला का पति उपीश शय्या पर लेटा हुआ वह मरणासन्न रूप में तथा उसका चिकित्सक रंगमंच पर अवतरित हुए हैं । 'तापस' एक तिब्बती लामा है जो अपनी अलौकिक शक्ति से वह उर्मिला के पति को स्वस्थ करता है ।

क्षणिकविभ्रमः के नायक को **अभ्यागत** पद से अभिहित किया गया है । यह सत्यप्रतिज्ञ, धार्मिक, कलाकुशल तथा प्रगल्भ है। दैवशात् उसके छात्र उसका साथ छोड़ अन्य गुरुओं के पास चले गये हैं ।[६४] फलतः आर्थिक विपन्नता के कारण वह लोभ के वशीभूत हुआ कारावास का दण्ड पाता है । वह दयालु प्रकृति का है । कारागार में वह गोविन्द को पुत्रवत् स्नेह देता है । गोविन्द वस्तुतः उसी का पुत्र है । अभ्यागत अपनी पत्नी से प्रचुर प्रेम करता है, बाद में बन्दियों के प्रति पत्नी की घृणा जान कर घर आया हुआ भी वह चुपचाप घर छोड़कर चला जाता है ।[६५]

गौण पात्रों में मित्र स्नेही, अभ्यागत का अभिन्न मित्र रामदास तथा सुनीति का पुत्र भी रंगमंच पर आते हैं ।

गणेशचतुर्थी का प्रधान पुरुष पात्र हरि है । वह अवस्था में तीस वर्ष का है । उसके पिता पाण्डुरंग राव हैं । वह कल्लन ग्राम का निवासी तथा व्यवसाय से कृषक है । अनपढ़ होने पर भी वह अन्धविश्वासी नहीं है । अपने बच्चों को कालेज की शिक्षा देने के पक्ष में वह इसलिए नहीं है कि कालेज शिक्षा प्राप्त करके बच्चे कृषि आदि श्रमपूर्ण कार्यों को करना नहीं चाहते हैं ।[६६]

अन्य पुरुष पात्रों में शंकरराव नामक शिक्षित अन्धविश्वासी व राजपुरुष की अवतारणा की गई है ।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा नायिका प्रधान नाट्य है । पुरुष पात्रों में गिरिजा के पुत्र का हन्ता, उसको खोजने में संलग्न ग्रामाधिप सहित एक राजपुरुष मंच पर उपस्थित होते हैं ।

जयन्तु कुमाउनीयाः पुरुष पात्र बहुल रूपक हैं । यहाँ किसी एक पात्र को नायक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि नाट्यकर्त्री किसी एक व्यक्ति की शौर्यगाथा का गान करना नहीं चाहती अपितु उसकी दृष्टि में कुमाऊ रेजीमेण्ट के सभी सैनिक तथा अधिकारी वन्दनीय हैं ।[६७] नामतः वे पात्र हरीश्वरः शिखेर, रूपसिंह भिषक्, पत्रकार नोर्वु मंत्री वर्मा व सैनिकगण हैं । समस्त सैनिक तथा अधिकारी वीर तथा दृढ़ निश्चयी हैं तथा युद्ध में नीलंगल क्षेत्र को शत्रुओं से प्राप्त कराकर वीरगति प्राप्त करते हैं ।

तुकारामचरितम् के नायक प्रसिद्ध मराठा सन्त तुकाराम हैं। इनकी माता कनाकी तथा पिता बोलाजी हैं। यह सहिष्णु, विनम्र तथा भगवद्भक्त हैं। समय-समय पर इन्हें स्वयं भगवान् विट्ठल ने अनेक दैवी एवं मानुषी विपत्तियों से उबारा है।

अन्य पात्रों में रामेश्वर, शिवाजी, पाण्डु रंग भगवान्, ग्रामाधिप, क्षेत्रपति, ग्रामीण थोड़ी-थोड़ी देर के लिये रंगमंच पर प्रविष्ट हुए हैं तथा मुख्यनायक के चरित्र को ही महिमा मण्डित बनाते हैं।

तुलाचलाधिरोहणम् का प्रधान पात्र तुलाचल अर्थात् हिमालय है।[६८] इसे सजीव पात्र के रूप में प्रदर्शित किया गया हैं। विमान दुर्घटना की घर्घर ध्वनि सुनकर स्वयं को विजित किये जाने के विचार से वह आशंकित होता है। अन्य सभी पात्र उसकी दुर्गमता के समक्ष नतमस्तक हैं। कुछ उसके प्राकृतिक सौन्दर्य से विमुग्ध हैं। कुछ के द्वारा देवतुल्य उसकी स्वजनों की रक्षा के लिए प्रार्थना की जाती है। अन्य पात्रों में संचालक, पथिक, राजदूत, युवक, अमेरिकावासी दो पथिक, रवीन्द्र तथा निरीक्षक रंगमंच पर आते हैं तथा तुलाचल के प्रति अपने-अपने उद्गार प्रकट करते हैं।

नारकण्डाश्रमः में शाङ्र्गरव तथा काश्यप दो पुरुष पात्र हैं। काश्यप भिषक् है। उसके आश्रम में देश-विभाजन के समय अपने परिवारों से विमुक्त कन्याएँ एवं बालक रहते हैं। इनकी विशेषताएँ कालिदास के कण्व के समान हैं। अलौकिक शक्ति सम्पन्न यह अपनी दिव्य दृष्टि से शकुन्तला के आपन्न सत्वा होने का समाचार जान लेते हैं। पतिगृह-गमन के समय वह वात्सल्यमय भावुक पिता के समान उसकी विदाई करते हैं। छात्र-छात्राएँ उन्हें पितृवत् सम्मान देते हैं।

शाङ्र्गरव काश्यप एक योग्य एवं आज्ञाकारी शिष्य हैं। उनके आदेश से शकुन्तला को पतिगृह छोड़ने जाता है।

मायाजालम् में रंगमंच पर प्रविष्ट एक मात्र पुरुष पात्र ज्योतिषी है। यद्यपि युवतियों को ठगने वाले युवक का रंगमंच पर प्रवेश नहीं हुआ है, तथापि महिलाओं की सूचना से जो बिम्ब उभर कर आता है, वह इस प्रकार है—युवक देखने में गौरवर्ण, विशाल नयन, आकर्षक व्यक्तित्व वाला वस्त्राभूषण देकर युवतियों को प्रभावित करने में चतुर है। देश-विदेश में भ्रमण करने वाला वह परिस्थितियों का लाभ उठाकर युवतियों को ठगता है।[६९]

मिथ्याग्रहणम् में एकमात्र पुरुषपात्र वैद्य है। यह कुशल चिकित्सक है तथा अपने कर्तव्य का दृढ़ता से पालन करता है। शेख का उल्लेख अवश्य हुआ है परन्तु रंगमंच पर इसकी उपस्थिति नहीं दिखाई गई है।

मीराचरितम् में पुरुषपात्र राजा रतनसिंह भोजराज, मीरा का देवर कुमार तथा कुछ भक्तगण कथा के विकास के लिए एवं मीरा के चरित्र की महिमा बढ़ाने के लिए ही उपस्थित होते हैं।

परमभक्त शिवाजिराट् के नायक शिवाजी नाट्यशास्त्र की दृष्टि से धीरोदात्त हैं। यह समर्थ गुरु रामदास के परमभक्त एवं शिष्य हैं। इन्हें अतुलनीय बलशाली, विनयशील, बुद्धिमान, कुशल प्रशासक निरहंकारि, तेजस्वी, दानी तथा आस्तिक के रूप में चित्रित किया गया है।

समर्थ गुरु रामदास इस रूपक के अन्य महत्वपूर्ण पात्र हैं। यह शिवाजी के गुरु, अधर्मद्वेषी, भक्त, विद्वान तथा विरागी हैं। शिवाजी के ऊपर इनकी अनन्य कृपा है। दासबोध ग्रन्थ की रचना इन्होंने की है।

ज्ञानेश्वरचरितम् में विट्ठल, सिद्धोपन्त, कुलदेवता, रामानन्द, ग्रामीण पुरोहित, ज्ञानदेव निवृत्तिनाथ, सोपानदेव, ब्राह्मणगण, सभापति, अन्धाव्यक्ति, दुर्जन, अंगदेव, महापति, नामदेव आदि अनेक पुरुष पात्र हैं, जिनमें ज्ञानेश्वर प्रमुख हैं।

ज्ञानेश्वर के पिता विट्ठल तथा माता रुक्मिणी हैं। निवृत्ति नाथ तथा सोपान देव भाई तथा मुक्ता बहिन है। संन्यासी की सन्तान कहकर ब्राह्मण समाज इनका तिरस्कार करता है। भिक्षा से ये अपनी आजीविका चलाते हैं। ज्ञानेश्वर विष्णु के साक्षात् अवतार, अलौकिक शक्ति सम्पन्न, वर्णाश्रम धर्म के समर्थक, परमबुद्धिमान् तथा गीता ज्ञानेश्वरी के रचयिता हैं।

बालविधवा का नायक अनूप सम्पन्न कृषक है। पार्वती के अपूर्व लावण्य से आकृष्ट हो उससे प्रेम करने लगता है। यह आदर्शवादी तथा हर परिस्थिति में विधवा पार्वती से विवाह करने के लिए सन्नद्ध है।[७०] विवाह हेतु समाज के ठेकेदार पुरोहितों को मनाता है परन्तु उसे निराशा ही हाथ लगती है। संक्षेप में अनूप यहाँ एक आदर्शवादी, भावुक, सौन्दर्यप्रिय, समाजसुधारक, सामाजिक बुराई से लड़ने वाले क्रान्तिकारी युवक के रूप में प्रस्तुत है।

गौण पात्रों में सुहृत, नारू, पुरोहित तथा कुछ यात्री अल्प समय के लिये मंच पर आते हैं।

वीरभा में ग्रामाधिप हरिदास और दो स्वयं सेवक रंगमंच पर आते हैं। इनमें ग्रामाधिप का चरित्र विशिष्ट है जो भयंकर आकृति वाला तथा अत्याचारी है। सत्याग्रह का आयोजन इसकी दृष्टि में न्याय का उल्लंघन है। स्त्रियों के मौन सत्याग्रह यात्रा पर बन्दूकों से गोली चलवाता है। नायिका के अनुसार यह नर पशु है। अन्ततः वीरभा की देशभक्ति साहस तथा दृढ़ता को देखकर वह स्वंय सत्याग्रही हो जाता है।

वृत्तशंसिच्छत्रम् का नायक अनुपम यहाँ दो रूपों में दृष्टिगोचर होता है— अल्प वयस्का मीरा के पति के रूप में तथा त्यागी बाबा के रूप में। दोनों ही रूपों में इसमें चारित्रिक दृढ़ता का अभाव है। पहले वह अपनी सास से प्रेम करने लगता है।[७१] यद्यपि वह विद्वान् पद्य रचना में दक्ष तथा वेदों का सतत अभ्यास करने वाला है लेकिन काम के अधीन होकर सदा उपहास का पात्र बनता है त्यागी बाबा के रूप में वह हस्तलिखित ग्रन्थों के शुद्धि कार्य में लगा रहता है[७२] लेकिन रामी से प्रेम करने और गुप्त रूप से मिलने से चारित्रिक दृढ़ता के अभाव को ही प्रदर्शित करता है रामी को वह अपना वास्तविक परिचय भी नहीं देता है। इस प्रकार अनुपम यहाँ अनेक मानवीय गुण और अवगुणों से युक्त है। अन्य पात्रों में पुरोहित, ग्रामीणद्वय भी रंगमंच पर थोड़ी देर के लिए आते हैं।

हरिसिंहः का नायक नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से धीरोदात्त हैं। यह राजकुलोद्भव मनस्वी, धीमान् एवं प्रतिभाशाली है। दीनों पर कृपालु वह राजा मानसिहं के उन्मत्त विलासों पर सदा दृष्टि रखता है। क्रान्तिकारी साहित्य पढ़ कर अपने साथियों के साथ दुष्ट मानसिंह की हत्या की योजना बनाकर उसे कार्यरूप में परिणत करता है। इसकी माँ विधवा है। यह मानसिंह की सन्तान है। जिसका पता उसे अन्त में चलता है।[७३] अन्य पुरुष पात्रों में हरिसिंह के तीन साथी, राजा मानसिंह व कुछ प्रजाजन भी रंगमंच पर आते हैं।

होलिकोत्सवम् का नायक गणु मत्स्यजीवी है। वह अपनी पत्नी राधिका तथा पुत्र गोपाल से अपार स्नेह करता है। वह अत्यन्त भावुक है। कुसीदक के भड़काने पर वह पत्नी को पीटकर घर से निकाल देता है तथा बाद में पश्चाताप करता है और अपनी भूल के कारण ही दुष्परिणाम भोगता है।[७४] अन्य गौण पुरुष पात्रों में रंगु, विट्ठल तथा गोपाल नामक पात्रों की अवतारणा हुई है।

स्वर्णपुरकृषीवलाः में ग्रामाधिप, राजपाल, सेवक तथा शाकटिक पुरुष पात्र हैं। ग्रामाधिप नया-नया ही गाँव में नियुक्त है तथा रेवा को सामदानादि उपायों से भूमिकर देने को विवश करता है और अन्त में रेवा के घर में आग लगवा देता है। स्वराज्य प्राप्ति उसके लिए मिथ्या कल्पना तथा मतिविभ्रम है। यह दम्भी तथा क्रूर है।

लीलाराव के रूपकों में नायकों के चरित्र-विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उन्होंने समाज के उच्चवर्गीय, मध्यमवर्गीय तथा निम्नवर्गीय सभी पात्रों को अपने रूपकों मे स्थान दिया है जो मानवीय गुण-अवगुणों से युक्त हैं। अनेक रूपकों में तो नारी-पात्रों की प्रधानता होने से नायक का अभाव ही है।

श्रीमती कमलारत्नम् विरचित **गणयच्छागः** में छाग प्रमुख है। वह चुलबुला शैतान तथा गणना करने में निपुण है। उसे अपने नैपुण्य पर गर्व है। अपनी इसी विशेषता के कारण उसे पोत का मुद्राधिकारी बना दिया जाता है।[७५]

अन्य पात्रों में वृषभ, गोवत्स, अश्वशावक, गर्दभ, सारमेय, मार्जार मेष तथा पोताध्यक्ष हंस भी हैं। ये सभी गणना करना नहीं जानते हैं। सभी पशुपात्र पुरुषों की तरह व्यवहार करते हैं।

नचिकेतोयम्-संवादम् में वाजश्रवा, उनका सेवक, यम तथा नचिकेता पुरुष-पात्र है। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से नचिकेता धीर प्रशान्त नायक है। वह वाजश्रवा का पुत्र है। छोटी-सी अवस्था से ही बुद्धिमान् विवेकी तथा पितृभक्त है। पिता को जीर्णशीर्ण गायों का दान करने से रोकता है।[७६] यह लौकिक एवं अलौकिक सभी भोगों के प्रति उदासीन शमदम आदि साधनों से युक्त, मुमुक्षु तथा अपने लक्ष्य के प्रति अड़िग है।[७७] आत्मज्ञान के प्रति उसके अभिनिवेश को देखकर ही यमराज प्रसन्न होकर उसे आत्मतत्त्व का ज्ञान कराते हैं। उस ज्ञान को शीघ्र धारण करके वह अपनी तीव्र मेधा तथा धारणा शक्ति का परिचय देता है। वह कुशल मेधावी तथा धीर शिष्य है।[७८]

विक्रमवेताल नाटिका में राजा, मंत्री, संन्यासी, वेताल, हरिस्वामी, देवस्वामी ज्ञानी, विज्ञानी, शूरवीर आदि पुरुष पात्र हैं।

आन्ध्रप्रदेश में प्रतिष्ठानपुर का शासक त्रिविक्रम सेन है। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से वह धीरोदात्त नायक है। त्रिविक्रम सेन वीर तथा निर्भीक है, अतः शव में वेताल की स्थिति जानकर भी भयभीत नहीं होता। उसे अपने कार्य को पूर्ण करने की लगन है। वेताल के अनुसार वह अभिनिवेशयुक्त, सुन्दर तथा साहसी है,[७९] कुशल निर्णायक होने के कारण[८०] वह शूरवीर का विवाह सोमप्रभा के साथ करने का निर्णय देता है। वह कुशल प्रशासक भी है।

विवेकानन्दस्मृतिः के नायक स्वामी विवेकानन्द बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक वृत्ति से युक्त हैं तथा देश-विदेश में भारतीय संस्कृति एवं अध्यात्मविद्या के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं।

विवेकानन्दविजयम् में विवेकानन्द, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, विलियम, रहमान, रामकृष्ण के दो शिष्य, रामचन्द्र, देवी प्रसाद, चार्वाक, दो तरुण एवं संन्यासी पुरुषपात्र हैं। चरित्र चित्रण की दृष्टि से विवेकानन्द ही प्रमुख हैं। वह नाट्य के नायक हैं। इनके बचपन का नाम नरेन्द्र है। बाल्याकाल से ही ये अत्यन्त प्रतिभाशाली हैं।[८१] विद्यालयी वाद विवाद, भाषण तथा नाटक आदि प्रतियोगिताओं में इन्होंने अपना वर्चस्व सिद्ध किया है। अन्तर्मुखी वृत्ति के कारण वह सहज ही समाधि मग्न हो जाते हैं। रामकृष्ण की आध्यात्मिक चर्चा से प्रभावित हो कर उनका शिष्यत्व स्वीकार कर लेते हैं।[८२] विवेकानन्द परोपकारी एवं धर्मनिष्ठ हैं, अतः शेफालिका तथा देवीप्रसाद की उपद्रवी छात्रों से रक्षा करते हैं। जीवन के उत्तरार्द्ध में संन्यास धर्म स्वीकार कर के अध्यात्म प्रतिष्ठा, मानव जाति के पुनरुत्थान एवं भारत भूमि की दरिद्रता का उन्मूलन करने के लिए भ्रमण

करते हैं। नाट्य-शास्त्रीय दृष्टि से इन्हें धीर प्रशान्त कोटि का नायक माना जा सकता है।

अन्य पुरुष पात्रों की अवतारणा का हेतु प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उनके चरित्र को ही उत्कृष्ट बनाना है। इस प्रकार श्रीमती कमला रत्नम् के रूपकों से गणयज्ञछागः में तो पशुओं को ही पात्र बनाया गया है। विक्रमवेतालनाटिका में राजा, अमात्यादि वर्ग के पात्र हैं। शेष तीन रूपकों—नचिकेतो यम संवादम् में नचिकेता, विवेकानन्द स्मृति एवं विवेकानन्द विजयम् में स्वामी विवेकानन्द आध्यात्मिक वृत्ति प्रधान नायक हैं।

श्रीमती वनमाला भवालकार विरचित **पाददण्डः** में सुधीर एवं भास्कर दो ही पुरुष पात्र हैं । सुधीर भास्कर का साला है। सेना में वह डाक्टर था क्योंकि युद्ध में पंगु होने के बाद अपने भावी जीवन के कार्यक्रम के रूप में चिकित्सालय खोलने की योजना बनाता है।[८३] ललित उसकी वाग्दत्ता प्रेयसी है। वह उससे अपार अनुराग करता है। पंगु से विवाह करके उसका जीवन नष्ट न हो जाये—यह सोचकर वह भास्कर की बहिन का परिचय ललिता से अपनी भावी पत्नी के रूप कराता है, जिससे दोनों में कुछ काल के लिए भ्रान्ति हो जाती है। सुधीर विनोदप्रिय तथा प्रत्युत्पन्न मति है।[८४] अस्वस्थ होने पर भी वह अपने विनोदी स्वभाव को नहीं छोड़ता। इसके अतिरिक्त वह वीर स्वाभिमानी तथा भावुक है। बहुत समय पश्चात् ललिता से मिलने पर रो पड़ता है।

भास्कर शान्ता का पति तथा सुधीर का बहनोई है। यह कार्यालय में काम करता है। रविवार का साप्ताहिक अवकाश मित्रों में व्यतीत करने से पत्नी का उलाहना सुनता है। भास्कर हंसमुख तथा विनोद प्रिय है। ललिता द्वारा प्रत्याख्यान करने पर वह अपनी बहिन निशा का विवाह सुधीर से करने को तैयार है। इतना होने पर भी वह स्वार्थी नहीं है। उसे जब यह ज्ञात होता है कि ललिता आ रही है तो वह प्रसन्न होता है तथा स्वयं उसे स्टेशन लेने जाता है।

पार्वतीपरमेश्वरीयम् में हिमालय, नारद, शंकर, मदन तथा वसन्त के रूप में दिव्य पात्रों की सृष्टि हुई है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से शिव प्रमुख है।

ये संगीतिका के नायक तथा आराध्य देव हैं। रूप से वशीभूत करने में असमर्थ रही पार्वती की तपस्या से वशीभूत होते हैं। इनकी तीक्ष्ण नेत्र ज्योति से कामदेव भस्म हो जाता है। वह विरूपाक्ष, सर्पाभूषणधारी, श्मशान निवासी, गजचर्मधारी कपाल मुण्डमाला धारण करने वाले अपने पौराणिक रूप में ही दिखाई पड़ते हैं।[८५] पार्वती के अनुसार शिव विरोधी गुणों के आश्रय लोककल्याणकारी तथा जगत् के आश्रय हैं। वे विश्वमूर्ति हैं।

रामवनगमनम् में राम संगीतिका के नायक एवं प्रधान पात्र हैं। राम मातृ-पितृ भक्त हैं। अतः कैकेयी की वनगमन की आज्ञा को सहर्ष स्वीकार कर

लेते हैं।[८६] वह धीर गम्भीर तथा विनयी है। अतः राज्याभिषेक के दिन वनवास मिलने से भी विचलित नहीं होते।[८७] वसिष्ठ के अनुसार दिव्य होने पर भी यह नराभिमानी हैं तथा जगत्कल्याण के लिये भूमि पर अवतरित हुए हैं।[८८]

अन्य पुरुष पात्रों में राम के अनुज व अनुचर लक्ष्मण, वत्सल पिता दशरथ, ज्ञानी राजगुरु वसिष्ठ हैं ।

सीताहरणम् में राम, लक्ष्मण, रावण तथा मृग रूप में मारीच भी रंगमंच पर दिखाई देते हैं। राम अलौकिक हाने पर भी नराभिमानी तथा सीता के वियोग में प्राकृत जन की तरह विलाप करते हैं।[८९]

अन्नदेवता में पुरुष पात्रों का सर्वथा अभाव है। इस प्रकार श्रीमती वनमाला भवालकर के पाददण्डः में जहाँ सर्वथा सामान्य तथा आर्थिक दृष्टि से मध्यवर्गीय पुरुष पात्रों की सृष्टि हुई है, वहीं 'पार्वती परमेश्वरीयम्' में अलौकिक अथवा दिव्य पात्र हैं। 'रामवनगमनम्' तथा 'सीताहरणम्' के पात्र दिव्यादिव्य कोटि के हैं।

श्रीमती देवकी मेनन विरचित **कालीदर्शनम्** में पुरुष पात्रों की स्थिति अत्यन्त गौण है। शारदा देवी के पिता के रूप में वत्सलतास्निग्ध रामचन्द्र तथा भक्त सम्बोधन वाले दो पात्र ही रंगमंच पर प्रविष्ट होते हैं। पुत्री के अस्वस्थ होने पर रामचन्द्र स्वयं उसकी सेवा करते हैं।

भक्त पात्र की अवतारणा का उद्देश्य स्वामी राम कृष्ण की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट करना है क्योंकि 'परे ब्रह्मणि कोऽपि न सक्तः' कथन से लोगों का ध्यान रामकृष्ण परमहंस की ओर आता है। भौतिकवादी इस युग में रामकृष्ण परमहंस ही परब्रह्म में आसक्त दिखाई देते हैं।

कुचेलवृत्तम् में श्रीकृष्ण तथा सुदामा के अतिरिक्त उसके बच्चे भी रंगमंच पर अल्प समय के लिए आते हैं। संगीतिका का नायक सुदामा है। जो मैला-कुचेला तथा अत्यन्त दरिद्र है। बच्चे भूख से व्याकुल रहते हैं। वह अत्यन्त सन्तोषी तथा भगवद्भक्त ब्राह्मण है। पत्नी के प्रेरित करने पर धन की चाह से कृष्ण के पास पहुँचता है। अत्यन्त संकोची होने के कारण कृष्ण के माँगने पर भी चिवड़ा नहीं देता। संक्षेप में सुदामा अतिकृशाङ्ग, कुचेल, भक्त तथा सद्गुणी है।[९०] यथा—

सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम् में कृष्ण, बलराम तथा भीड़ के रूप में कुछ पुरुष पात्रों का अवतरण हुआ है। कृष्ण, बलराम अत्यन्त सुन्दर भक्तवत्सल, अपने पारम्परिक रूप में ही दिखाई पड़ते हैं। किसी की स्वल्प वस्तु पाकर उसको अधिक प्रतिदान देते हैं। यथा— सैरन्ध्री के स्वल्प अंगराग के बदले उन्होंने उसका कूबड़ मिटाकर उसे अपूर्व सुन्दरी बना दिया।

कुचेलवृत्तम् में भी कृष्ण सुदामा के एक मुट्ठी चिवड़े के प्रतिदान के रूप में अपार ऐश्वर्य प्रदान करते हैं।

इस प्रकार देवकी मेनन् ने अपने रूपकों में दिव्य, अदिव्य दोनों ही प्रकार के पात्रों की सृष्टि की है। दिव्य पात्र प्रायः अपने पौराणिक स्वरूप में ही दिखाई देते हैं।

श्रीमती नलिनी शुक्ला द्वारा रचित **राधानुनयः** में एक मात्र पुरुष पात्र के रूप में श्रीकृष्ण के दर्शन होते हैं। नायिका की दृष्टि से श्रीकृष्ण दक्षिण नायक हैं। ये राधा एवं अन्यान्य गोप बन्धुओं के प्रियतम् हैं।[९१] अन्य गोपिकाओं के साथ रास करने के कारण मानुयक्त राधा का वह अनुनय करते हैं।[९२] अप्रतिम सुन्दर श्रीकृष्ण कामदेव को भी आकृष्ट करने में समर्थ हैं। नर्तन एवं वंशीवादन में निपुण हैं। राधा इनकी आह्लादिनी परम शक्ति हैं। यहाँ संगीतिका में कृष्ण लोकोत्तर रूप में ही प्रदर्शित हैं।[९३]

पार्वतीतपश्चर्या में हिमालय, नारद तथा शिव, पुरुषपात्र हैं। इनमें शिव प्रमुख हैं। यह भी अपने पौराणिक रूप में ही दृष्टिगोचर होते हैं। समाधि में लीन, प्रचण्ड तथा आशुतोष हैं। पार्वती के प्रेम की परीक्षा वटुक का रूप धारण करके करते हैं।

मुक्तिमहोत्सवः नारी पात्र प्रधान एकांकी है पुरुष पात्रों के रूप में प्रमोद, अनुराग तथा सेठ और उसका सेवक रामू तथा कुछ बालक रंगमंच पर आते हैं। इनका चरित्र विशेष विकसित नहीं हो पाया है। प्रमोद अत्यन्त क्रोधी तथा नारियों की स्वतन्त्रता के विरुद्ध है। अतः जब उसे पता चलता है कि उसकी पत्नी विशाखा बाहर घूमने गई है तो क्रोध से उसको डाँटता है तथा आगे से बाहर न जाने की चेतावनी देता है।

अनुराग हँसमुख, विनोदी तथा नारी स्वातन्त्र्य का पक्षधर युवक है। सेठ रामू तथा बालकों की सर्जना का उद्देश्य एकांकी में हास्योत्पादन करना है। इस प्रकार नलिनी शुक्ला ने 'राधानुनयः' तथा 'पार्वती तपश्चर्या' में पूर्णतः पौराणिक दिव्य पात्रों की सृष्टि की है वहीं 'मुक्ति महोत्सवः' में प्रमोद तथा अनुराग के रूप में पूर्णतः मानवीय गुणों एवं अवगुणों से युक्त पात्रों के व्यक्तित्व को निखारने में भी सफल रही हैं।

आम्रपाली में सूत्रधार व नट के अतिरिक्त अजातशत्रु सौवीर (सेनापति), वीरभद्र (अमात्य), श्रमण युगल तथा महात्मा बुद्ध पुरुष पात्र हैं। नाट्यशास्त्र की दृष्टि से अजातशत्रु धीरोद्धत नायक हैं। वह बलिष्ठ तथा मधुराकृति हैं। आम्रपाली को आकृष्ट करने के लिये अधिकाधिक विनय प्रदर्शित करता है।[९४] सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसे राजमहिषी बनाना चाहता है। द्वितीय अंक में उसका दर्पयुक्त, क्रोधी, हठी तथा अहंकारी स्वभाव प्रकट हुआ है।[९५] आम्रपाली को

प्राप्त करनें में असमर्थ वह वैशाली पर आक्रमण कर देता है। युद्ध में क्षतविक्षत होकर आम्रपाली की सेवा से ही स्वस्थ होता है।[९६] वसुमती के अनुसार आम्रपाली के प्रेम में उसकी स्थिति शरविद्ध कुरंग के समान हो गई है। आम्रपाली के भिक्षुणी बनने पर भावावेश में वह भी भिक्षुक बन जाता है। इस प्रकार द्वितीय अंक का अत्यन्त बर्बर अजातशत्रु अन्त में आम्रपाली के प्रेम में सर्वथा अकिंचन और दयनीय दशा वाला लगता है।[९७]

अलक्ष्यं दूरदर्शनम् में महेश, कंचन, वैद्य, महापात्र, नाई तथा कृषक पुरुष पात्र हैं। कथा की दृष्टि से कंचन एवं महेश दो ही पात्र महत्वपूर्ण हैं। महेश धनिक तथा स्वभाव से सहिष्णु है। सेवक के द्वारा बार-बार गलती करने पर भी शान्तिपूर्वक उसे दूरदर्शिता पूर्वक व्यवहार करने का सुझाव देता है।[९८] सेवक की मूर्खता से अनेक बार दुःखी हो जाता है और अन्त में उसे सेवा-निवृत्त कर देता है।[९९] कंचन महेश का परम आज्ञाकारी, स्वामिभक्त लेकिन मूर्ख तथा अविवेकी सेवक है।[१००] उसके पिता विद्याभूषण, महात्मा तथा वाग्विदग्ध थे। अपने पिता से ही उसने ज्ञानार्जन किया था। कंचन दूरदर्शिता पूर्ण कार्य करना चाहता है, परन्तु उससे मूर्खता ही प्रकट होती है। स्वामी की शिरोवेदना ठीक नहीं हुई तो मरण निश्चित है—ऐसा सोचकर पहले से ही अन्तिम संस्कार का प्रबन्ध कर लेता हैं।[१०१] इससे सेवा मुक्त कर दिया जाता है। इस प्रकार कंचन भोला-भाला, अविवेकी और मूढ़ है।

उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् में नारद[१०२] और ग्रामीण दो पुरुष हैं। कुछ गन्धर्वों का उल्लेख मात्र हुआ है जो अप्सराओं के साथ ग्रामीण की सेवा में उपस्थित होते हैं तथा ग्रामीण की पत्नी के उग्ररूप को देखकर पलायन कर जाते हैं।

नारद अपने पौराणिक रूप में दृष्टिगत होते हैं। वह समस्त भुवनों में भ्रमण करके प्राणियों के कष्ट दूर करते हैं। अतिशीघ्र प्रसन्न होकर भक्तों को अभीष्ट प्रदान करते हैं। एक ग्रामीण से प्रसन्न होकर उसे स्वर्गस्थ नन्दनवन की यात्रा कराते हैं। वह लोकोपकारी, उपेदशक[१०३] तथा मुनि रूप मान्य हैं।

ग्रामीण गरीब नारदभक्त तथा भोलाभाला कृषक है।[१०४] यह पत्नी से भयभीत है एवं पत्नी द्वारी की गई पिटाई से डरता है।[१०५] अतः नन्दन वन में भी उसकी पिटाई की कल्पना करता है।

चराचरसंचित कर्मयन्त्रितम् में नारद, विष्णु तपोधन तथा सुव्रत-पुरुष पात्र हैं। नारद तथा विष्णु तो अपने पौराणिक रूप में ही प्रस्तुत हैं। तपोधन वीतरागी है तथा भगवद्दर्शन हेतु तप करता है। उसे अपनी तपस्या पर गर्व है।[१०६] इसमें धैर्य की कमी है, अतः नारद के मुख से सात जन्मों के बाद भगवद्दर्शन की बात सुनकर नारद को अपशब्द कहकर मारने दौड़ता है।[१०७] क्योंकि सात जन्मों तक वह भिक्षुक बना नहीं रहना चाहता।

सुव्रत-भगवद् भक्तों में अग्रगण्य है। भगवद्दर्शन के अतिरिक्त उसे कोई अभिलाषा नहीं है।[१०८] भगवान् उसे अपना द्वितीय हृदय मानते हैं।[१०९] वह सहिष्णु है। अतः अनन्त जन्मों तक भगवान के दर्शनों की प्रतीक्षा करने के समाचार से उत्तेजित नहीं होता, प्रत्युत् इसे अपना सौभाग्य मानता है। वह भावुक तथा गर्व रहित है।[११०]

न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः में गोपाल एकमात्र पुरुष पात्र है। यह अपनी माता यशोदा का परम आज्ञाकारी पुत्र है। माँ की इच्छा के कारण ही पार्वती से विवाह करता है।[१११] वह सत्याग्रही है, परिणामस्वरूप आजीवन कारावास का दण्ड पाता है।[११२] गोपाल नामक इस चरित्र की उद्‌भावना नायिका पार्वती के चरित्र को उभारने के लिए की गई है। पति के कारागार से मुक्त होने की सम्भावना न होने पर भी वह उसकी चिर प्रतीक्षा करना श्रेयस्कर समझती है।

भक्तराजः रूपक में विष्णु, नारद, श्रेष्ठि तथा भक्तराज में से भक्तराज प्रमुख पुरुष पात्र हैं। वह गरीब, भावुक तथा अतिथि सत्कार परायण कृषक है।[११३] भगवान् विष्णु का अनन्य भक्त है।[११४] इसीलिए भगवान् उसके लिये स्वयं भवन का निर्माण कराते हैं।[११५] विष्णु तथा नारद अपने पौराणिक रूप में प्रस्तुत हैं। अन्य पात्र श्रेष्ठि हैं। यह व्यवसाय से स्वर्णकार तथा द्रव्य संग्रही है। वह प्रायः अतिथियों को दुत्कार देता है।

माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः में देवव्रत, वेदप्रकाश पुलिस, रघुवर तथा करीम-पुरुषपात्र हैं। चरित्रचित्रण की दृष्टि से वेदप्रकाश प्रमुख है। यह देवव्रत दीक्षित का पुत्र है। गान्धी जी के आह्वान पर अध्ययन छोड़कर क्रान्तिकारी बन जाता है। स्वयं को यह धरती माता का पुत्र समझता है। राष्ट्रमुक्ति उसका लक्ष्य है। राष्ट्रभक्त होने के कारण इसके परिवार को अनेक यातनाएँ दी जाती हैं। फलतः कुछ काल के लिये मोहवश सत्याग्रह से विरत भी हो जाता है।[११६] किन्तु बाद में पत्नी की प्रेरणा से उसका मोह दूर होता है।[११७]

सचाप्यस्तिरजक एव में चरित्रचित्रण की दृष्टि से महात्मा प्रधान है। यह भगवान् विष्णु के बाह्य रूप का भक्त है तथा प्रचुरशीत में भी आकण्ठ जल में खड़ा रहकर तपस्या करता है। परन्तु उसे भगवान् पर पूरा भरोसा नहीं है, अतः धोबियों को मारने के लिए आता देखकर वह भगवद् विश्वास छोड़ कर उन्हें मारने दौड़ता है।[११८]

सत्यमेव जयते में गान्धी ग्राम प्रधान, न्यायाधीश तथा वायसराय सहित कुछ गान्धी के अनुयायी भी पुरुष-पात्र हैं।[११९] इनमें गान्धी जी का चरित्र ही प्रधान हैं।अन्य पात्र परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप में गान्धी के चरित्र का ही उत्कर्ष करते हैं। अद्भुत नेतृत्व क्षमता से युक्त गान्धी के नेतृत्व में नमक कानून तोड़ा

जाता है।[१२०] सत्य के प्रति दृढ़निष्ठा के कारण वह न्यायाधीश तथा वायसराय की धमकियों से भयभीत नहीं होते। सत्य और अहिंसा इनके तीक्ष्ण आयुध हैं। इनकी ओजस्विता एवं निर्भीकता से वायसराय भी हतप्रभ रह जाता है। वह कुशल अधिवक्ता है। अतः अपनी पैरवी स्वयं करते हैं। संक्षेप में सर्वत्र सत्यनिष्ठ, दृढ़ प्रतिज्ञ तथा आत्मविश्वासी के रूप में प्रस्तुत हैं।

ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः में रघुराज, रामकिंकर दामोदर, गोपाल, शिवपाल, हरिपाल तथा जगत्पाल आदि अनेक पुरुष पात्र हैं। चरित्रचित्रण की दृष्टि से किसी भी पात्र का चरित्र नहीं उभरा है। रघुराज गाँव का ठाकुर है।[१२१] राम किंकर इसका अनुगत सेवक है तथा रघुराज इसका पुरोहित है। गृह प्रवेश के अवसर पर गोपाल, शिवपाल और हरिपाल तीनों भाई तथा उनके जगत्पाल नामक पिता रघुराज की मृत्यु की कल्पना करके भवन के ऊपर से उसके शवावतरण की विधि बताकर अपनी मूर्खता का परिचय देते हैं। ये चारों मूर्ख हैं[१२२] तथा अपने को ज्ञानवान् समझते हैं। अन्त में मूर्खता के कारण चारों ही पशुवत् दण्डित होते हैं।[१२३]

दशमस्त्वमसि में भी दसमुनिगुण तथा एक नाविक की अवतारणा पुरुषपात्र के रूप में हुई है। दसों मुनि व्याकरण, सांख्य मीमांसा आदि में पारंगत होते हुए भी व्यावहारिकता में शून्य हैं। नाविक अल्पज्ञ होने पर भी व्यावहारिक ज्ञान से युक्त है। व्यावहारिक ज्ञान शून्यता के कारण वे सभी उपहास के पात्र बनते हैं। यहाँ किसी एक पात्र को प्रमुखता नहीं दी गई है।

वीणापाणि पाटनी के **निम्बपत्राणि** में छह स्नातक, गुरु, कुछ शाक विक्रेता तथा एक पान्थ पुरुष पात्र हैं। शंकर वैदुल, शारद्वत, जीवक, अभिनव तथा मण्डन ने क्रमशः वेदान्त, व्याकरण, न्याय, आयुर्वेद, वेद तथा साहित्य का अध्ययन किया है। अपने-अपने शास्त्रों में निपुण होने पर भी वे व्यावहारिक ज्ञान से रहित हैं। बात-बात पर अपने कथ्य की पुष्टि में शास्त्रीय प्रमाण उद्धृत करते हैं।[१२४] भोजन के सम्बन्ध में अपने शास्त्रज्ञान का प्रदर्शन करके अपनी मूर्खता ही प्रकट करते हैं।[१२५] गुरु वात्स्यायन सर्वशास्त्र निष्णात एवं धीर-गम्भीर हैं।

प्रतिबुद्धा एकांकी में ललित, गिरिधारी, राजित आशुतोष तथा माली पाँच पुरुष पात्र हैं। गिरिधारी ललित का आज्ञाकारी सेवक है। राजित ललित का दुष्ट पुत्र है, जिसे कार्यालय पहुँचने में सदा विलम्ब हो जाता है। आशुतोष ललित का मित्र है तथा सुख-दुःख में उसका सच्चा साथी है। इसी के समझाने पर सुलेखा अपना त्यागपत्र वापस लेती है। ललित एकांकी का नायक है। मध्यमवर्गीय परिवार का सुशिक्षित युवक है तथा राजकीय कार्यालय का कर्मचारी है। इसकी पत्नी भी नौकरी करती है। बहुधा सामान यथास्थान न मिल पाने से कार्यालय विलम्ब से पहुँचता है। फलतः इसे अधिकारी के आक्षेप सुनने पड़ते हैं।[१२६]

पत्नी के द्वारा त्यागपत्र दिए जाने पर वह आर्थिक चिन्ता से ग्रस्त हो जाता है।[१२७] गृह व्यवस्था को लेकर बहुधा उसका पत्नी से वाग्युद्ध होता हैं जिसमें उसे ही अन्त में चुप रह जाना पड़ता है।

यथार्थ्यगरलम् का नायक देवदत्त दरिद्र ब्राह्मण है। पूजा पाठ तथा ज्योतिष विद्या के आधार पर अपनी आजीविका चलाता है। आर्थिक विपन्नता के कारण पत्नी उसे ताने मारती रहती है। सोते-जागते, उठते-बैठते उसे पैसा प्राप्त करने की चिन्ता ही रहती है।[१२८] एतदर्थ वह घर में भोजन हो अथवा न हो लॉटरी पत्र अवश्य खरीदता है।[१२९] कमिश्नर साहब के यहाँ सहभोज के अवसर पर भी अपनी ज्योतिष विद्या के आधार पर पैसा बटोरने की योजना बनाता है।[१३०] उसके नाम गलत लॉटरी पत्र का परिणाम घोषित होने पर वह अत्यन्त दुःखी होता है।

अन्य गौण पात्रों में देवदत्त के यजमान कमिश्नर साहब, देवदत्त का मित्र यज्ञदत्त शुक्लमहोदय, खान महोदय, न्यायाधीश, सेठ गोविन्ददास, कमिश्नर के मित्र भी रंगमंच पर सहभोज के समय कुछ समय के लिए दिखाई पड़ते हैं। देवदत्त इन सबको कोई न कोई ग्रह पीड़ित बताकर उसकी शान्ति के निमित्त पूजा पाठ का सुझाव देता है और इनसे पैसे ऐंठता है।

नारददौत्यम् में महेन्द्र, वायुदेव अग्निदेव, बृहस्पति, नारद दिव्य पात्र तथा राजेश, माधव विल्सन, पान्थ, गृहमन्त्री तथा सेवक अदिव्य पात्र हैं। दिव्य पात्र भूमि पर होने वाले परिवर्तनों, वैज्ञानिक प्रगति एवं भौतिकवाद के प्रति चिन्तित हैं।[१३१] वस्तु स्थिति जानने के लिए नारद दूत बनकर आते हैं तथा भारत की दुःस्थिति पर खिन्न होते हैं। राजेश, माधव तथा विल्सन आधुनिक विचारों के शिक्षित एवं पाश्चात्य सभ्यता में ढले युवक हैं। ये चाय, दूध पाउडर, शराब तथा पॉप संगीत से नारद को परिचित कराते हैं।[१३२] गृहमन्त्री अगले चुनावों में अधिकाधिक वोट प्राप्त करने के लिए नारद से देवताओं की सहायता माँगते हैं।[१३३] अदिव्य पात्रों की सर्जना का उद्देश्य भारतवर्ष में होते हुए परिवर्तनों एवं विदेशी सभ्यता के प्रभाव की ओर ध्यान आकृष्ट करना है।

कविकालिदासीयम् में महाकवि नायक हैं। ये राजा भोज के दरबार के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं तथा उनके सम्मान-पात्र हैं। वह परोपकारी विनयी, उदार तथा सहृदय हैं। इसी कारण मैत्रेय आदि जब छन्दः रचना में असमर्थ होते हैं तो सदयता से उनके छन्दों की पूर्ति करते हैं।[१३४] कर्पूर आदि कवियों के षड्यन्त्र पर राजसभा से निष्कासित होने पर किसी प्रकार का आक्रोश नहीं करते हैं। राजा के सामने छन्दः पूर्ति न कर पाने से जब कर्पूर आदि कवि राज्य छोड़कर चले जाते हैं तो उन्हें राज्य में ही रोकने के लिए कालिदास छद्म वेश में उनके लिए समस्या पूर्ति करके अपनी महत्ता का परिचय देते हैं।[१३५]

राजा भोज भी एकांकी के महत्वपूर्ण पात्र हैं। यह यशस्वी, उदार साहित्यविनोदी तथा विद्वानों का सम्मान करने वाले हैं। कवियों पर प्रसन्न होकर मुक्त हस्त से पुरस्कार देते हैं।[१३६] इन्होंने घोषणा की है कि उनके राज्य में केवल विद्वान् एवं कवि जन ही रहेंगे।[१३७] कालिदास को सभा से निष्कासित करने के पश्चात् दुःखी होते हैं तथा उन्हें खोजकर पूर्व पद पर प्रतिष्ठित करके ही शान्त होते हैं।[१३८]

अन्य पुरुष पात्रों की सृष्टि कालिदास के महत्व को बढ़ाने की दृष्टि से की गई है। इनमें शंकर, महेश्वर, कर्पूर, कोकिल, मयूर आदि राजा भोज के राजकवि हैं। गौतम, मैत्रेय, शाकल्य ब्राह्मण हैं। विलक्षण गुप्तचर हैं। महामात्य एवं पुरोहित भी अत्यल्प समय के लिए उपस्थित होते हैं।

ब्रह्मचारिणी वेला देवी कृत **नचिकेतश्चरितम्** में नचिकेता का चरित्र महत्वपूर्ण है। वह ऋषि बालकों में सबसे अधिक छोटा होने पर सर्वाधिक मेधावी, दृढ़निश्चयी तथा निर्भय है। पिता के वचनों को सत्य करने के लिए सदेह यमलोक जाता है।[१३९] यमलोक के द्वार पर अनेकों कष्ट एवं विघ्न उसे अपने लक्ष्य से विमुख नहीं कर पाते हैं। अन्ततः अपने ध्येय-आत्मज्ञान को यमराज से प्राप्त करने में सफल रहता है।[१४०]

अन्य पात्रों में पुण्डरीक, उत्पल एवं कुवलय नचिकेता के मित्र हैं। उद्दालक नचिकेता के पिता हैं। इनसे गोदान लेने वाले दो पुरुष, यमालय के दो दौवारिक, चन्द्र, इन्द्र वरुण, सूर्य देवता तथा नचिकेता के तत्त्वोपदेशक धर्मराज भी रूपक में दिखाई पड़ते हैं।

महीयसी गार्गी नायिका प्रधान रूपक रचना है। गार्गी के पिता गर्ग ऋषि, उनके शिष्य उद्दालक तथा दो बालक, राजा जनक, अश्वल नामक उनके प्रधान पुरोहित, सभासद, प्रतिहारी, याज्ञवल्क्य तथा उनका शिष्य सामश्रव पुरुषपात्र हैं। इनमें याज्ञवल्क्य ऋषि अपनी विद्वत्ता, स्वाभिमानिता तार्किकता एवं विचार शक्ति से प्रभावित करते हैं। जनक द्वारा आयोजित ब्रह्मज्ञानियों की सभा में अति गूढ़ गार्गी की ब्रह्म जिज्ञासा का समाधान करके ब्रह्मवेत्ताओं में अपना वर्चस्व सिद्ध करते हैं।[१४१]

विराड्गृहम् में आठ पुरुष पात्र हैं—राजा विराट, उनका पुत्र उत्तर तथा अमात्य। इनके अतिरिक्त अज्ञातवास के समय छद्मवेश में रहने वाले कङ्क रूपधारी युधिष्ठिर, पाचक रूपधारी भीमसेन, वृहन्नला रूप में उत्तरा को नृत्य की शिक्षा देने वाला अर्जुन तथा तन्त्रिपाल रूप में नकुल एवं सहदेव भी दृष्टिगत होते हैं।

पाँचों पाण्डव कृष्णभक्त[१४२] धर्मपरायण, अपरिमित बलशाली हैं। उत्तर अर्जुन की सहायता से कौरवों को पराजित करने में समर्थ होता है।[१४३] वृहन्नला

रूप धारी अर्जुन संगीत-नृत्य कला में कुशल है। अज्ञातवास पूर्ण होने पर ये उत्तरा को अपनी पुत्रवधू के रूप में राजा विराट से माँग लेते हैं। विपत्ति काल में राजा विराट के यहाँ छद्म वेष में रहकर पाँचों पाण्डव अपनी सत्यरक्षा करने में सफल होते हैं।[१४४]

श्रीमती रत्नमयी देवी विरचित **भूमिकन्या** नामक नाटक के नायक राम सद्गुणी क्षमाशील, अविकत्थन होने से धीरोदात्त कोटि के नायक हैं। वह कुशल प्रशासक प्रजारंजक[१४५] धर्मपालक[१४६] तथा सतत लोकाराधन[१४७] में संलग्न रहते हैं। अतः लोकाराधन के लिए अपनी प्रियपत्नी सीता का भी परित्याग कर देते हैं।[१४८] इनके राज्य में सर्वत्र नवोन्मेष, नवप्रकाश तथा नवस्फूर्ति व्याप्त है।[१४९] वह एक पत्नीव्रती है। अश्वमेघ में सीता की अनुपस्थिति में उसकी स्वर्ण प्रतिमा स्थापित करके यज्ञ -कार्य सम्पादित करते हैं।

अन्य पात्रों में लक्ष्मण, राजगुरु, सुमन्त्र, शम्बूक, बाल्मीकि तथा अन्तःपुर का सेवक व्यवसाय से रजक विजय भी भूमिकन्या में है। इन पात्रों में राजगुरु तथा शम्बूक अपने पारम्परिक रूप से हटकर दिखाई पड़े हैं। राजगुरु आर्यत्व के अभिमानी दस्यु, शूद्र एवं अनार्यों से घृणा करते हैं तथा अत्यन्त क्रूर रूप में रूपक में दिखाई पड़े हैं। राजभवन में शम्बूक के प्रवेश से उसे अपवित्र मानते हैं। राम को उसका वध करने का निर्देश देते हैं। विजय को पत्नी का परित्याग करने का परामर्श देते हैं क्योंकि अनार्य शम्बूक को वह अपना भाई मानती है अनार्य रावण के वास करने से सीता के विषय में भी उनका यही विचार है कि राम द्वारा उसका परित्याग कर देना चाहिए।

शम्बूक शूद्र, अनार्य, दस्यु है। यह कृष्ण वर्ण, दृढ़काय बीस वर्ष का युवक है।[१५०] अनार्य कुल में जन्म लेने से सभी ऋषिगण इसे पीड़ित करते हैं।[१५१] अतः भूमिपुत्री होने के कारण सीता से वह न्याय माँगता है। राजगुरु इसका वध करवाने के पक्ष में हैं लेकिन सीता के कहने से राम उसे गंगा पार निर्वासित कर देते हैं। उसके माता-पिता भूमि के सेवक थे, अतः स्वयं को वह भू-पुत्र मानता है। संक्षेप में वह यहाँ शोषित पात्रों का प्रतिनिधित्व करता है।

इस प्रकार भूमिकन्या के पात्र पौराणिक होते हुए भी सर्वथा भिन्न-भिन्न नवीन रूप में दिखाई दिये हैं जो वर्तमान शोषित पात्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

यौतुकं पातकं परम् में तीन पुरुष पात्र हैं—क्षेमकरन, मनीष तथा अशोक। क्षेमकरन मनीष का पिता है। ये दोनों अविवेकी तथा दहेज लोभी हैं।[१५२] दहेज के लोभ के कारण क्षेमकरन ने पुत्र के साथ मिलकर अपनी पूर्व पत्नी की हत्या कर दी है तथा सम्प्रति किसी धनाढ्य महिला से पुनः सम्बन्ध के इच्छुक हैं।[१५३] अन्ततः हत्या के अभियोग में आजीवन कारावास पाते हैं।[१५४]

'अशोक' गुप्तचर विभाग का कुशल, सक्षम, कूटनीतिज्ञ अधिकारी हैं।[१५५] कन्या का पिता बनकर क्षेमकरन से पूर्व की गई हत्या के समस्त साक्ष्य एकत्र करके अपराधियों को बन्दी बनाता है।[१५६]

विजयलक्ष्मी त्रिवेदी के **नचिकेतः कुत्र गतोऽसि**[१५७] का प्रधान पात्र नचिकेता अपने पौराणिक रूप से हटकर सर्वथा नवीन रूप में दिखाई देता है। यहाँ पर यह ज्ञान पिपासु छात्र का प्रतिनिधित्व करता है। यह भोला भाला, दृढ़ निश्चयी तथा आत्मज्ञान का जिज्ञासु है। अपनी जिज्ञासा के समाधान हेतु वह वैवस्वत के विश्विद्यालय में प्रवेश पाने जाता है। लेकिन वहाँ की भ्रष्ट प्रशासनिक व्यवस्था के कारण उसे प्रवेश नहीं मिल पाता तथा वह अज्ञान प्रकार के गर्त में विलीन हो जाता है ।[१५८]

अन्य पात्रों में वाजश्रवा, आचार्य वैवस्वत, द्वारपाल तथा सफल काम पात्रों की भी अवतारणा हुई है।[१५९] सफल काम नचिकेता से विपरीत विशेषताओं वाला है। यह ऐसे छात्र का प्रतिनिधि है जिसे अध्ययन नहीं करना है। आचार्य की पत्नी को अपने पिता के राज्य में शिक्षा मन्त्री के पद का लोभ देकर विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने में सफल हो जाता है।[१६०] यह राजपुत्र, हठी, दम्भी तथा अहंकारी है।

भक्तिसुधा विरचित **सुकन्या** नायिका प्रधान एकांकी है। पुरुष पात्रों के रूप में शर्याति, च्यवन तथा अश्विनी कुमार हैं । शर्याति मृगया प्रिय राजा तथा सुकन्या के वत्सल पिता हैं ।

च्यवन वृद्ध, प्रचण्ड प्रतापी, तपस्वी तथा अत्यन्त तेजस्वी हैं। वृद्ध तपस्वी होने पर भी राजपुत्री से विवाह के इच्छुक हैं। पत्नी के सतीत्व से प्रसन्न होकर अश्वनीकुमार इन्हें नेत्र युक्त एवं युवा कर देते हैं।

अश्विनीकुमार देव-वैद्य, युवा सुन्दर तथा घमण्डी हैं। वे सुकन्या के सतीत्व के गर्व को खण्डित करना चाहते हैं लेकिन असफल होते हैं।

इस प्रकार अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में जहाँ प्राचीन धीरोदात्तादि अवस्था प्रधान नायक मिलते हैं वही पूर्णतः आधुनिक कोटि के मानवीय गुण-अवगुणों से युक्त नायक भी हैं। पौराणिक कोटि के शिव, विष्णु नारद आदि को नायक बना कर नाट्य रचनाएँ की गई हैं तो आधुनिक विषयों और घटनाओं के निरूपण के लिए प्रसिद्ध व कल्पित आधुनिक नायकों को भी निबद्ध किया गया है। इन नाट्यों में नायक सम्बन्धी जहाँ प्राचीन नियम उपलब्ध होते हैं वहीं उनमें आधुनिक विचारों का भी समावेश हुआ है। संक्षेप में आधुनिक नाट्यों के नायक प्राचीन तथा अर्वाचीन नाट्य नियमों के मिले जुले रूप वाले हैं।

संदर्भ

१. संस्कृत नाटक, पृ० ३२६.

२. वस्तुनेतारसस्तेषां भेदकः– दशरूपकम् १/११.

३. शृंगार प्रकाशः २१/पृ० ७६८,७७०.

४. भारतीयनाट्यशास्त्र की परम्परा और दशरूपक, पृ० ४७.

५. नाटकस्यान्तं गच्छति तस्माद्वै नायकोऽभिहितः ।– नाट्यशास्त्रम्, ३३/३२.

६. (क) समग्रगुणः कथाव्यापी नायकः नयति व्याप्नोति इतिवृत्तं फलं चेतिनायकः ।
–काव्यानुशासनम्, ७/१.
(ख) अधिकारः फलस्वाम्यमधिकारी च तत्प्रभुः ।– दशरूपकम्, १/१२.
(ग) नायक इति बीजबिन्द्वादिसंवलितस्य नाटकस्य नाट्यमन्तं नयतीतिनायकः ।
–नाटकलक्षणरत्नकोषः– पंक्तियाँ २५७,५८.
(घ) प्रधानफलसम्पनोऽव्यसनी मुख्यनायकः ।– नाट्यदर्पणः,४/१६०.

७. आलम्बनो नायकादिस्तमालम्ब्य रसोद्गमात् ।– साहित्यदर्पण,३/२९.

८. (क) दशरूपकम्, २/१,२.
(ख) नाट्यदर्पणः,४/१६६.
(ग) साहित्यदर्पण,३/३०.

९. दशरूपकम्, २/३.

१०. (क) वही, २/३-५.
(ख) साहित्यदर्पणः ३/३२-३४.
(ग) नाटकलक्षणरत्नकोषः, पंक्ति २६३.

११. नाट्यशास्त्रम्, २४/१७.

१२. वही, २४/२.

१३. वही, २४/९२-९३.

१४. वही, २४/३२-३९.

१५. पताका नायकस्त्वन्यः पीठमर्दोविचक्षणः ।
तस्यैवानुचरो भवतः किञ्चिदूनश्च तद्गणैः ॥– दशरूपकम्, २/८.

१६. साहित्यदर्पणः, ३/४०-४६.

१७. (क) नायकः प्रतिकूलवृत्तिः तदुच्छेदावहः प्रतापाभिमानार्थसाहसादिगुणोत्कर्षी धीरोद्धत्तः प्रतिनायकः ॥– शृंगारप्रकाशः, २१/पृ० ७६८,७७०.
(ख) काव्यानुशासनम्, ७/२०.
(ग) नाट्यदर्पणः, ४/१६६

१८. कविकुलकोकिलम्, पृ० १०,४७,४९,७१.

१९. पण्डितः–(आश्चर्यान्वितः) अपि न जानाति तद्भवान्? अपि न जानाति तद् भवान् यद् भवतः प्राणप्रतिमः पुत्र सप्ताहाधिकं कालं पाठशालायां न गतवान्? न केवलं तत्, तत्पूर्वमपि च पंक्तिमात्रमपि पुस्तकस्य न पठितवान् तत्र, केवलं सहपाठिभिः सह कलहविवादरतः आसीत्?– वही, पृ० १०.

२०. वही, पृ० ५९.

२१. वही, पृ० ७१.

२२. चम्पकवदनः–अहम् देशरक्षकसैनिको भवितुमिच्छामि। ततोऽहं ज्योयानदलगतो भविष्यामि .... । पृ० २२.

२३. नहि नहि ! उद्यैव सूर्यास्तगमनस्य प्रागेव अस्माकं परमादरणीया भारतीयपताका शत्रुव्यूहे उत्तोलनीया . ....अहं यामि .....सत्वरे प्रत्यावर्तिष्ये ।–वही, पृ० ४९.

२४. वही, पृ० ५६.

२५. विपुलविक्रमः–(सोपहासम्) देशभक्तिः ? फुः फुः फुः ! साहि भण्डता मात्रम् ... । –वही, पृ० २७.

२६. विपुलविक्रमः–(सोद्वेगम्) अत्रैवाहं भवत्या देशसेवार्थं सर्वां व्यवस्थां अचिरेण सुष्ठरूपेण करिष्यामि । x x x अद्यावधि युवयोरहं द्वितीयः पुत्रो जातः ।

–वही, पृ० ३३.

२७. निवेदितनिवेदितम्, पृ० ७.

२८. मार्गरिट्–(चकिता) अप्येष स भारतसंन्यासी, यद्दर्शनार्थं अहमत्रागता रुद्ध श्वासम् ? x x x चुम्बको यथा लौहमाकर्षति, सूर्यो यथा सूर्यमुखीं विकासयति, चन्द्रोयथा चकोरमुद्वेलयति यता सोऽपिमाम ... ।–वही, पृ० ७,८.

२९. लेडीईसाबेल–x x x मार्गरिट ! अयं प्रख्यातभारतीय संन्यासी श्रीमत्स्वामी विवेकानन्द महोदय ! गम्भीर प्रज्ञा धारको, निगूढ़तत्त्वप्रचारकः प्राञ्जलरचनाकारश्च ।

–वही, पृ० ९.

३०. (क) रूपकुमारः–(उदासदृष्टिः) नद्येव मम जननी, आकाश एव मम जनकः तरण्येव मम सखी, अन्येन केन चित् किंवा मम प्रयोजनम् ।

(ख) रूपकुमारः–नहि नहि अहं साधरणनौकाचालक एव नान्यः कश्चित् अथवा साधारण नौका चालकेभ्योऽपि दीनतरोहीनतरः क्षीणतरश्च यतो विशाले विश्वब्रह्माण्डे ममकोऽपि नास्ति, कोऽपि न x x x एकस्यां शारदपूर्णिमारात्रौ अस्मिन्नेव नदीवक्षसि अस्यामेव नौकायां भासमानं आसं सप्तवर्षीयोऽहं एकाकी इत्येव मम जीवनस्य प्रथमा अस्पष्टा स्मृतिः ।–पल्लीकमलम्, पृ० ३३-३५.

३१. वही, पृ० ३५.

३२. वही, पृ० ३५.

३३. मार्तण्डाः–(हुंकारैः) तुच्छातितुच्छायाः पल्लीबालायाः ईदृशीस्पर्धा ? असहनीयमेतत् । भवतु अहमपि जाने प्रतिहिंसाग्रहणपद्धतिम् यः कालसर्पस्य विवरे हस्तं प्रवेशयति अनवधानः सोऽपि कालसर्पदष्टो भवत्यचिरेण .... । वही, पृ० ३७.

३४. वही, पृ० ५०.

३५. अरुणकिरणः– x x x भवतु वृथा कालव्ययो न करणीयो मुहूर्तमात्रमपि ततो याम्यहं तस्या उद्धारार्थम् ।–मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० ११.

३६. अरिन्दमः–उतिष्ठ वत्स । उतिष्ठ ! तव विनयो हि परम सुखकर .... ।

–वही, पृ० २१.

३७. अरुणकिरणः–तेन ममकिम ... ? उच्चा वा नीचा वा धनिनो वा दरिद्रो वा पण्डिता वा मूर्खा वा । सर्वे जना एव सभ्या, भव्या भद्रा नम्रा x x x

भवन्तु इत्येवालंघ्य धर्मानुशासनम् x x x ततो त्वां निमेषेण पदतलेन चूर्णविचूर्णं करिष्यामि । यदि त्वं न गच्छसि दूरं मुहूर्तमध्ये ।–वही, पृ- १६-१७.

३८. वही, पृ० ३९.

३९. वही, पृ० ४०.

४०. वही, पृ० ४३.

४१. (सहसा प्रविशति कुबेरराजवंशीयः दाम्भिकः दुर्धर्षः प्रचण्डज्ञप्रतापनामा कश्चनलक्ष्यानुसंधानतत्परः यक्षः)

प्रचण्डप्रतापः—(उच्चैर्हसन्) हा हा हा ! कुत्र पलायिष्यसे त्वं रे रे निर्बोधविहंगमे ? किं न जानासि त्वं कस्य हस्ते पतितास्ति साम्प्रतम् ? अहं कुबेरराजवंशीयः, प्रचण्डप्रतापशाली, प्रचण्डप्रतापमहोदयः। अहं तव कोमलसरससुस्वादुमांसभक्षणलोलुपो जनः, को मां निवारयितुं समर्थ. . . . । —मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १५.

४२. वही, पृ० २५.

४३. प्रचण्डप्रतापः—अहं प्रचण्डप्रतापनामधारी, कुबेरराजवंशीयः धनी, मानी, ज्ञानी गुणीजनः, सन्ति मम बहुलक्षमुद्राः सुविशाला अनेका अट्टालिकाः, असंख्यानि कुञ्जवनानि, प्रभूतानि शकटानि, प्रचुरा भृत्याश्च अथवा अलं प्रत्येकनामकथनेन, किं मे न सन्ति । किं किं न । —वही, पृ० २०.

४४. वही, पृ० ३४.

४५. प्रणमामि यतिश्रेष्ठं यतीन्द्रविमलं भास्करभास्वरं, सदाकमलकोमलम् देवभाषा प्रचारकं, देवप्रवरं मातृनामकीर्तनपरं चारणवरम् । ऋषिकविनाट्यकारं जनचित्तचारं जननीचरणारविन्दमकरन्दधरम् ।—यतीन्द्रयतीन्द्रम्-पाटल श्रीः, ५ः१, पृ० ३१.

४६. वही, पृ० ३८.

४७. यतीन्द्रः— x x x गुरुजनसकाशे प्रगल्भता असमीचीना । x x x भगिनि ! चापल्यं संहर । गुरुजन सकाशे ईदृक् चापल्यम् अशोभनम् ।—वही, पृ० ३ ८.

४८. वही, ५/पृ० २४, २६.

४९. वही, ७/पृ० ३३.

५०. युगजीवनम्, पृ० ४८.

५१. गदाधरः—(अशृण्वन् भावाविष्टः) मातः मातः ! परमरसपूरिते ललितलीलालसिते किंत्वं वाञ्छसि मया सह खेलितुं अद्य ? हा हा हा आगच्छ आगच्छ प्राणाधिके जननि । अहं अद्य त्वया सह रासक्रीडां करिष्यामि । हाः हाः हाः (सानन्दं हसति नृत्यति च स करतालम्) ।— युगजीवनम्, पृ० २१.

५२. वही, पृ० ७२.

५३. वही, पृ० ९६-९७.

५४. महादेवः—तथास्तु । युवयोर्मनोवाञ्छा अचिरेणैव परिपूर्णा भविष्यति । भक्तवरौ, श्रृणुतम् श्रृणुतम् । अहमेव स्वयंमागमिष्यामि युष्मद्गृहे युवयोः पुत्ररूपेण । —शंकरशंकरम्, पृ० ११.

५५. शंकरः—राजाधिराज ! धन्योऽस्मि भवतः स्नेहसुधास्वादेन । किन्तु भवान् जानाति किल यत् अहं अजन्मब्रह्मचारी । ब्रह्मचारिणो जनाः किं करिष्यन्ति हस्तिना ? ते भिक्षोपजीविनो मृगचर्मवल्कलधारिणोऽध्ययनाध्यापनव्रताः सन्ध्यावंदनरताः गुरुसेवनियताश्च .... ।—वही, पृ० १३.

५६. (क) राजशेखरः—आर्य । आपात् दृष्ट्या भवान् अष्टवर्षीयो बालक एव । किन्तु वस्तुतो भवान् प्राज्ञश्रेष्ठ, भक्तकुलशिरोमणिः संन्यासिप्रवरः ।—वही पृ० १३.

(ख) शंकरः—वत्साः ! भवितव्यं भविष्यति सर्वदा, भवितव्यं भविष्यति सर्वथा प्राणाधिकाः । न स्मरथ किल यूयमद्य मम जन्म दिवसः अद्याहं पूर्णद्वात्रिंशुद्धर्षो जात इति । आनन्दगिरिः—हा हा हा ! गुरुदेवस्य आयुष्यकालो हा त्रिंशद्वर्षमात्रपरमितः । —वही, पृ० ८७.

५७. भिषक (सविषादम्) हन्त! अतिदयालुत्वेन, सदोषभारम्, आत्मन्यसकृद् वृथा आरोपयामास अनूपः।—अनूपः, पृ० १०.

५८. (क) वही, पृ० १६.
(ख) मीरा—अहो प्रत्यक्षीकृतभर्तृमरणया मया अद्यापि जीव्यते। खलं हि खलु मे हृदयं पातकिन्याः। घोरव्याधिग्रस्तेन नाथेन व्यथामात्मनो विगणय्य परमधर्मवशाद् अनेकैः प्रकारैरस्मदर्थं धनसंचयः कृतो येन स्वकुटुम्बं सर्वथा सौकर्यं प्राप्नुयात् . . . .।—अनूपः, पृ० १४.

५९. रेवा—मन्येसे, स्निह्यसि मयि
सुपर्णः—अथ किं मुग्धे!
रेवा—तत्कथमन्यां वोढुमिच्छसि
सुपर्णः—(आलिंग्य) नैव सुतनु! अम्बा पौत्र मुखं दिदृक्षुरस्ति।
—असूयिनी—मंजूषा, जुलाई १९५८, पृ० ३०४.

६०. (रेवा निर्गच्छति। स्थूलकायः प्रांशु बाहुः पीवराननो ग्रामेशो गृहीतवृत्तपत्रम् प्रविशति)
—कटुविपाकः—मंजूषा, १०:४, पृ० ८७.

६१. ग्रामाधिपः—युक्तमेवैतत्। जानासि राजकीयादेशानुवर्तिनो वयमिति? कथं युज्यते विरोधः शासितृभिरस्माकम्? देशदम्भिनो धूर्ताः स्वराज्यमीहन्ते।—वही, पृ० ८९.

६२. ग्रा०—न जाने कथं जीवेयुरेते हतक्षेत्रोपकरणा जनाः। जानीहि। अन्धश्रद्धालवस्ते क्षुधया मरिष्यन्ति नूनम्।—वही, पृ० ९२.

६२. ग्रामाधिपः—(विश्वस्यात्मगतम्) त्यक्तोऽस्मि सर्वैः साम्प्रतम् न कोऽपि मे बान्धवोऽस्ति जगति। कटुर्विपाकः खलु जीवनयात्रायाः।— वही, पृ० ९६.

६३. रत्नः—(सगर्वम् तच्छ्रूयताम्) श्व एवावकाशो वर्तते कार्यालये। तत्सज्जाभव। गृहाणैतां वीणां, अह च ग्रहीष्यामि लेखनीमिमां। तद्गच्छावो वहिर्मनो विनोदार्थम्। सन्तुष्टासि साम्प्रतम्?—कपोतालयः—मंजूषा जून १९५६, पृ० २३१.

६४. सुनीति—हा कदाचिदसौ सुशीलोऽभविष्यत् स्वपितृपदानुगश्च। . . . सवितेव सत्यमहिमा ध्रुव इव धर्मभृत प्रातः स्मरणीयः खुलु भर्तृपादः।
—क्षणिकविभ्रमः—मंजूषा फरवरी १९५६, पृ० १४१.

x x x x x x x x x

सु०—नूनं सत्यपरीक्षणायैवेति विश्वसिमि। यदर्थं विद्याकला कुशलः प्रगल्भोऽपि मे भर्ताऽकारणमेव विपन्न, सहसैव च त्यक्तश्छात्रसमुदायेन।—वही, पृ० १४१.

६५. क्षणिकविभ्रमः—मंजूषा, फरवरी १९५६

६६. हरिः—अधीताधुनिकविद्याः पुनरिमेऽकर्मण्या एव भवन्ति . . . . ग्रामवासादपि जुगुप्सन्ते।
शंकररावः—किं शिक्षादोषं मन्यसे?
हरिः—नूनम्। दृढो मे विश्वासः—
कलीराजते प्रायः कालिजेषु।
अविद्यालया नैव विद्यालयास्ते॥
—गणेशचतुर्थी—मंजूषा १० :८, पृ० १९८.

६७. पराजित्याखिलान् शत्रून् विजयन्ते महाबलाः।
शौर्यवीर्यसुसम्पन्नाः कुमाऊं सुभटा भटा॥

धन्योऽसौ देशरक्षार्थ त्यक्तसर्वपरिग्रहः।

—जयन्तु कुमाउनीयाः—विश्वसंस्कृतम् ५ः३, पृ० २२.

६८. तुकारामचरितम् मंजूषा, फरवरी १९५६, पृ० १५७, १६२-६३.

६९. अनसूया—तथापि देशखण्डनावस्कन्धे सर्वेऽपि वयं तातेन पालिताः। अन्याः क्रूरैर्यवनैर्व्यापादिताश्च।—नारकाण्डाश्रमः—दिव्यज्योतिः अक्टूबर १९८०, पृ० १०.

प्रियंवदा—पांचालदेशाद् बहवो अबोधाश्चिकित्सितास्तातेन, अत्रानीताश्च न स्मरसि?

—वही, पृ० ११.

मुग्धा—(पठन्ती) पतंगो रसमास्वाद्यं चतुरस्सुमनसां पृथक्।

मायाजाले गृहीतः सन् विमुक्तोऽपि तिरोऽभवत्॥

—मायाजालम्—विश्वसंस्कृतम् ॥ः१-४, पृ० ७३

७०. हा प्रिये! कथं दुर्भरं जीवनं वहसि? (विस्मय) नूनं मोक्ष्यसे क्लेशबन्धनात्। (साभिलाषम्) प्रिये! ध्रुवं परिणेस्यामि त्वाम्।—बालविधवा—मंजूषा जून १९५५, पृ० १७०.

७१. वृत्तशंसिच्छत्रम्—मंजूषा, ११ः८, पृ० २११.

७२. वही, पृ० २१५.

७३. हरिसिंहः—विश्वसंस्कृतम् १८ः३, पृ० ४९, ५१.

७४. होलिकोत्सवम्—मंजूषा, १०ः२, पृ० ३३-३४.

७५. सूत्रधारः—(बहिर्निष्क्रम्य) अधुना छागः जलपोतमास्ते। असौ पोतस्य मुद्राधिकारी पर्यटकान् यात्रापत्राणि ददाति। तान् गणयति च यथा दशाधिकाः न भवेयुः।

—गणयञ्छागः—दिव्यज्योति, जुलाई १९७६, पृ० १३.

७६. नचिकेता—तात! एवं कृत्वा त्वं निरानन्दान् लोकान् गमिष्यसि।

—नचिकेतोयम संवादम्—पारिजातम् ३ः१, २, पृ० १३.

७७. नचिकेता—न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः। तृतीयो वरस्तु मे वरणीय स एव। न तस्मादन्यं नचिकेता वृणीते।—वही, पृ० २४.

७८. यमराजः—नचिकेतः शिष्यस्त्वमसि मेधावी धीरोऽसि।—वही, पृ० २१.

७९. वेतालः—भवतु जानामि त्वमभिनिविष्टोऽसि, दृष्टिप्रियोऽसि।

—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम्, जनवरी १९८३, १/पृ० ५.

८०. राजा— x x x स्वभावशूरमस्त्रज्ञमविरक्तं जितश्रयम्।

प्रसिद्धक्षत्रियप्रायं बलं श्रेष्ठतमं विदुः॥—वही—अप्रैल १९८३, ४/पृ० १६.

८१. विवेकानन्दविजयम्—पारिजातम्, जुलाई १९८६, पृ० २८.

८२. वही, पृ० ३३-३५.

८३. भास्करः—अलमतिमात्रं संतप्य। मातृभूमेरक्षणाय प्राणार्पणमपि न बहुमन्यन्ते वीरयुवकाः किं पुनश्चरणदानम्। x x x सुधीरः एक पादोऽपि चिकित्सालयं संस्थाप्य सुखेन जीवनं यापयिष्यति।

—पाददण्डः—सागरिका २ः३, पृ० २५९.

८४. सुधीरः—(सहास्यम्) किन्तुनाहमिदानी मृत्युना गृहीतः। मृत्युरपिमत्तो विभेति यतो गृहीतोऽपि तेन मुक्तोऽहम्।—वही, पृ० २६४.

८५. ब्रह्मचारी—वपुर्विरुपाक्षमलक्ष्य जन्मना

दिगम्बरत्वेन निरेदितं वसु।

पदौचरेतां नु परेतभूमिषु
कथं चिताभस्म रजोऽङ्गरागिणा ॥—पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० २५.

८६. रामः—धिगेशा पितुः काव्यथाऽदृष्टपूर्वा ।
गुरोर्वेदना शान्तये व्याकुलोऽहम् ।—रामवनगमनम्, पृ० ७.

८७. रामः—अम्ब तवाज्ञा सदैव वन्द्या
प्रस्थितोऽस्मि वनमेष इदानीम् ।—वही, पृ० ७.

८८. वही, पृ० १८.

८९. रघुवराधरस्फुरणाद्वचनम्
सीतेत्यस्फुटमार्तकरुणम् ।
श्रुत्वा लक्ष्मणनेत्रयोर्जलम्
सिञ्चति शुष्यत्प्रभुमुखकमलम् ॥—सीताहरणम्, ६५, पृ० १७.

९०. भृशंकृशाङ्गोऽपि महान्तरंगः सुचेलहीनोऽपि रुचेरहीनः ।
कोऽयं द्विजातिस्त्वयि भक्ति नम्राःसत्वं, गुणोमूर्त इवाभ्युपैति ॥
—कुचेलवृत्तम्—संस्कृत प्रतिभा ३ : २, पृ० २३४.

९१. स्नेहापूतदृश-चलं सपुलकं मन्दस्मिताभं हरिम्
राधागोपवधू-प्रियं जलधरश्यामं विलासद्रुमम्
श्रीवृन्दावनधामधूलिधवलं वेदान्तवेद्यं विभुम्
वंशीवादन तत्परं स्मर हरं चित्तक्षमं चिन्तये ॥—राधानुनयः १/२

९२. वही, १/३.

९३. राधानुनयः ५/३४.

९४. अजातशत्रुः—कारणं मे पुरतो विद्यते । मगधराजसिंहासनं सर्वथा रिक्तं ऋते राजमहिषी परिपूरयतु भवतीयती याचना मम । प्रणतोऽस्मि । दासोऽयं अनुरागविद्धो भूयः भूयः प्रार्थयति ।—आम्रपाली, पृ० २०.

९५. अजातशत्रु—(सक्रोधं) पश्य रे वारनारि! ममासिधारम् । पुनः पुनरपि च स्मरमे संकल्पम् । मम निराशाकशाघातकेन विनष्टा भविष्यसि ।—आम्रपाली, पृ० २७-२८.

९६. वही, पृ० ३५.

९७. वही, पृ० ५१.

९८. महेशः— x x x अत्रागच्छ शृणु च । यावतः कार्यस्य आदेशो भवति तावत् दूरदर्शनपुनः सरं सम्पाद्यं, तत्सम्बन्धात् कार्यान्तरेऽपि प्रयत्नः कर्त्तव्य इति सनातनीरीतिः ।
—अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (दशमस्त्वमसि), पृ० २७.

९९. वही, पृ० ३०.

१००. वही, पृ० २५.

१०१. कंचन—दीनबन्धो । एतन्मे दूरदर्शनम् । उपचारेण यदि शिरोवेदना प्रशान्ता न भवेत् तदा मरणमेव सुनिश्चितम् । एतद्विचार्य मया दूरदर्शिनाऽन्तिम संस्कारार्थमेतत्सर्वं साधितम् । को दोषोऽत्र ।—अलक्ष्यं दूरदर्शनम् (दशमस्त्वमसि), पृ० २९.

१०२. नारदः—नारायण ! त्वद्भक्त्याऽत्यन्तं प्रीतोऽस्मि । तदत्र विलम्बेन किम् ? (इत्युक्त्वा नारदः तं कर्षकं नीत्वा स्वर्गलोकं जगाम)
—उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् (दशमस्त्वमसि), पृ० २८.

१०३. वही, पृ० ३०.

१०४. वही, पृ० २६-२७.

१०५. ग्रामीणः—नैवं नैवं भार्ये ! एक पत्नीव्रतोऽहमित्यवधेयं त्वया

त्वमेव मम हृद्देशं वर्तमानास्यहर्निशम् ।

अतस्त्वया विना देवि ! जीवनं सर्वथा वृथा ॥

ग्राम्या—कर्षकस्योपरि सम्मार्जनी प्रहारंकृत्वा ....।—वही, पृ० २८.

१०६. चराचरसंचितकर्मयन्त्रितम् (दशमस्त्वमसि), पृ० १.

१०७. तपोधनः—(सकोपम्) विस्फारित रक्तलोचनेन मालां संत्रोट्य तुम्बिकां च भंक्त्वा तिष्ठरे तिष्ठ पाखण्डिन् नारद ! दम्भिन् ! तस्य बहुरूपिणः प्रचारक। अथाऽहं चर्मट्या ते शिरश्चूर्णयिष्यामि x x x ततः पुनः सप्तजन्मावधिः भिक्षुक इव कथं वर्तिष्ये ।

—वही, पृ० ३.

१०८. वही, पृ० २.

१०९. वही, पृ० ३.

११०. सुव्रतः—हरिदर्शनमित्यलम् । केवलं प्रभोः साक्षात्कारं एव कामये ।—वही, पृ० ३.

१११. न मुनिपुनरायातो न चासौ वर्धतेगिरिः (दशमस्त्वमसि), पृ० ४८.

११२. वही, पृ० ४८.

११३. भक्तराजः, पृ० २५.

११४. वही, पृ० २५.

११५. विष्णु—(विहस्य) देवर्षे समे भक्तराजो निवसत्यत्र, अधुना स एव ममास्ति तेन विना विष्णुरपि निरर्थकः, अतः एष मम प्रयत्नस्तस्य भक्तश्रेष्ठस्य चिरनिवासार्थमत्र मे पुरत एव ।—वही, पृ० २४.

११६. वेदप्रकाशः—प्रिये कुतो मे शान्ति ? न मेऽधुना किंचित्प्रयोजनमनेन स्वातन्त्र्येण ।

गृहं नष्टीकृत्य को लाभोऽस्मिन् स्वराज्ये ? वंचितोऽहं सर्वथा विनष्टो ममाध्ययनक्रमः ...अतो व्यर्थो मार्ग एष मंगले ।

—माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पृ० ३०.

११७. वेदप्रकाशः—मंगले । मोहावरणमधुना त्वदवचनेनपसारितम् ... गच्छाम्यहं साम्प्रतं राष्ट्रमुक्तिरेव मे लक्ष्यभूता ।—वही, पृ० ४३.

११८. काजुलः—पश्य रे ! पश्य कञ्चन ! कथमयं महात्मा जलधारायां ध्यानमग्नोऽस्ति विचित्रोऽयं अर्चनाविधिः ! अद्वितीयमिदं तपश्च । परमहंस इवासौ प्रतीयते ।

—सचाप्यस्ति रजक एव, पृ० २१.

११९. वही, पृ० २५.

१२०. सत्यमेव जयते, पृ० ३४.

१२१. विभेति केवलं स एव यो दुराचरणं करोति, निर्भयोभवति सत्यव्रतः । —वही, पृ० ३४.

१२२. वाइसरायः (सविस्मयं) परमसाहसी जीवोऽयं यन्नविभेति ब्रिटिशासासनात् किंचिदपि, निखिलाः भारतीयाः ह्यस्यानुयायिनः सन्ति । मन्येऽहं यदयमात्मबलसम्पन्नोऽस्ति ।

—वही, पृ० ३७.

१२३. शारदा—श्रीमन् ! चिरञ्जीवीभवतुभवान् । अज्ञानवृत्तचेतस्त्वां विकल्पनं निरर्थकमिव मत्वा क्षम्यतां तान् पशून् ।—ज्ञानेनहीनाः पशुभिस्समाना, पृ० १९.

१२४. (क) विप्रतिषेधे परं कार्यमिति महर्षिः पाणिनिः वृथा न जगाद ।

—निम्बपत्राणि, पृ० २.

(ख) तुल्यबलविरोधे सति पूर्वं प्रति परशास्त्रमसिद्धं स्यात् ।—वही, पृ० २.

(ग) भगवान् ! "प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः" इति यच्छास्त्रेष्वादिष्टं तत्र परिवारकल्याणं पुरस्कृत्य इति वाक्यांशो योजनीयः ।—वही, पृ० ३.

१२५. वही, पृ० ५,६,८.

१२६. ललितः— x x x हुँह! टैक्सीयानेन कार्यालयं सम्प्राप्तोऽस्मि। तत्र चाध्यक्षेणाक्षिप्तोऽस्मि विलम्ब निमित्तम् ।—प्रतिबुद्धा, पृ० १७.

१२७. ललितः—त्वं त्यागपत्रं दत्वा प्रातः सप्तवादनावधि सुखं शयीथाः। अहं चार्थिकचिन्ताग्रस्तः निद्राभावे गगनस्थानि नक्षत्राणि गणयन् रात्रीः यापयिष्यामि। —वही, पृ० २२.

१२८. याथार्थ्यगरलम्, पृ० २६-२७.

१२९. पूर्णिका—कदा त्वं लाटरी पत्राणि न क्रीणासि! गृहे भोजनं भवेन्न वा लाटरीपत्राण्यप्रमादमानयसि ।—याथार्थ्यगरलम्, पृ० २७.

१३०. वही, पृ० ३०.

१३१. नारददौत्यम्, पृ० ३९.

१३२. वही, पृ० ४२-४४.

१३३. वही, पृ० ४६-४७.

१३४. कविकालिदासीयम्, पृ० ५५.

१३५. कालिदासः—(विचार्य) अस्योत्तरार्द्धं एतद्भवितुं शक्यते (पठ्यते) अण्विति वर्ण्यते कथमनुकृतिस्तस्य प्रतिपदि चन्द्रस्य ।

—कविकालिदासीयम्, पृ० ६०.

१३६. कविकालिदासीयम्, पृ० ५१.

१३७. वही, पृ० ५२.

१३८. वही, पृ० ६४.

१३९. नचिकेतश्चरितम्, पृ० २,६.

१४०. वही, पृ० ७-८.

१४१. महीयसीगार्गी, पृ० ३२.

१४२. विराड्गृहम्, पृ० ४०-४१.

१४३. वही, पृ० ४८.

१४४. युधिष्ठिरः—कथं लज्जितोऽसि? नात्र अपराधः। पाण्डवसखा त्वं विपत्काले तवाश्रयलाभं विना पाण्डवानां सत्यरक्षा कथमपि नाभविष्यत् ।—वही, पृ० ४९.

१४५. रामः x x x अस्य महतो राष्ट्रस्य प्रजानामनुरंजनं मया कर्त्तव्यम् ।

—भूमिकन्या, पृ० १२.

१४६. राम— धर्मपालनमेव राज्ञः कर्तव्यम् x x x रामराज्यस्य मानदण्डम् ।—भूमिकन्या, पृ० १७.

१४७. सीता—शृणोमि अवधारयामि च। एतदेव राज्ये परिवर्तनं दृशयते। सर्वत्रैव रामराज्यस्य नवोन्मेषो, नवप्रकाशः, नवस्फूर्तिश्च आगता इव ।—वही, पृ० १२.

१४८. वही, पृ० १०१.

१४९. वही, पृ० ४५-४६.

१५०. वही, पृ० ३७.

१५१. शम्बूकः– x x x अहमनार्य। शूद्रोऽस्मि। परं देवि। कस्मिन्नपि कुले जन्म न वर्तते वशे जातस्य। अनार्यकुले जातोऽस्मीति सर्वे मां पीडयन्ति x x x सर्वे ब्राह्मणाः महर्षयः च मह्यं द्रुह्यन्ति।– वही, पृ० ४०.

१५२. क्षेमकरनः– उचितं कथयसि सरले। ममअपि एषा कोमनास्ति मम सुपुत्रः प्रतिष्ठितः अभियन्ता अस्ति। स निर्धनकुले विवाहसम्बन्धं कदापि न स्वीकरिष्यति।

– यौतुकं पातकं परम् (पारिजातम्) पृ० ९.

१५३. क्षेमकरनः– (विहस्य) ह ह ह ...। सम्बन्धाय आगतः। यौतुके किं दास्यसि ..।

– वही, पृ० ९.

१५४. अशोकः x x x यूयं मिलित्वा तां लक्ष्मी हतवन्तः। हत्यायाः अभियोगे यूयं जीवनपर्यन्तं कारावासं सेवध्वम्। – वही, पृ० १२.

१५५. अशोकः– x x x भो क्षेमकरन। मया तव सर्ववृत्तं शब्दग्रहणयन्त्रेभरितम् अहं गुप्तचर विभागस्य प्रधानोऽस्मि।– वही, पृ० १२.

१५६. वही, पृ० १२.

१५७. नचिकेता– तात! सुष्ठु भषितं भवद्भिः, मनुष्यः मरणधर्मा। मृत्युः कथं मर्त्येन सह व्यवहरति? मृत्योरग्रे किमस्ति? सिसृक्षा कथं मुमुर्षा भवति? अयमात्मा कः? इमे प्रश्ना माम् उत्सुकयन्ति। भवतः प्रभावात् तत्र गन्तुं क्षमोभविष्यामि।

– नचिकेतः कुत्रगतोऽसि (पारिजातम् ३ः १-१२), पृ० ३३.

१५८. वही, पृ० ३८.

१५९. सफलरामः– को नाम महामूर्खः अध्ययनाय प्रवेष्टुं वाञ्छति। कृपया नामाङ्कनस्य अभष्टिं शुल्कं दक्षिणारूपेण अन्यथा वा गृह्णातु ...।– वही, पृ० ३६.

१६०. वही, पृ० ३५.

अष्टम प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में स्त्रीपात्र

नाट्य में नायिका की भूमिका नायक के समान ही महत्वपूर्ण होती है। वह भी नायक के साथ नाटकीय कथावस्तु की केन्द्रीय पात्र है। संस्कृत नाट्यशास्त्र में नायक की प्रिया अथवा पत्नी ही नायिका कहलाती है तथा नायक के समान गुणों से युक्त होती है। आचार्य भरत ने नायिका भेद के अन्तर्गत नारी के सौन्दर्य के अतिरिक्त उसके शील, सौजन्य, आचरण की पवित्रता, प्रकृति तथा अवस्था को भी विशेष महत्व दिया है। नाट्यशास्त्र के अनुसार नायिका के भेद को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत कर सकते हैं—

१. प्रकृति भेद[१] - उत्तमा, मध्यमा, अधमा
२. आचरण की शुद्धता / अशुद्धता[२] - बाह्या, आभ्यन्तरा, बाह्याभ्यन्तरा
३. सामाजिक प्रतिष्ठा - दिव्या, नृपपत्नी, कुलस्त्री, गणिका
४. कामदशा[३]-स्वाधीनपतिका, वासकसज्जा, विरहोत्कण्ठिता, खण्डिता, कलहान्तरिता विप्रलब्धा, प्रोषित प्रिया तथा अभिसारिका
५. शील[४]- ललिता, उदात्ता, निभृताधीरा
६. अंगरचना और अन्तःप्रकृति[५]- दिव्य सत्वादि इक्कीस भेद
७. अन्य आधार[६] - वेश्या, कुलजा, प्रेष्या

धनंजय आदि आचार्यों ने किंचित् परिवर्तन के साथ इन्हीं भेंदों को स्वीकार किया है। धनंजय स्वीया, परकीया और सामान्या ये तीन भेद करते हैं। अवस्था के अनुसार नायिका मुग्धा, मध्या, प्रगल्भा होती है। ये तीनों ही धीरा, अधीरा तथा धीराधीरा भेद से तीन-तीन प्रकार की होती हैं। मध्या तथा प्रगल्भा के तीनों भेद ज्येष्ठा तथा कनिष्ठा के रूप में भी वर्गीकृत किये गए हैं।[७] धनंजय का तीसरा वर्गीकरण काम दशा के अनुसार स्वाधीनपतिका आदि आठ रूपों में वर्गीकृत है।[८]

नायिका के चरित्र में और अधिक सौन्दर्य उत्पन्न करने के लिए कुछ अलंकारों का वर्णन किया गया है।[९] ये प्राकृतिक हाव, भाव होते हैं। भाव, हाव और हेला ये तीन अंगज तथा शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य, प्रगल्भता, औदार्य तथा धैर्य ये सात अयत्नज एवं लीला, विलास, विच्छित्ति, विभ्रम, किलकिंचित् मोट्टायित, कुट्टमित, विब्बोक, ललित और विहृत् ये दस स्वभावज अलंकार हैं।[१०] विश्वनाथ ने तपन, मुग्धता, विक्षेप, मद, कुतूहल, हसित चकित तथा केलि इन आठ अलंकारों का अतिरिक्त वर्णन किया है।[११] ये अलंकार मुग्धा, मध्या तथा प्रगल्भा नायिकाएँ अपने अनुराग की विभिन्न अवस्थाओं में अभिव्यक्त करती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतीय आचार्यों ने नायिका भेदों का वर्णन सूक्ष्मता तथा विस्तार से किया है किन्तु अधिकतर यह वर्णन शृंगार रस प्रधान रूपकों को ध्यान में रखकर ही किया गया है। नायिका के सहयोगी एवं प्रतियोगी स्त्रीपात्रों का निरूपण भी प्रधानतः शृंगार रस की दृष्टि से किया है। नायिका की सहयोगी स्त्री पात्रों में स्वयं के अतिरिक्त दासियाँ, पड़ोसिन, भिक्षुणी, चित्रकार धोबिन तथा सखियाँ होती हैं।[१२]

वस्तुतः युग परिवर्तन के कारण नायक के साथ ही नायिका की परिकल्पना में भी अन्तर आया है। आधुनिक नाट्यों में यह आवश्यक नहीं कि नायक की प्रिया या पत्नी ही नायिका हो। नाटकीय कथा-प्रवाह में जिस स्त्री पात्र की प्रधान-भूमिका हो, वही पाश्चात्यों के अनुसार नायिका होती है चाहे वह नायक की प्रिया हो अथवा नहीं। आज के रूपकों में पश्चिम के सम्पर्क से आई पुनरुत्थान की भावना ने नारी को पूर्ण जागरूक बनाया है। वर्तमान संस्कृत रूपकों में नारी के तीन वर्ग स्पष्टतः दिखाई देते हैं। (१) परम्पराओं या रूढ़ियों में बँधी नारी, (२) अधिकारों के प्रति सजग नारी तथा (३) परम्परा—विरोधी, स्वतन्त्र आदर्शों तथा यथार्थ स्थिति से जुड़ी नारी। इसलिए आधुनिक रूपकों में नारी एक ओर आदर्श रूप में चित्रित हुई है, दूसरी ओर उसकी उच्छृंखलता का भी यथार्थ चित्रण हुआ है। वह राष्ट्र प्रेमिका भी है और विलासी भी। प्रस्तुत प्रकाश में नाट्यकर्त्रियों की रूपक रचनाओं में नारी के प्राचीन तथा आधुनिक दोनों ही रूपों को देखा जा सकता है।

श्रीमती रमा चौधुरी विरचित **कविकुलकोकिलम्** में राजकन्या विद्यावती कमला देवी का चरित्र प्रधान है। यह रूपसी, विदुषी एवं ज्ञानगर्विता है।[१३] शास्त्रार्थ में इसने स्वयं से विवाह के इच्छुक अनेक कुमारों को पराजित एवं अपमानित किया है। मूक शास्त्रार्थ में छल से वह कालिदास से पराजित होती है। अभिमान की पराकाष्ठा[१४] के कारण ही कालिदास को अपमानित कर वह भवन से निकाल देती है।[१५] परन्तु नारी सुलभ कोमलता उसमें भी विद्यमान है। पति को अपमानित करने के बाद पश्चात्ताप करती है तथा कालिदास के वापस आने पर क्षमा याचना भी करती है।[१६]

गौणपात्रों के रूप में कालिदास की माँ, विद्यावती की माँ, ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती तथा विद्यावती की सखियाँ आलोकलतिका व मालती-मालिका भी कुछ समय के लिए रंगमंच पर दिखाई पड़ती है।

देशदीपम् की नायिका पंकजनयना नायक चम्पकवदन की बहिन है। अतुलनीय सौन्दर्यमयी, वाक्पटु[१७] तथा अपूर्व साहस एवं देशभक्ति की भावना से युक्त[१८] यह देश सेवा के लिए नर्स (परिचारिका) के रूप में युद्ध भूमि में जाकर जोयान नामक स्वदेशीय देशभक्त संगठन के घायल सैनिकों की परिचर्या करती है।[१९]

आराधना नायिका पंकजनयना की वत्सला, देशभक्त, अतिथि सेवी, दृढ़ संकल्पी तथा भक्तिभावमयी माँ है। दृढ़तापूर्वक वह अपने बच्चों को युद्ध में भेजती है।[२०] अन्य स्त्री पात्रों में कुछ ग्रामवासी महिलाओं, मार्गपरिष्कारिका एवं मांस विक्रेत्री के मंच पर थोड़े समय के लिए ही दर्शन हुए हैं। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से पात्र नगण्य हैं। केवल नायिका के महत्व प्रदर्शन एवं कथावस्तु की सूचना के लिए इनका उपनिबन्धन किया गया है।

निवेदितनिवेदितम् नायिका प्रधान रूपक है। नायिका निवेदिता (मागरिट्) एक विदेशी आंग्ल-महिला हैं।[२१] विवेकानन्द से प्रभावित यह भारत में आकर आजीवन दीन-हीनों की सेवा में लगी रहती हैं। निवेदिता ओजस्विनी, आध्यात्मिक वृत्ति की एवं समाज सेविका हैं। प्लेग रोग की रोकथाम के लिए टीके आदि की व्यवस्थाएँ करके मार्ग में फैले मल आदि को स्वयं अपने हाथ से स्वच्छ करती हैं।[२२] प्रस्तुत रूपक में गुरुभक्ति, भारत-प्रेम तथा जनसेवा ये तीन गुण इनके विशेष रूप से प्रकट हुए हैं।[२३]

अन्य पात्रों में शारदा, लेडी इसावेल, मिस म्याकलेड, मिस हेनरियेट मूलार, मिसेज ओलिवुल, श्यामा, तारणी, मातंगी, अबला पात्रों की अवतारणा का उद्देश्य निवेदिता के चरित्र को उत्कर्ष प्रदान करना है। निवेदिता के सामने उनका व्यक्तित्व निखर नहीं पाया है।

पल्लीकमलम् की नायिका सप्तदशवर्षीया कमलकलिका राजवंशोद्भवा होने पर भी साधारण ग्राम्य ललना है। उसके जन्म दाता राजा प्रभंजन व कनकचम्पा है लेकिन पालन-पोषण ब्रह्मपद व तरंगिणी ने किया है।[२४] कमलकलिका अपने पालक पिता ब्रह्मपद से प्रचुर स्नेह करती है। माँ तरंगिणी के सौतेले व्यवहार से वह बहुधा विस्मित व खिन्न होती है।[२५] वह गर्व रहित, विनय युक्त व प्रकृति-प्रेमी है। गाँव का वातावरण उसे अत्यधिक आकृष्ट करता है।[२६] वह रूपकुमार से प्रेम करती है। एक स्थान पर उसका अभिसारिका रूप भी प्रकट हुआ है। रूपकुमार के अनुसार वह अत्यन्त रूपवती, गान विद्या में निपुण अलौकिक मोहिनी, आश्चर्य रूप धारिणी माया बाला है।[२७] स्वयं के राजपुत्री होने का रहस्य ज्ञात होने पर भी वह दीन-हीन-निर्धन रूपकुमार का साथ नहीं छोड़ती है।[२८]

अन्य पात्रों मे कमलकलिका की जन्मदात्री कनकचम्पा, इसकी दासी शारदा ज्योत्स्ना, कमलकलिका की सखी कांचनकणिका तथा माँ तरंगिणी भी अपने वैशिष्ट्य से नायिका के चरित्र का उत्कर्ष कर कथावस्तु आगे बढ़ाती हैं। पुष्प विक्रेत्री, पण्यविक्रेत्री तथा मत्स्य जीविनी हास्य सृष्टि करती है।

मेघमेदुरमेदनीयम् की नायिका कमलकलिका आरम्भ में चंचल हँसमुख तथा किंचित् हठी दिखाई पड़ती है। सखी के बहुत समझाने पर भी वह प्रबल

वेगवती नदी में स्नान के लिए उतर पड़ती है। अरुण किरण द्वारा रक्षा किए जाने पर उससे अनुरागबद्ध हो जाती है।[२९] कमलकलिका को अपनी अलका नगरी तथा वहाँ की प्रत्येक वस्तु प्राणाधिक प्रिय है।[३०] कमलकलिका दयालु तथा तेजस्विनी है। राजपुत्र प्रचण्ड प्रताप को पक्षियों का वध करते देख वह डाँटती है।[३१] विवाह के इच्छुक प्रचण्ड प्रताप का प्रत्याख्यान वह घृणा व दृढ़ता से करती है।[३२] विवाह के पश्चात् उसमें गम्भीरता आती है। अतः माया मदिरा पद्मवन के उजड़ने के लिए स्वयं को दोषी मानती है। प्रियतम् को निर्वासन का दण्ड मिलने पर धैर्यपूर्वक विरह-वेदना सहन करती रहती है। यहाँ उसका प्रोषित-भर्तृका रूप प्रकट हुआ है। अरुणकिरण के अनुसार उसकी प्रियतमा अनुपम सुन्दरी तथा विधाता की प्रकृष्ट रचना है।[३३]

अन्य स्त्री पात्रों में कमलकलिका की सखी ललितलतिका माँ सुदर्शना तथा कुबेर की दयालु एवं कारुणिक पत्नी की भी अवतारणा हुई है।

यतीन्द्र-यतीन्द्रम् में स्त्री पात्रों की भूमिका अत्यन्त गौण है। यतीन्द्र विमल की स्नेहमयी माँ नयनतारा, हँसमुख अनुजा आशा, भाभी मुक्तिलता, कर्तव्य परायण धात्री, सम्पादिका तथा सुनन्दा के दर्शन विभिन्न दृश्यों में थोड़े-थोड़े समय के लिए होते हैं। ये सभी नायक यतीन्द्र विमल की शैक्षिक तथा सामाजिक उपलब्धियों पर प्रसन्न होते हैं।

युगजीवनम् में किसी भी स्त्री पात्र की प्रमुख भूमिका नहीं है। रानी रासमणि, भैरवी तथा शारदा देवी के रूप में तीन ही स्त्री पात्र दृष्टिगत होते हैं।[३४] रानी रासमणि भगवद् भक्त, सेवा परायण, अभिमान शून्य व क्षमाशील हैं। उनके द्वारा दक्षिणेश्वर में काली मन्दिर का निर्माण किया जाता है, जिसके पुजारी रामकृष्ण के प्रति इनका अत्यन्त आदरभाव है। 'भैरवी' अत्याश्चर्यमय रूप वाली, गैरिकवसना, एकान्त में विचरण करने वाली गदाधर रामकृष्ण का अवतारत्व सिद्ध करती है।[३५] 'शारदामणि' रामकृष्ण की सहधर्मचारिणी व पतिभक्त है। रामकृष्ण के सानिध्य से इन्हें भावमयी महासमाधि प्राप्त होती है। रामकृष्ण इन्हें मातृवत् पूजते हैं। पति की महासमाधि के पश्चात् उनके अधूरे कार्यों को पूरा करने का बीड़ा उठाती है।

शंकरशंकरम् भी पुरुष-पात्र -प्रधान रूपक हैं तथा सभी पात्रों की स्थिति अत्यन्त गौण ही है। यहाँ पाँच स्त्रीपात्र हैं। शंकराचार्य की माँ विशिष्टा, मातामही कामाक्षी तथा मौसी शंकर के रूप में अलौकिक पुत्र की प्राप्ति से अत्यन्त प्रसन्न हैं। इन पात्रों के अतिरिक्त मण्डनमिश्र की विदुषी पत्नी उभयभारती व अलौकिक नारी के रूप में चित्शक्ति जो शंकर को ब्रह्मशक्ति का बोध कराती है।

श्रीमती लीलारावदयाल के अनूपः रूपक की नायिका मीरा नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से स्वीया नायिका है। यह अनूप की पत्नी, कुशल गृहिणी एवं वात्सल्यमयी माँ है। अत्यन्त स्वाभिमानी होने से वह पति द्वारा अकारण

परित्यक्ता होने के कारण अनूप से मिलना तो दूर उसके विषय में कुछ सुनना भी नहीं चाहती है।[३६] वास्तविकता से अनभिज्ञ अनूप के आत्मनिर्वासन को एक नर्तकी के प्रति भोगासक्ति समझती है।[३७] लोकापवाद के कारण वह सामाजिक कार्यों में भी भाग नहीं लेती है। अन्तिम दृश्य में पति द्वारा परित्याग का भेद खुलते ही अपने महान पति को लांछित करने से पश्चात्तापवश आत्महत्या के लिए उद्यत हो जाती है। नाट्यकर्त्री मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मीरा के चरित्र-निर्वाह में सफल रही है।

गंगा इस रूपक की गौण पात्र है तथा मीरा की स्वामिभक्त सेविका के रूप में बहुत कम समय के लिए रंगमंच पर दिखाई पडती है।

असूयिनी एकांकी की नायिका रेवा सन्तानहीनता के कारण समाज एवं परिवार द्वारा उपेक्षित एवं कलंकित है।[३८] वह विनम्र एवं सेवा परायण है, अतः सास द्वारा भत्सर्ना किए जाने पर भी पूर्ण निष्ठा से उसकी सेवा करती है। पति के प्रति अपार अनुराग होने से उसके अन्य विवाह की कल्पना मात्र से विचलित होकर नरबलि जैसे घोरकृत्य में प्रवृत्त होने का विचार करती है।[३९] दुर्गा के प्रति उसका सख्यभाव तथा उसके बच्चों के प्रति वात्सल्यभाव है।[४०] कोमल स्वभाव की वह बच्चों के मृतप्रायः होने पर विलाप करती दुर्गा को देखकर स्वयं भी रोती है तथा स्वयं को उनकी मृत्यु का कारण मानती है। रेवा के मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व का सूक्ष्मता से निरूपण करने में रूपक-कर्त्री सफल रही है। गौण पात्रों में रेवा की कर्कशा सास तथा रेवा की सखी दुर्गा भी अल्प समय के लिए रंगमंच पर आती है। कथावस्तु के विकास में रेवा की सास गोपिका का योगदान महत्वपूर्ण है क्योंकि पौत्र सुख के लिए वह अपने पुत्र का दूसरा विवाह करना चाहती है, रेवा को पदे-पदे लांछित करती है जिससे वत्सल-हृदया होने पर भी असूयिनी बन जाती है।

कटुविपाकः के स्त्री पात्रों में **रेवा** ही महत्वपूर्ण पात्र है। यह ग्रामाधिप एवं वीरभा की सत्याग्रह परायण एवं देशभक्त पुत्री है। पिता से छिपाकर खादी के वस्त्रों का निर्माण करती है एवं सत्याग्रह-शिविरों में रहने वाले सत्याग्रहियों के लिए ले जाती है। वह वीरांगना है, इसलिए स्वराज्य प्राप्ति के लिए अपने प्राणों को तृणवत् मानकर पिता द्वारा मना करने पर भी जुलूस में सम्मिलित होकर वीरगति प्राप्त करती है। देश-सेवा न कर पाने के करण स्वयं को देश-द्रोही मानती है।[४१] 'वीरभा' ग्रामाधिप की पत्नी तथा रेवा की वात्सल्यमयी माँ है। वह पति से भयभीत रहती है परन्तु पुत्री के सत्याग्रह कार्यों का अनुमोदन करती है। पुत्री को मरणासन्न देखकर अन्त में पति का परित्याग कर पुत्री के पास चली जाती है।[४२]

कपोतालयः की नायिका कंचना एकांकी की एकमात्र स्त्री पात्र है। विषम आर्थिक परिस्थिति से खिन्न वह समय-समय पर अपने पति रत्न पर व्यंग्य करती

है।[४३] इसमें सहनशीलता का अभाव है, लेकिन उसका क्रोध क्षणिक ही होता है। वह संगीत कला में भी निपुण है। गृहस्थ के कार्यों में उलझी हुई उसने विवाह के बाद काफी समय तक अपना वायलिन नहीं छुआ है—इस बात की उसे पीड़ा है।[४४]

कृपाणिका में उर्मिला एक मात्र स्त्री पात्र है। बचपन से अनाथ उसका पालन पोषण अनाथाश्रम में हुआ है। उपीश से उसने प्रेम विवाह किया है। वह पतिव्रता है, पति के बिना क्षणभर भी जीवित रहना नहीं चाहती है। अपने पतिव्रत के प्रभाव से ही वह मरणासन्न पति को मृत्यु के मुख से बचा लेती है।[४५]

गणेशचतुर्थी में दो ही स्त्री पात्र रंगमंच पर प्रविष्ट होते हैं। शंकरराव की षोडशवर्षीया पुत्री 'रुक्मा' अशिक्षित होने से अन्धविश्वासी है।[४६] वह अतिथि सत्कार में दक्ष तथा गृहकार्यों के साथ-साथ कृषि को भी करती है। रूपक में इसकी अवतारणा का उद्देश्य पिता के हत्यारे को पहचान कर नायक हरि को मिथ्या अभियोग से मुक्त कराना है। 'भीमा' हरि की अन्धविश्वासी पत्नी है। गणेश चौथ के दिन उसने अपने पति को यात्रा करने से मना किया था। पति की हत्या के अभियोग में बन्दी बनाये जाने की घटना को वह चन्द्रदर्शन का ही परिणाम मानती है।[४७]

क्षणिकविभ्रमः की एकमात्र स्त्रीपात्र सुनीति है। यह धार्मिक प्रकृति की सरल स्वभाव वाली, पतिव्रता एवं वात्सल्यमयी है।[४८] चोरी के अभियोग में पुत्र के जेल चले जाने पर यह लोकापवाद से भयभीत है। जेल में बन्द अपराधियों के प्रति उसमें असीम घृणा है। इसकी इसी घृणा भावना को अनुभूत कर घर आया उसका पति चुपचाप घर छोड़कर चला जाता है और अन्त तक उसे अपने पति की वास्तविकता का ज्ञान नहीं हो पाता।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा की नायिका गिरिजा एक विधवा वृद्धा है। उसके जीवन का उद्देश्य अपने पुत्र की हत्या का बदला लेना है।[४९] लीलाराव ने इसके चरित्र में अन्तर्द्वन्द्व को कुशलता से प्रदर्शित किया है। इसी कारण शरण आये पुत्रहन्ता को क्षमा दान कर वह उच्च आदर्श प्रस्तुत करती है।[५०]

जयन्तु कुमाउनीयाः पुरुष पात्र-प्रधान एकांकी है। स्त्री पात्र के रूप में एकमात्र गोविन्द सिंह की पत्नी कलावती है। इसके बिना भी कथा की गति में कोई कमी नहीं आती। पति की युद्ध में मृत्यु के पूर्व इसकी भी शल्य क्रिया से मृत्यु हो जाती है। मृत्युपरान्त यह अपने पति से मिलती हुई अपनी मृत्यु का कारण बताती है।[५१] इसके कथनों से इसकी पति-भक्ति का परिचय मिलता है।

तुकारामचरितम् में तुकाराम की दो पत्नियाँ स्त्री पात्रों के रूप में हैं। ज्येष्ठा स्वभाव से सन्तोषी तथा दुर्भिक्ष में भूख से काल-कवलित हो जाती है।[५२] कनिष्ठा आवली कर्कशा है जो पति के हरि-भक्ति में लीन रहने से दुःखी एवं

परिवार की व्यवस्था के लिए चिन्तित है। वह पति को कटुशब्द कहती रहती है। भगवान् पाण्डुरंग को साक्षात् उपस्थित देख उन्हें भी खरी-खोटी सुनाने से नही चूकती।[५३]

नारकण्डाश्रमः की नायिका शकुन्तला अभिज्ञानशाकुन्तल की शकुन्तला के समान निसर्ग-प्रिया है लेकिन वह मेनका और विश्वामित्र की पुत्री नहीं है अपितु भारत-पाक-विभाजन में अपने परिवार से वियुक्त वैद्य कण्व द्वारा पालित कन्या है।[५४] पिता की अनुपस्थिति में उसने एक राजकुमार से गान्धर्व विवाह किया है, जो बाद में गोली लगने से अपनी स्मरण-शक्ति खो चुका है। प्रवास से लौटे काश्यप को जब गान्धर्व-विधि से निर्वृत्त-कल्याण शकुन्तला के आपन्न सत्वा होने का समाचार ज्ञात होता है। वह उसे पतिगृह भेज देते हैं।

अन्य गौण पात्रों में शकुन्तला की स्नेहमयी सखियाँ अनसूया व प्रियंवदा वात्सल्यमयी प्रौढ़ा गौतमी भी कथावस्तु के विकास में सहयोगिनी हैं।

मिथ्याग्रहणम् की नायिका सरला है जो मिथ्या-अभियोग से कलंकित की गई है। धर्म से वह हिन्दू है जिसका यवन युवती से सख्य भाव है। सरला मध्यवर्गीय परिवार की शिक्षित, सहिष्णु व आधुनिक विचारधारा की युवती है। आधुनिकता की छाप उसके व्यवहार, चरित्र एवं वेशभूषा में स्पष्ट परिलक्षित होती है। उसकी दृष्टि में सफल वैवाहिक जीवन के लिए पुरुष से विवाह-प्राक् परिचय आवश्यक है। सायंकाल कार्यालय में लौटकर अमीना के पति के साथ अश्वारोहण के लिए जाती है।[५५] इस प्रकार स्त्री-पुरूष सम्बन्धों को सहजता से लेना उसकी आधुनिक मनोवृत्ति का परिचायक हैं।[५६] वह अपने पति पर अगाध श्रद्धा रखती है। सरला यहाँ ऋजु स्वभाव की , पतिव्रता तथा सेवापरायणा के रूप में चित्रित है।

अमीना भी इस रूपक की महत्वपूर्ण पात्र है। यह यवन परिवार के अहमदशाह की परम्परावादी पुत्री व सरला की बालसखी है। बम्बई के धनाढ्य एवं विलासी शेख के साथ इसका विवाह होता है। परिवार में प्रचलित पर्दा-प्रथा को वह सहज स्वीकार कर लेती है। उसके विचार भी पारम्परिक हैं। इसकी दृष्टि में विवाह-पूर्व प्रीति पाश्चात्यों को शोभा देती है।[५७] स्त्री सुलभ ईर्ष्या के कारण सरला से अपने पति के सहज सम्बन्धों को भी सन्देह-दृष्टि से देखकर[५८] ईर्ष्या व घृणा करने लगती है। अन्त में वास्तविकता ज्ञात होने पर लज्जित होती हैं तथा क्षमा माँगती है।[५९]

मीराचरितम् की नायिका मीरा कृष्ण के प्रति अलौकिक प्रेम,[६०] समर्पणभाव[६१] तथा सर्वस्व त्याग[६२] की उत्कृष्टतम् विभूति है। पारिवारिक व्यक्तियों से उसे विष पान शूलशैय्या आदि अनेक कष्ट सहन करने पड़ते हैं किन्तु प्रत्येक बार अलौकिक शक्ति उसकी रक्षा करती है और अन्त में वह अपने

उपास्य कृष्ण के साथ एकात्मभाव को प्राप्त करती है। लौकिक प्रेम व गृहस्थ जीवन उसके मार्ग की बाधा नहीं बनते।

अन्य पात्रों में मीरा की सहृदया माँ, सास व ननद ऊदा हैं, जो सदैव उसे कष्ट देने में तत्पर रहती हैं तथा अन्त में मीरा की भक्ति के समक्ष नत हो जाती हैं।

ज्ञानेश्वरचरितम् में स्त्री पात्र के रूप में रुक्मिणी एवं मुक्ता अल्प समय के लिए दृग्गोचर होती हैं। रुक्मिणी ज्ञानेश्वर की माँ तथा विट्ठल की पत्नी है। यहाँ उनका पातिव्रत गुण ही प्रकट हुआ है। मुक्ता ज्ञानेश्वर की बहिन है जो सन्तोषी एवं भगवद्भक्ति से ओत प्रोत है।[६३]

बालविधवा की नायिका पार्वती अपूर्वलावण्यवती[६४] बाल-विधवा तथा अनाथ है। ससुराल में वह गृहदासी के समान जीवन-यापन करती है। स्वयं के प्रति आकृष्ट अनूप नामक युवक से अनुराग करने पर भी धर्म-भीरुता के कारण पुनर्विवाह करने से डरती है। अनूप के साथ एक बार तो वह घर छोड़ देती है परन्तु बाद में घर आ जाती है। देवरानी के कटाक्ष करने पर आत्महत्या करने को विवश हो जाती है। यहाँ वह अत्यन्त दीन-हीन दिखाई पड़ती है।

सुमित्रा पार्वती की झगड़ालू देवरानी है तथा सदैव पार्वती को अपशब्द कहकर अपमानित करती है।[६५]

वीरभा एकांकी की नायिका वीरभा का चारित्रिक विकास दो रूपों में हुआ है। एक तो देश-भक्ति भावना से ओत-प्रोत, सत्याग्रह का स्थानीय नेतृत्व करने वाली के रूप में तथा दूसरे पारिवारिक दायित्वों का वहन करने वाली वात्सल्यमयी माँ, पतिव्रता पत्नी एवं कर्तव्यपरायण-नारी के रूप में। वीरभा में आत्मबल की पराकाष्ठा है। वह दृढ़ निश्चयी है, इसी कारण स्थानीय लोगों की समस्याओं का प्रतिकार करने में समर्थ है। अत्यन्त चतुर व साहसी भी है।[६६] उसकी देशभक्ति, साहस एवं दढ़ निश्चय से क्रूर हृदय ग्रामाधिप का हृदय भी परिवर्तित हो जाता हैं।[६७] इसके अतिरिक्त अपने परिवार के लिए उसमें नारी सुलभ कोमल भावनाएँ भी हैं। पति को घायल देखकर तथा बच्चे का अपहरण होने पर वह विचलित हो जाती है।[६८]

अन्य स्त्री पात्रों में जुलूस में समाविष्ट होने वाली कतिपय स्त्रियाँ एवं वीरभा की वात्सल्यमयी माँ की अवतारणा भी की गई है। अपनी पुत्री वीरभा पर उसे गर्व है। परिवार के प्रति मोहग्रस्त होने पर भी देश-भक्ति भावना से रहित नहीं है।

हरिसिंहः रूपक में एकमात्र स्त्री पात्र नायक हरिसिंह की जननी है। राजवंश कुलोद्भवा धार्मिक यह एक कृषक की विधवा पत्नी है। विवाह पूर्व राजा मानसिंह से इसका प्रेम था। हरिसिंह वस्तुतः कृषक की सन्तान न होकर मानसिंह का पुत्र है। जननी का प्रण है कि वह अपने पुत्र को अधिकार दिलाकर रहेगी। माँ के इस रहस्य को जानकर पुत्र हरिसिंह उससे जुगुप्सा करने लगता है।

होलिकोत्सवम् की नायिका एवं एकमात्र स्त्री पात्र राधा नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से स्वीया नायिका है। वह मत्स्यजीवी गणु की पतिव्रता परम सन्तोषी, हँसमुख, त्यागमयी तथा संगीत निपुण पत्नी[६९] होने के सथ ही गोपाल की वात्सल्यमयी माँ है। होली के पर्व को उल्लासमय बनाने के लिए वह गुप्त रूप से अपना आभूषण न्यास रूप में रखकर पुत्र व पति के लिए नवीन वस्त्र एवं मिष्ठान्न की व्यवस्था करती है। उसके इस कार्य को गणु उसकी चरित्रहीनता समझ लेता है तथा शराब के नशे में पीट-पीट कर घर से निकाल देता है।[७०]

स्वर्णपुरकृषीवलाः की एकमात्र स्त्री पात्र रेवा रूपक की धुरी है। वह वृद्ध विधवा, देशभक्ति भावना से ओत-प्रोत, दृढ़ निश्चयी तथा स्वर्णपुर में सत्याग्रह आन्दोलन का नेतृत्व करने वाली है। उसी के कहने से स्थानीय समस्त कृषक भूमि कर न देने का निश्चय करके गाँव छोड़ जाते हैं। सत्याग्रह के निमित्त अपने परिवार को संतप्त देखकर भी उसकी देशभक्ति की भावना कम नहीं होती है।[७१]

वृत्तशंसिच्छत्रम् की नायिका द्वादशवर्षीया मीरा का २८ वर्षीय अनुपम से विवाह होता है। यह अपनी सास से प्रेम करता है। सास द्वारा उसके अनुचित व्यवहार के लिए फटकारने पर वह घर छोड़कर चला जाता है। पति के विषय में कुछ ज्ञात न होने के कारण लोग मीरा को विधवा समझते हैं। १८ वर्ष बाद भी वह अपने पति के न मिलने पर आत्महत्या का प्रयास करती है। त्यागी बाबा द्वारा रक्षा किये जाने पर वह उससे प्रेम करने लगती है। रामी नाम से वह विधवाश्रम में नौकरी करके अपनी मां का भरण पोषण करती है। और त्यागी बाबा से कोई भेद नहीं छिपाती है। बाद में त्यागी बाबा को ही अपने पूर्वपति के रूप में पाकर प्रसन्न होती है। रूपक में वह सुन्दरी सरल-स्वभाव तथा भावुकहृदया नारी के रूप में दिखाई पड़ती है।

मीरा की माँ इन्दिरा अपूर्व लावण्यमयी विधवा है जिसका जामाता ही उस पर अनुरक्त हो जाता है। वात्सल्यमयी वह अपनी पुत्री के प्रति कल्याण की चिन्ता से युक्त है।

श्रीमती कमलारत्नम् नचिकेतोयमसंवादम् में शरण्यु एवं उसकी आज्ञाकारिणी सेविका पिंगलक्ष्मी दो ही पात्र हैं। शरण्यु यम की अर्धांगिनी है। इसे प्रकृति एवं जीवजन्तुओं से स्नेह है। अतः वह स्वयं अपनी वाटिका का सिंचन करती है। अपने कुत्ते एवं यम के वाहन को सस्नेह दुलारती है। नचिकेता को भी पुत्रवत् स्नेह देती है।[७२]

विक्रमवेतालनाटिका में सोम प्रभा प्रधान तथा उसकी माँ एवं शशि प्रभा अप्रधान स्त्री पात्र हैं। सोम प्रभा हरिस्वामी की असामान्य रूपलावण्यवती कन्या है।[७३] यद्यपि यह वर्णाश्रम व्यवस्था के प्रति आस्था रखती है, फिर भी वह पति

के रूप में किसी ज्ञानी, विज्ञानी एवं शूरवीर की ही आकांक्षा करती है।[७४] लज्जालु प्रकृति की होने से स्वयं के विवाह के सम्बन्ध में अपनी माता से चर्चा करने में भी संकोच का अनुभव करती है।

विवेकानन्दस्मृतिः में स्त्री पात्रों का अभाव है। 'विवेकानन्द विजयम्' में भी स्त्री पात्रों की स्थिति गौण है। यहाँ नरेन्द्र की वात्सल्यमयी, धार्मिक माँ भुवनेश्वरी, इनकी कर्तव्यपरायण सेविका लक्ष्मी तथा रामकृष्ण परमहंस की शिष्या विधवा शेफालिका की अवतारणा चरितनायक विवेकानन्द की दयालुता, वीरता आदि चरित्र के गुणों को उत्कर्ष प्रदान करने की दृष्टि से की गई है।

डॉ० वनमाला भवालकर विरचित **पाददण्डः** में ललिता, शान्ता व निशा—तीन नारी पात्रों की अवतारणा की गई है। एकांकी की नायिका ललिता अनिन्द्य सुन्दरी, सुकुमार हृदया,[७५] संगीतकला में निपुण[७६] विश्वविद्यालयीय शिक्षा प्राप्त बुद्धिमती कन्या है। वह सुधीर से प्रेम करती है। भावुक हृदया होने पर भी वह स्वाभिमान से युक्त है। अतः सुधीर जब निशा का परिचय अपनी भावी पत्नी के रूप में कराता है तो उसे विश्वासघाती समझकर कटु शब्दों में फटकारती है।[७७] स्त्री सुलभ ईर्ष्या उसमें विद्यमान हैं। अतः निशा को भी अपशब्द कहती है।[७८] सुधीर के पंगु होने का रहस्य जानते ही उसके तथा सुधीर के मध्य भ्रान्ति समाप्त हो जाती तथा वह सहर्ष सुधीर को अपना लेती है।[७९]

शान्ता सुधीर की बड़ी बहन है। सुधीर के प्रति वात्सल्यातिरेक के कारण वह उसकी प्रेयसी ललिता पर भी सन्देह करने लगती है कि पता नही पंगु रूप में सुधीर को वह स्वीकार करेगी अथवा नहीं। यहाँ सर्वत्र वह सुधीर के प्रति चिन्तित दिखाई देती है।

निशा ललिता की प्रतिपक्षी पात्र है। वह कुरूप किन्तु संगीत-कला में निपुण तथा सेवापरायण है।[८०] यह जानते हुए भी कि सुधीर ललिता से प्रेम करता है वह पंगु सुधीर की सेवा करके उसे अपनी ओर आकृष्ट करना चाहती है। स्त्री सुलभ ईर्ष्या के कारण सुधीर के समक्ष कभी-कभी ललिता की निन्दा भी करती है[८१] तथा ललिता के आगमन से प्रसन्न भी नहीं होती है, परन्तु अन्त में इसकी उदारता प्रकट हुई है, जब वह सुधीर से सम्बद्ध ललिता की भ्रान्ति को दूर कर उन दोनों का मिलन कराती है।[८२]

पार्वती-परमेश्वरीयम्[८३] की नायिका पार्वती सुकुमारी, अपूर्व सुन्दरी षोडशवर्षीया संगीतनृत्य-विशारद बाला है। नारद के आगमन पर नृत्योपचार से पूजा करती है। नारद के अनुसार पार्वती साक्षात् मेधाविनी कला, मूर्तिमती सत्क्रिया एवं लावण्य का विभूषण है। वह संकोचशीला, कुलांगना है। रूप द्वारा शिव को प्राप्त करने में असमर्थ वह घोर तपस्या से उन्हें वश में करती है। यहाँ वह अपने प्रसिद्ध पौराणिक रूप में ही दिखाई गई है।

अन्य पात्रों में पार्वती माँ मैना, उसकी सखियाँ जया-विजया तथा कामदेव की पत्नी रति भी रंगमंच पर कुछ समय के लिए दिखाई देती हैं किन्तु उनकी भूमिका साधारण ही है ।[८४]

रामवनगमनम् में कौसल्या, कैकयी, सुमित्रा, सीता तथा मन्थरा-स्त्री पात्र हैं । नाटकीय संविधान की दृष्टि से कैकेयी का चरित्र प्रधान है । आरम्भ में यह ममतामयी है[८५] लेकिन मन्थरा के भड़काने से स्वार्थविवशा राम को वनवास तथा भरत को युवराज पद दिलाने में समर्थ होती है । वनगमन के समय भी राम लक्ष्मण व सीता को वन जाते देख व्यथित होती है परन्तु मन्थरा के संकेत से पुनः कठोर हो जाती है । ईर्ष्या के करण कौसल्या को राजमाता बनते नहीं देख सकती है । आरम्भ में राजा दशरथ कौसल्या एवं सुमित्रा की अपेक्षा कैकेयी से अधिक प्रेम करते थे, किन्तु रामवनवास की माँग से उससे घृणा करते हैं ।[८६]

कथावस्तु के विकास की दृष्टि से मन्थरा का चरित्र भी महत्वपूर्ण है । यह कैकेयी की हितेच्छु दासी है ।[८७] स्वभाव से स्वार्थी तथा दुष्ट प्रकृति की है । इसी के बहकाने पर वात्सल्यमयी कैकेयी राम के लिए वनवास माँग कर भरत को युवराज बनाती है । इस प्रकार कथा के विकास में इसकी भूमिका विशेष है ।

दशरथ की अन्य दो रानियाँ—कौसल्या व सुमित्रा राम के वनगमन से दुःखी होती हैं । सीता राम की सहधर्मचारिणी तथा सुख दुःख में उनकी सतत अनुगामिनी होने से राम के साथ ही वन जाती हैं ।[८८]

सीताहरणम् में सीता एकमात्र स्त्री पात्र हैं। वह अत्यन्त भोली-भाली प्रकृति प्रेमी तथा अतिथि सेवी हैं । मोर एवं हिरन उसे बहुत प्रिय हैं । हाथ से ताली बजाकर वह मोरों को नचाती हैं ।[८९] अतिथि सेवापरायणा होने के कारण लक्ष्मण रेखा के बाहर आकर रावण को भिक्षा देती है । स्वर्ण मृग देखकर वह विवेक शून्या हो जाती है तथा उसे प्राप्त करने का आग्रह करती है ।[९०]

अन्नदेवता में तीन स्त्री पात्र हैं। लीला, उसकी अग्रजा कमला तथा देवदूती । चरित्र-चित्रण की दृष्टि से लीला का चरित्र विशेष है । यह आठ वर्ष की अत्यन्त हठी बालिका है । इसे मिष्ठान्न बहुत पसन्द है । मिठाई न मिलने पर वह भोजन भी नहीं करती है । उसे इस बात का दुःख है कि जब वह चलचित्र देखने को कहती है, तब पिता कहते हैं कि बालिका हो, सिनेमा नहीं देखना चाहिए और जब मिठाई माँगती है तो कहते हैं कि बड़ी हो गई हो, हठ नहीं करना चाहिए ।[९१] स्वप्न में देवदूती की कृपा से अन्न के महत्व को समझती है ।

देवकीमेनन् रचित **कालीदर्शनम्** में शारदा, देवीकाली तथा जलाहरण को जाती कतिपय महिलाएँ रंगमंच पर अवतरित होती हैं । चरित्रचित्रण की दृष्टि से शारदा एकांकी की नायिका है। ये रामचन्द्र तथा श्यामसुन्दर देवी की वात्सल्यभाजन पुत्री व रामकृष्ण देव की सहधर्मचारिणी है ।[९२] एकांकी में वह

देवी की अनन्य भक्त व पति की उनमत्तावस्था के प्रति चिन्तित एवं भावुक दिखाई पड़ती है। इनकी निश्छलता तथा अनन्यनिष्ठा से प्रसन्न देवी स्वप्न में साक्षात् स्पर्श कर इनको पति दर्शन का आशीर्वाद देती हैं।

कुचेलवृत्तम् में रुक्मिणी तथा कुचेल की पत्नी दो स्त्री पात्र हैं। कुचेल सुदामा की पत्नी दीन-दरिद्र, हठी किन्तु कृष्णभक्त हैं।[९३] हठपूर्वक वह अपने पति को कृष्ण के पास दारिद्र्यनिवारण हेतु भेजती है।[९४]

सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् में सैरन्ध्री तथा उसकी सखी सुशीला स्त्री पात्र हैं। सैरन्ध्री शारीरिक दृष्टि से तीन स्थानों से कुबड़ी, कंस की दासी है। वह अत्यन्त भावुक तथा कृष्ण भक्त है। इसकी भक्ति, एवं आत्मदर्शन की व्याकुलता देखकर अंगराग लगाने के प्रतिदान में कृष्ण इसे अपूर्व सुन्दरी बना देते हैं।[९५]

ब्रह्मचारिणी बेला देवी रचित **'नचिकेतश्चरितम्'** में नारी पात्रों का अभाव है। 'महीयसी गार्गी' में गार्गी रूपक की प्रमुख पात्र है। यह गर्ग ऋषि की पुत्री, परम विदुषी, वेद पारंगमा, आध्यात्मिक प्रकृति की तथा ब्रह्मज्ञान की जिज्ञासु है।[९६] इसे भक्तिपथ की अपेक्षा ज्ञानमार्ग अधिक प्रिय है। इसकी जिज्ञासाएँ अत्यन्त सूक्ष्म व गम्भीर विचारमूलक होती हैं।

गर्ग ऋषि उसकी जिज्ञासा का यथोचित उत्तर देकर उसकी ज्ञानवृद्धि करते रहते हैं। राजा जनक द्वारा आयोजित ब्रह्मज्ञानियों की सभा में वह सोत्साह भाग लेकर तथा याज्ञवल्क्य के साथ शास्त्रार्थ कर अपने ज्ञान एवं तार्किक शक्ति का परिचय देती है।[९७] शास्त्रार्थ में पराजित होने पर भी सभी सभापद इसके ब्रह्मज्ञान की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं।

एकांकी की दूसरी पात्र मैत्रेयी है।[९८] यह गर्ग मुनि के आश्रम में निवास करने वाली गार्गी की सखी है।ज्ञानमार्ग, सृष्टितत्व आदि इसके लिए अगम्य हैं। अतः यह भक्तिपथ को ही सुगम मानती है।

विराड्गृहम्[९९] रूपक में स्त्री पात्रों के रूप में, राजा विराट् की अलंकार प्रिया विलासवती पत्नी रानी सुदेष्णा, इनकी दो दासियाँ खण्डिका व लतिका, चामर वाहिनी, सुदेष्णा की पुत्री उत्तरा तथा सैरन्ध्री रूपधारिणी पाण्डव पत्नी द्रौपदी के दर्शन होते हैं। कथावस्तु के विकास की दृष्टि से सैरन्ध्री तथा उत्तरा का चरित्र गत्यात्मक तथा प्रभावशाली है। द्रौपदी अज्ञातवास के समय रानी सुदेष्णा की सैरन्ध्री के रूप में परिचर्या करती है। पाण्डव पत्नी एवं राजमहिषी होने का गर्व उसमें प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। अतः दासी का कार्य स्वीकार करने से पूर्व वह अपनी तीन शर्तें दृढ़तापूर्वक रानी को कहती है कि किसी पुरुष के सामने नहीं निकलेगी, उच्छिष्ट नहीं खायेगी तथा चरण नहीं दबायेगी। विविध प्रकार की माल्यरचना, वेणी रचना, वसन रंजन, शय्यारचना तथा संगीत आदि कार्यों में वह निपुण है। सुदेष्णा का भाई सैरन्ध्री रूप धारिणी द्रौपदी जो अपूर्व सुन्दरी है[१००] के प्रति मुग्ध हो जाता है।

उत्तरा राजा विराट् की पुत्री तथा बृहन्नला-रूपधारी अर्जुन की शिष्या है। वह संगीत-नृत्यकला में कुशल, कोमल प्रकृति की लेकिन किंचित् हठी बाला है।[१०१] संगीत के मध्य अर्जुन-कृष्ण के सख्यत्व के प्रति जिज्ञासा शान्त कराकर ही वह आगे पाठ पढ़ती है। अज्ञातवास पश्चात् अर्जुन राजा विराट् से उत्तरा की अपनी पुत्रवधू के रूप में याचना करते हैं।[१०२]

डॉ० वीणापाणि पाटनी के **निम्बपत्राणि** में स्त्री पात्रों का अभाव है। **प्रतिबुद्धा** में सुलेखा मुख्य नारी पात्र है। यह आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर, चिन्तनशील, जागरूक तथा आधुनिक-बोध से सम्पन्न, नौकरी करने वाली तात अस्मिता की खोज में प्रयासरत हैं। इसे घर एवं कार्यालय के समस्त मोर्चों पर संघर्ष करना पड़ता है। जिससे कभी-कभी उसे उदासी एवं निराशा भी व्यथित करती है।[१०३] यह अपने गृहस्थ जीवन में सन्तुलन लाने की इच्छा से भी युक्त है, अतः नौकरी से त्यागपत्र भी दे देती है। लेकिन अपनी आर्थिक एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिए गृह एवं कार्यालय के कर्मों में समन्वय करने के दृढ़ संकल्प के लिए तथा पति के साथ पारिवारिक दायित्व के संवहन के लिए अपना त्यागपत्र फाड़ देती है।[१०४] वस्तुतः आधुनिक नारी की मानसिकता को शब्दबद्ध करने में, उसके संघर्षशील व्यक्तित्व को निरूपित करने में और उसकी जागरूक व प्रगतिशील चेतना को सुलेखा के माध्यम से प्रस्तुत करने में नाट्यकर्त्री सफल रही है।

अन्य स्त्री पात्र शाकविक्रेत्री का चरित्र यहाँ अमहत्वपूर्ण है।

यथार्थ्यगरलम् में पूर्णिका, श्रीमती शुक्ला, श्रीमती शाह तथा पूर्णिका की प्रतिवेशिनी रंगमंच पर उपस्थित होती है। यहाँ पूर्णिका के अतिरिक्त अन्य पात्रों का चरित्र विकसित हो पाया है। पूर्णिका देवदत्त की पत्नी है। आर्थिक चिन्ता से त्रस्त सदैव पति पर कटाक्ष करती है।[१०५] गृहस्थी के पालन-पोषण के अतिरिक्त उसे कुछ सूझता ही नहीं है।[१०६] आर्थिक संकट से जूझती हुई वह दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रति चिन्तित दिखाई पड़ती है।

नारददौत्यम् में नीता तथा **कविकालिदासीयम्** में भोज की पत्नी लीलावती, कालिदास की प्रेमिका विलासवती तथा कवयित्री सीता के रूप में स्त्री पात्रों का मंच पर प्रवेश हुआ है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से ये पात्र विशेष नहीं हैं। इस प्रकार वीणापाणि पाटनी ने प्रतिबुद्धा एकांकी में ही नारी-पात्र की मानसिकता का सूक्ष्म निरूपण किया है।

नलिनी शुक्ला के **राधानुनयः** की केन्द्रीय पात्र राधा है। प्रथम एवं अन्तिम दृश्य में यह षोडशकलाकलित सगुण ब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति कृष्ण की अमृताकला, आदि जननी एवं भगवती रूप में स्तुत हैं।[१०७] तृतीय दृश्य में इनकी विरहोत्कण्ठिता रूप प्रकट हुआ है।[१०८] कृष्ण को अन्य सखियों के साथ

रासासक्त देखकर ईर्ष्यामान से कषायित कृष्ण के आगमन पर कटूक्तियों से उन्हें भेदती हैं। कृष्ण के अनुनय से ही उनका मान दूर होता है। अन्य स्त्री पात्रों में कुछ सखियाँ भी कृष्ण के साथ रास करती हुई रंगमंच पर दिखाई पड़ती हैं। इनके साथ कृष्ण को नर्तन करते देख कर ही राधा मान करने लगती है।

पार्वतीतपश्चर्या में पार्वती संगीतिका की नायिका है जो अनिन्द्यसुन्दरी, शिवानुरक्ता अपने पौराणिक रूप में ही दृग्गोचर होती है। अन्य पात्रों में पार्वती की माँ मैना, सखियाँ जया-विजया तथा मदन पत्नी रति की अवतारणा हुई है। इनका चरित्र सामान्य ही है।

मुक्तिमहोत्सवः[१०९] में वसुन्धरा मुख्य नारी पात्र है। यह सुशिक्षिता परम्परा विरोधी, यथार्थवादी तथा नारी स्वातन्त्र्य की पक्षधर है। अतः रंगमंच पर बालिकाओं के कार्यक्रम को वह कला मानती है जिससे मनोबल, आत्मविश्वास एवं व्यक्तित्व विकास होता है। उसके अनुसार दीर्घ समय पर्यन्त आर्थिक अथवा मानसिक पराधीनता जीवन को प्रेरणाशून्य, बोझिल और उत्साह शून्य बनाकर व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में बाधक है। विशाखा भी रूपक की महत्वपूर्ण नारी पात्र है। यह परम्पराप्रिय, आदर्शवादी तथा नारी की स्वतन्त्रता को उच्छृंखलता मानती है। अपने पति प्रमोद से यह अत्यन्त भयभीत रहती है। जो इसे घर से बाहर भी नहीं जाने देता है। रंगमंच पर कार्यक्रम प्रस्तुत करने वाली लड़कियाँ इसकी दृष्टि में निर्लज्ज एवं धृष्ट हैं।[११०] अन्तिम दृश्य में इसमें कुछ दृढ़ता आ जाती है तथा नारी परतन्त्रता के समर्थक अपने पति का विरोध करने लगती है। अन्य स्त्री पात्रों में अनुराधा की आधुनिका पुत्री रागिनी, दो वृद्धाएँ एवं कतिपय बालिकाओं की भी अवतारणा की गई है।

मिथिलेश कुमारी मिश्रा द्वारा रचित **आम्रपाली** नाटिका में तीन स्त्री पात्र हैं।[१११] आम्रपाली तथा उसकी दो सखियाँ-वसुमती व कंचना। नाटिका की नायिका आम्रपाली है वह उच्च कुलोत्पन्न श्रेष्ठी कन्या है। आरम्भ में यह अजातशत्रु के प्रति पूर्व राग से युक्त है[११२] परन्तु भाग्य की विडम्बना से नगर वधू बना दी जाती है। उसमें प्रेम भावना की अपेक्षा देशप्रेम एवं कर्तव्य की भावना अधिक है। अतः स्वयंवर में विलम्ब से उपस्थित अजातशत्रु द्वारा राजमहिषी बनाने के प्रस्ताव को वह गणराज्य के नियमों को सर्वोपरि मान कर ठुकरा देती है। प्रणय-याचना में आहत आजतशत्रु से गणराज्य की प्रतिष्ठा के लिए एकाकी ही टक्कर लेने को तत्पर होती है। तृतीय अंक में आम्रपाली का निर्वेद प्रकट हुआ है।[११३] स्वयं को अकिंचन मानती हुई बुद्ध की शरण में जाना चाहती है। गुरुजनों के प्रति उसमें विनय एवं सम्मान है।[११४] अतः श्रमणों का उपहास करने वाली कंचना को समझाती है। बुद्ध के अनुसार नगर वधू होने पर भी वह आदरणीया, अद्वितीय एवं अवाङ् मनस्गोचर है।[११५] युद्ध में घायल अजातशत्रु को वह अपनी सेवा से स्वस्थ करती है। अन्त में अजातशत्रु के प्रति उसका

वात्सल्य प्रकट हुआ है।[११६] रति नहीं। अत्यन्त बर्बर होने पर भी अजातशत्रु आम्रपाली की आज्ञा को शिशुवत् शिरोधार्य करता है।[११७] यही आम्रपाली के जीवन की महत्ता है।

कंचना आम्रपाली की स्वभावतः मधुर एवं अत्यन्त मुखर सखी है। पुरुषवर्जित उद्यान में अजातशत्रु के प्रवेश करने पर उसे उग्रता से डाँटती है। वह हास्य-प्रिया तथा प्रत्युत्पन्नमति है। इसके विपरीत वसुमती आम्रपाली की स्वभावतः गम्भीर तथा मितभाषिणी सखी है।

डॉ० मिथिलेश कुमारी द्वारा ही रचित **दशमस्त्वमसि** एकांकी संग्रह के 'अलक्ष्यं दूरदर्शनम्', 'चराचरसंचित कर्मयंत्रितम्', 'दशमस्त्वमसि', 'भक्तराजः', 'स चाप्यस्ति रजक एव, तथा 'सत्यमेव जयते' एकांकियों में स्त्री पात्रों का अभाव है। ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः तथा उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् में स्त्रीपात्र अत्यल्प एवं चरित्र चित्रण एवं कथावस्तु के विकास की दृष्टि से गौण हैं।

ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः में एकमात्र स्त्रीपात्र के रूप में एक वृद्धा शारदा है। वह वाक्चातुर्य से युक्त तथा व्यवहार कुशल है।[११८] अपने पुत्रों एवं पति की मूर्खता से परिचित होने के कारण उन्हें पशु कहती है तथा सेठ के यहाँ मूर्खता के करण बन्दी बनाये गये उन चारों को अपनी व्यवहार कुशलता के कारण मुक्त कराती है।

उच्चासनास्थस्य विकल्पन फलम् में एक ग्राम्या तथा कुछ अप्सराएँ थोड़े समय के लिए मंच पर आती हैं। नन्दन कानन में ग्रामीण द्वारा श्रम दूर करने की कल्पनामात्र से तिलोत्तमा उर्वशी आदि अप्सराएँ प्रकट होकर उसकी सेवा करती हैं, जो ग्रामीण की पत्नी के उग्ररूप को देखकर नौ-दो-ग्यारह हो जाती हैं।

ग्राम्या एकांकी के नायक ग्रामीण की पत्नी है। नाट्यकर्त्री ने इसे विशेष नाम से अभिहित न कर ग्राम्या पद से ही सम्बोधित किया है। यह कर्कशा एवं झगड़ालू स्वभाव की जड़मति महिला है।[११९] अतः अप्सराओं से सेवित अपने पति को विश्वासघाती मानकर झाड़ू से पति की पिटाई करती है।

न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः में यशोदा तथा पार्वती—दो ही स्त्री पात्र हैं। पार्वती एकांकी की नायिका है। यह भोली भाली अनपढ़, अनाथ एवं सेवापरायण ग्रामीण कन्या है। यशोदा ने उसका पालन-पोषण किया है, अतः वह उसकी मनोयोग से सेवा करती है। सत्याग्रह, महात्मा गान्धी आदि से अपरिचित होने के करण वह उन्हें रामादिवत् अवतार मानती है। उसका पति सत्याग्रह आन्दोलन में आजीवन कारावास का दण्ड पाता है। माँ उसे समझाती है कि वह अब कभी वापस नहीं आयेगा, लेकिन पति की चिर प्रतीक्षा में वह अपने जीवन की सार्थकता मानकर भारतीय नारी का उच्चादर्श प्रस्तुत करती है।[१२०]

माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः में मंगला एकमात्र स्त्रीपात्र है। वह सेवाभावी, गृहकार्यों में निपुण तथा राष्ट्रभक्ति भावना से ओतप्रोत देवव्रत की पुत्रवधू व वेदप्रकाश की पत्नी है। गोवत्स से उसका सम्भाषण[१२१] देशभक्ति से आप्लावित हृदय का परिचायक है। पति के सत्याग्रही होने के कारण पुलिस की प्रताड़ना उसे आत्महत्या के लिए प्रेरित करती है परन्तु पति दर्शन की लालसा से वह जीवित रहती है। पुलिस द्वारा पिता की मृत्यु तथा घर को जलाने का समाचार सुनकर खिन्न एवं हताश वेदप्रकाश सत्याग्रह का मार्ग छोड़ना चाहता है। तब मंगला ही उसे पुनः राष्ट्रमुक्ति के लिए प्रेरित कर अपने दृढ़ संकल्प का परिचय देती है।[१२२]

भूमिकन्या में सीता नाटक की केन्द्रीय पात्र होने से नायिका है। यह राम की पत्नी है। लोकाराधन में लगे राम सीता को समय नहीं दे पाते हैं, अतः वह वनवास के साहचर्य को ही श्रेष्ठ मानती है।[१२३] सीता पतिव्रता है लेकिन अग्नि परीक्षा को लेकर इनके मन में आक्रोश है। हँसमुख, विनोदिनी एवं ऊँच-नीच की भावना से रहित होने से दासियों के प्रति वह सख्यभाव से व्यवहार करती है। दस्यु, अनार्य एवं शूद्र के प्रति समभाव के कारण उन्हें अपना भाई मानती है। दोहद पूर्ति के बहाने राम के द्वारा निर्वासित किये जाने के कारण उन्हें राम के प्रति रोष है।[१२४] उत्तररामचरित की सीता राम की कर्तव्य वेदी पर स्वयं को चढ़ाकर भी सन्तुष्ट है परन्तु भूमिकन्या की सीता ओजस्विनी है। भरी सभा में वह राम पर आक्षेप लगाती है।[१२५] वह रामराज्य की प्रतिष्ठा के लिए शपथ नहीं लेती अपितु समग्र नारी जाती की प्रतिष्ठा के लिए आत्मशुद्धि की शपथ लेकर अन्त में भूमि में विलीन हो जाती है।

भूमिकन्या में सहयोगी पात्रों के रूप में उर्मिला, वासन्ती एवं कुशिका का नाम उल्लेखनीय है। भूमिकन्या की उर्मिला ओजस्विनी वाचाल एवं आक्रोशपूर्ण हैं। वासन्ती विजय की पत्नी एवं सीता की सेविका है। कुशिका सीता की अन्य सेविका तथा स्वभाव से चाटुकार है। इसी के कारण विजय अपनी पत्नी वासन्ती का परित्याग कर देता है।[१२६]

सुधा सहाय विरचित **परशुराम प्रतिज्ञा** में जमदग्नि की पत्नी रेणुका एवं विष्णुपत्नी लक्ष्मी की अवतारणा की गई है। चरित्रचित्रण की दृष्टि से रेणुका का चरित्र महत्वपूर्ण है। यह रूपक में वत्सलता, पातिव्रत, कातरता एवं क्षमाशीलता गुणों से युक्त है। इन्हीं के कहने पर परशुराम क्षत्रियवध से विरत होते हैं।[१२७]

नचिकेतः कुत्रऽगतोऽसि में दो स्त्री पात्र हैं—सिसृक्षा एवं विज्ञादेवी। विज्ञादेवी एकांकी की धुरी हैं। यह यम की पत्नी लोभी[१२८] तथा उनकी अनुपस्थिति में विश्वविद्यालय की समस्त शैक्षणिक गतिविधियों का संचालन करती है। यह एक भ्रष्ट तथा लोभी शिक्षाधिकारी का प्रतिनिधित्व करती है। शिक्षा मंत्री के पद के लोभ में विश्वविद्यालय के समस्त विभागों में स्थान रिक्त न

होने पर भी सफल काम को प्रवेश देती है। लोभी होने के कारण ही इनमें चाटुकारिता की प्रवृत्ति भी अधिक है। द्वारपाल के अनुसार विज्ञा देवी प्रताड़ना के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे सकती है।[१२९]

यौतुक पातकं परम् की सरला क्षेमकरन की पत्नी तथा मनीष की माँ है। यह दहेज की लोभी[१३०] एवं क्रूर हृदया है। दहेज के लोभ में उसने अपनी पूर्व पुत्रवधू को पति व पुत्र के सहयोग से मार डाला। अपने अभियन्ता पुत्र का विवाह प्रचुर दहेज मिलने की आशा में धनाढ्य घर में करना चाहती है। अन्त में अपने दुष्कृत्य के कारण आजीवन कारावास से दण्डित की जाती है।

एकांकी की अन्य पात्र प्रभा है जो महिला राजसेवा में कार्यरत है।[१३१] देखने में अत्यन्त सुन्दर है। गुप्तचर अधिकारी इसकी सहायता से दहेज लोभी, हत्यारे अपराधियों को पकड़ने में समर्थ होता है।

सुकन्या नामक रूपक की नायिका सुकन्या[१३२] महाराज शर्याति की अत्यन्त सुन्दर कन्या है। इसके बाल सुलभ चापल्य से ऋषि च्यवन की आँखे नष्ट हो जाने पर उनकी अर्धांगिनी बन कर सेवा करती है। यहाँ उसका पातिव्रत गुण प्रमुखतः उभरा है। उसके सतीत्व से प्रसन्न होकर अश्विनी कुमार ऋषि च्यवन को स्वस्थ, सुन्दर व युवा बना देते हैं।

एकांकी में सुकन्या की सखियों के रूप में दो स्त्री पात्र और हैं जिन्हें प्रकृति से प्रेम न होने पर भी राजकन्या सुकन्या के साथ वन-विहार के लिए आना पड़ता है।

महिला नाट्यकारों की रचनाओं में स्त्रीपात्रों के चारित्रिक विश्लेषण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि आज के रूपकों में प्राचीन नाट्यशास्त्रीय नायिका भेद की अवहेलना की गई है। अपने पारम्परिक शृंगारी रूप को छोड़कर नारी सामाजिक कार्यों में भी सक्रिय हुई है। भौतिक उन्नति के युग में नारी और पुरुषों में बराबर उपलब्धियों की प्रतिद्वन्द्विता प्रतिबुद्धा एकांकी में देखी जा सकती है। इन महिला नाट्यकर्त्रियों की नायिका शहर एवं गाँव दोनों का ही प्रतिनिधित्व करती है। राजवर्गीय नायिकाओं का पूर्णतः अभाव है, अतः तदनुरूप स्वीया, परकीया, मुग्धा, मध्या आदि भेदों को भी कोई महत्व नहीं दिया गया है। रूपकों में संख्या की दृष्टि से नारी चरित्र पुरुषपात्रों की अपेक्षा अल्प होते हुये भी चारित्रिक दृष्टि से सभी वर्गों से सम्बद्ध है तथा मंचगत व्यापार को बढ़ाने में समर्थ है।

संदर्भ

१. समासतस्तु प्रकृतिस्त्रिविधा परिकीर्तिता।
पुरुषाणामथ स्त्रीणामुत्तमाधममध्यमाः॥–नाट्यशास्त्रम्, २४/१,२.

२. वही, २४/१४२-१४७.

३. वही, २४/२०५-२१२.
४. वही, २४/३४.
५. वही, २४/९६-१३५.
६. वही, २४/२२६.
७. दशरूपकम्, २/१५-२२.
८. वही, २/२३-२७.
९. (क) अलंकारास्तु नाट्यज्ञैर्ज्ञेया नाट्यरसाश्रयाः।
यौवने ह्यधिकाः स्त्रीणां विकाराः वक्त्रगात्रजाः॥– नाट्यशास्त्रम्, २४/४.
(ख) आदौ त्रयोऽगजाः प्रोक्ता दश स्वाभाविका परे।
अयत्नजास्तथा सप्त रसभावोपवृंहिता॥– वही, २४/५.
१०. वही, २४/८-२५.
११. साहित्ययदर्पणः, ३/१०६-१०.
१२. दशरूपकम्, २/२९.
१३. दौवारिकः– शृष्वन्तु सर्वे मान्यजनाः। आगच्छति अत्र अस्माकं अशेष श्रद्धाभाजनं राजकन्या, प्रबलपराक्रान्तगौडाधिपतिश्रीलः श्रीयुक्तमाणिक्येश्वरसिंहमहोदयस्य परमादरणी दुहिता, अत्यन्तगुणालंकृता, असीमसौन्दर्यलसितालक्ष्मीसरस्वतीसमन्वयरूपा, सार्थकनाम्नीं श्रीलश्रीयुक्ताविद्यावतीकमलादेवीमहोदया।– कविकुलकोकिलम्, पृ० ३३.
१४. विद्यावती–(सदम्भम्) हाः हाः हाः! ममानन्दभण्डारं पूर्णं जातम्। हाः हाः हाः मूढा, अवोधा, अर्वाचीनाः सर्वे पुरुषाः विश्वब्रह्माण्डे। अद्याप्यपराजिता विराजते केवलं विद्यावती कमलानाम्नी एका ललना, जगत्यद्वितीयाऽतुलनीयाऽनमनीया च x x x अहो गौरवम्।– कविकुलकोकिलम्, पृ० ३७.
१५. वही, पृ० ५५-५६.
१६. वही, पृ० ६५.
१७. विपुलविक्रमः–(स्वगतम्) मुग्धोजातो हमस्या असीमसौन्दर्येण, अपूर्वसाहसिकत्वेन।– देशदीपम्, पृ० १८.
१८. आराधना– ममादरिणी कन्यका तु सातिशय सरला, कृत्रिमताशून्या, देशभक्ता च। –वही, पृ० २७.
१९. पंकजनयना– असीमा खलुभवतः कृपा। अहन्तु मात्रापित्रोरनुमतिक्रमेण युद्धक्षेत्रे शुश्रूषाकारिणीरूपेण गमनोद्यता, अस्माकं प्राणप्रियजोयानभ्रातृवृन्दस्य सेवार्थम्। –वही, पृ० २८.
२०. देशदीपम्, पृ० २८.
२१. निवेदितनिवेदितम्, पृ० ११.
२२. निवेदिता– x x x भवतु बहुसमयो वृथा व्ययितः। मास्तु ममकोऽपि सहायः, अहं एकाकिन्येव इमं मार्गं परिष्करिष्यामि स्वहस्ताभ्याम्। भारतभूमि मम प्रियतमा देशमाता तस्या प्रत्येकं धूलकणापि परमपवित्रा x x x ततो यदि मार्ग मार्जन काले अहं x x x पवित्री भविष्यामि।– वही, पृ० ७१.
२३. वही, पृ० ७३, ९३.
२४. ब्रह्मपद– देव। सप्तदशवर्षात् प्राक् देवविग्रहपादस्पर्शनकृता प्रतिज्ञा भवदादेशेन अद्य मया प्रथममेव भग्ना, किन्तु कथं भवान् अप्रकृतिस्थ इव परिलक्ष्यसे ...।

प्रभञ्जनः-(साश्रुनेत्रम्) नहि नहि x x x सा तव प्राणप्रिया कमलकलिका ममैव प्राणसमा दुहिता।-पल्लीकमलम्, पृ० ५६.

२५. वही, पृ० ५.

२६. वही, पृ० ११, १२, २०.

२७. वही, पृ० ३२.

२८. वही, पृ० ६३.

२९. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० १३.

३०. वही, पृ० ८.

३१. वही, पृ० १६.

३२. कमलकलिका-(दृढा) न कदापि न x x x पुनरपि वदामि अहं श्री प्रचण्ड प्रतापस्य विवाहप्रस्तावं घृणाभरेण प्रत्याख्यामि घृणाभरेण x x x द्विधाशून्यभावेन दर्पसहायकेन।-वही, पृ० २४.

३३. वही, पृ० ५१-५२.

३४. रासमणिः-देवमन्दिरे पार्थिव विषय चिन्तनं हि महादोषावहम्। श्री गदाधरस्य संगीते दत्तचित्तापि सहसा अहं व्यवसाय विषयक चिन्ताभिः आक्रान्ता x x x सर्वज्ञः श्रीगदाधरस्तज्ज्ञात्वा शिक्षादानार्थं एतद् कृतवान् x x x।-युगजीवनम्, पृ० २३.

३५. युगजीवनम्, पृ० ४०.

३६. मीरा-(सनैष्ठुर्यम्) यदि वत्सयोर्जनकमधिकृत्य वृत्तमिदं स्यात्तदा न किमपि श्रोतुमुत्सहे।-अनूपः पृ० ८.

३७. भिषक्-आत्मनिर्वासनात्मत्यागयोः कारणगोपयितुं प्रयोजनं गूढतरं स्यात्किलतस्य।
मीरा-नात्मत्यागः परं भोगासक्तिः।-वही, पृ० ११.

३८. असूयिनी-मंजूषा १२:११, पृ० २९८.

३९. रेवा-सपत्नीकृतापमानः कथन्नु सह्यो भवेत् माम्।-वही, पृ० ३०४.

४०. वही, पृ० ३०३, ४.

४१. रेवा-सत्याग्रहिणां कोलाहलः श्रूयते, आकर्ण्य हा यदाकदाप्येवं जयनिर्घोषाः श्रुतिगोचरा भवन्ति, रोमोद्गमो मे जायते। धिक्करोति मेऽन्तरात्मा (सखेदं) देशद्रोहिणमिवात्मानं भावयेऽहम्।-कटुविपाकः मंजूषा १०:४, पृ० ८४.

४२. वही, पृ० ८६, ८७.

४३. (क) कञ्चना-(विलोक्य सविस्मयम्) हा किमिति कपोतपालिकैषा निर्मापिता भवता? किमतिमात्रं धनं वर्तते।-कपोतालयः-मंजूषा १०:४, पृ० २२९.
(ख) कंचना-श्लाघनीयं खलु। परं लेखनैपुण्यं न कदाचित् पर्याप्तं स्यात्।
न ज्ञायते, मासान्तोऽयम्, कोशे च काणवराटिकापि न स्यादधुना।-वही, पृ० २३०.

४४. वही, पृ० २३१.

४५. उर्मिला-किमर्थं यथेच्छं न कुर्याम्? (विरम्य) मम प्राणा मदधीना एव न कोऽपि शक्तोऽस्ति मां विचालयितुं संकल्पितकार्यात् x x x अपि न ज्ञातं यत्पुरातनकाले ललामभूतानि ललनारत्नानि पतिनिधनोत्तरतच्चितामारोहन्तीति।
-कृपाणिका-दिव्यज्योतिः १९७६ दिसम्बर, पृ० २६.

४६. शंकररावः-(दीर्घं निश्वस्य) पञ्चभ्यो वर्षेभ्यः प्राक् प्रलयंकरे जलविप्लवे प्रनष्टा मे बन्धुबान्धवाः। साम्प्रतमियं दुहितैव सर्वस्वं सा खलु सकल गृहकार्याणि साधयति क्षेत्रभारश्च पुत्रवद्।-गणेशचतुर्थी-मंजूषा १०:८, पृ० १४७.

४७. क्षणिकविभ्रमः– मंजूषा १०:६, पृ० १४३-१४४.
४८. सुनीतिः (सरोषम्) को जानीते ? केनापराधेन बद्धोऽसौ ? धातुको वा ? तस्करो वा ? स्त्रीनासालुञ्चको वा ? कथं तुश्चरित्रा वन्दिनः प्रेमास्पदं स्युः सच्चरित्रस्य तातस्य ते ।
–वही, पृ० १४४.
४९. (क) गिरिजा– x x x मा चिन्तां कार्षीः। प्रतिकारचिन्तनपरचिरादेव प्रतिशोधनं विधास्ये। मातृप्रतिज्ञा नैव मोघा भवेत् ।
–गिरिजायाः प्रतिज्ञा–मंजूषा ९:९, पृ० १३७.
(ख) गिरिजा–(मुखं परावृत्य) किन्नु कुर्याम् ? कुतस्त्यजेयं पापिनमेनम् ? दैवेनायं प्रेरितः काराया मत्प्रतिज्ञापूर्त्यैः... ।–वही, पृ० १४५.
५०. बन्दी–(कूपाद्बहिरागत्य ... साञ्जलिः पादयोः पतति)–
धन्यासिकृतपुण्यासि कल्याणि प्रियमस्तु ते ।
क्लिष्टस्यापि सुजातस्य सौजन्यं नापगच्छति ॥
–गिरिजायाः प्रतिज्ञा–मंजूषा ९:९, पृ० १४६.
५१. जयन्तुकुमाउनीयाः–विश्वसंस्कृतम् ५:१, पृ० २२.
५२. तुकारामचरितम–मंजूषा १०:६, पृ० १६२.
५३. आवली–(दृष्ट्वा स्वगतम्) अये! साक्षात्पाण्डुरंग इवायं प्रतीयते। अनेनैव विध्वस्तमस्मत्कुलम् । (सरोषम्) पश्यामि तावत् (प्रकाशम् साक्षेपम्) x x x कुतो जनं दुःखयसे दुरात्मन् ।
–वही, पृ० १६२.
५४. अनसूया–तथापि देशखण्डनावस्कन्धे सर्वेऽपि वयं तातेन पालिताः अन्याः क्रूरैर्यवनैर्व्यापादिता ।
–नारकण्डाश्रम–दिव्य ज्योतिः, अक्टूबर १९८०, पृ० ११.
५५. सरला–न मे मैत्र्यनुरागो वा केवलमश्वारोहणकाले दर्शनमात्रं जायते। व्यापृता चाहमासन्ध्यं कार्यालये, सांयञ्च विनोदार्थं क्रीडोद्यानं गच्छामि ।–मिथ्याग्रहणम्–मंजूषा, १०:६, पृ० १३८.
५६. सरला–भाविसुखोपलब्धये आवश्यकः खलु प्राक्परिचयः। –वही, पृ० १३१.
५७. अमीना–किं परिचयेन ? अपरिचितभर्तृका एव भूयिष्ठाः कुमार्यः परिणीयन्ते त्र अहं पुनर्विंशतिवर्षीया पित्रोराज्ञां शिरसाङ्गीकृत्य निश्चितवरं मुदा परिणेष्ये। x x x हुं पाश्चात्यानेव शोभते तत्प्रीतिनिबन्धनम् ।–वही, पृ० १३१.
५८. वही, पृ० १३६.
५९. अमीना (क्रन्दन्ती)–हा दुर्भाग्यं मे दग्धाभाग्यायाः यया मिथ्याग्रहणेनावधीरिता प्रियसखी ।
(परिष्वज्य) मर्षणीयो मेऽपराधः। –वही, प.० १३९.
६०. मीराचरितम्–मंजूषा १४:१२, पृ० २९४.
६१. वही, पृ० २९७.
६२. मुक्ताऽहं भवबन्धनाद् विलयनं गन्तासि सर्वात्मनी– ।
त्याश्वस्योच्चतरं विरौति नय मां गोविन्द गोविन्दभो ॥–वही, पृ० ३००.
६३. मुक्ताऽहमाविरभं जगतो विमुक्तमार्गं परेशशक्त्या ।
–श्री ज्ञानेश्वरचरितम्–मंजूषा १६:४, पृ० १०५.
६४. अनूपः–जानसि–केशपाशविहीनापि न लावण्याद्वियुज्यत ।

को वा निसर्ग सौन्दर्यं यौवनस्य विलोपयेत् ॥
—बालविधवा—मंजूषा ९ : १०, पृ० १६९.

६५. सुमित्रा—(सरोषम्) निर्लज्जे! एतद्दुर्मुखं दर्शयितुमिहागतासि? प्रियबन्धून्प्रतार्य नाद्यापि शान्ता ते पापवासना?—वही, पृ० १७९.

६६. जननी— अथ किम्? चतुरा मे सुता—
प्रगल्भा च प्रतिद्वन्द्वैर्बलिभिः पुरुषैरभि।
व्यस्मायज्जनान् सर्वान् स्वया सा कार्यसम्पदा ॥—वीरभा—मंजूषा ११ : ३, पृ० १३३.

६७. वीरभा—मंजूषा ११ : ३, पृ० १४२-४४.

६८. वही, पृ० १४२.

६९. गणुः—(लालयन्) कल्याणि! साधु स्वभावासि नूनम्
राधा—को गुणो मयि? किं मे साधुत्वम्।
—होलिकोत्सवम्—मंजूषा १२ : २, पृ० २५.

७०. वही, पृ० ३१-३२.

७१. रेवा— x x x न मनागपि शोको मे सत्याग्रहाग्नौ प्रहुतस्य गृहादेः। सर्वं यातु सखे शोको न कार्यः सेयमाहुतिः कल्पिता सत्य देवाय प्रेयो नः स हि दास्यति। ज्वालेयं जटिला पुण्या दीपकेति विभाव्यताम्। नीराज्यते ययास्माभिबुद्धिर्नेताबृहस्पतिः।
—स्वर्णपुरकृषीवलाः—मंजूषा १२ : २, पृ० ७.

७२. नचिकेता— अनुगृहीतोऽस्मि। अत्र नास्ति सर्वं सुकरम्। पूज्या अम्बा मां जननीवत् आदरयत्नेन पर्यवेक्षते।—नचिकेतोयमसंवादम्, पारिजातम ३ : १, पृ० २१.

७३. वेतालः— x x x एका च असामान्यरूपलावण्यविश्रुता सोमप्रभा इत्यन्वर्थ नाम्नी कन्या उदपद्यत्।—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम्, जन० १९८३, १/पृ० ५.

७४. सोमप्रभा— x x x अधुनापि अस्ति अस्माकमादरभावः वर्णाश्रमव्यवस्थायाम्। किन्तु नेच्छामि प्रदेया भवेयम् यस्मै कस्मैचित् मूढाय असिद्धसामर्थ्यायवा x x x ज्ञानी विज्ञानी शूरो वा भवतु सः।—वही, पृ० ६.

७५. सुधीरः—मम नयनयोस्तु सा सौन्दर्यस्य साक्षान्मूर्तिरेव एषा प्रतिकृतिस्तस्या रूपकसम्पदोऽशमपि नावतारयति किन्तु परमार्थेनाहं तु तस्या हृदयस्य सौन्दर्यातिशये नैवाधिकतरमाकृष्टोऽस्मि। प्रेमामृतस्यन्दि सुकोमलं तच्चेतः।
—पाददण्डः—सागरिका, २ : ३, पृ० २६३.

७६. तस्यास्तु गीतमधुरिमा वर्णनातिगः प्रतिभाति।— वही, पृ० २६३.

७७. वही, पृ० २७१.

७८. वही, पृ० २७६.

७९. वही, पृ० २८१.

८०. निशा—कोकिलवर्णायाः कोकिलस्येव कण्ठ इति किमाश्चर्यम्।—वही, पृ० २६२.

८१. निशा—यद्येव रुग्णावस्थां जानन्त्यपि कथमद्यापि नायाता।—वही, पृ० २६३.

८२. पाददण्डः—सागरिका, २ : ३, पृ० २७९.

८३. मेधाविनी कलासाक्षात् शैलराज तवात्मजा।
सत्क्रिया मूर्तिमत्येषा लावण्यस्य विभूषणम् ॥—पार्वतीपरमेश्वरीयम्, पृ० ५.

८४. जया—पराहि काष्ठां तपसो गता सा
न दृश्यते किन्तु फलस्य लेशः—वही, पृ० २०.

८५. मंगलदिनसुषमा सुनिर्मला वसुधैव सुधाधारधवला।
अभिषेक भविताऽहो भाग्यं राजभद्रको मे युवराजः ॥–रामवनगमनम्, पृ० १।

८६. दुष्टे त्वमात्मनाशाय नृंशसे लालिता मया।
व्याली मोहात्कृता कण्ठे विषवल्ली विवर्धिता ॥–रामवनगमनम्, पृ० ६.

८७. मन्थरा–राज्ञि बालिश हस हसाधुना।
नास्ति तु दूरो रोदनकालः ॥ –वही, पृ० ३.

x x x x

अक्षिजलेन क्षालयाचिरात्
कौशल्याश्चरणरजो हो।
त्वं हस रोदिमि तव हितैषिणी
मरिष्यामि किं न दीर्णहृदया ॥–वही, पृ० ३.

८८. एकैव तु प्रतिज्ञा ममापि सुकरा पतिव्रताधर्मे।

x x x x

मीनो जलं विना किं श्रुता कौमुदी विना न चन्द्रेण।
त्वां विना न हि जीवेयं जीवय मां तवैवेतदर्धांगम् ॥–वही, पृ० ११-१२.

८९. छुमछुम्नूपुरसिञ्जनकृष्टः सम्मुखमेति मयूरो धृष्टः।
विना नीरदं नृत्यतिहृष्टः सीतायाः करतालैस्तुष्टः ॥–सीताहरणम्, पद्य ५.

९०. वही, पद्य १७-२०.

९१. अन्नदेवता (हस्त लिखित), पृ० २.

९२. लक्ष्मी–यद्येवं तर्हि कष्टा हि वार्ता। शारदानन्वेकं वात्सल्यभाजनं च श्यामसुन्दरी देयाः।–कालीदर्शनम्–संस्कृतप्रतिभा १२ : ३, पृ० १५९.

९३. कुचेलपत्नी–(उत्थाय, अश्रूणि प्रमृज्य, स्वगतम्)
का माता विद्यते लोके मादृशी मन्दभागिनी
या न शक्ता स्वपुत्राणां प्रियाणां परिपालने ॥
–कुचेलवृत्तम्–संस्कृत–प्रतिभा, ३ : २, पृ० २३१.

९४. क्षुत्कृशा अति दीना बाला हृत्परं मे खेदयन्ति ॥
दुर्बला हि केलीष्वपि तत्परा न भवन्ति ॥
कामितवरदायकं कामसमं रमानाथम्।
तान्तजन पोषणार्थं कान्त, गत्वाद्य नम तम् ॥–वही, पृ० २३२.

९५. सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् (संस्कृतप्रतिभा, ५ : २, पृ० २०९.

९६. मैत्रयी–सखि! सत्युमुक्तं त्वया। वेद विद्यापारंगमा त्वम्। शास्त्रज्ञानेन आत्मज्ञानलाभे त्वं अवश्यमेव समर्थासि।–महीयसी गार्गी, पृ० २४.

९७. गार्गी–यथार्थमेतत् ... तथापि ज्ञानपथं मह्यं रोचते। 'दुर्ग पथस्तत् कवयोवदन्ति', तथापि गुरुकृपालवेन ज्ञानमार्गेण मम साधनां प्रतिष्ठापयामि।–महीयसी गार्गी, पृ० २५.

९८. जनकः – x x x विचारे यद्यपि गार्गी पराभूता, तथापि इयं बाला याज्ञवल्क्यं विचारयुद्धेन ब्रह्मविद्रूपेण उपस्थापयति ... गार्गीमहिमा।–वही, पृ० ३३.

९९. विराड्गृहम्, पृ० ३८.

१००. वही, पृ० ३८, ४४.

१०१. वही, पृ० ४१.

१०२. वही, पृ० ४९.

१०३. सुलेखा– भगवान् (शिरसि हस्तौ निधाय) क्वयामि? प्रातःकालादारभ्य नववादनावधि गृहकर्म। तदनन्तरं पंचवादनवेलावधि कार्यालये टाइपयन्त्रस्य टिपटियाशब्दः। पुनश्चरात्रिपर्यन्तं गृहकार्यं ... ।

–प्रतिबुद्धा, पृ० १२.

१०४. वही, पृ० २४.

१०५. याथार्थ्यगरलम्, पृ० २६-२७.

१०६. पूर्णिका– किमहं श्रोष्यामि बहिर्गतम्। गृहं एव तावत् पर्याप्तं श्रोतुम्। पच्यमानस्य भोजनस्य बदाबदाशब्दः, पात्राणां टणत्कारः, नालकात् जलवेगस्य फुत्कारः, बालकानां कलकलायितञ्च। अपरं किं श्रोतव्यं मया?

–याथार्थ्यगरलम्, पृ० २८.

१०७. वाञ्छा कल्पलतां स्मिति व्यतिकरादामोदमातन्वतीम्

राधां माधवाधिकां सुमधुराह्लादस्य कल्लोलिनीम्।

कृष्णस्याद्वय शक्तिमादिजननीं लीलाविलासाश्रिताम्

शृंगारारार्णवनिः सृतामृतकलां शोभाश्रयां भावये॥

–राधानुनयः, १/१.

१०८. कदाचितञ्छ्यामः स्यान्मदनमदनिर्वापणदृशः

मनोहारीवेशो रुचिरवनमालीमृदुगिरः।

रतिस्मेरः प्रान्ते रमयति च विभ्रान्त-हृदयम्

भवेदामोदाय प्रचुरमिह सौन्दर्यसदनम्॥ –राधानुनयः, २/११.

१०९. मुक्तिमहोत्सवः (हस्तलिखित), पृ० ६.

११०. वही, पृ० ५.

१११. आम्रपाली– मगधराज! महतां महत्तमो भवानेव। दिष्ट्या मयावसरोलब्धः। सफलं मज्जीवनं यद् भवत्सदृशः प्राणेशः मम स्यात्। किं चाहन्तु वृज्जिसंघस्यैकावराकी कुमारी ... । आम्रपाली, पृ० २०.

११२. आम्रपाली– x x x नाम्रपाली विभेत्येवं यस्मात्कस्मात्कदाचन।

केवलं गणराज्यस्य भयं मे पुरतस्सदा॥ –वही, पृ० २७.

११३. वही, पृ० ३४.

११४. वही, पृ० ३६.

११५. बुद्ध– भदन्त। का हि सा इत्यवाङ्मनसगोचररहस्यम् x x x सा खलु नारीणां रत्नभूता लोकादर्शनारी x x x तत्त्वज्ञानवबुद्धा सा विलक्षणा देवी। –वही, पृ० ३९.

११६. वही, पृ० ४७.

११७. वही, पृ० ५२.

११८. शारदा– जयतु जयतुश्रीमान्। x x x पशवो मेऽत्रैवागता परं न निवर्तिताः x x x

रघुराजः– कीदृशास्ते पशवः शारदे। तेषां परिचयं देहि।

शारदा– वृषभस्यैकस्य त्रयो वत्साः सन्तिः।

रघुराज– अवगतम् अवगतम्। ते सर्वे मौर्ख्यफलं प्राप्य अत्रैवबद्धाः सन्ति।

–ज्ञानेनहीनाः पशुभिस्समानाः, पृ० १९.

११९. (सहसा तत्रैव कर्षकगृहिणी सम्मार्जनीहस्ता आ जगाम। तामवलोक्यैव सर्वाः अप्सरसस्ततः पलायनं चक्रुः।)

ग्राम्या– तिष्ठ रे तिष्ठ किमेवं धावन्नसि। कथय रे विश्वासघातिन् मां विहाय त्वमत्र सुन्दरीभिः सह रमसे। x x x किमधुना त्वं मां परित्यज्य रूपकर्षणादन्यां वरीतुं इच्छसि x x x (कर्षकस्योपरि सम्मार्जिनी प्रहारं कृत्वा)

–उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम्, पृ० २८,२९.

१२०. यशोदा– x x x प्रतीयते यन्नागमिष्यति अधुना मम पुत्रः। x x x गतं गतं नैव तु सनिवर्तते यौवनमिदं एतदपि विचारणीयम्. कालस्यान्तरालो दुर्वहो भवति। दिनद्वयस्य जीवने नैषा प्रतीक्षा शोभते।

पार्वती– x x x तस्यप्रतीक्षायां यद्यहं चिरकौमार्यं भजे तर्हि मम जीवनस्य साफल्यम्।

–न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः, पृ० ४१.

१२१. मंगला–(गोदोहन कार्यंसमाप्य वत्समुपदिशति) शृणु रे वत्स! सुपुत्रस्त्वमसि भारतमातुरेव, अतो न कदापि उपेक्षणीया इयं पुण्या वसुन्धरा। (मधुर स्वरेण गायति)

भारतभूमिरियं कमनीया

राजमुकुट इव हिमगिरिरेवं रिपुभिर्दुर्दमनीया।

गंगायमुनासिन्धुनर्मदागोदाअतिमहनीया।

– भारत...—माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पृ० ४२.

१२२. भूमिकन्या, पृ० १६.

१२३. सीता–(उर्मिलाया वक्त्रं निजहस्तेनावृण्वती) x x x अहोभाग्यमेतद् यतत्वं नासीः तदानीं लंकायाम्। तेषां असंख्यवानराणां पूर्वशत्रूणां पुनर्मित्रभूतानां राक्षसानां च समक्षं सर्वेषां परपुरुषाणां मध्ये आर्यपुत्रो मां यद्यदवोचत् तद्यदित्वया श्रुतमासीत् ततस्ते हृदयं शतशः विदीर्णं स्यात्। अत एव अहं पावकप्रवेशं वरणीयं स्वीकृतवती।
–वही, पृ० २२.

१२४. सीता अहं भूमिकन्या त्वं च भू पुत्रः। मातुर्भूतधात्र्याः सेवकः शम्बूक! मा भैषी तव स्वसा त्वां नोपेक्षिष्यते।– भूमिकन्या, पृ० ४२.

१२५. वही, पृ० ११२.

१२६. वही, पृ० ११७.

१२७. रेणुका– क्षत्रियाणां कृते एतावान् दण्डः पर्याप्तः अतः परे त्वमधुनाकमपि क्षत्रियं न मारयिष्यसि। एषा मम आज्ञा।– परशुरामप्रतिज्ञा– भारतोदयः, फरवरी १९८४.

१२८. विज्ञा देवी– राज्यपदेन किं लभ्यते ? धनेन विना सर्वं शून्यम्।

– नचिकेतः कुत्रगतोऽसि– पारि, ३ : १, पृ० ३७.

१२९. नचिकेतः कुत्र गतोऽसि पारि., ३ : १-२, पृ० ३६.

१३०. सरला– स्वामिन्! x x x मम एक एव पुत्रः अस्ति! तस्य विवाहे अहं दूरदर्शनम्, दूरभाषं, शीघ्रगामिवाहनं, अन्यानि विभिन्न यन्त्राणि गृहणीयाम्।

– यौतुक पातकं परम्– पारिजातम्, ३ : ३, पृ० ९.

१३१. वही, पृ० ११-१२.

१३२. अश्विनीकुमारौ–(सविस्मयं) साधु साधु देवि सुकन्ये! तव पातिव्रत्येन– अतितरां प्रसन्नौ आवां चिरं ते पातिव्रतमहिमा विघोषितो भवतु।

–सुकन्या– विश्वभाषा ५ : १, ३, पृ० १४.

नवम प्रकाश

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में नाट्यवृत्तियाँ एवं रस योजना

वृत्ति का स्वरूप व उपादेयता— नाट्यशास्त्र में वृत्ति शब्द पात्रों के विशेष व्यवहार के लिए प्रयुक्त हुआ है ।[१] कायिक, वाचिक एवं मानसिक चेष्टाएँ समस्त सृष्टि में व्याप्त हैं ।ये प्रवाह रूप में संचरण करती हुई विशेष हृदयावेश से युक्त होकर वृत्ति रूप में नाट्य की उपकारिणी होती हैं ।[२] हृदय की संवेदना के अनुरूप होने से यह व्यापार विशेष चमत्कार पूर्ण तथा रस प्रतीति में सहायक हो जाता हैं । अतः प्राचीन आचार्यों के मत में पात्रों द्वारा सजीवता तथा यथार्थ अनुभूति के लिए काय, वाक्, एवं मनोव्यापारों का प्रदर्शन ही वृत्ति है ।[३] यही वृत्ति कुछ आचार्यों द्वारा व्यापार, चेष्टा तथा विलास विन्यास क्रम में रसोदय का स्रोत होने के कारण नाट्य की माता मानी गई हैं ।[४] वस्तुतः वृत्ति का सम्बन्ध अभिनय से है । किसी नाट्य में गीत नृत्य आदि शृंगारिक चेष्टाओं का किसी में युद्ध इन्द्र जाल आदि औद्धत्य क्रियाओं का, किसी में नायक के उदात्त गुणों का तथा किसी में केवल संवाद का बाहुल्य होता है। इसी आधार पर नाट्य कलाविदों के अनुसार क्रमशः कैशिकी,[५] आरभटी,[६] सात्त्वती[७] तथा भारती[८] वृत्तियाँ स्वीकार की गई हैं। इन चारों वृत्तियों से सम्बन्धित चेष्टाएँ ही रस का उद्बोधन करती है । अतः नाट्यशास्त्र के प्राचीन आचार्य रसोपयुक्त वृत्तियों का वर्णन करते हुए शृंगार और हास्य रसों में कैशिकी, वीर, रौद्र तथा अद्भुत रसों में सात्वती; भयानक तथा वीभत्स रसों में आरभटी ; करुण व अद्भुत रसों में भारती वृत्ति के निबन्धन को उचित मानते हैं ।[९] कुछ आचार्य भारती वृत्ति का सम्बन्ध सभी रसों से स्वीकार करते हैं ।[१०]

आधुनिक आचार्य इन्हीं वृत्तियों के आधार पर चार प्रकार के रूपक मानते हैं—[११]

संवाद प्रधान रूपक (भारती वृत्ति)
संगीत प्रधान रूपक (कैशिकी वृत्ति)
व्यक्ति प्रधान रूपक (सात्वती वृत्ति)
संघर्ष प्रधान रूपक (आरभटी वृत्ति)

आधुनिक युग में रचित रूपकों में प्राचीन नाट्यशास्त्रीय वृत्तियों का विशुद्ध स्वरूप खोज पाना कठिन है क्योंकि इनका उद्देश्य केवल रसानुभूति कराना नहीं है, जबकि वृत्तियों का प्रयोग प्राचीनकाल में रस की दृष्टि से किया गया है । अतः यथार्थवादी समस्या प्रधान रूपकों में वृत्तियों का भरतानुसार प्रयोग न होकर आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार वृत्तियों का प्रयोग देखा जा

सकता है। यदि कोई रस सिद्ध नाट्य है तो वहाँ किसी न किसी रूप में भरत सम्मत वृत्तियाँ देखी जा सकती हैं ।

नाट्य में रस— दृश्य वाक्य के भेदक तत्त्वों में रस भी एक महत्वपूर्ण तत्त्व है। रूपक को देखकर सामाजिक आनन्द विभोर हो उठता है। यह आनन्द ही रस कहलाता है जिसे आचार्यों ने ब्रह्मानन्द सहोदर की संज्ञा दी है।[१२] कीथ के अनुसार नाट्यशास्त्र की सबसे मौलिक एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि रस सिद्धान्त ही है, सामाजिक के मन में जिसका उद्रेक कराना नाट्य का चरम लक्ष्य है।[१३] 'रस्यते आस्वाद्यते इति रसः' व्युत्पत्ति के व्यापक क्षेत्र में रस, भाव, रसाभास, भावाभास, भावोदय, भाव सन्धि, भाव शान्ति व भाव शबलता का भी समावेश हो जाता है।[१४] जिस प्रकार द्रव्यों के संयोग से भोज्य रस की निष्पत्ति होती है उसी प्रकार विभाव, अनुभाव, सात्विक भाव एवं व्यभिचारी भावों द्वारा जब रति आदि स्थायीभाव चर्वणा के योग्य बना दिया जाता है तो वही रस कहलाता है।[१५]

संस्कृत आचार्यों में रस संख्या को लेकर पर्याप्त मतभेद रहा है। भरत एवं धनंजय आदि कुछ आचार्य आठ नाट्य रस मानते हैं।[१६] आचार्य अभिनवगुप्त निर्वेद को स्थायी मानकर शान्तरस को नवाँ रस मानते हैं। विश्वनाथ वात्सल्य को भी भरत सम्मत मानते हुए रस स्वीकार करते हैं।[१७] रूप गोस्वामी भक्ति को भी रस मानते हैं।[१८]

नाट्य में प्रायः सभी रसों की योजना की जा सकती है। आधिकारिक इतिवृत्त के अंगीरस के रूप में यद्यपि शृंगार एवं वीररस को ही शास्त्रीय मान्यता प्राप्त है फिर भी यह कोई सार्वत्रिक नियम नहीं है। वस्तुतः नाट्य में अंगीरस की प्रतिष्ठा नाट्यकार की प्रतिभा पर निर्भर करती है। जहाँ तक गौण रसों का प्रश्न है नाट्य में सभी रस अंग रूप में प्रयुक्त किए जा सकते हैं। उपसंहार में मुख्यतः अद्भुत रस की योजना आवश्यक मानी गई है।[१९] नाट्य में एक से अधिक रसों के स्वतन्त्र विकास में रूपक की एकान्विति खण्डित हो सकती है। नाटकीय व्यापार छिन्न भिन्न हो सकते हैं। अतः अंगीरस के स्वाभाविक विकास को ध्यान में रखकर अंगभूत रसों की योजना की जानी चाहिए। अर्वाचीन नाट्यकत्रियों की रूपक रचनाओं में जहाँ रसवादी नाट्यरचनाएँ दृष्टिगत होती हैं वहीं कुछ रचनाएँ ऐसी भी हैं। जहाँ आनन्दानुभूति भरत सम्मत शृंगार आदि रसों के परिपाक से न होकर किसी समस्या आदि के चित्रण व उसके समाधान से हो रही है। प्रस्तुत प्रकाश में हम अर्वाचीन महिला रचनाकारों की नाट्यरचनाओं में वृत्ति एवं रसतत्त्व का समीक्षण करेंगे।

श्रीमती रमा चौधुरी ने रस की दृष्टि से दो प्रकार के नाटकों का प्रणयन किया है। जहाँ उन्होंने पल्लीकमलम्, मेघमेदुरमेदनीयम्, देशदीपम् आदि रसमय रूपकों की रचना की है वहीं शंकर-शंकरम्, यतीन्द्रयतीन्द्रम्, निवेदितनिवेदितम्,

यूगजीवनम् आदि चरित प्रधान व उपदेश प्रधान रूपकों की रचना भी की है। ये चरित व उपदेश प्रधान नाटक भी रस शून्य नहीं है। नाट्यकर्त्री ने अंगीरस के रूप में वीर, शृंगार, शान्त तथा भक्तिरस को अपनाया है। वीररस सर्वाधिक रूपकों में अंगीरस के रूप में चर्वित हुआ है।'अभेदानन्दम्" में स्वामी अभेदानन्द द्वारा संन्यास लेकर आध्यात्मिक प्रवृत्तियों से स्वदेश विदेश विजय के प्रति उत्साह धर्मवीर रस को पुष्ट करता है। 'रसमयरासमणिः' में विधवा रानी रासमणि उत्साहपूर्वक मद्यपी गोरण्ड सैनिकों के आक्रमण करने पर उन्हें परास्त करती है। यहाँ वीररस चर्वित होता हैं। 'भारतपथिकम्' में राजाराममोहनराय का समाज सुधार के प्रति उत्साह, 'भारताचार्यम्' में राष्ट्रपति राधाकृष्णन् का राष्ट्र के कल्याण के प्रति उत्साह 'भारततातम्' तथा 'देशजनकम्' में गान्धी के समाजसुधार के प्रयास, भारतवीरम् में शिवाजी के वीरतापूर्ण कृत्यों से भी वीररस प्रधानतः सहृदयों की चर्वणा का विषय बनता है। इसी प्रकार 'अग्निवीणानाटकम्' में चरितनायक नजरुल्लिस्लाम का उत्साह, प्रसन्न प्रसाद्म में राम प्रसाद की संगीत प्रतिस्पर्धा जन्य उत्साह से भी वीररस प्रधानतः अभिव्यंग्य है। 'लेनिनविजयम्' में लेनिन के वीरतापूर्ण कृत्य तथा 'तानतनुः' में तानसेन का वैजू आदि को पराजित करने में अभिव्यंग्य उत्साह भी वीररस का आस्वाद कराता है। 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' में यतीन्द्र विमल का संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए तथा 'देशदीपम्' में नायक चम्पक-वदन का देश के लिये आत्मोत्सर्ग भी वीररस की अनुभूति कराता है। 'कविकुलकमलम्' में वीररस की प्रधानता है। इस प्रकार सर्वाधिक रूपकों में वीररस अंगी है। रमा चौधुरी के अधिकांश रूपक चरित प्रधान हैं। अतः चरितनायक गत उत्साह की प्रधानता से वीररस अंगी तथा सात्वती वृत्ति प्रधानतः अभिव्यंग्य है। जैसे—देशदीपम् में चम्पकवदन, अभ्रप्रतिम, जहाँगीर तथा अन्य ग्रामवासी देश की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने को तत्पर हैं। यथा—

चम्पकवदन :— सुधाधनेमातः ! त्वं जानासि किल यत् पुण्यभूमिभारतवर्षं अकस्मादाक्रान्तं दुर्धर्षशत्रुभिः। x x x मातः। अहं देशजनन्या दीनतमो हीनतमो क्षीणतमः सन्तानः। तथापि ममैको रक्तकणो वहति तदर्थम्, x x x देशजन्याः सेवार्थं अहं मम सर्व प्राणमानधनजनत्यागाय दृढ संकल्पः।[२०]

यहाँ मातृभूमि के लिए सर्वस्व त्याग के प्रति चम्पकवदन का उत्साह वीररस रूप में अनुभूत हो रहा है। अंग रूप में भी कविकुलकोकिलम् व निवेदित निवेदितम् में वीररस प्रयुक्त है।

'कविकुल कोकिलम्', 'मेघमेदुरमेदनीयम्' तथा 'संसारामृतम्' तथा 'पल्लीकमलम्' में शृंगाररस अंगी है तथा कैशिकी वृत्ति की प्रधानता है। अंगरूप में 'नगरनूपुरम्' में शृंगाररस आस्वाद्य है। शृंगार के सम्भोग एवं विप्रलम्भ दोनों ही रूपों की स्थिति इन रूपकों मे देखी जा सकती है—

सम्भोग शृंगार—'कविकुल कोकिलम्' में देवी के आशीर्वाद से ज्ञान प्राप्त कर लौटे हुए कालिदास से विद्यावती का मिलन,[२१] मेघमेदुरमेदनीयम् में एक वर्ष के विरह के पश्चात् अरुणकिरण व कमलकलिका का मिलन,[२२] संसारामृतम् में नायिका का मयूख के साथ मिलन सम्भोग शृंगार की पुष्टि करता है। पल्लीकमलम् में भी सम्भोग शृंगार अंगी है, यथा—रात्रि में नदी तट पर कमलकलिका तथा रूपकुमार का मिलन सम्भोग शृंगार को पुष्ट कर रहा है।[२३] यहाँ रूपकुमार तथा कमलकलिका परस्पर आश्रय व आलम्बन हैं : रात्रि में एकान्त नदी तट उद्दीपन है : नदी विहार, गीतगान आदि अनुभाव हैः हर्ष, त्रास, आवेग आदि संचारी भाव है , उभयनिष्ठ रतिभाव सहृदय में भी उदबुद्ध होकर शृंगार रस के रूप मे अनुभूत हो रहा है।

वियोग शृंगार—'कविकुलकोकिलम्' में पाद प्रहार करके कालिदास को भवन से निष्कासित करने के बाद अनुतप्त राजकन्या विद्यावती वियोग से दुःखित होती है —

विद्यावती— x x x अधुना मुहूर्तमात्रमपि मम मनसि शान्ति लेशो नास्ति, मम पतिदेवतायाः स्वभावसुन्दरं मंगलमधुरं सन्तापहरं रूपं निरन्तरं व्यथयति माम्। अहो किं करोमि किं करोमि? कुत्र मम मुक्तिः ? कुत्र कुत्र? x x x (रोदिति)[२४]

यहाँ कालिदास आलम्बन है, अपमानपूर्वक उसे निष्कासित करना उद्दीपन है; पश्चाताप एवं रुदन अनुभाव हैं— चिन्ता, ग्लानि आदि संचारी भाव हैं। इन उपादानों से रति स्थायी विप्रलम्भ शृंगार का आस्वाद करा रहा है।

शान्तरस—नगरनूपुरम् में मेखलानामक अपूर्व सुन्दरी गणिका एक महात्मा के उपदेशों से जीवन की वास्तविकता समझकर शान्ति के लिए संन्यासिनी बन जाती है। यहाँ शमभाव के उद्बुद्ध होने से शान्तरस की अनुभूति होती है। शंकरशंकरम् का भी अंगीरस शान्त है, जैसे —

न तातो न माता न बन्धुर्न भ्राता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता
X X X X
न जानामि भक्तिं व्रतं वापि मात -
र्गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानी ॥[२५]

यहाँ शान्तरस की प्रतीति में आलम्बन ब्रह्मशक्ति है। उद्दीपन है— जगत् तथा ब्रह्म की एकता। अनुभाव है— शंकर का भावावेश तथा एकत्व अनुभूति। संचारी भाव निर्वेद तथा स्थायीभाव शम है जो समस्त तत्त्वों में समता का बोध करा रहा है। अंगरूप में यतीन्द्र-यतीन्द्रम् में शान्तरस की अनुभूति होती है।

भक्तिरस–युगजीवनम्, 'रामचरितमानसम्', 'चैतन्यचैतन्यम्' तथा 'निवेदित-निवेदितम्' में भक्तिरस प्रधानतः अभिव्यंग्य है। 'युगजीवनम्' में गदाधर की काली देवी के प्रति; 'रामचरित मानसम्' में तुलसी की राम के प्रति, 'चैतन्य चैतन्यम्' में चैतन्यमहाप्रभु की कृष्ण के प्रति भक्ति प्रधानतः अभिव्यग्य है। 'निवेदित निवेदितम्' में निवेदिता का स्वामी विवेकानन्द के प्रति भक्ति भाव विशेष रूप से अभिव्यक्त हुआ है।[२६] स्थाली पुलाक न्याय से एक उदाहरण आस्वाद्य है–

दक्षिणेश्वर में काली मन्दिर में पुजारी रूप में गदाधर (राम कृष्ण परमहंस) देवी दर्शन के लिए व्याकुल है। "(ततः प्रविशति गदाधरः)–

जननी मम त्वं हितारा त्रिगुणधरा त्वं परात्परा ।
दीनदयामयी सुखकरा दुर्गमे त्वं हि दुःखहरा ॥
त्वं जले स्थले तुल्य चरा जननी त्वमाद्य मूलभरा ।
सर्वघटाक्षपुटाधारा त्वं साकार निराकारा ॥[२७]

यहाँ देवी आलम्बन है। दक्षिणेश्वर काली मन्दिर उद्दीपन है। देवी पूजा सम्भाषण, कीर्तन,नर्तन आदि अनुभाव है। हर्ष, उन्माद आदि अवस्थाएँ संचारी भाव है, जो देवी विषयक प्रीति रति का पोषण करती हुई भक्तिरस को उद्बुद्ध कर रही है। अंग रूप में 'कविकुलकोकिलम्' तथा 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' में भक्तिरस का आस्वाद होता है।

रमा चौधुरी के रूपकों में अंग रूप में हास्य रस 'देशदीपम्' के सप्तम दृश्य में, 'पल्ली कमलम्' के षष्ठ दृश्य में तथा 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' के दशम दृश्य में भी अनुभूत होता है। 'यतीन्द्र-यतीन्द्रम्' में पण्डित महाशय 'शंकरशंकरम्' नाटक के अभ्यास के लिए प्राच्यवाणी कार्य कर्ताओं की प्रतीक्षा में हैं, लेकिन वे सब पहुँचने में विलम्ब करते हैं। अतः उन सबको मर्कट कहकर अपनी खीज उतारता है। यतीन्द्र उसकी खीज का आनन्द लेते हैं–(ततः प्रविशन्ति प्राच्यवाणीनाट्यसंघ सदस्याः) यतीन्द्रः–रे रे मर्कटाः आगच्छन्तु आगच्छन्तु सर्वेऽस्मिन् किष्किन्धाकानने। अत्रैव राजते भवतां अधिपतिः श्रीलः श्रीयुक्तः हनुमान् पण्डितमहाशयरूपेण XXXसर्वे हसन्ति।"[२८] पल्लीकमलम् के प्रहसन दृश्य नामक षष्ठ दृश्य में मर्कट, कर्कट, मत्स्यजीविनी पुष्पविक्रेत्री व पण्यविक्रेत्री के संलाप हास्योत्पादक हैं।[२९] 'देशदीपम्' के कौतुक दृश्य नामक सप्तम दृश्य में कुक्कुट, पेचक, मांस विक्रेत्री तथा मार्ग परिष्कारिका के सम्भाषण हासोत्पादक होने से हास्य रस को अभिव्यक्त करते हैं।[३०] यहाँ हास्यरस का सन्निवेश अनावश्यक प्रतीत होता है। षष्ठम एवं अष्टम दृश्य उत्साह भाव से युक्त है। नायिका पंकजनयना सेविका के रूप में युद्ध भूमि में जाती है। ऐसी स्थिति में दोनों दृश्यों के मध्य में हास्य रस की स्थिति अनुचित लग रही है।

हास्य भी निम्न श्रेणी के पात्रों की निम्नोक्तियों से उत्पन्न किया गया है । इस दृश्य से कथासूत्र की गति शिथिल सी हो जाती है ।

देशदीपम् के अन्तिम दृश्य में नायक चम्पकवदन के वीरगति प्राप्त करने पर उसके माता-पिता का रुदन करुण रस का पोषक हैं ।[३१] 'निवेदित-निवेदितम्' में महासमाधि लेने से पूर्व निवेदिता की स्थिति श्रीमती वसु को संतप्त करती है अतः वहाँ भी करुण रस है ।[३२]

पल्लीकमलम् में कमल कलिका द्वारा प्रस्ताव का प्रत्याख्यान करने पर मार्तण्ड द्वारा प्रतिहिंसा के प्रयास में रौद्ररस प्रतीत होता है ।[३३] इसी प्रकार 'मेघमेदुरमेदनीयम्' में प्रणय में आहत प्रचण्ड प्रताप कमलकलिका एवं अरुणकिरण से प्रतिशोध लेना चाहता है । उसकी प्रतिशोधात्मक क्रियाएं रौद्ररस को उदबुद्ध करती है ।[३४] अंगभूत यह रौद्र रस अंगीभूत शृंगार रस की निष्पत्ति में भी पूर्ण सहायक है क्योंकि प्रचण्ड प्रताप के प्रतिशोध के कारण ही नायक-नायिका को परस्पर वियुक्त होना पड़ता है । 'शंकर शंकरम्' में तान्त्रिक अभिनव गुप्त की अभिचार क्रिया से शंकराचार्य को मरणासन्न देखकर उनके शिष्य का तान्त्रिक पर क्रुद्ध होना रौद्ररस को उदबुद्ध करता है ।[३५]

'शंकर-शंकरम्' में ही चाण्डाल के प्रवेश से भयभीत भागते हुए राहगीर भयानक रस की प्रतीति कराते हैं ।[३६] इसी रूपक में संन्यास धर्म स्वीकार करने को उत्सुक होने पर शंकर की माँ की पुत्र के प्रति विह्वलता वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति कराती है ।[३७] 'पल्लीकमलम्' में अष्टम दृश्य में यह रहस्य ज्ञात होने पर कि कमलकलिका साधारण पल्ली बाला नहीं है अपितु जन्म से परित्यक्त राजकन्या है अद्भुत रस की प्रतीति होती है ।[३८] इस प्रकार डॉ० रमा चौधुरी ने अपने रूपकों में वीर, शृंगार, शान्त एवं भक्ति रस को अंगी रूप में तथा हास्य, करुण, रौद्र, भयानक तथा अद्भुत रस का अंग रूप में निवेश किया है ।

इन रस सिद्ध रूपकों में चरित प्रधान रूपकों में प्रायः सात्वतीवृत्ति के दिग्दर्शन होते हैं, यथा—'देशदीपम्' में नायक चम्पकवदन व ग्रामवासी सर्वस्व त्याग की भावना तथा सत्वशौर्यादि से सम्पन्न हैं अतः यहाँ सात्वती वृत्ति की प्रधानता है । इसी रूपक में गुप्तचर एवं जहाँगीर का वार्तालाप अमर्ष, छल आदि भावों से युक्त होने के कारण सात्वती वृत्ति का संलापक अंग है ।[३९] 'पल्लीकमलम्', 'मेघमेदुरमेदनीयम्' आदि शृंगार प्रधान रूपकों में विविध संगीत प्रधान वन्दनाओं का निवेश कैशिकी वृत्ति के अस्तित्व का सूचक है । 'पल्लीकमलम्' के निम्नलिखित अंश में कैशिकी वृत्ति का नर्मस्फूर्ज नामक अंग है —

"**कमलकलिका**— सत्यं यास्यामि । अन्यथा कथमहं अत्रागता निशीथे एकाकिनी संगोपनम् । ततो मा करोतु विलम्बं भवान् ।"[४०]

यहाँ कमलकलिका को प्रेमी से मिलन में प्रसन्नता होने पर भी घर पहुँचने में विलम्ब हो जाने की आशंका से भय है। अतः नर्मस्फूर्ज है। इस प्रकार स्थान-स्थान पर वृत्तियाँ स्पष्ट हुई हैं।

श्रीमती लीलारावदयालु की नाट्यकृतियों में समसामयिक समस्या जैसे— बालविवाह, विधवाविवाह, सुरापान आदि समस्याओं तथा धार्मिक एवं राजनैतिक वैशिष्ट्य जैसे— सामन्तवाद, स्वराज्य- प्राप्ति की अभिलाषा विशेष रूप से दृष्टिगत होती है। इस प्रकार के रूपकों में बालविधवा, गणेशचतुर्थी, होलिकोत्सवम् आदि सामाजिक बुराई से तथा वीरभा, स्वर्णपुरकृषीवलाः, कटुविपाकः आदि रूपक अंग्रेजी शासन के उत्खनन तथा स्वराज्य प्राप्ति की अभिलाषा से प्रेरित हैं। इनके अतिरिक्त गिरिजायाः प्रतिज्ञा कृपाणिका आदि रचनाओं में रसतत्त्व का आनन्द भी लिया जा सकता है।

करुणरस लीलाराव का सर्वाधिक प्रियरस है। अनूपः, असूयिनि, कृपाणिका, क्षणिकविभ्रमः, नारकण्डाश्रमः, बालविधवा तथा होलिकोत्सवम् में करूणरस अंगी है। 'अनूप'रूपक में कुष्ठरोग से ग्रस्त अनूप द्वारा परिवार का परित्याग तथा अन्त में मृत्यु, 'असूयिनी'में सन्तानहीन रेवा की दयनीय स्थिति[४१] कृपाणिका में उर्मिला के पति की मरणासन्न अवस्था,[४२] क्षणिक विभ्रमः में अभ्यागत का सदा के लिए परिवार से वियुक्त होना,[४३] बालविधवा रूपक में विधवा पार्वती की परिवार में दीन-दशा व अन्त में मृत्यु[४४] तथा होलिकोत्सवम् में सुरापान से मत्त गणु द्वारा प्रताड़ित एवं अपमानित राधा द्वारा आत्म हत्या के लिए घर से निकलना शोकभाव को उद्दीप्त कर सहृदयों को करुण रस का आस्वाद कराता है। यथा—

"राधा— अलं श्रमेण स्वयमेव गच्छामि यमालयम् (द्वारं उपसर्पति)

गणुः — सत्वरं अपसर ! गत्वा सागरं निपातयात्मानम्

राधा— एषा गच्छामि। परमेकदानुतप्यसे xxx ।

गणुः — (वारयित्वा) वक्ष्यामि पंचत्वमुपगतेति। कराभ्यां राधां प्रघृष्य सरभसं द्वारं पिदधाति ।"[४५]

इसमें राधा रूप आलम्बन ; आत्महत्यारूप उद्दीपन ; गणु द्वारा बाद में पश्चात्ताप, रुदन रूप अनुभावों ; ग्लानि, दैन्य आदि संचारी भावों से करुणरस उद्दीप्त हो रहा है।

अंगीभूत करुण रस के अतिरिक्त जयन्तु कुमाउनीयाः में वीरों के वीरगति प्राप्ति करने पर,[४६] ज्ञानेश्वरचरितम् में ज्ञानेश्वर के माता-पिता द्वारा सशरीर जल समाधि लेने[४७] पर अंग रूप में करुणरस आस्वादित होता है। इसी प्रकार वीररस प्रधान 'वीरभा', में वीरभा के पति के घायल होने तथा बच्चे के अपहरण में;[४८] कटुविपाकः में रेवा की मृत्यु होने पर[४९] तथा स्वर्णपुरकृषीवलाः में

ग्रामाधिप द्वारा रेवा का घर जला देने पर[५०] भी अंगभूत करुण रस आस्वादित होता है। इस प्रकार लीलाराव के रूपकों में किसी न किसी रूप में करुणरस की स्थिति अनुभूत होती है। इसका कारण उनकी समाज सुधार की मनोवृत्ति है जो परिस्थितियों का कारुणिक चित्रण कर सामाजिक के मस्तिष्क को झकझोरती है। तत्पश्चात् समाज सुधार के प्रति उत्साहित करती है क्योंकि नायक नायिका आदि पात्रों की कारुणिक स्थिति के माध्यम से बालविधवा, नारी की हेय स्थिति आदि का दर्शकों को परिचय कराकर निरपत्यता, द्यूत सुरापान आदि के प्रति जागरूक करना भी लीलाराव का उद्देश्य है। यहाँ रस पक्ष गौण होकर लोकोपदेश तथा लोकहित पक्ष प्रधान हो गया है। जिन रूपकों में करुणरस अंगरूप में प्रयुक्त हुआ है, वहाँ वह अंगीरस का ही पोषक है। 'वीरभा', 'स्वर्णपुर कृषीवलाः', 'कटुविपाकः' आदि में विदेशी शासन से उत्पन्न कारुणिक स्थिति विदेशी सत्ता परिवर्तन के प्रति जन-जन को उत्साहित करती हुई वीररस की पोषक है। वीररस प्रधान 'हरिसिंहः' में भी जनता की कारुणिक अवस्था सामन्तवाद का तख्ता पलटने का कारण बनी है।

'जयन्तुकुमाउनीयाः' में शत्रु रूप चीनियों को विजित करने के प्रति कुमाऊँ सैनिकों का उत्साह वीर रस का अभिव्यंजक है।[५१] 'वीरभा' रूपक में वीरभा के नेतृत्व में महिलाओं का सत्याग्रह के प्रति उत्साह प्रधान रूप से अभिव्यक्त हुआ हैं।[५२] स्वर्णपुरकृषीवलाः में रेवा के नेतृत्व में भू-कर न देने के प्रति ग्रामवासियों के हृदयगत उत्साह की प्रधानता है।[५३] 'हरिसिंहः' भी वीररस प्रधान रूपक है। यहाँ राजा मानसिंह के प्रजा पर अत्याचार तथा उसके प्रति हरिसिंह का जुगुप्सा भाव उसे अत्याचारी राजा के वध के लिए उत्साहित करता है।[५४] स्थालीपुलाकन्याय से 'कटुविपाकः' के अधोलिखित अंश में वीररस का परिपाक द्रष्टव्य है–

"रेवा–नाहं बिभेमि बन्धनात् (मुष्टिमुद्यम्य) स्वराज्य लाभाय प्राणानपि तृणवन्मन्येऽहम्। नहि लगुडप्रहारो गुलिकापातो वा निवारयेन्मां स्वाभीष्टात्।

ग्रामाधिपः –(साक्रोशं) त्वमपि स्वभ्रातरमनुकरोषि ?

रेवा–अथ किम्--जीवन्तोऽपि न जीवन्ति परदास्यधुरन्धरः ॥

पारतन्त्र्यमुदाराणां मरणादतिरिच्यते ॥"[५५]

यहाँ रेवा आलम्बन है, भाई दीपक का सत्याग्रह में बन्दी बनाया जाना तथा स्वराज्य प्राप्ति की अभिलाषा उद्दीपन है। सत्याग्रह में भाग लेने की रेवा की दृढ़ता, भाई के अनुकरण का विचार, सत्याग्रह शिविर में रहने वालों के लिए छुपकर खादी के वस्त्रों का निर्माण यहाँ अनुभाव है। मति, धृति तथा उग्रता रूप संचारी भावों से सहृदय में व्यक्त उत्साह नामक स्थायी भाव वीररस के रूप में पुष्ट हो रहा है। 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' में अंगीरस दयावीर है, जिसके कारण गिरिजा हाथ में आये हुए पुत्र के हत्यारे को मुक्त कर देती है।[५६]

मीराचरितम् में मीरा की कृष्ण के प्रति[५७] तथा 'परमभक्त शिवाजिराट्' में शिवाजी की गुरु रामदास के प्रति भक्ति प्रकट हुई है ।[५८] इसी प्रकार तुकाराम की भगवान् विट्ठल के प्रति प्रीति भक्तिरस की अभिव्यंजिका है,[५९] जैसे—"तुकाराम - (प्रहृष्टः) अहों प्राप्तं प्राप्तव्यं मया । अद्य दयानिधेर्दर्शनेन सफलं मे जन्म । xxx

श्रीकृष्ण करुणानिधे दामोदर माधव
प्रीत्या तेऽद्य विभोभवार्णवमहं निस्तीर्णवान् दुस्तरम् ।
यस्य त्वं करुणानिधिर्नयनयोः पुण्यात्मनो गोचरः
स क्षीणाखिलदुष्कृतः खलु कथं संसारबद्धो भवेत् ॥"[६०]

यहाँ विष्णु रूप आलम्बन, भगवत्कृपा दर्शन रूप उद्दीपन, हरिजन, नर्तन रूप अनुभावों तथा हर्ष, धृति आदि संचारी भावों से तुकाराम गत भगवद् विषयक रति प्रीतिभक्ति रस को पुष्ट कर रही है ।

कपोतालयः में हास्यरस की प्रधानता है । यहाँ आलम्बन रत्न तथा विषम आर्थिक परिस्थितियों में पत्र कोश का निर्माण उद्दीपन है। पति-पत्नी में नोंक-झोंक, पत्रकोश को कंचना द्वारा कबूतर खाना कहना अनुभाव है और हर्ष, विस्मय संचारीभाव है ।[६१]

नारकण्डाश्रमः में महर्षि कण्व की पालित कन्या शकुन्तला के पतिगृह गमन में वात्सल्य के विप्रयोग पक्ष की अभिव्यक्ति होती है ।[६२] 'ज्ञानेश्वरचरितम्' में सन्त ज्ञानेश्वर द्वारा प्राणिमात्र की आत्मा अभेदज्ञान आदि की प्रतीति से शान्तरस सहृदयों को चमत्कृत करता है ।[६३]

नाट्यशास्त्रीय नियमों की अनुपालना करते हुए लीलाराव ने कुछ रूपकों की समाप्ति पर अद्भुत रस का सुन्दर निवेश किया है । 'कृपाणिका' में मरणासन्न पति के सहसा बोल उठने पर उर्मिला गत विस्मय सहृदयों में अद्भुत रस का आस्वादक है ।[६४] 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' की समाप्ति पर त्यागीबाबा को मीरा के पति के रूप में प्रस्तुत करके अद्भुत रस से रूपक की समाप्ति की गई है ।[६५] 'ज्ञानेश्वरचरितम्' में ज्ञानेश्वर द्वारा भैंस के मुख से मंत्रोच्चार, भैंस पर किए गये प्रहार के चिह्न ज्ञानेश्वर की पीठ पर दिखाई पड़ना, ज्ञानेश्वर द्वारा मृत व्यक्ति को जीवित करने आदि की घटनाओं में अद्भुत रस की अनुभूति होती है ।[६६] मीराचरितम् में शूलशय्या के स्थान पर पुष्पशय्या होना, गरल का अमृत होना तथा सर्प का शालिग्राम होना आदि घटनाएं भी अद्भुत रस की अभिव्यंजक है ।[६७]

अंगरूप में रौद्ररस कटुविपाकः, वीरभा, मीराचरितम् व होलिकोत्सवम् रूपकों में अनुभव किया जा सकता है । 'कटुविपाकः' में सत्याग्रह के प्रति रेवा की निष्ठा से उत्तेजित उसके पिता ग्रामाधिप का क्रोध रौद्ररस की प्रतीति कराता है ।[६८] 'वीरभा' में भी ग्रामाधिप की धमकी रौद्ररस की अभिव्यंजिका है ।[६९]

'मीराचरितम्' में कुमार द्वारा मीरा को संत्रस्त करने में रौद्ररस का आस्वाद होता है।[७०] कुछ रूपकों में विविध व्यभिचारी भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। 'अनूपः' रूपक के प्रथम दृश्य में अनूप को नर्तकी के साथ भागा हुआ मान कर मीरा का क्रोध अमर्ष भाव को प्रकट करता है। यहाँ क्रोध का आलम्बन मीरा के क्रोध के समय सम्मुख न होने से रौद्ररस न होकर अमर्ष भाव का ही चमत्कार है।[७१] 'क्षणिक विभ्रमः' में सुनीति का पुत्र गोपाल के प्रति वत्सलभाव, पुत्र की अपराधी से मित्रता तथा बन्दी की घर में उपस्थिति जानकर सुनीति का अमर्षभाव, बन्दी मित्र को अपने पिता के रूप में जानकर गोपाल में उत्पन्न विस्मय भावों का चमत्कार भी देखा जा सकता है।[७२] 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' में गिरिजा द्वारा पुत्र की हत्या के स्मरण से विषाद तथा उसके हत्यारे के प्रति अमर्ष भाव अभिव्यक्त हुए हैं।[७३] 'तुलाचलाधिरोहणम्' में राजदूत, युवक विश्वम्भर आदि का हिमालय के प्रति प्रीति भाव प्रकट हुआ है।[७४]

मायाजालम् में शृंगाराभास है। एक ही युवक द्वारा अलग-अलग स्थलों पर क्रमशः चार युवतियों को प्रेम जाल में फँसाना तथा कालान्तर में उन्हें छोड़ते जाना अनौचित्य प्रवर्तित होने से रसाभास है।[७५] 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' में अनुपम का अपनी सास से प्रेम शृंगारभास है।[७६] इसी प्रकार त्यागीबाबा का विधवा रामी से प्रेम भी रसाभास है।[७७] 'होलिकोत्सवम्' के द्वितीय दृश्य में रंगु राधा का गिरवी रखा आभूषण दिखाकर यह सिद्ध करना चाहता हैं कि राधा उस पर अनुरक्त है और उसने प्रेमोपहार के रूप में आभूषण दिया है।[७८] यहाँ अनौचित्य प्रवर्तित रतिभाव होने से भावाभास है। यह अन्ततः करुण रस का पोषक है क्योंकि रंगु के भड़काने पर गणु अपनी पत्नी को चरित्रहीन समझ कर क्रुद्ध हो घर से निकाल देता है। अतः भावाभास अंगभूत रौद्ररस का अंग होकर अन्त में करुण रस को ही पुष्ट कर रहा है।

इस प्रकार लीलाराव ने अंगीरस के रूप में सर्वाधिक करुण रस का तत्पश्चात् क्रमशः वीर,भक्ति शान्त व हास्य रसों को अपने रूपकों में अपनाया है। अंगरूप में करुण, रौद्र व अद्भुत का भी चमत्कार दिखाई पड़ता है। शृंगाराभास, भावाभास एवं विविध भाव भी इनके रूपकों में देखा जा सकता है। यथास्थान इन्होंने रस सम्बन्धी विविध नाट्यवृत्तियों की अवतारणा भी करी है। 'अनूपः' रूपक में अमर्ष, शोक, क्रोध आदि भावों की प्रधानता से आरभटी वृत्ति है। असूयिनी में रेवा की उद्भ्रान्ति में आरभटी वृत्ति का अवपात अंग देखा जा सकता है।[७९] हास्यरस शृंगार का विकृति रस है अतः तत्सम्बन्धी कैशिकी वृत्ति तथा उसका नर्म नामक अंग[८०] 'कपोतालयः' में कृतक कोपयुक्त कंचना द्वारा रत्न को उपालम्भ देने में देखा जा सकता है।[८१] 'कटुविपाकः' में जेल में बन्द दीपक को देखने के लिए रेवा के हठ से उत्तेजित ग्रामाधिप रेवा को बाँधकर गोष्ठ में

पटकने की धमकी देता है। प्रत्युत्तर में रेवा भी उसे अपनेभाई का अनुकरण कर सत्याग्रह में भाग लेने की दृढ़ता प्रकट करती है। दोनों के वचन एक दूसरे के लिए अधिक्षेप युक्त व उत्तेजित होने से यहाँ सात्वतीवृत्ति का संलापक अंग है। 'कृपाणिका' में आरभटी वृत्ति है। उर्मिला की उद्भ्रान्ति, भय त्रास व आत्महत्या के प्रयास में इसे देखा जा सकता है।[८२] वाचिक अभिनय प्रधान भारती वृत्ति का प्रयोग सब रूपकों में द्रष्टव्य है लेकिन 'मायाजालम्' में घटनाओं में क्रियात्मकता का अभाव होने से भारती वृत्ति की प्रधानता है। शृंगार सम्बन्धी कैशिकी वृत्ति सूच्य है।[८३] 'परमभक्त शिवजिराट्' में शिवाजी के वीरतापूर्ण कृत्यों से सात्वती वृत्ति सूच्य है। इस प्रकार यथा स्थान वृत्तियों का प्रयोग हुआ है।

प्राचार्या कमलारत्नम् के **गणयञ्छागः** में हास्यरस, 'विक्रमवेतालनाटिका' तथा 'विवेकानन्दविजयम्' में वीररस 'नचिकेतो यमसंवादम्' तथा 'विवेकानन्दस्मृतिः' में शान्तरस की प्रधानता है। 'गणयञ्छागः' में एक छाग द्वारा भयभीत पशुओं की गणना हास्यरस की अभिव्यंजिका है।[८४] विक्रमवेतालनाटिका में शूरवीर अपनी शूरता से राक्षस को हराकर सोमप्रभा से विवाह करने में सफल होता है।[८५] इस प्रसंग में सोमप्रभा आलम्बन है, राक्षस द्वारा उसका अपहरण उद्दीपन है; राक्षस के साथ शूर का युद्ध, राक्षस को मार कर सोमप्रभा की मुक्ति अनुभाव है। ये उग्रता, श्रम आदि संचारी भावों के साथ मिलकर वीररस की अनुभूति करा रहे हैं। 'विवेकानन्दविजयम्' में समाज सुधार के प्रति विवेकानन्द का उत्साह प्रधानतः व्यंग्य होकर धर्मवीररस का आस्वाद कराता है।[८६] 'नचिकेतायमसंवादम्' में शान्तरस की अनुभूति में यम आलम्बन है, यम द्वारा नचिकेता को प्रतिपादित आत्मविषयक ज्ञान उद्दीपन है। नचिकेता द्वारा यमलोक गमन, यम द्वारा प्रदत्त प्रलोभनों में न पड़ कर आत्मज्ञान ग्रहण करना अनुभाव हैं व मति धृति आदि संचारी भाव हैं।[८७] 'विवेकानन्दस्मृतिः' में विवेकानन्द के आध्यात्मिक अभ्युत्थान की सूचनाओं से शान्तरस प्रधानतया सूच्य है।

विक्रमवेतालनाटिका में अंग रूप में सोमप्रभा के अभूतपूर्व लावण्य की ख्याति सुनकर ज्ञानी, विज्ञानी तथा शूर अपनी-अपनी योग्यता प्रदर्शित कर सोमप्रभा से विवाह की इच्छा प्रकट करते हैं। इनकी इच्छा रतिभाव की आस्वादक है। रति का आलम्बन सोमप्रभा इनके समक्ष उपस्थित नहीं है अतः भावपुष्ट होकर शृंगाररस रूप में नहीं प्रतीत होता है। अंगभूत रति अंगी वीररस का सहायक है। शूर सोमप्रभा के प्रति अनुरक्त होने से राक्षस से युद्ध करने को बाध्य होता है।

विक्रमवेतालनाटिका में सात्वतीवृत्ति, 'गणयञ्छागः' में कैशिकी वृत्ति है। 'विवेकानन्दविजयम्', निचिकेतो यमसंवादम् तथा 'विवेकानन्दस्मृतिः' रेडियो नाट्य है। इनमें भारती वृत्ति की प्रधानता है।

श्रीमती वनमाला भवालकर विरचित 'पाददण्डः' में शृंगाररस अंगी है। शृंगार के विप्रलम्भ एवं सम्भोग दोनों पक्ष यहाँ अनुभूत होते हैं। अस्वस्थावस्था में नायक सुधीर अपनी प्रेयसी ललिता की प्रतीक्षा करता है। उसके आने में विलम्ब से सहृदयों को विप्रलम्भ शृंगार की प्रतीति होती है। यथा–

"सुधीरः–ससंभ्रमम्–हम्, किं चतुर्वादनवेलासंजाता। x x x पत्र वितरकादप्राप्तं पत्रमद्यापि। x x x मम नयनयोस्तु सा सौन्दर्यस्व साक्षान्मूर्तिरिव। एषा प्रतिकृतिस्तस्या रूपसम्पदोऽवंशमपि नावतारयति। किन्तु परमार्थेनाहं तु तस्या हृदयस्य सौन्दर्यातिशयनैवाधिकतरमाकृष्टोऽस्मि। प्रेमामृतस्यन्दिसुकोमलं तच्चेतः।"[८८]

यहाँ ललिता आलम्बन है, समय से उसका न आ पाना उद्दीपन है। सुधीर द्वारा ललिता के आगमन एवं पत्र की प्रतीक्षा करना व ललिता का चित्र देखना आदि अनुभाव है। स्मृति आदि संचारी भाव है। जिनसे विप्रलम्भ शृंगार का आस्वाद होता है।

भ्रान्ति के निराकरण से ललिता एवं सुधीर का मिलन संभोग शृंगार की पुष्टि करता है।[८९] अंगभूत रौद्ररस भी उस रूपक में आस्वाद्य है। विकलांग के प्रति ललिता की अरुचि की आशंका से सुधीर अपने पंगुत्व के विषय में उसे बता नहीं पाता है। ललिता को स्वयं से विमुख करने के लिए निशा का मिथ्या परिचय ललिता से अपनी भावी पत्नी के रूप में कराता है। वास्तविकता से अनभिज्ञ ललिता सुधीर को विश्वासघाती मानकर क्रोध से उबल पड़ती है।[९०] यहाँ सुधीर आलम्बन है, निशा के साथ उसके विवाह का विचार उद्‌दीपन है, ललिता का क्रोध से काँपना सुधीर को डाँटना अनुभाव है शंका त्रास आदि संचारी भाव है जो रौद्ररस की प्रतीति कराते हैं।

एकांकी के आरम्भ में भास्कर चाय पान का इच्छुक है लेकिन शान्ता सुधीर के प्रति चिन्तित होने से चाय बनाना नहीं चाहती है। अतः वह कृतक कोप कर के शर्करा का अभाव बताकर बहाना बनाती है। यहाँ दोनों के संलाप हास्यरस के उत्पादक हैं।[९१]

पार्वतीपरमेश्वरीयम् में अंगरूप में शृंगाररस की तथा अंगरूप में करूणरस की अनुभूति होती हैं। यथा–

"शंकरः ब्रह्मचारी रूपं विहाय सस्मितं पार्वत्याः करंगृहणाति अवरोधेन सम्भ्रान्ता पार्वती तं वीक्ष्य वेपथुमती निक्षेपणायोद्‌धृतं पदमुद्वहन्ती न याति न वा तिष्ठति।

शंकरः - अद्य प्रभृत्यवनाङ्गितवास्मि दासः
क्रीतस्तपोभिरधिकं क्लमिता मयासि।
नातः परं खलु कदापि भवेद् वियोग -
श्चार्धाङ्गिनी भव हरैक वधूः प्रसीद ॥[९२]

यहाँ शिव पार्वती परस्पर आलम्बन है। वटुक का शंकर रूप तथा पार्वती की तपश्चर्या से शिव का प्रसन्न होना उद्दीपन है। पार्वती का कम्पन, सम्भ्रम तथा शिव द्वारा पार्वती का कर ग्रहण अनुभाव है। हर्ष आदि संचारी भाव हैं, जो शृंगार रस की अभिव्यक्ति कराते हैं।

शिव के क्रोध से कामदेव के भस्मीभूत होने पर रति का विलाप करुण रस को पुष्ट करता है।[९३] संगीत प्रधान कैशिकी वृत्ति की यहाँ प्रधानता है।

'रामवनगमनम्' करुणरस प्रधान एकांकी है। यहाँ वात्सल्य तथा शान्तरस भी अनुभूत होते हैं। इसमें वन जाते हुए राम करुण रस का आलम्बन हैं। कैकेयी द्वारा राम के लिए चौदह वर्ष वनवास उद्दीपन है। दशरथ द्वारा राम को रोकना, दशरथ सहित कौशल्या सुमित्रा आदि का रुदन अनुभाव है। निर्वेद, दैन्य आदि संचारी भाव हैं। इनसे करुणरस सामाजिकों के आस्वाद का विषय बन रहा है। यथा—

दशरथः - मा पुत्रक मा जहीहि पितरम्।
त्वया विरहितं नगरं वन मिव ॥[९४]

राम के वनगमन की आशंका मात्र से व्याकुल दशरथ के वाक्य राम के प्रति उनके वात्सल्य के अभिव्यंजक हैं।[९५] राम के वनगमन से दुःखी दशरथ आदि को राम का रामत्व बताकर वशिष्ठ द्वारा दिये गये उपदेश शान्तरस की अभिव्यक्ति करते हैं।[९६] यहाँ भी संगीत नृत्य प्रधान कैशिकी वृत्ति की प्रधानता है। 'सीताहरणम्' में विप्रलम्भ शृंगार की प्रधानता है। रावण द्वारा सीता का अपहरण कर लेने पर राम की विकलता विप्रलम्भ-शृंगार की आस्वादक है।[९७] यथा—

स्रजं प्रभ्रष्टां दृष्ट्वा निकटं, सहसास्पष्टं राक्षसकपटम्।
विगलित धैर्यः क्रन्दति राम, एहि जानकि प्रिये क्वासि त्वम् ॥

यहाँ विप्रलम्भ शृंगार के आस्वादन में सीता आलम्बन है, रावण द्वारा उसका अपहरण, सीता की टूटी बिखरी माला उद्दीपन है। राम का विलाप, भूमि पर गिरना अनुभाव है। मूर्च्छा वितर्क आदि संचारी भाव है।

'अन्नदेवता' बाल एकांकी है। यहाँ अमर्ष,[९८] औत्सुक्य[९९] आदि व्यभिचारी भाव प्रधानतः व्यंग्य है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः ज्ञात होता है कि 'अन्नदेवता' के अतिरिक्त 'पाददण्डः', 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्', 'रामवनगमनम्' तथा 'सीताहरणम्' पूर्णतः रसाप्लावित रचनाएँ हैं। इनमें से 'पाददण्डः' 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' तथा 'सीताहरणम्' में शृंगार रस अंगी है तथा रामवनगमनम् में करुण रस की प्रधानता है। अन्नदेवता को छोड़कर अन्य चारों ही कृतियों में संगीत नृत्य की बहुलता के कारण कैशिकी वृत्ति भी विद्यमान है।

श्रीमती देवकी मेनन् विरचित कालीदर्शनम् का अंगीरस शृंगार है तथा निर्वहण सन्धि में अद्भुत रस की योजना की गई है। शारदा देवी द्वारा पति को देखने की उत्कण्ठा विप्रलम्भ शृंगार की अभिव्यंजिका है। यथा–

शारदा (आत्मगतम्) प्रियतमं द्रष्टुं त्वरते मे मनः। किन्तु यावन्न शान्तिर्ज्वरस्य तावतत्रैव स्थातव्यं x x x **(ललाटं स्पृष्ट्वा) उत्कण्ठितायाः मे ज्वर वर्तते एव। किं करिष्यामि? अञ्जलिं कृत्वा। देवि! दयामयि! शीघ्रं मां भर्तुः समीपं प्रापय।**[१००]

यहाँ पति राम कृष्ण देव आलम्बन है, दक्षिणेश्वर में उनकी उन्मत्तावस्था का श्रवण उद्दीपन है। शारदा द्वारा उन्हें देखने की इच्छा, उत्कण्ठा आदि अनुभाव हैं तथा स्मृति व्यग्रता व्याधि संचारी भाव हैं। इन विभावादि से विप्रलम्भ शृंगार का आस्वाद हो रहा है।

नाट्यशास्त्रीय नियम के अनुरूप निर्वहण सन्धि में अद्भुत रस की योजना की गई है। स्वप्न मे देवी के दर्शन एवं कर स्पर्श से शारदा देवी का विस्मित होना अद्भुत रस के आस्वाद का हेतु है।[१०१]

कुचेलवृत्तम् में कुचेल के परिवार की भगवान् कृष्ण के प्रति अनुरक्ति से भक्ति रस की प्रतीति होती हैं।[१०२] इस रूपक में कुचेल के घर की दरिद्रता, बच्चों का बुभुक्षा से व्याकुल होना करुण रस का पोषक है।[१०३] यहीं कृष्ण सुदामा के मुठ्ठी भर चिवड़े के प्रतिदान में परम ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। घर पहुँचने पर दरिद्रता के स्थान पर ऐश्वर्य देखकर उत्पन्न, सुदामा का विस्मय भाव सहृदयों को अद्‌भुत रस की अनुभूति कराता है।[१०४]

सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् में कुब्जा की कृष्ण के प्रति भक्ति प्रधानतः व्यंग्य है। भीड़ को पारकर कुब्जा का कृष्ण के पास पहुँचना तथा अंगराग से उनका अनुरंजन करने में भक्तिरस चर्वणा का विषय बनता है।[१०५] कुब्जा के कुब्ज दूर होने में अद्‌भुत रस चर्वित होता है।

डॉ० नलिनी शुक्ला द्वारा विरचित 'राधानुनयः' में अंगीरस के रूप में विप्रलम्भ शृंगार रस तथा अन्त में भक्ति रस की योजना की गई है। संगीत नृत्य प्रधान कैशिकी वृत्ति यहाँ प्रयुक्त हुई है। सखियों के साथ कृष्ण को रास क्रीड़ा में रत जान राधा मान करके उनसे दूर जली जाती है तथा उत्कण्ठित होती है।

राधा - (सुखीं प्रति)
वयस्ये ! वासन्ती कुसुमितलतावृक्षविपुला
वनस्येयं शोभा सुरभि मकरनन्दांचित् दिशा।
समुत्कण्ठां चित्ते प्रथयति विमुग्धेभृशमहो ।
वियोगः कृष्णस्य क्षणमपि न धैर्याय तदलम् ॥[१०६]

यहाँ आलम्बन कृष्ण है। कृष्ण की अनुपस्थिति, बसन्त ऋतु, निकुंज का एकान्त उद्दीपन है। राधा का उत्कण्ठित होना, सखि को कृष्ण के समाचार लेने भेजना अनुभाव है। स्मृति आदि संचारी है। अतः कृष्ण विप्रलम्भ शृंगार है।

अन्त में राधाकृष्ण के लोकोत्तर स्वरूप की वर्णना से भक्तिरस पुष्ट होता है। यहाँ मधुर भक्तिरस है।[१०७]

यथा–आर्चिके-असुकृतमोहतमोधर ! सुकृतदिवाकर हे
प्रणतविधारण नाथ ! जय जयदेव हरे ॥
राधाशक्तिसमेतं ! करूणामूर्ते हे।
कुरु मम मनः सनाथं जय जयदेव हरे ॥[१०८]

यहाँ सखियों की लोकोत्तर भगवत् स्वरूप कृष्ण तथा शक्ति स्वरूपिणी राधा के प्रति रति प्रकट हुई है। वही भक्तिरस का आस्वाद करा रही है।

पार्वतीतपश्चर्या में शिवपार्वती के मिलन के रूप में शृंगाररस प्रधान है।[१०९] कामदेव के भस्मीभूत होने पर रति के विलाप में करुणरस की प्रतीति होती है। संगीत नृत्य प्रधान कैशिकी वृत्ति का यहाँ प्रयोग हुआ है।

'मुक्ति महोत्सवः' में स्वतन्त्रतादिवस पर आयोजित कार्यक्रम को देखने आये भारी भरकम सेठ के लटकते हुये पेट को देखकर हास्यरस की अनुभूति होती है लेकिन हास्यरस अंग भूत ही है। अंगीरूप में नारी जागरण के प्रति महिलाओं का उत्साह वीररस की अभिव्यक्ति कराता है। यहाँ तत्सम्बन्धी सात्वती वृत्ति है।

डॉ० मिथिलेश कुमारी विरचित 'आम्रपाली' शान्तरस प्रधान नाटिका है। अंगरूप में शृंगार वीर तथा अद्भुत रस अभिव्यक्त हुए हैं। नाट्य में शान्तरस की पुष्टि न हो पाने के कारण धनंजय आदि ने नाट्यदृष्टि से आठ ही रस माने हैं किन्तु नाट्यकर्त्री को नाट्यदृष्टि से भी नौ रस ही मान्य हैं तथा इस नाटिका में शान्तरस की प्रधानता स्वीकार्य है।[११०] यहाँ शान्त रस का आलम्बन भगवान् बुद्ध हैं; उनके उपदेश उद्दीपन विभाव हैं आम्रपाली द्वारा बुद्ध की शरण जाना, भिक्षुणी बनना अनुभाव हैं हर्ष, स्मृति, मति निर्वेद आदि व्यभिचारी भाव हैं। इन विभावानुभाव संचारी भावों के सम्मिश्रण से शम शान्तरूप में उद्बुद्ध हो रहा है। यथा– आम्रपाली-(मन्दस्वरेण) **"अद्य मे पुनर्जन्म भविष्यति सखि ! तथा च भूतदयावतारस्तथागतो ह्यात्रागत्य मां सनाथीकरिष्यत्येवं विचिन्त्याहं सुखातिशयमनुभवामि। विश्रान्तमनसा बारम्बारं मयापि परमा मुक्तिरेव विचिन्त्यते अद्याहं चिरसुखस्यान्तिकमुपविशामि, बुद्धशरणं गच्छामीति जपन्त्या च मे स्थितिरनुकूला प्रतीयते ॥**"[१११]

प्रथम अंक में शृंगार का पूर्वराग[११२] अथवा अयोग नामक भेद अभिव्यक्त हुआ है। अजातशत्रु प्रथमतः चित्र दर्शन, अनन्तर साक्षात् दर्शन से आम्रपाली की ओर आकृष्ट होता है।[११३] आम्रपाली भी अजातशत्रु को प्रथम दृष्टया देखकर आकृष्ट होती है।[११४] यह स्थिति पूर्वराग की है। द्वितीय अंक में आम्रपाली का पूर्वराग कर्तव्य की बलि चढ़ जाता है। अतः अजातशत्रु का प्रेम एक तरफा रह जाने से शृंगारभास बन जाता है।[११५] आम्रपाली द्वारा अस्वीकार किए जाने पर अजातशत्रु वैशाली पर आक्रमण की धमकी देता है। लिच्छिविगणराज्य वासी उसके रण निमन्त्रण को सोत्साह स्वीकार करते हैं।[११६] यहाँ आम्रपाली तथा गणराज्य की मर्यादा की रक्षा के लिए पुरवासियों द्वारा अजातशत्रु के रण निमन्त्रण को उत्साहपूर्वक स्वीकार करने से वीररस की अनुभूति होती है।

प्रथम अंक में आम्रपाली के लोकोत्तर मधुर संगीत के रस प्रवाह को सुनकर अनायास उससे आकृष्ट होकर पुरुष वर्जित राजोद्यान में प्रवेश कर जाता है।[११७] यहाँ आम्रपाली के संगीत के प्रति अजातशत्रु का विस्मयभाव अद्भुत रस की प्रतीति करा रहा है।

आम्रपाली नाटिका में भारती वृत्ति सहित यथास्थान कैशिकी एवं सात्वती वृत्तियाँ भी हैं। प्रथम अंक में संगीत का रोचक प्रयोग है[११८] जिसे सुनकर अजातशत्रु तथा सेनापति मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। द्वितीय अंक में भी स्वयंवर स्थल पर स्थिति के अनुसार शृंगाररससिक्त, वाद्यालय से युक्त गीत संगीताचार्य द्वारा प्रस्तुत किया गया हैं।[११९] अतः कैशिकीवृत्ति है।

द्वितीय अंक में सात्वती वृत्ति है। वहाँ आम्रपाली को प्राप्त करने में असमर्थ अजातशत्रु के क्रोधयुक्त वचन वैशाली वासियों के लिये उत्तेजनकारी होने से सात्वती वृत्ति का उत्थापक अंग हैं।[१२०]

दशमस्त्वमसि एकांकी संग्रह की अधिकांश एकांकियों में वीर तथा हास्यरस अंगीरस रूप में आया है।

उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम् में अंगीरस हास्य तथा अंगरूप में अद्भुत रस सहृदयों की चर्वणा का विषय बना है। स्वर्ग में कल्पवृक्ष के नीचे ग्रामीण रौद्ररूपमयी, झाडू से पीटती हुई अपनी पत्नी की कल्पना करता है। तत्काल उसकी कल्पना सजीव होती है। स्वर्गवीथियों में वह अपनी पत्नी से बचने के लिए भागता है। उसकी पत्नी झाडू लिए उसके पीछे-पीछे मारने दौड़ती है। हास्योत्पादक होने से यह दृश्य हास्य रस का विषय है। यहाँ ग्रामीण आलम्बन है। उसकी विकल्पना उद्दीपन है। पत्नी से भयभीत होकर ग्रामीण का भागना अनुभाव है। भय, विस्मय दैन्य शंका आदि संचारी भाव है।[१२१]

यहां अंगभूत अद्भुत रस भी आस्वाद्य है। अद्भुत रस का आलम्बन ग्रामीण है; स्वर्गस्थ नन्दन वन, कल्पवृक्ष के नीचे बैठते ही इच्छाओं का पूर्ण

होना उद्दीपन हैं ; कल्पवृक्ष के नीचे ग्रामीण द्वारा विचार करना, अप्सरा व गन्धर्वों का सेवा में उपस्थित होना अनुभाव है । अभिलाषा, चिन्ता, हर्ष आदि से सहृदयगत विस्मय भाव अद्भुत रस की अनुभूति कराता है ।[१२२]

दशमस्त्वमसि हास्यरस प्रधान एकांकी है । दस मुनियों द्वारा पूरी संख्या में उपस्थित होने पर नौ मुनियों का ही परिगणन करना हास्योत्पादक है । यहाँ मुनिगण आलम्बन, एक मुनि के अन्वेषण सम्बन्धी भ्रान्ति उद्दीपन है । एक मुनि के न मिलने से दुःखी होना नाविक को चोर समझ कर शाप देने को तत्पर होना, नाविक द्वारा दसों को गिनने पर प्रसन्न होना आदि अनुभव है । हर्ष चिन्ता उग्रता आदि संचारी भाव है । इनसे हास्यरस पुष्ट हो रहा है ।[१२३]

ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः हास्य अंगीरस है और रौद्र रस अंग रूप से आस्वाद्य है । गृहप्रवेश के शुभ अवसर पर गोपाल हरिपाल शिवपाल तथा उनके पिता जगत्पाल द्वारा गृहस्वामी की मृत्यु की कल्पना करके ऊपर की मंजिल से शवावतरण की विविध विधियों के लिए दिए गए तर्क हास्योत्पादक हैं ।[१२४] एकांकी में हास्यरस का आलम्बन गोपाल शिवपाल हरिपाल तथा जगत्पाल हैं । तिमंजिला भव्य भवन उद्दीपन है । सूक्ष्मता पूर्वक निरीक्षण करके शवावतरण की कल्पना अनुभाव है । चिन्तन, विस्मय, तर्क आदि संचारी भाव है । इनसे हास्य रस पुष्ट हो रहा है ।

अंगरूप में रौद्ररस अनुभूत होता है ।[१२५] रौद्ररस का आलम्बन जगत्पाल तथा उसके तीनों पुत्र हैं ; गृहप्रवेश के समय इन तीनों के द्वारा की गई गृहस्वामी की मृत्यु एवं शवावतरण की कल्पना एवं तर्क उद्दीपन हैं । गृहस्वामी द्वारा चारों को बन्दी बनाकर दण्डित करना अनुभाव है । आवेग, चिन्ता, उग्रता आदि संचारी भाव हैं । ये सब सम्मिलित रूप से रौद्ररस के आस्वाद्य के हेतु है ।

न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धतेगिरिः एकांकी में अंगीरस विप्रलम्भ शृंगाररस है । पार्वती का पति सत्याग्रह में बन्दी बनाये जाने पर उसकी पत्नी पार्वती भारत के शीघ्र स्वतन्त्र होने की आशा न होने पर भी उसकी चिर प्रतीक्षा में संलग्न रहती है । यथा—"**अम्बे ! कथमेवं चिन्तयति भवती । कालान्तरे यदा भारतं स्वाधीनं भविष्यति, तदा सः अवश्यमेवागमिष्यति । एष एव मम विश्वासः । यशोदा-तावत्कालं कथं प्रतीक्षारतास्थास्य सिवत्से । कदा भारतस्य स्वातन्त्र्यं सम्भविष्यति, कदा च गोपालस्य प्रत्यावर्तनं भविष्यति ।**"[१२६]

उपर्युक्त उदाहरण में गोपाल आलम्बन, उसका आजीवन कारावास उद्दीपन, पार्वती द्वारा प्रतीक्षा अनुभाव है जो चिन्ता तर्क आदि संचारी भावों से मिलकर विप्रलम्भ शृंगार की प्रतीति करा रहे हैं ।

'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' का अंगीरस वीर है—

'भवतसुतोऽमद्य विद्यालयं परित्यज्य महात्मनो गान्धिमहोदयस्याह्वानमवधार्य भारतस्य स्वराज्याभियाने तत्परोऽभवम्। x x x तथाचोक्तं नीतिशास्त्रैरपि–

स्वाधिकारं परित्यज्य दासत्वे यश्च तुष्यति।
यतते यो न मुक्त्यर्थं व्यर्थं स्यात्तस्य जीवनम् ॥'[१२७]

यहाँ महात्मा गान्धी आलम्बन, देश की परतन्त्रता उद्दीपन, विद्यालय छोड़कर सत्याग्रही बनना अनुभाव है; हर्ष मति तथा गर्वादि संचारीभाव वीररस को पुष्ट कर रहे हैं। अंग रूप में करुण रस भी आस्वादनीय है। एकांकी में वेद प्रकाश को खोजने आये राजपुरुषों द्वारा उसके वृद्ध पिता को थाने लाकर पीटना, परिणाम स्वरूप मृत्यु, पत्नी की दुर्दशा करना, उसके घर में आग लगवाना आदि घटनाएँ करुणरस को पुष्ट करती हैं।[१२८]

'सत्यमेव जयते' वीररस से ओत प्रोत एकांकी हैं। सत्याग्रह के प्रति गान्धी के उत्साह की यहाँ प्रधानता है–

"गान्धी–विभेति केवलं स एव यो दुराचरणं करोति। निर्भयो भवति सत्यव्रतः। न मया किंचिदनुचितं कृतं शासनोल्लंघने प्रभो! यथेयं पृथ्वी ...... जलादयो भगवत्प्रदत्ताः पदार्थाः मानवमात्रहितार्थम् तथैव लवणमपि प्राकृतिकं बहुजनहितायैव श्रूयते। यदि भारतीयाः सुमनसौरभस्याधिकारिणस्तर्हि कथ च लवणस्याधिकारिणः भवच्छासनविधानमेवात्र अनौचित्यं प्रतिपादयति।"[१२९]

यहाँ गान्धी जी आलम्बन, अंग्रेज सरकार द्वारा लवण निर्माण पर रोक उद्दीपन है। गान्धरी के नेतृत्व में नमक कानून तोड़ना, बन्दी बनाकर न्यायालय में उपस्थित होना आदि अनुभाव है तथा हर्ष धृति मति आदि संचारी भाव है, जो वीररस को पुष्ट कर रहे हैं।

सत्य के प्रति गान्धी की निष्ठा देखकर तथा उनके तर्क सुनकर वाइसराय भड़क उठता है। उसके व्यवहार से रौद्ररस का आस्वाद होता है–

"वाइसरायः–(सकोपम्) दुर्विनीतस्त्वमसि गान्धिन्! सहसोल्लंघनमस्य शासनस्य सर्वथानुचितम्। इत्थं विमृश्य त्यज इदमान्दोलनं अन्यथा त्वदर्थं मृत्युदण्डो विधीयते।"[१३०]

यहाँ अंगरूप में उपनिबद्ध रौद्ररस गान्धी के उत्साह को बढ़ाता हुआ वीररस का ही पोषण कर रहा है।

'चराचरसंचित कर्मयन्त्रियम्' तथा 'भक्तराजः' भक्तिरस प्रधान रूपक है। यथा— (सुव्रतः प्रेमोन्मत्तं संकीर्तयतिनृत्यति च भावविह्वलः)

सुव्रतः - धन्योऽहं जयति नारदो मुनिः । तथाहि
आसामहो चरणरेणुजुषामहंस्यां।
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ॥

(एवं कीर्तयन् यावदसौमूर्च्छितो बभूव तावन्नारदेन द्रष्टुं यत् स्वयं हरिणाऽसौ चेतनतां नीयते)[१३१]

चराचरंसंचितकर्मयन्त्रितम् एकांक के इस उद्धरण में विष्णु आलम्बन है, दर्शनार्थ प्रतीक्षा करने का विष्णु का सन्देश उद्दीपन है।

सुव्रत की भावविह्वलता, नर्तन, हरिसंकीर्तन आदि अनुभाव है। हर्ष, दैन्य तथा मूर्च्छा आदि संचारी भाव है। इनसे भक्तिरस प्रतीत हो रहा है।

भक्तराजः में विष्णु एवं नारद को अतिथिरूप में घर आया देखकर भक्त कृषक अत्यन्त आह्लादित होता है।[१३२] वहाँ भगवान् आलम्बन, उनका अतिथिरूप में कृषक के घर पधारना उद्दीपन है। कृषक का प्रसन्न होकर नर्तन, ताजे गो दुग्ध से सत्कार अनुभाव है। हर्ष संचारी भाव है। जो भक्तराज गत हरि विषयक प्रीति को भक्ति रस के रूप में पुष्ट कर रहे हैं।

सचाप्यस्ति रजक एव में कोई रस पुष्ट नहीं हो पाया है। आरम्भ में दो रजकों के विवाद में हास्य का किंचित् आभास मिलता है लेकिन वह हास्यरस रूप में पुष्ट नहीं हो पाया है।[१३३] महात्मा के ध्यान, धारणा, समाधि आदि अवस्थाओं में किंचिद् भगवद् विषयक रति की प्रतीति होती है लेकिन पूर्णतया पुष्ट न हो पाने से रस नहीं बन पायी है। जैसे ही धोबी उसे मारने आते हैं वह महात्मा तत्काल भगवद् आस्था एवं विश्वास छोड़कर उन्हें मारने के लिए पत्थर उठा लेता है। भगवान उसकी यह दशा देखकर उसकी रक्षा से विरत हो जाते हैं।

डॉ० मिथिलेश कुमारी के उपर्युक्त रूपकों में रस एवं वृत्ति तत्त्व के समीक्षण से स्पष्ट होता है कि 'आम्रपाली' आद्यन्त रसाप्लावित प्रौढ़ रचना है। दशमस्त्वसि एकांकी संग्रह की अपेक्षा बड़ी रचना होने से यहाँ रस परिपाक का अधिक अवसर है। एकांकियों में रस परिपाक के स्थान पर चमत्कृति पैदा करना ही प्रमुख उद्देश्य है जिससे मातृभूमि के प्रति, ईश्वर के प्रति तथा ज्ञान के प्रति प्रेम उत्पन्न करना आदि शिक्षा दी गई है। रस वर्गीकरण की दृष्टि से अलक्ष्यं दूरदर्शनम्, उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम्, दशमस्त्वमसि तथा ज्ञानेनहीनाः पशुभिस्समाना हास्यरस प्रधान रचनाएँ हैं। इन रूपकों में हास्यरस के माध्यम से ज्ञान के व्यवहारिक पक्ष को अपनाने की शिक्षा दी गई है। माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, सत्यमेवजयते में वीर रस अंगी है। ये दोनों रचनाएँ स्वदेश के प्रति निष्ठा उत्पन्न करती है। चराचरसंचित कर्मयन्त्रितम्, भक्तराजः तथा सचाप्यस्तिरजकः एव में भगवद् निष्ठा की शिक्षा दी गई है। ये भक्ति रस प्रधान रचनाएँ हैं। आम्रपाली शान्तरस प्रधान है। इस प्रकार नाट्यकर्त्री ने शान्त, भक्ति एवं वीररस को प्रधानतः अपनाया है। न मुनिः पुनरायातोन चासौ वर्धते गिरिः में यद्यपि विप्रलम्भ शृंगार प्रधान है तथापि अंगभूत वीररस उस विप्रलम्भ को पुष्ट कर रहा है।

ब्रह्मचारिणी वेला देवी रचित 'नचिकेतश्चरितम्' शान्तरस प्रधान एकांकी है। यहाँ शमभाव के लिए यम आलम्बन विभाव है उसके द्वारा दिया गया आत्मविषयक तत्त्वोपदेश उद्दीपन है। नचिकेता द्वारा यमलोक को प्रस्थान, देवताओं द्वारा उपस्थापित विघ्न बाधाओं में अविचल रहना अनुभाव तथा मति धृति आदि व्यभिचारी भावों से शमभाव उपचित होता हुआ शान्तरस का आस्वाद कराता है।[१३४]

यहाँ अंगरूप में अमर्ष एवं त्रास भाव भी अभिव्यक्त हुए हैं।[१३५] स्वयं को दान करने सम्बन्धी नचिकेता के प्रश्न सुनकर पिता का क्रुद्ध होना अमर्ष भाव का तथा यमलोक के द्वार पर नचिकेता के अडिग रहने से इन्द्र का घबराना त्रास भाव की अनुभूति कराता है।

'महीयसी गार्गी' का प्रधान रस धर्मवीर है। अध्यात्मज्ञान की प्राप्ति के प्रति गार्गी की जिज्ञासा तथा उसके निवारण का उत्साह यहाँ प्रधान रूप से अभिव्यंग्य है। यहाँ याज्ञवल्क्य आलम्बन, ब्रह्मज्ञानियों की सभा में याज्ञवल्क्य का गाओं को हाँकने का आदेश उद्दीपन विभाव है। गार्गी द्वारा याज्ञवल्क्य को रोकना, शास्त्रार्थ करना तथा सन्तुष्ट होना अनुभाव है। मति तर्क-वितर्क शंका आदि व्यभिचारीभाव हैं। ये सब गार्गी गत उत्साह भाव को पुष्ट करते हुए वीर रस की अनुभूति कराते हैं।[१३६] वीररस से सम्बद्ध सात्वती वृत्ति की यहाँ प्रधानता है।

विराड्गृहम् में विस्मय, भाव का चमत्कार है लेकिन विभावानुभावव्यभिचारी भावों से पूर्णतः पुष्ट न हो पाने के करण यह रस रूप में परिणत नहीं हुआ है। सैरन्ध्री के रूप में आई द्रौपदी को दासी बनने का इच्छुक देख सुदेष्णा विस्मित होती है। उत्तर द्वारा कौरवों को पराजित करने का समाचार सुनकर उत्तरा विस्मित होती है। पाण्डवों का वास्तविक परिचय पाकर राजा विराट् विस्मित होता है। इस प्रकार एकांकी में विस्मय भाव की सफल अभिव्यक्ति है।[१३७]

डॉ० वीणापाणिपाटनी रचित 'निम्बपत्राणि' में हास्यरस की प्रधानता है। यहाँ वैदुल, शारद्वत तथा जीवक अपने मूर्खता पूर्ण कार्यों एवं विचारों से दर्शकों को हँसाते हैं।[१३८] वैदुल पकते हुए चावलों में से 'वदामि' के स्थान पर वद वद की ध्वनि अशुद्ध मानता है। 'इतो भ्रष्टस्ततो नष्टः' ऐसा विचार कर अशुद्ध उच्चारण से भ्रष्ट चावलों को नष्ट कर देता है। 'धृते पात्रं चेत् न' अपनी इस शंका के निवारण के लिए घृत पात्र को उलट देता है। यहाँ वैदुल शारद्वत, जीवक आदि स्नातक आलम्बन है। उन्हें भूख लगना, भोजन की व्यवस्था करना आदि उद्दीपन है। अशुद्ध उच्चारण श्रवण के भय से चावलों को नष्ट करना, शंका

निवारण के लिए घृतपात्र को उलट कर घृत नष्ट करना, प्रत्येक शाक में कोई न कोई दोष देखकर नीम पत्तों से बुभुक्षा शान्त करना आदि अनुभाव है। तर्क, मति, सम्भ्रम, शंका, धृति आदि संचारी भावों से सहृदयों को हास्य रस की अनुभूति होती है।

'प्रतिबुद्धा' एकांकी में हास्य रस अंगी है। गृहकार्यों एवं कार्यालय के कार्यों में सामंजस्य न कर पाने से उत्पन्न सुलेखा की दुरवस्था हास्यरस का आस्वाद कराती है।[१३९] यहाँ रस निष्पत्ति में सुलेखा हासभाव का आलम्बन है, आवश्यक सामान का यथास्थान न होना, गैस सिलेण्डर समाप्त होना, कार्यालय जाने में, शाक विक्रेत्री, मालकर आदि की उपस्थिति के कारण समय से न निकल पाना उद्दीपन विभाव है। सुलेखा एवं उसके पति में गृहव्यवस्था को लेकर कलह, सुलेखा द्वारा त्यागपत्र देना अनुभाव है। मति, श्रम, चिन्ता, हर्ष, शंका, धृति आदि संचारी भाव हैं। ये सब मिलकर हास स्थायी भाव को पुष्ट कर हास्यरस की प्रतीति कराते हैं।[१४०]

यथार्थ्यगरलम् में भी हास्यरस प्रधान रूप से अभिव्यंग्य है। यहाँ देवदत्त द्वारा पैसा बटोरने के लिए किया गया देवदत्त का प्रयास हास्यरस का अनुभूति कराता हैं।[१४१] रस निष्पत्ति की प्रक्रिया में देवदत्त आलम्बन है, पैसा प्राप्त करने की उसकी ललक उद्दीपन है। लाटरी खरीदना, भगवान से प्रार्थना करना, यजमानों को ग्रह शान्त कराने का सुझाव देकर पैसे एकत्रित करना आदि अनुभाव हैं। हर्ष चिन्ता मति आदि संचारी भावों से मिलकर उक्त भाव हास स्थायी भाव को पुष्ट करते हैं ।

इस रूपक में एक स्थान पर शोक भाव अभिव्यक्त हुआ है।[१४२] जब देवदत्त को पता चलता है कि लाटरी का परिणाम उसके नाम गलत छप गया था वस्तुतः उसके स्थान पर किसी अन्य के नाम परिणाम तथा यह जानकर लाटरी स्वयं के नाम खुलने का समाचार पाकर उत्पन्न हुआ हर्ष विषाद में बदल जाता है।

नारददौत्यम् भी हास्यरस प्रधान एकांकी है। यहाँ नारद का दूत बनकर भारत आना तथा यहाँ के खान-पान, रहन-सहन से विस्मित होना हास्य को उदबुद्ध करता है।[१४३] यहाँ नारद आलम्बन है। पाउडर के दूध की चाय, क्लब में पॉप संगीत सुनना, मंत्री महोदय आदि द्वारा जनसंख्या नियन्त्रण के लिए परिवार नियोजन आदि योजना हास भाव को और अधिक उद्दीप्त करते हैं। नारद के द्वारा चिन्तित होना, विस्मित होना आदि अनुभाव है। ग्लानि शंका हर्ष अमर्ष आदि यहाँ संचारी भाव हैं।

कविकालिदासीयम् में रस स्पष्ट नहीं हो पाया है। कर्पूर आदि कवियों द्वारा कालिदास से ईर्ष्या करने में अमर्ष भाव की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।[१४४] अन्यत्र पण्डितों को मुक्तहस्त दान करने में राजाभोज का उत्साह भी अभिव्यंग्य है।[१४५]

इस प्रकार वीणापाटनी के रूपकों में हास्यरस सर्वाधिक प्रधानरस है।

रत्नमयी देवी दीक्षित के 'भूमिकन्या' रूपक में करुणरस अंगी है। अंगरूप में रौद्र तथा वीररस का आनन्द भी लिया जा सकता है। सीता के भूमि में विलीन हो जाने पर सहृदयों को करुणरस की प्रतीति होती हैं।[१४६] इसी प्रकार राम द्वारा लोकाराधन के लिए सीता का परित्याग भी करुण रस का पोषक है। यथा–

"सीता–अन्धकारः । सर्वत्र परितोऽन्धकारः मां कवली कर्तुमिवातनोति। कोऽपि पन्था न दृश्यते बासन्ति। अतः परमं सोढुं न शक्नोमि जीवनं समाप्तमिति मन्ये। क्व तदानीन्तनो वनवासः क्व चैषः x x x **धावित्या गंगादेव्याः उदरे एव किंन पतेयमिति।**[१४७] यहाँ सीता आलम्बन हैं, राम द्वारा उसका अकारण परित्याग उददीपन है सीता द्वारा आत्म हत्या की इच्छा, रुदन आदि अनुभाव है। दैन्य, ग्लानि, स्मृति आदि संचारी भाव है।

अन्तःपुर में शम्बूक के प्रवेश से राजगुरु का क्रोध रौद्ररस की प्रतीति कराता है।[१४८]

ऋषियों को सताने वाले दस्यु का वध करने के लिए रामगत उत्साह वीर रस का पोषक है।[१४९]

सुधासहाय के 'परशुराम प्रतिज्ञा' में अंगीरस वीर तथा तत्सम्बन्धी सात्त्वती वृत्ति प्रधान है। कार्तवीर्य द्वारा पिता का वध करने पर परशुराम द्वारा पृथिवी को क्षत्रिय विहीन किये जाने की घोषणा में वीररस की अनुभूति होती है। यथा–

"परशुराम–भो-भो ! श्रूयतां। येन प्रकारेण एकेन क्षत्रियेण मम समाधिस्थः पिता हतः तेनैव प्रकारेण अहं सर्वदैव इमां धरां हैहय क्षत्रिय विहीनां करिष्यामि।"[१५०]

यहां आलम्बन कार्तवीर्यार्जुन है। उसके द्वारा पिता का वध उद्दीपन है। फरसा उठाना, प्रतिज्ञा करना, आगे चलकर पुत्रों सहित सहस्त्रार्जुन का वध करना आदि अनुभाव हैं। उग्रता अमर्ष आदि संचारी भाव हैं अतः परशुरामगत उत्साह सहृदय में उत्साह को उद्बुद्ध कर वीररस की अनुभूति करा रहा है।

भक्ति सुधा विरचित 'सुकन्या' में विस्मय भाव की सुन्दर सृष्टि हुई है। सर्वप्रथम सुकन्या बाम्बी में से चमकते नेत्रों को मणि समझकर विस्मित होती है।[१५१]

अनन्तर सुन्दरी सुकन्या के पति के रूप में वृद्ध में च्यवन को देखकर अश्विनी कुमारों को आश्चर्य होता है।[१५२] अन्त में स्वस्थ सुन्दर च्यवन को देखकर राजा शर्याति विस्मित होते हैं।[१५३] उनका विस्मय अद्भुत रस का अभिव्यंजक है।

समीक्ष्य प्रकास में रस एवं वृत्ति तत्त्व के पर्यालोचन से निष्कर्ष निकलता है कि—

१. अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों ने रसपक्ष को अपनाया तो है लेकिन अलंकार्य रूप में नही।
२. प्राचीन रूपक प्रमुखतः रसास्वादकारी होते थे लेकिन अर्वाचीन रूपक में यथार्थ परिस्थितियों के अवलोकन से चमत्कृति होती है।
३. प्राचीन रूपक आकार में बड़े होने से पूर्णतः रसपरक होते थे। आधुनिक रूपक प्रमुखतः एकांकी, नृत्यनाटिका तथा रेडियो रूपक हैं। इनमें भावानुभूति ही प्रभावित करती है।
४. प्राचीन रूपकों में शृंगाररस अथवा वीररस का अंगीत्व स्वीकार्य था। लेकिन अर्वाचीन रूपकों में यह नियम शिथिल है। यहाँ करुण, शान्त, भक्ति रसों की ओर अधिक प्रवृत्ति दिखाई देती है।
५. प्राचीन रूपकों का वृत्ति तथा रस का अटूट सम्बन्ध भी यहाँ शिथिल है। वृत्तियों का इन रूपकों में प्राचीन नाट्यशास्त्रीय नियमानुसार निर्वाह नहीं हुआ है।
६. प्राचीन रूपकों मे दर्शक रस में डूबा हुआ सद्भावों का उपदेश प्राप्त करता था लेकिन अर्वाचीन नाट्यों में सदसद् के तात्त्विक उपदेश द्वारा रस अथवा आनन्द प्राप्त करता है।
७. इन रूपकों द्वारा 'सद्य पर निर्वृत्तये' की अपेक्षा व्यवहारविदे रूप काव्य प्रयोजन की प्रधानतया सिद्ध होती है।

संदर्भ

१. नाट्यशास्त्रम्, २०/२४.
२. यद्यपि कायवाङ्मनसां चेष्टा एव सह वैचित्र्येण वृत्तयः ताश्च समस्तलोकव्यापिन्याऽनिशं प्रथमता प्रवृत्ताः प्रवाहेण वहन्ति तथापि विशिष्टेन हृदयावेशेन युक्ता वृत्तयो नाट्योपकारिण्यः .... ।
—अभिनवभारती, भाग ३, पृ० ८२-८३.
३. (क) पुरुषार्थ साधको विचित्रो व्यापारः वृत्तिः। —नाट्यदर्पणः, पृ० २७३.
(ख) तद्व्यापारात्मिका वृत्तिः ... ।—दशरूपकम्, २/४७.
(ग) स्युर्नायकादि व्यापार विशेषा नाटकादिषु ... ।—साहित्यदर्पणः, ६/१२३.
४. (क) विलासविन्यासक्रमः वृत्तिः। —काव्यमीमांसा, पृ० ९.

(ख) एवमेतेबुधैर्ज्ञेयां वृत्तयो नाट्यमातरः ।–नाट्यशास्त्रम्, २०/६४.
(ग) चतस्रो वृत्तयो ह्येताः सर्वनाट्यस्य मातृकाः ।–साहित्यदर्पणः, ६/१२३.

५. या श्लक्ष्णनेपथ्यविशेषचित्रा स्त्रीसंयुता बहुनृत्यगीता ।
कामोपभोग प्रभवोपचारा तां कैशिकीवृत्तिमुदाहरन्ति ॥–नाट्यशास्त्रम्, २०/४७.

६. प्रस्तावपातप्लुतलंघितानि चान्यानि मायाकृतमिन्द्रजालम् ।
चित्राणियुक्तानि च यत्र नित्यं तां तादृशीमारभटीं वदन्ति ॥–वही, २०/५५.

७. या सात्वेतेनेह गकुणेन युक्ता न्यायेन वृत्तेन समन्विता च ।
हर्षोत्कटा संहृतशोकभावा सा सात्वती नाम भवेत्तुवृत्तिः ॥–वही, २०/३८.

८. या वाक्प्रधाना पुरुषप्रयोज्या स्त्रीवर्जिता संस्कृतवाक्ययुक्ता ।
स्वनामधेयैर्भरतैः प्रयुक्ता सा भारती नाम भवेत्तु वृत्तिः ॥–वही, पृ० २०/२५.

९. वही, २०/६१-६२.

१०. वृत्तिः सर्वत्र भारती ।–दशरूपकम्, ३/६२.

११. समीक्षाशास्त्र, पृ० ८९४.

१२. (क) रसो वै सः, रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दीभवति । –तैत्तरीयोपनिषद्, ११/७/१.
(ख) सत्वोद्रेकादखण्डस्वप्रकाशानन्दचिन्मयः ।
वेद्यान्तरस्पर्शशून्यो ब्रह्मास्वाद सहोदरः ॥
लोकोत्तरचमत्कारप्राणः कैश्चित्प्रमातृभिः ।
स्वाकारवदभिन्नत्वेनायमास्वाद्यते रसः ॥ साहित्यदर्पणः, ३/२, ३.

१३. Sanskrit Drama, P. 336.

१४. साहित्यदर्पणः, ३/२५९.

१५. रस इति कः पदार्थः? उच्यते आस्वाद्यमानत्वात्, कथमास्वाद्यते रसः? यथाहि नानाव्यंजन संस्कृतमन्नं भुञ्जाना रसनास्वादयन्ति सुमनसः x x x वागांगसत्वोपेतान् स्थायिभावानास्वादयन्ति सुमनसः प्रेक्षकाः हर्षादींश्चाधिगच्छन्ति तस्मान्नाट्यरसाः व्याख्याताः ।
–नाट्यशास्त्रम्, ६/३२ वृत्ति

१६. नाट्यशास्त्रम्, पृ० ६/१६.

१७. अथ मुनीन्द्रसम्मतोवत्सलः
स्फुटं चमत्कारितया वत्सलं चरसं विदुः । –साहित्यदर्पणः ३/२५१.

१८. भक्तिरसामृतसिन्धुः, ३/५/१-२.

१९. (क) एक एव भवेदङ्गी शृंगारो वीर एव वा ।
अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः ॥ –साहित्यदर्पणः, ६/१०.
(ख) दशरूपकम्, ३/३३.

२०. देशदीपम्, पृ० ५०-५३.

२१. कविकुलकोकिलम्, पृ० ६७.

२२. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० २९.

२३. पल्लीकमलम्, पृ० ३०-३३.

२४. कविकुलकोकिलम्, पृ० ६५.

२५. शंकरशंकरम्, पृ० २९-३०.

२६. मार्गरेट्–अहं एतद्विषये किमपि न जाने। अहं जाने केवलं मम श्री गुरुं, विश्वविवेकरूपं स्वामिविवेकानन्दं, अहो सकल x x x सर्वोत्तम्।
—निवेदितनिवेदितम्, पृ० ३०.
२७. युगजीवनम्, पृ० ४५.
२८. यतीन्द्रयतीन्द्रम्–पाटलश्रीः ५ : २, पृ० २९-३०.
२९. पल्लीकमलम्, पृ० ४८-४९.
३०. देशदीपम्, पृ० २५, २९.
३१. वही, पृ० ३४-३८.
३२. निवेदितनिवेदितम्, पृ० ९४, १०३.
३३. मार्तण्डः–(सरोषम्) हाः हाः हाः। इदमेव तव विवाहे अनिच्छायाः कारणम्? सर्वं बुद्धम्। रे रे पापिष्ठे रे रे दुश्चरित्रे, रे रे छलकलाविशारदे। कीदृशस्तव व्यवहारः? मम वाग्दत्ता भूत्वाऽपि पर पुरुषेण सह यथेच्छं विचरितुं त्वं न लज्जसे? x x x असहनीयमेतत् अहमपि जाने प्रतिहिंसा ग्रहणपद्धतिम्। —पल्लीकमलम्, पृ० ३८-४४.
३४. मेघमेदुरमेदनीयम्, पृ० २३.
३५. शंकरशंकरम्, पृ० ७७, ७९.
३६. वही, पृ० ३०-३१.
३७. वही, पृ० ७५.
३८. पल्लीकमलम्, पृ० ५०-५९.
३९. गुप्तचरः–अहं भृशं क्लान्तः कृपया भवान् मह्यं आश्रयं ददातु। कुत्र भवतोः शिविरं सानुग्रहं तत्र मां नयतु त्वरितम्...।
जहाँगीरः–सरलकोमलदुर्बलान् ग्रामवासिनो वयं बहुशोदृष्टवन्तः...।
—देशदीपम्, पृ० ४४.
४०. पल्लीकमलम्, पृ० ३३.
४१. असूयिनी–मंजूषा, जुलाई १९५८, पृ० २९८, ९९.
४२. कृपाणिका–दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९७६, पृ० २४.
४३. क्षणिकविभ्रमः–मंजूषा, फरवरी १९५६, पृ० १४८-५२.
४४. बालविधवा–मंजूषा, जून १९५५, पृ० १७२-७९.
४५. होलिकोत्सवम्–मंजूषा, अक्टूबर १९५५, पृ० ३३-३४.
४६. जयन्तुकुमाउनीयाः–विश्वसंस्कृतम् ४ : ४, ५ : १, पृ० ३५२-५४, २०, २१.
४७. ज्ञानेश्वरचरितम्–मंजूषा, दिसम्बर १९६१, पृ० १०२.
४८. वीरभा–मंजूषा, नवम्बर १९५६, पृ० १३९-४२.
४९. कटुविपाकः—मंजूषा, दिसम्बर १९५५, पृ० ९१.
५०. स्वर्णपुर कृषीवलाः—मंजूषा, फरवरी १९५८, पृ० १६४.
५१. जयन्तुकुमाउनीयाः–विश्वसंस्कृतम् ४ : ४, पृ० ३५२-५४.
५२. वीरभा–मंजूषा नवम्बर १९५६, पृ० १४०.
५३. स्वर्णपुरकृषीवलाः– मंजूषा फरवरी १९५८, पृ० १६५.
५४. हरिसिंहः–विश्वसंस्कृतम् दिसम्बर १९८१, पृ० ४४-४५.
५५. कटुविपाकः—मंजूषा दिसम्बर १९५६, पृ० ८९.

५६. गिरिजायाः प्रतिज्ञा–मंजूषा मई १९५५, पृ० १४६.
५७. मीराचरितम्–मंजूषा अगस्त १९६०, पृ० २९९.
५८. परमभक्तशिवाजिराट्–विश्वसंस्कृतम् २७ : ४, पृ० ५९.
५९. स्वानुरूपैर्विभावानुभावसात्विकसंचारिभिः परिपुष्टा भगवद्विषयिणी प्रीतिरेव भक्तानां चेतसि समास्वाद्यतां प्राप्य प्रीतिभक्तिरससंज्ञां प्राप्नोति। प्रीतिभक्तिरसस्य स्थायिभावो भगवद्विषयिणी रतिरेव। – भक्तिरसविमर्शः, पृ० २६०.
६०. तुकारामचरितम्–मंजूषा फरवरी १९५६, पृ० १६८-६९.
६१. कपोतालयः – मंजूषा जून १९५६, पृ० २२९-३०.
६२. नारकण्डाश्रमः– दिव्यज्योतिः अक्टूबर १९८०, पृ० १२-१५.
६३. ज्ञानेश्वरचरितम्–मंजूषा दिसम्बर १९६१, प.० १०५.
६४. कृपाणिका–दिव्यज्योतिः अक्टूबर १९७६, पृ० २४.
६५. वृत्तशंसिच्छत्रम्–मंजूषा अप्रैल १९५७, पृ० २१५-१७.
६६. ज्ञानेश्वरचरितम् मंजूषा दिसम्बर १९६१, पृ० १०५-६.
६७. मीराचरितम्–मंजूषा, अगस्त १९६०, पृ० २२९, ३०४.
६८. कटुविपाकः–मंजूषा दिसम्बर १९५५, पृ० ८९.
६९. वीरभा–मंजूषा नवम्बर १९५६, पृ० १३५.
७०. मीराचरितम्–मंजूषा अगस्त १९६०.
७१. अनूपः, पृ० ८, ९.
७२. क्षणिकविभ्रमः–मंजूषा फरवरी १९५६, पृ० १४२-४३-४७.
७३. गिरिजायाः प्रतिज्ञा–मंजूषा मई १९५५, पृ० १४४.
७४. तुलाचलाधिरोहणम्–विश्वसंस्कृतम् मई-अगस्त १९७२, पृ० २४४-४७.
७५. मायाजालम्–विश्वसंस्कृतम् फरवरी-अगस्त १९७४, पृ० १३.
७६. अनुपमः–(निश्वस्य) मम सहचरी! अस्त्यकैवास्मिन् भूतले, या सततं कृतावासा लोचनपटलयोः

    इन्दिरा–(सम्भ्रान्ता) का नामैषा

    अनुपमः– भवतीमन्तरा न भवेत् काप्यन्यासहचरी मे ... x x x।

    – वृत्तशंसिच्छत्रम्–मंजूषा अप्रैल १९३९, पृ० २११.
७७. वही, पृ० २१४.
७८. होलिकोत्सवम्–मंजूषा अक्टूबर १९५५, पृ० २८, २९.
७९. असूयिनी–मंजूषा जुलाई १९५८, पृ० २९९-३००.
८०. आस्थापितं शृंगारं विशुद्धकरणं निवृत्तवीररसम्।

    हास्यप्रवचन बहुलं नर्म त्रिविधं विजानीयात्॥

    ईर्ष्याक्रोधप्रायं सोपालम्भवचनानुविद्धं च।

    आत्मोपक्षेपकृतं सविप्रलम्भं स्मृतं नर्मः॥ – नाट्यशास्त्रम् २२/४९, ५०.
८१. कञ्चना– x x x अहो प्रलापः! स्वयं तु सायं निवर्तसे कार्यालयात् रविवारस्तु सुहृद्गोष्ठीषु याप्यते, अवशिष्टश्च समयः स्वकार्यालयेषु तथापि मामुपालभसे। कुतो न स्वकार्येण विवाहितोऽसि। – कपोतालयः–मंजूषा जून १९५६, पृ० २३.
८२. कृपाणिका–दिव्यज्योति अक्टूबर १९७६, पृ० २४.

८३. परमभक्तशिवाजिराट्—विश्वसंस्कृतम् २७ :४,पृ० ५९.
८४. गणयज्ञ्छागः—दिव्यज्योतिः जुलाई १९७६,पृ० ११.
८५. हरिस्वामी—किं ततस्ततः। तदा राक्षसः ज्ञातवृतान्तः स्ववसतेः निरगच्छत् तदा शूरः मत्सहायः तं अयोधयत्। तदानीं शूरस्तयोः मानुषराक्षसयोः चित्रविचित्रास्त्रैः योधिनोः स्त्र्यर्थं महद् युद्धं बभूव।—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम् अप्रैल १९८३,पृ० १४
८६. विवेकानन्दविजयम्—पारिजातम् जुलाई १९८६,पृ० ४१.
८७. यमराजः—(शिष्यस्य प्रत्युत्पन्नमतित्वेन प्रहर्षितः सन्) वत्स!
तथैव, तथैव—आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तुं। बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च। इन्द्रियाणि हयान्याहुः।
—नचिकेतो यम संवादम्—पारिजातम् अगस्त-सितम्बर १९८४,पृ० २३.
८८. पाददण्डः सागरिका,२ :३,पृ० २६३.
८९. वही,पृ० २७१.
९०. ललिता—(सक्रोधं वाचं संहर) अनार्य, मया करणीयं न त्वयोपदेष्टव्यम् x x x आहवे यथा मनुष्याः हता तथैव किमवशिष्ट जीवितानां हृदयान्यपि हन्यन्ते।
—वही,पृ० २७५.
९१. पाददण्डः,पृ० २५८.
९२. पार्वतीपरमेश्वरीयम्,पृ० २७.
९३. वही,पृ० ८.
९४. रामवनगमनम्,पृ० ८.
९५. वही,पृ० ६.
९६. वही,पृ० ८.
९७. सीताहरणम्—हस्तलिखित,१/६४.
९८. अन्नदेवता—हस्तलिखित,पृ० ४,७.
९९. वही।
१००. कालीदर्शनम्—संस्कृत प्रतिभा,१२ :२,पृ० १६१.
१०१. वही,पृ० १६५.
१०२. कुचेलवृत्तम्—संस्कृतप्रतिभा ३ :२,पृ० २४०-४१.
१०३. तृतीयः—(रुदन्) ओदनं नास्ति चेद्दीयतां सत्वरम्
खादितुं किञ्चिदम्ब वरम्...।—वही,पृ० २३१.
१०४. कुचेलवृत्तम्—संस्कृतप्रतिभा ३:२,पृ० २३९.
१०५. सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम्—संस्कृतप्रतिभा ५ :२,पृ० २०८.
१०६. राधानुनयः ३/१२.
१०७. (क) स्वसमुचित विभावादिभिः पुष्टिं गता मधुरारतिरेव मधुरभक्ति-
रसरूपेण भक्तैः सहृदयसाधकैः स्वचेतसि समास्वाद्यते
—भक्तिरस विमर्शः,पृ० २६७.
(ख) स्थायीभावोऽत्र सम्प्रोक्तः श्रीकृष्णविषयारतिः।
मुख्या गौणी च सा द्वेधा रसज्ञैः परिकीर्तिताः॥—हरिभक्तरसामृत सिन्धुः,५/२
१०८. राधानुनयः,५/४४-४५.
१०९. पार्वतीतपश्चर्या (हस्तलिखित),पृ० १५.

११०. सूत्रधारः. . . कथय को वाऽत्र रस विशेषो यतस्तुरसे सारश्चमत्कार एवेति प्रसिद्धिः? नटः– भाव! अत्र शान्तरसः। x x x भाव नाटिकैषा केवलं शान्तरसे पर्यवसति। यद्यपि अत्र शृंगार वीराद्भुतरसानां निर्वाहो हि सर्वत्रैव परिलक्ष्यते अतो नानौचित्यम्।

–आम्रपाली, पृ० २.

१११. वही, पृ० ५/४६.

११२. श्रवणाद्दर्शनाद्वापि मिथः संरूढ रागयोः।
दशाविशेष योऽप्राप्तौ पूर्वरागः स उच्यते॥–सा० द० ३/१८८.

११३. आम्रपाली, १/पृ० १८.

११४. वही, १/पृ० १८.

११५. (क) अजातशत्रुः– x x x देवि! आगतोऽहं। कुत्रास्ति वरमाला? देहि मे दक्षिणकरम्।

आम्रपाली –राजकुमार! नात्र तदावसरः। वैशाली नगरनिवासिनः निर्णयानुसारमहं नगरवधूरित्यत्र नास्तिसन्देहः। अत एवाहं नूनमेव नगरवधूरूपेणैव स्थास्यामि॥ –आम्रपाली, २/पृ० २६.

(ख) वही, ५/पृ० ४७.

११६. वही, २/पृ० २८-२९.

११७. अजातशत्रतुः– सेनाधीश! कुतोऽयं रसप्रवाहः? चुम्बक इवाकर्षति मे मनश्चेयं स्वरमाधुरी। नैव नैवेषा लौकिकी वीणाझंकृतिः सौवीर!

सौवीरः– महाराज! मयापि अद्यैवं श्रुतेदृशीरागिणी। तदग्रे श्रूयताम्।–वही, १/पृ० १४.

११८. वही, पृ० १४.

११९. वही, २/पृ० २२.

१२०. आम्रपाली, २/पृ० २९.

१२१. सा पुनः सम्मार्जन्या प्रहरति। देवाश्च देव्यश्च तस्य ग्रामीणस्यावदशामवलोक्य जहसुः। अग्रे अग्रे स कर्षको वेगेन धावति स्वर्गलोकस्य राजमार्गे, पृष्ठतः सा ग्राम्या सम्मार्जनी हस्ता तमनुधावति।– उच्चासनस्यविकल्पना फलम् (दशमस्त्वमसि), पृ० १५.

१२२. ग्रामीणः (कल्पतरुं बारम्बारं संलक्ष्य) अहो सुरम्यस्तरुरसौ तत्र स्थित्यैव विचिन्त्यति सुदूरस्य लोकलोकान्तरस्य यात्रावशात् महत्कष्टमनुभवाम्यधुनाऽत्रश्रमं दूरी कर्तुं शरीर सम्मर्दनमनिवार्यम्, परं न कोऽप्यत्रास्मिन्निर्जने वने दृश्यते। (सहसातत्रोर्वशी तिलोत्तमामेनकाश्च गन्धवैरनुगम्यमानाआयाताः। ताः सर्वास्तस्य सेवायां संलग्ना बभूवुः) ग्रामीणः– आश्चर्यमिदं यन्मे वराकस्य सेवायामेतारूप गुणसम्पन्नाः कुमारिकाः सन्निष्ठं तत्पराः सन्ति। –वही, पृ० १४.

१२३. तृतीयः किंकथयसि? सर्वेऽत्रैव सन्ति? असम्भवं। भूयोभूयो गणनाकृता परन्न दृष्टोऽसौ दशमः, शापभयात् त्वमित्थं जल्पसि x x x।

नाविकः– (सर्वान् पंक्तौ स्थापयित्वा गणयति) एकः दौ त्रयः चत्वारः पञ्च, षष्ठ, सप्तम, अष्टौ, नवम, अतो दशमो भवानेव।

– उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम (दशमस्त्वमसि), पृ० ५४.

१२४. (क) गोपालः– देव! यदि भवानस्य तृतीयतले दिवंगतो भवति तर्हि केन विधिना शवावतरणं भविष्यति।

(ख) हरिपालः—नाथ ! ममभ्रातरौ शठराजौ स्तः कथं न ताभ्यामेवचिन्तितं यत् भवतः शवः खण्डविधिना सरलतया भूमावतारयितुं शक्यः।

—ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः, पृ० १८.

१२५. वही, पृ० १७, १८।

१२६. न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धतेगिरिः, पृ० ४९.

१२७. माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पृ० ३८-३९.

१२८. वेदप्रकाशः—प्रिये ! कुतो मे शान्ति ? नमेऽधुना किंचित् प्रयोजनमनेन स्वातन्त्र्येण गृहं नष्टीकृत्य को लाभोऽस्मिन् स्वराज्ये वञ्चितोऽहं सर्वथा, विनष्टो ममध्ययनक्रमः। गृहञ्च मम भस्मीभूतम्। मज्जनकोऽधोगतिमवाप अतो व्यर्थो मार्ग एष मंगले।

—माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, पृ० ४२-४३.

१२९. सत्यमेवजयते, पृ० ३५.

१३०. वही, पृ० ३६.

१३१. चराचरसंचितकर्मयन्त्रितम्, पृ० ६.

१३२. भक्तराजः—(साष्टाङ्गं प्रणम्य) अहो भाग्यवशादेवोपलब्धं दुर्लभं दर्शनमिदं (सगद्गदकण्ठं भावविह्वलतया) तयोः पुरतो नृत्यति, ततश्च निजधेनवे तृणं समर्प्य दुग्धदोहनं कृत्वा चैकस्मिन्पात्रे ताभ्यां साधुभ्यामर्पयति।

—भक्तराजः, पृ० २५, २६.

१३३. सचाप्यस्ति रजक एव, पृ० ७.

१३४. नचिकेताः—संशयो मे आत्मतत्वविषये—

येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्ये
अस्तीत्येके नायमस्मीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं
वराणामेष वरस्तृतीयः॥ —नचिकेतश्चरितम्, पृ० १५.

१३५. वही, पृ० ५, ८-९.

१३६. गार्गीः—याज्ञवल्क्य ! किं त्वमेव उपस्थितानाम् ऋषीणां मध्ये आत्मानं ब्रह्मनिष्ठं मन्यसे ? x x x अहं त्वां तर्कयुद्धे आह्वये तर्के पराजयो घटेत तर्हि ब्रह्मनिष्ठतया त्वमेव समर्थोभविष्यसि। —महीयसी गार्गी, पृ० ३०-३१.

१३७. (क) विराड्गृहम, पृ० ३८.

(ख) वही, पृ० ४५.

(ग) वही, पृ० ४८.

१३८. निम्बपत्राणि, पृ० ५-६-८

१३९. प्रतिबुद्धा, पृ० ११.

१४०. वही, पृ० १३-१५.

१४१. याथार्थ्यगरलम्, पृ० २७.

१४२. वही, पृ० ३५-३६.

१४३. नारददौत्यम्, पृ० ४८.

१४४. कविकालिदासीयम्, पृ० ५३.

१४५. वही, पृ० ५१.

१४६. भूमिकन्या, पृ० ११८.

१४७. वही, पृ० ८८.

१४८. वही, पृ० ४५.

१४९. वही, पृ० ४६.

१५०. परशुरामप्रतिज्ञा (वि० सं०), पृ० १२५.

१५१. सुकन्या–सख्यौ। पश्यतां पश्यतां बल्मीकस्योपरि द्वौ मणी प्रकाशेते एतेन शुष्कलतादण्डेन मणी अस्मात् स्थानात् भूमौ पातयामि।
–सुकन्या (विश्वभाषा ३ : १), पृ० २१.

१५४. द्वितीयपुरुषः– आवां देववैद्य कौ अश्विनीकुमारौ देवि! तवजीवनेयं कथमेव विधा विडम्बना आपतिता? ललनाकुलललामभूता त्वं तादृशेन कुरूपेण नेत्रहीनेन वृद्धेन कथं परिणीता।– वही, (वि० भा० ५ : ३), पृ० १३.

१५३. वही, पृ० १४.

दशम प्रकाश
आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों का उद्देश्य व शीर्षक

नाट्यरचना के प्रयोजन

"न प्रयोजनमनुदिदश्य मन्दोऽपि प्रवर्तते" के अनुसार मानव का क्रिया-कलाप सोद्देश्य होता है। नाट्य भी एक सप्रयोजन रचना है। यह अवश्य है कि देश, काल तथा जनसमूह की आवश्यकतानुरूप प्रयोजनों की प्रमुखता बदलती रही है। भरत ने नाट्यशास्त्र में अनेक स्थलों पर नाट्य-प्रयोजनों की चर्चा की है। उनके अनुसार नाट्य धर्म, यश तथा आयुष्य की वृद्धि करता है, बुद्धि को बढ़ाता है तथा लोगों को उपदेश प्रदान करता है। यह दुःखार्त, श्रमार्त तथा शोकार्त व्यक्तियों को विश्रान्ति देने वाला भी है।[१] महर्षि व्यास ने नाट्य को त्रिवर्ग का साधक माना है।[२] नाट्य का प्रयोजन रसास्वाद मानते हुए अभिनवगुप्त स्पष्ट करते हैं कि वस्तुतः विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों का समप्राधान्य नाट्य द्वारा ही अधिक सम्भव है क्योंकि नाट्य में रंगमंच के वातावरण, पात्रों के अभिनय, विविध वाद्य एवं चतुरगणिकाओं के गान के द्वारा रसास्वादन में बाधक व्यक्तिगत सुखादि भावों के निवारित हो जाने से असहृदय सामाजिक भी सहृदयों के समान रसास्वाद में समर्थ होते हैं।[३] धनंजय ज्ञान-प्राप्ति और त्रिवर्गसिद्धि को गौण तथा आनन्द-प्राप्ति को नाट्य का मुख्य प्रयोजन मानते हैं।[४] सागरनन्दी नाट्य-रचना का प्रयोजन धर्मादि की सिद्धि तथा मनोरंजन प्राप्ति दोनों को मानते हैं।[५] कालिदास नाटक को भिन्न रुचि वाले लोगों के मनोरंजन का साधन मानते हैं।[६]

शारदातनय के अनुसार भी भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले सामाजिक नाट्य से अपने मनोऽनुरूप आनन्द को प्राप्त करते हैं। अतः इनकी दृष्टि में मनोरंजन नाट्य का मुख्य प्रयोजन है।[७] रामचन्द्र-गुणचन्द्र ने जैनवाणी की उपासना करते हुए नाट्य-रचना को चतुर्वर्ग-फलप्रदायिनी कहा है[८] तथा वृत्ति में स्पष्ट किया है कि दृश्य-काव्य द्वारा धर्म, अर्थ तथा काम की प्राप्ति के अतिरिक्त मोक्ष प्राप्ति भी होती है।[९]

इस प्रकार प्राचीन आचार्यों के मत में रसाश्रित नाट्य के प्रयोजनों में आनन्दानुभूति सर्वोपरि है। इसके अतिरिक्त नाट्य से व्यहार-ज्ञान तथा उपदेश की प्राप्ति भी होती है। यद्यपि कोई भी नाट्य-रचना लोकोपदेश की दृष्टि से नहीं लिखी जाती अन्यथा नीतिकाव्य एवं नीतिकथा आदि से उसका कोई अन्तर ही न रह जाये; फिर भी इतना अवश्य है कि उससे कान्तासम्मिततयोपदेश दिया जाता है।[१०] अतः लोकानुरंजक होने के साथ नाट्य में सामाजिक, सांस्कृतिक,

राजनीतिक, धार्मिक तथा ऐतिहासिक विषयों के ज्ञानवर्धन में भी सहायता मिलती है।

आज कल नाट्य-विधान का उद्देश्य जीवन से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं और उसके समाधान खोजने का प्रयत्न करता है, साथ ही उनको प्रेक्षकों तक सम्प्रेषित करता है।

यूरोप के उदात्तवादी (क्लासिसिस्ट्स) तथा नवोदात्तवादी (निओक्लासिसिस्ट्स) आचार्यों के अनुसार काव्य का प्रयोजन शिक्षा देना है किन्तु एमील ज़ोला और फ्लाउवे आदि फ्रांसिसी प्रकृतिवादियों (नैचुरलिस्ट्स) और तथ्यवादियों (रियलिस्ट्स) के अनुसार कला कला के लिए होती है।[११] नवमानवतावादी (न्यू ह्यूमेनिस्ट्स) तथा उस सिद्धान्त के मानने वाले समीक्षक अपने समाजवादी दृष्टिकोण के कारण अपनी समस्त रचनाओं में उपदेशवाद को ही प्रधानता देते हैं, कलावाद को नहीं।[१२]

निष्कर्ष यह है कि नाट्य केवल विनोदजनन अर्थात् मनोरंजन का ही साधन नहीं है अपितु लोकहित करना तथा सदुपदेश देना भी इसका उद्देश्य है। नाट्य में अपनी रुचि को पुष्ट-तुष्ट करने वाली कला का आनन्द लेने के साथ-साथ रंगमंच पर जीवन की विविध अवस्थाओं का भी दर्शक साक्षात्कार करता है। नट के अभिनय में वह इतना तल्लीन हो जाता है कि उसे स्व, पर का ज्ञान नहीं रहता । इस आनन्द में रसानुभूति के साथ-साथ अव्यक्त रूप से उसके चरित्र, स्वभाव तथा वृत्तियों का भी परिष्कार होता जाता है तथा उसमें किस प्रकार के कार्य करने चाहिए तथा किस प्रकार के नहीं करने चाहिए का संस्कार जमता जाता है। इस प्रकार नाट्य-रचना का उद्देश्य मनोरंजन, आत्मप्रकाश, हितोपदेश, व्यवहार-ज्ञान एवं व्यक्तिगत व सामाजिक समस्याओं का समाधान आदि है। अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं में भी उपर्युक्त नाट्य-उद्देश्यों में से किसी न किसी उद्देश्य को देखा जा सकता है।

नाट्यशीर्षक— नाट्य का अधिकांश प्रभाव शीर्षक पर अवलम्बित होने के कारण इसे नाट्य का मुख भी कहा जाता है। नाट्य का नाम इतना आकर्षक रखना चाहिए कि सामाजिक उसे देखने तथा पढ़ने के लिए आतुर हो उठे।[१३] आचार्य कुन्तक प्रबन्ध वक्रता के अन्तर्गत नाट्यादि शीर्षक में भी वक्रता एवं चमत्कार की स्थिति आवश्यक मानते हैं। उनका मत है कि कथाभाग के वैचित्र्य की बात तो जाने दो ; प्रधान कथा के द्योतक नाम अथवा शीर्षक से भी कवि काव्य में कुछ अपूर्व सौन्दर्य उत्पन्न कर देता है।[१४] नाट्य के नामकरण के विषय में सीताराम चतुर्वेदी का मानना है कि नायक या व्यापार अथवा दोनों से सम्बद्ध या जाति परक ऐसा नामकरण किया जाना चाहिए जो उद्देश्य, वस्तु या स्थान या अभिव्यंजक हो।[१५] इस सम्बन्ध में आधुनिक नाट्यशास्त्री निम्नलिखित सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं—

१. नायक-प्रधान या पात्रप्रधान नाट्य का नाम नायक-परक या पात्र-परक होना चाहिए। यदि नायक-नायिका दोनों प्रधान हों तो दोनों के सम्मिलित नाम से नाट्य का नामकरण होना चाहिए।
२. व्यापार-प्रधान नाटक में मुख्य घटना या व्यापार से सम्बद्ध नामकरण होना चाहिए जैसे—मृच्छकटिकम् आदि ।
३. जिन रूपकों में पात्र और घटना दोनों प्रधान हों उनका नामकरण पात्र और घटना दोनों के ही अनुसार होना चाहिए, जैसे—अभिज्ञानशाकुन्तलम्।
४. यदि नाटक में किसी जाति-विशेष की वृत्ति दिखाई गई हो तो उस जाति के संकेत से नामकरण करना चाहिए, जैसे - मर्चेण्ट ऑफ वेनिस।
५. उद्देश्य प्रधान नाटकों में उद्देश्य या परिणाम के अनुसार नामकरण करना चाहिए ।
६. कभी-कभी कुछ वस्तु या स्थान ही नाटकीय घटना या पात्र की क्रिया के आधार होते हैं। ऐसी स्थिति में उन वस्तुओं या स्थानों के आधार पर नाट्य का नामकरण किया जा सकता है, यथा—मुद्राराक्षसम्।
७. प्रतीकात्मक नाटकों के नाम भी ऐसे होने चाहिए कि जिनसे नाट्य के विषय की ध्वनि स्पष्ट होनी चाहिए।

आजकल खण्डित वाक्यों में अथवा पूर्ण वाक्यों में भी शीर्षक रखने की प्रथा चल गई है। ऐसे शीर्षक भी आकर्षक एवं मनोहर लगते हैं। संक्षेप में रूपक का नाम विषय को स्पष्ट करने वाला आकर्षक होना चाहिए जो पाठक अथवा दर्शक को उसकी ओर उन्मुख कर सके।

प्रस्तुत प्रकाश में संक्षेप में अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की नाट्य रचना के उद्देश्य व शीर्षक का विश्लेषण - विवेचन करेंगे।

डॉ० रमा चौधुरी के **कविकुलकोकिलम्** नाटक की रचना का उद्देश्य चरितनायक कालिदास के चरित्र के माध्यम से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति अपनी लगन तथा निष्ठा से कठिन से कठिन लक्ष्य को भी प्राप्त कर सकता है। आरम्भ में अध्ययन से विमुख कालिदास लगनशील होने के कारण 'कविकुल कोकिलत्व' की उपाधि प्राप्त करने में सफल हुए।[१६] देवी सरस्वती से कविकुलकोकिल की उपाधि प्राप्त करने की प्रधान घटना के आधार पर ही नाटक का शीर्षक रचा गया है, जो अनुप्रासात्मक एवं आकर्षक है।

देशदीपम् की रचना का उद्देश्य देश-सेवा के लिए व्यक्तिगत हितों को तिलांजलि देने एवं आत्मोत्सर्ग करने की शिक्षा देना है। चम्पकवदन अपने परिवार को छोड़कर मातृभूमि के निमित्त वीरगति प्राप्त करता है। देशभक्त के लिए ही यहाँ 'देशदीप' पद का प्रयोग किया गया है।[१७] जिस प्रकार दीपक स्वयं जल कर दूसरों का मार्ग प्रशस्त करता है उसी प्रकार देश सेवक स्वयं वीरगति प्राप्त करके अपनी उत्साह रश्मियों से राष्ट्र का हित करते हैं।

निवेदित निवेदितम् चरित प्रधान रूपक है। चरितनायिका निवेदिता के जीवन के माध्यम से नाट्यकर्त्री विश्वबन्धुत्व तथा निःस्वार्थ सेवा की शिक्षा देना चाहती है। विदेशी महिला होने पर भी निवेदिता (मागरिट्) ने भारतवर्ष की सेवा में अपना समग्र जीवन निवेदित अर्थात् समर्पित कर दिया था।[१८] इसी गुण पर नाटक का यमकालंकार युक्त नामकरण किया गया है।

पल्लीकमलम् में ग्रामीण बाला कमलकलिका के सौन्दर्य, सौकुमार्य तथा हृदय की सरसता की कहानी द्वारा दैहिक आकर्षण से ऊपर उठकर प्रेम के आन्तरिक व सात्विक स्वरूप को प्रतिष्ठित करना नाट्यकर्त्री का मुख्य प्रयोजन है। नाटक की नायिका कमलकलिका राजकुमारी के जीवन की अपेक्षा अपने ग्राम्य-जीवन को ही पसन्द करती है तथा दीन-हीन दरिद्र रूपकुमार को अपना 'प्राणबन्धु' और मनोमानुष बनाती है।[१९] पल्लीकमलम् शीर्षक आकर्षक व कौतूहलपूर्ण है। नाटक की नायिका पल्ली (ग्राम) में कमल के समान है। जिस प्रकार कीचड़ में विकसित होने पर भी कमल समस्त पुष्पों में श्रेष्ठ है, उसी प्रकार पल्लीबाला होने पर भी कमलकलिका गाँव के नारी-समूह में श्रेष्ठ तथा आकर्षण का केन्द्र है।[२०]

मेघमेदुरमेदनीयम् की रचना का उद्देश्य कर्तव्यकर्म से प्रमाद न करने की शिक्षा देना है।[२१] नाटक का नायक अपने द्वारा रक्षित कुबेर के मायामदिरा वन के कमल सरोवर की रक्षा न कर सका फलतः उसे एक वर्ष के लिए नगर से निर्वासित होना पड़ा। नाटक में वर्षा ऋतु का वर्णन बहुत सुन्दर हुआ है। वर्षाकाल में पृथिवी मेघों से आच्छन्न होने से रमणीय हो जाती है। इसी सौन्दर्य की अभिव्यक्ति नाटक के शीर्षक से हो रही है।

यतीन्द्र यतीन्द्रम् की रचना द्वारा नाट्यकर्त्री अपने पति यतीन्द्र विमल के जीवन के माध्यम से मातृभूमि एवं गीर्वाण-भाषा के प्रति प्रेम का संचार करना चाहती है। यतीन्द्र विमल के अनुसार माँ सर्वश्रेष्ठ है। चाहे वह जन्मदात्री हो, मातृभूमि हो, जगज्जननी हो अथवा संस्कृत भाषारूपिणी हो।[२२] यतीन्द्र विमल गृहस्थ होने पर भी यतियों के समान निःस्पृह थे। नाटक का शीर्षक उनके चरित्र की इस प्रधान विशेषता को ही प्रकट करता है। पद की वीप्सा से शीर्षक में यमक व उपमा का आकर्षण उत्पन्न हो गया है—यतीषु इन्द्र इति यतीन्द्रः तद्वत् यतीन्द्र इति यतीन्द्रः यतीन्द्रः तमधिकृत्यकृतं नाट्यमिति यतीन्द्र यतीन्द्रम्।

युगजीवनम् भी जीवन चरितात्मक रूपक है। इसकी रचना का उद्देश्य श्री रामकृष्ण परमहंस की कल्याणकारिणी गौरवमयी जीवन गाथा के माध्यम से विवेक वैराग्य भक्ति तथा लोक हित का उपदेश देना है। युग जीवन पद रामकृष्ण के लिए प्रयुक्त हुआ है। उनका जीवन व्यक्तिगत न होकर युग के लिए था।[२३] अतः नाटक को 'युगजीवनं' शीर्षक दिया गया है।

शंकरशंकरम् का उद्देश्य वेदान्त प्रचारक श्री शंकराचार्य के लोकमंगलकारी जीवन के माध्यम से अध्यात्म-ज्ञान का उपदेश करना है। नायक के नाम पर ही नाटक का शीर्षक रखा गया है। शंकराचार्य शंकर का अवतार होने के कारण शंकर के समान थे[२४]—शंकरोति इति शंकरः तद्वत् शंकरः इति शंकर शंकरः तमधिकृत्य कृतं नाटकमिति शंकरशंकरम्।

श्रीमती रमा चौधुरी के नाटकों में उद्देश्य व नामकरण के विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि ये नाटक धार्मिक, राष्ट्रिय, नैतिक तथा आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हैं। उनके अधिकांश रूपक जीवन चरितात्मक हैं, अतः वे चरितनायक के माध्यम से तद्वत् उदात्त जीवन-मूल्यों के सम्प्रेषण की सिद्धि सामाजिकों में करना चाहती हैं। इस प्रकार के रूपकों में शंकरशंकरम्, युगजीवनम्, कविकुलकमलम्, कविकुलकोकिलम्, चैतन्य-चैतन्यम्, भारताचार्यम्, भारततातम्, यतीन्द्रयतीन्द्रम्, देशजनकम्, प्रसन्नप्रसादम् विशेष उल्लेखनीय हैं। शीर्षक रचना में भी नाट्यकर्त्री की विशेष प्रतिभा प्रदर्शित हुई है। इन्होंने प्रायः शीर्षक में आलंकारिक चमत्कार उत्पन्न करने का प्रयास किया हैं। ये शीर्षक कहीं तो अनुप्रासात्मक हैं , यथा—कविकुलकोकिलम्, रसमयरासमणिः, कविकुलकमलम्, तानतनुः, मेघमेदुरमेदनीयम् आदि। कहीं यमक व उपमा के चमत्कार से युक्त हैं, यथा—यतीन्द्रयतीन्द्रम्, शंकरशंकरम्, चैतन्य-चैतन्यम्, निवेदित-निवेदितम्,आदि। यहाँ नाटक के नायक के नाम की वीप्सा उसके जावन के प्रधानगुण पर तो प्रकाश डालती ही है साथ ही आकर्षक भी लगती है। कहीं-कहीं ये लाक्षणिक रूप से नाटक के नायक एवं कथावस्तु के सूचक हैं, यथा— भारततातम्, देशजनकम्,पल्लीकमलम्, देशदीपम्, भारतपथिकम्, नगरनूपुरम्, संसारामृतम्, अग्निवीणा, गणदेवतानाटकम् आदि। संक्षेप में नाट्यकर्त्री के रूपक उद्देश्य व शीर्षक की दृष्टि से मंगलमय एवं मनोरम हैं।

श्रीमती लीलारावदयाल द्वारा प्रणीत **अनूपः** चरित्र प्रधान रूपक है, जिसका उद्देश्य नायक के चरित्र के माध्यम से परमार्थ के लिए स्वार्थ-त्याग के मूल्य तथा चारित्रिक उदात्तता को प्रकट करना है। अपने परिवार को कुष्ठ जैसे असाध्य एवं संक्रामक रोग से बचाने के लिए, जिससे अनूप स्वयं ग्रस्त था, वह घर छोड़कर चला गया।

नायक के नाम पर रूपक का शीर्षक रखा गया है। यद्यपि रंगमंच पर नायक अनूप का प्रवेश अन्तिम दृश्य में बहुत थोड़े समय के लिए हुआ है, तथापि सम्पूर्ण दृश्यों की कथा उसी से सम्बद्ध है। मूलकथा लेखिका पं० क्षमाराव ने कथा को 'आत्मनिर्वासनम्' नाम दिया था जो चरित्रनायक के प्रमुख गुण एवं व्यवहार को प्रकट करता है। लीलाराव के शीर्षक से नायक के चरित्र की उज्ज्वलता, अनुकरणीयता व आदर्श प्रकाशित होता है।

संतानहीन स्त्री की मनोदशा व समाज में दुर्दशा का चित्रण **असूयिनी** रूपक की रचना का प्रमुख उद्देश्य है। समाज एवं परिवार की प्रताड़नाएँ वत्सलहृदया रेवा को ईर्ष्यालु बना देती हैं। असूया भाव के कारण ही रेवा दुर्गा के बच्चों को मारने का विचार भी करती है, अतः विषय के स्पष्टीकरण की दृष्टि से रूपक का नाम उचित ही है।

आधुनिक नौकरी पेशा व्यक्ति के जीवन की आर्थिक समस्या **कपोतालयः** में प्रधान उद्देश्य के रूप में प्रस्तुत है। मध्यमवर्गीय परिवार का रत्न एक क्लर्क है। मासान्त तक वेतन समाप्त हो जाने के कारण अपना फाउण्टेन पैन तथा पत्नी का वायालिन बेचकर बिल चुकाने को बाध्य होता है।

काग़ज रखने की रैक के लिए व्यंग्य में कपोतालय (कबूतरखाना) शब्द प्रयुक्त हुआ है। इस रैक का विशेष महत्व होने से इसी के आधार पर प्रहसन का नामकरण किया गया है। यह शीर्षक हास्य की सृष्टि करने के साथ इस तथ्य को भी प्रकाशित करता है कि आरम्भ में जिसे व्यर्थ समझा गया, अन्ततः उसी से सम्पत्ति की रक्षा हुई क्योंकि इस रैक में रखे हुए बीमा आदि सम्बन्धी कागजों के अतिरिक्त घर का सभी सामान चोरी में चला जाता है। फलतः नष्ट वस्तुओं की भरपाई बीमा कार्यालय से हो जाती है।[२५] इस प्रकार मध्यमवर्गीय परिवार की आर्थिक समस्या का समाधान बीमा पालिसी को बताया है।

कटुविपाकः रूपक का उद्देश्य सामाजिकों में देशप्रेम को जागरित करना है। देशप्रेम के निमित्त दीपक बन्दी बनाया गया, रेवा ने प्राणों का उत्सर्ग किया तथा वीरभा ने गृह-त्याग किया। समस्त ग्रामवासी एवं पारिवारिक जन विदेशी शासन के भक्त ग्रामाधिप को छोड़कर चले गए। शीर्षक सार्थक है तथा रूपक के परिणाम को प्रकट कर रहा है। ग्रामाधिप की जीवनयात्रा का सर्वाधिक दुःखद परिणाम यह रहा कि अंग्रेजों का भक्त होने के कारण वह अपनी जीवनयात्रा में नितान्त अकेला रह गया।[२६]

कृपाणिका का उद्देश्य पातिव्रत धर्म की महिमा प्रदर्शित करना है। अपनी पति भक्ति के प्रभाव से नायिका उर्मिला अपने पति को मृत्यु के मुख से वापस ले आती है। रूपक में कृपाणिका के महत्त्व के आधार पर रूपक का नामकरण हुआ है। एक तपस्वी ने उर्मिला तथा उसके पति को उपहार-स्वरूप एक कृपाणिका दी थी। पण्डिता क्षमाराव ने कृपाणिका को 'तापस्य पारितोषिकम्' कह कर लक्षणा वृत्ति से शीर्षक में काव्यात्मकता का चमत्कार उत्पन्न किया था लेकिन सहज प्रतीति की पक्षधर लीलाराव ने अपने रूपक का शीर्षक 'कृपाणिका' रखकर अभिधेयार्थ को महत्व दिया है।

क्षणिकविभ्रमः में अर्थ-समस्या को उभारा गया है। आर्थिक विपन्नता से पीड़ित सुनीति का पति क्षणिक लोभ के वशीभूत हो आजीवन कारावास के दण्ड

क। पात्र बना, यदि वह क्षणिक-विभ्रम में न पड़ा होता तो उसे यह दुष्परिणाम न भोगना पड़ता। विभ्रम शब्द का अर्थ शब्द कोशों में स्त्रियों की शृंगारमय चेष्टा के अतिरिक्त भ्रान्ति, शंका, सन्देह, संशय, विकल्प, वितर्क, भूल एवं विचिकित्सा अर्थ में हुआ है। प्रस्तुत रूपक में सभी पात्र थोड़ी सी भूल अथवा गलती करते हैं। सुनीति के पति ने मृतक के कपड़े बदलने की, पुत्र ने माता को आश्चर्यान्वित करने के लिए उससे अपने पति को छिपाने की, रामदास ने अपने मित्र की वास्तविकता गुप्त रखने की तथा सुनीति ने अपने पति के सम्यक् स्वरूप को न पहचानने की गलती की थी। इस प्रकार रूपक के समस्त पात्र क्षणिक विभ्रम के कारण कष्ट पाते हैं।[२७]

गणेशचतुर्थी रूपक की रचना का उद्देश्य भारतीय समाज के अन्धविश्वास को प्रदर्शित करना है। हरि नामक पात्र को चतुर्थी के दिन चन्द्र-दर्शन के कारण मिथ्या अभियोग में बन्दी बनाया गया है तथा अन्त में उसकी मुक्ति दिखाकर अन्धविश्वास के मिथ्यात्व को प्रकट किया गया है। आज भी यह धारणा बनी हुई है कि गणेशचौथ पर चन्द्र-दर्शन से मिथ्या कलंक प्राप्त होता है। रूपक शीर्षक विषयवस्तु से सम्बद्ध है तथा कथावस्तु की अभिव्यंजना में सफल है।

गिरिजायाः प्रतिज्ञा की रचना का उद्देश्य इस आदर्श की प्रतिष्ठा करना है कि कुलीन जन आपदाओं से घिरा होने पर भी अपने सौजन्य का परित्याग नहीं करता।[२८] गिरिजा अपने पुत्र-हन्ता को मारने की प्रतिज्ञा करती है लेकिन उसके सम्मुख आने पर दयावश क्षमादान करती है। कथावस्तु में गिरिजा नामक महिला के क्षमादान करने के आदर्श के कारण रूपक का शीर्षक 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' रखा गया है।

कुमाऊँ क्षेत्र के वीरों की शौर्यप्रियता एवं जीवनोत्सर्ग की भावना की प्रशंसा करना **जयन्तु कुमाउँनीयाः** रूपक का प्रधान उद्देश्य है। देश भक्ति के साथ-साथ मैत्रीभाव, पातिव्रतधर्मपालन आदि की प्रेरणा भी दी गई है।[२९] रूपक का शीर्षक भी स्थानीय वीरों के शौर्य एवं साहस का अभिव्यंजक है।

तुकारामचरितम्, ज्ञानेश्वरचरितम् (बालयोगी) एवं मीराचरितम् चरित-प्रधान रूपक हैं। तुकाराम, ज्ञानेश्वर तथा मीराबाई की भगवद्-भक्ति की महत्ता प्रदर्शित करना उक्त रूपकों की रचना का प्रधान उद्देश्य है। इनके माध्यम से नाट्यकर्त्री भक्ति की श्रेष्ठता का सन्देश देना चाहती है। रूपकों के नामकरण चरितनायकों के आधार पर किए गए हैं।

तुलाचलाधिरोहणम् में हिमालय के गुणगान के द्वारा उसका सांस्कृतिक महत्व प्रदर्शित करना प्रस्तुत नाट्य की रचना का मूल उद्देश्य है। विविध वैज्ञानिक संसाधनों के सुलभ होने पर भी हिमालय आज तक दुर्गम है।[३०] हिमालय के लिए तुलाचल का प्रयोग नाट्यकर्त्री पर कालिदास के प्रभाव को

लक्षित करता है। 'तुला इव अचलः तुलाचलः तस्मिन्नधिरोहणं तुला चलाधिरोहणमिति मध्यम पद लोपि समासः।' कालिदास ने भी हिमालय को पृथिवी का मानदण्ड कहा है।[३१]

नारकण्डाश्रमः नामक एकांकी की रचना का उद्देश्य पतिगृह जाती हुई कन्या के लिए भारतीय उच्चादर्श को प्रस्तुत करना है जिससे वह पतिगृह में सफल दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर सके।[३२] नारकण्ड हिमाचल प्रदेश में एक स्थान विशेष है। रूपक की समस्त घटनाएँ यहीं एक आश्रम में घटित हो रही हैं। अतः रूपक का शीर्षक 'नारकण्डाश्रमः' रखा गया है। वस्तुतः यह अभिज्ञानशाकुन्तलम् के कण्वाश्रम के सदृश होगा।[३३] कथावस्तु की दृष्टि से शीर्षक स्थान विशेष के महत्व को ही प्रकट करता है।

अमर्यादित व उच्छृंखल काम सर्वदा अनिष्टकारी है अतः उससे बचना चाहिए। इसी उद्देश्य को प्रकट करने के लिए **मायाजालम्** की रचना की गई है। जिस प्रकार भ्रमर पुष्पों का रसास्वाद कर उड़ जाता है, उसी प्रकार एक युवक अलग-अलग स्थलों पर चार कन्याओं को प्रेम करने का धोखा देकर नौ-दो ग्यारह हो जाता है।[३४] एकांकी का शीर्षक आकर्षक है।यहाँ मायाजाल स्त्रियों के प्रति आकर्षण के लिए प्रयुक्त हुआ है । शीर्षक से यह तथ्य भी प्रकट हुआ है कि यह संसार मायाजाल है, जिसका परिणाम दुःखद है।

मिथ्याग्रहणम् द्वारा नाट्यकर्त्री यह उपदेश देना चाहती है कि बात की तह में पहुँचे बिना सहज ही विश्वास नहीं करना चाहिए। वास्तविकता से अनभिज्ञ अमीना अपनी सखी सरला को दुराचारिणी मानकर मित्रता समाप्त कर लेती है। अन्त में स्पष्टीकरण होने पर उसे अपने कृत्य के लिए पश्चात्ताप करना पड़ता है।[३५] रूपक का शीर्षक भी अमीना द्वारा सरला को मिथ्या आरोप से दूषित करने की प्रमुख घटना से सम्बद्ध है।

चरित प्रधान रूपक **परमभक्त शिवाजिराट्** की रचना का उद्देश्य शिवाजी तथा उनके गुरु रामदास के उज्ज्वल चरित का यशोगान तथा समर्थ गुरु रामदास के प्रति शिवाजी की अनन्य भक्ति को प्रदान करता है। शीर्षक भी शिवाजी की गुरु भक्ति का बोधक है।

समाज में प्रताड़ित बालविधवा की हीन दशा का चित्रण **बालविधवा** नामक रूपक द्वारा किया गया है। अनूप के माध्यम से नाट्यकर्त्री सन्देश देना चाहती है कि बालविधवाओं से विवाह करने के लिए युवकों को स्वयं आगे आना चाहिए।[३६] लीलाराव के प्रस्तुत रूपक की मूलकथा पं० क्षमाराव के कथापंचकम् में बालिकोद्वाहसंकटम् तथा कथामुक्तावली में विधवोद्वाहसंकटम् में वर्णित है। उन दोनों कथाओं में बालविवाह तथा विधवा-विवाह की समस्या को पृथक्-पृथक् निर्दिष्ट किया गया है। लीलाराव का 'बालविधवा' शीर्षक उन दोनों सामाजिक बुराइयों को एक साथ प्रकट करने में सफल हुआ है।

वीरभा रूपक की रचना स्वदेश-प्रेम की भावना का प्रसार करने के उद्देश्य से की गई है। रूपक का नामकरण उसकी नायिका के नाम से किया गया है।

वृत्तशंसिच्छत्रम् के माध्यम से नाट्यकर्त्री पातिव्रत धर्म का सन्देश देना चाहती है।[३७] सतियों की वृत्ति जाने-अनजाने पत्युन्मुखी होती है। मीरा ने अनजाने में बचपन में वियुक्त पति से प्यार किया। रूपक का शीर्षक उस छत्र के आधार पर किया गया है, जिसने १८ वर्ष से वियुक्त दम्पती को मिला दिया।[३८] छत्र से ही पता चलता है कि त्यागीबाबा एवं मीरा का बचपन में वियुक्त पति एक ही व्यक्ति है । रूपक का शीर्षक वक्रतापूर्ण एवं रम्य है।

हरिसिंहः में हरिसिंह के चरित्र के माध्यम से यह प्रदर्शित किया गया है कि जन सेवा में लगे व्यक्ति के लिए सारा परिवार ही कुटुम्बं है। अतः नायक हरिसिंह प्रजा पर अत्याचार करने वाले अपने पिता राजा मानसिंह का वध करने को बाध्य होता है। हरिसिंह के चरित्र की प्रधानता होने के कारण रूपक का नामकरण 'हरिसिंह' ही किया गया है।

होलिकोत्सवम् रूपक की रचना के माध्यम से नाट्यकर्त्री का उद्देश्य सुरापान की बुराई को चित्रित करना है। अपनी पत्नी का आभूषण कुसीदक के पास देखकर गणु अपनी पत्नी को ही दुराचारिणी समझ कर शराब के नशे में उसे पीट-पीट कर घर से निकाल देता है तथा वास्तविकता ज्ञात होने पर पश्चात्ताप करता है। रूपक का शीर्षक कथावस्तु से सम्बद्ध है व होली पर प्रचलित सुरापान की बुराई को इंगित करता हैं। होली को हर्षोल्लासमय बनाने के लिए राधा अपने आभूषण को कुसीदक के पास गिरवी रखकर नवीन वस्त्र व मिष्ठान आदि की व्यवस्था करती है। होली के कारण ही गणु मित्रों के आग्रह पर सुरापान करने को विवश होता है। रूपक की इन सभी घटनाओं के मूल में होली के उत्सव का होना प्रधान कारण रहा है। अतः 'होलिकोत्सवम्' शीर्षक सर्वथा सार्थक है।

महात्मा गांधी के सत्याग्रह से प्रभावित **स्वर्णपुरकृषीवलाः** का प्रमुख उद्देश्य देशभक्ति की भावना का प्रसार करना है। देश के अभ्युदय का प्रयास करने वालों के लिए भौतिक सम्पदाएँ तृणवत् होती हैं। प्रस्तुत रूपक में इसी आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है। यह रूपक पं० क्षमाराव रचित 'रेवायाः कथा' का पुत्री लीलाराव दयाल द्वारा किया गया नाट्य रूपान्तरण है। पं० क्षमाराव का शीर्षक कथा की नायिका रेवा की दृढ़ता तथा देशभक्ति आदि चारित्रिक गुणों का परिचायक है, जबकि लीलाराव का शीर्षक समस्त स्वर्णपुर ग्रामवासियों की स्वतन्त्रता के प्रति जागरुकता को प्रकट करता है। कृषीवलाः का तो उल्लेख प्रथम दृश्य के आरम्भ में ही हुआ है जबकि रेवा से सम्बद्ध कथा सम्पूर्ण रूपक को व्याप्त करती हुई उसके चरित्र एवं व्यक्तित्व को निखारती है। अतः लीलाराव की अपेक्षा क्षमाराव का शीर्षक अधिक उपयुक्त है।

उद्देश्य की दृष्टि से लीलाराव के रूपकों के तीन भाग किये जा सकते हैं। प्रथम वर्ग में वे रचनाएँ हैं, जिनका उद्देश्य किसी सामाजिक समस्या का निरूपण करना है। उनमें कहीं तो समस्या का समाधान प्रस्तुत कर दिया गया है और कहीं नहीं। जहाँ समस्या का समाधान नहीं है, वहाँ नाट्यकर्त्री का उद्देश्य परिस्थितियों का चित्रण रहा हैं ताकि दर्शक उस बुराई के प्रति सोचने पर विवश हों। 'बालविधवा' ऐसा ही रूपक है। 'असूयिनी' द्वारा निरपत्यता, 'गणेशचतुर्थी' द्वारा अन्धविश्वास, 'मायाजालम्' द्वारा काम-समस्या, 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' द्वारा अनमेल विवाह की समस्या 'होलिकोत्सवम्' द्वारा सुरापान की समस्याओं को प्रस्तुत कर उनके दुष्परिणाम दिखाये गए हैं तथा उनका समाधान भी किया गया है। 'अनूपः' परार्थ के लिए स्वार्थ त्याग, 'कृपाणिका' पातिव्रत धर्म की, 'गिरिजायाः प्रतिज्ञा' सौजन्य एवं अहिंसा की, 'क्षणिक विभ्रमः' लोभ से दूर रहने की, 'मिथ्याग्रहणम्' मैत्री तथा 'हरिसिंह' विश्वबन्धुत्व की शिक्षा देता है। 'मिथ्याग्रहणम्' में बहुविवाह तथा पर्दा प्रथा के दुष्परिणाम को भी आनुषंगिक उद्देश्य के रूप में उठाया गया है।

दूसरे वर्ग की रचनाएँ देशभक्ति परक हैं। 'कटुविपाकः', 'वीरभा,' 'जयन्तुकुमाउनीयाः' तथा 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' देशप्रेम की शिक्षा देते हैं।

तृतीय वर्ग मे भक्तिपरक रूपक हैं। 'परमभक्त शिवाजिराट्' गुरुभक्ति तथा 'तुकारामचरितम्', 'मीराचरितम्' व 'ज्ञानेश्वरचरतिम्' द्वारा भगवद्भक्ति व महान् से महान् विपत्ति में ईश्वर के प्रति निष्ठा बनाये रखने की शिक्षा दी गई है। इस प्रकार लीलाराव के रूपक सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक एवं नैतिक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।

गणयच्छागः की रचना **श्रीमती कमलारत्नम्** द्वारा शिक्षा प्रचार के उद्देश्य से की गई है। इस रूपक द्वारा नाट्यकर्त्री सन्देश देना चाहती है कि जब देश का प्रत्येक नागरिक साक्षर होगा तभी देश का विकास सम्भव है।[३९] छाग एकांकी का प्रमुख पात्र है तथा गणना करना उसकी प्रधान क्रिया है। इसी पात्र और प्रधानक्रिया के आधार पर रूपक के कौतूहल पूर्ण शीर्षक की रचना की गई है।

नचिकेतो-यम-संवादम् का उद्देश्य आत्मतत्त्व विषयक ज्ञान का उपदेश देना है। आनुषंगिक रूप से यह शिक्षा भी दी गई है कि प्राप्तव्य के मार्ग में आने वाले प्रलोभनों में न पड़कर व्यक्ति को अपने निश्चय पर दृढ़ रहना चाहिए।[४०] नचिकेता यमराज-प्रदत्त प्रलोभनों में न पड़कर आत्मविषयक जिज्ञासा के समाधान से ही सन्तुष्ट होता है। कठोपनिषद् के प्रसिद्ध नचिकेता व यम के वार्तालाप को ही 'नचिकेतो यम-संवादम्' में उपजीव्य बनाया गया है तथा उसी के आधार पर शीर्षक रखा गया है।

विवेकानन्दविजयम् एवं **विवेकानन्दस्मृतिः** की रचना से नाट्यकर्त्री भौतिकवाद से ग्रस्त शिव के लिए अध्यात्म-ज्ञान का उपदेश देना चाहती है। श्रीधरभास्करवर्णेकर के नाटक 'विवेकानन्दविजयम्' के उपजीव्य होने से उसी शीर्षक को यथावत् ग्रहण कर लिया गया है। **विवेकानन्दस्मृतिः** विवेकानन्द की पुण्यस्मृति में आकाशवाणी से प्रसारित हुआ है, अतः रूपक का नाम ही विवेकानन्दस्मृतिः रखा गया है।[४१]

विक्रमवेतालनाटिका बाहुबल की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के उद्देश्य से लिखी गई है।[४२] ज्ञानी, विज्ञानी तथा शूरवीर में से शूरवीर ही अपने भुजबल के कारण चन्द्रप्रभा से विवाह करने में सफल रहता है। प्रस्तुत नाटिका से यह शिक्षा भी मिलती है कि विविध विघ्नों से घिरे होने पर भी व्यक्ति को अपने लक्ष्य के प्रति अभिनिवेश युक्त होना चाहिए। लगनशील होने के कारण ही विक्रम वेताल को श्मशान ले जाने में समर्थ होता है। राजा विक्रम के बुद्धिबल को प्रकट करना भी नाटिका का उद्देश्य है। विक्रम तथा वेताल नाटिका के दो प्रमुख पात्र हैं, अतः उन दोनों के सम्मिलित नाम से नाटिका का नामकरण किया गया है।

वनमाला भवालकर विरचित **पाददण्डः** की रचना का उद्देश्य प्रेम के शुचि, सात्त्विक स्वरूप का प्रस्तुतीकरण है। नायिका ललिता के प्रेम की चरमपरिणति पंगु सुधीर को स्वीकार करने में है।[४३] पाददण्ड (वैसाखी) ही सुधीर एवं ललिता के मिलन का हेतु बना है। पाददण्ड देखकर ही सुधीर के प्रति उसकी भ्रान्ति दूर होती है तथा काष्ठ के पाददण्ड के स्थान पर वह स्वयं उसका पाददण्ड अर्थात् सहारा बन जाती है। रूपक का शीर्षक आकर्षक, प्रभावशाली एवं वक्रतापूर्ण है जिससे नाट्यकर्त्री की प्रतिभाशालिता का परिचय प्राप्त होता है क्योंकि पाददण्ड ने ही ललिता एवं सुधीर के टूटते हुए सम्बन्धों को अवलम्ब दिया है।

पार्वतीपरमेश्वरीयम् की रचना का उद्देश्य तपस्या द्वारा काम को तपा कर प्रेम बनाना है।[४४] अपने सौन्दर्य से शिव को प्रसन्न करने में असमर्थ पार्वती तपस्या द्वारा ही शिव को प्रसन्न कर पाती है। संगीतिका में पार्वती एवं परमेश्वर दोनों की ही घटना प्रधान है, अतः दोनों के सम्मिलित नाम के आधार पर संगीतिका का सार्थक नामकरण किया गया है।

रामवनगमनम् की रचना का मुख्य प्रयोजन नायक राम के चरित्र के माध्यम से मातृ-पितृ-भक्ति की शिक्षा देना है।[४५] माता-पिता की आज्ञा पालन के निमित्त राम राज्याभिषेक के स्थान पर वनवास को सहर्ष स्वीकार करते है। संगीतिका में राम के वनगमन की घटना प्रधान है, अतः उस के आधार पर ही इसका शीर्षक रचा गया है।

अन्नदेवता की रचना का प्रयोजन अन्न के प्रति सम्मान का भाव तथा उसे व्यर्थ नष्ट न करने की प्रेरणा देना है। एकांकी की बालिका अन्न का निरादर कर हठ करके सो जाती है। स्वप्न में देवी उसे अन्न-देव का महत्त्व समझाती हैं।[४६] एकांकी का शीर्षक इसी उद्‌देश्य को व्यक्त करने वाला है।

सीताहरणम् रूपक की रचना का उद्देश्य इस तथ्य की शिक्षा देना है कि किसी पर सहज ही विश्वास नहीं कर लेना चाहिए। साधुवेशधारी रावण पर सीता ने सहज विश्वास किया जिसके परिणामस्वरूप रावण ने उनका अपहरण कर लिया।[४७] एकांकी का शीर्षक सरल तथा कथावस्तु की मुख्य घटना का परिचायक है।

कालीदर्शनम् द्वारा देवकीमेनन् का प्रयोजन एकांकी की नायिका श्रीशारदा देवी के चरित्र की अलौकिकता और उनके जीवन के उत्कर्ष को सहृदयों के समक्ष प्रस्तुत करना है। वह अलौकिक घटना है जब स्वप्न में शारदा ने काली देवी का दर्शन और साक्षात् कर-स्पर्श को प्राप्त किया।[४८] इसी घटना के आधार पर नाट्य का शीर्षक भी कालीदर्शनम् रखा गया है।

कुचेलवृत्तम् की रचना का उद्‌देश्य सच्चे सख्यभाव के प्रदर्शन के साथ-साथ सुदामा के निःस्पृह व्यक्तित्व का प्रदर्शन है। दारिद्रय एवं ऐश्वर्य के भेदभाव से रहित सुदामा व कृष्ण में प्रगाढ़ मित्रता है, जिसके कारण कृष्ण उन्हें ऐश्वर्य प्रदान कर सहायता करते हैं। सुदामा निःस्पृही हैं, अतः वह कृष्ण से किसी प्रकार की याचना नहीं करते।[४९] रूपक का शीर्षक रोचक, औत्सुक्य वर्धक तथा प्रधान पात्र सुदामा के दारिद्र्‌य का अभिव्यंजक हैं।

सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् की रचना का प्रयोजन भगवद्भक्ति विषयक विश्वास की महत्ता प्रकट करना है। कुब्जा सैरन्ध्री की भक्ति से आकृष्ट कृष्ण स्वयं उसके पास पहुंच कर उसे कृतार्थ करते हैं। रूपक का नामकरण मुख्य पात्र के चरित्र के महत्व का द्योतक है।[५०]

ब्रह्मचारिणी वेलादेवी के **नचिकेतश्चरितम्** की रचना का प्रयोजन अध्यात्म-तत्त्व का उपदेश करना है। आनुषंगिक रूप से यहाँ यह भी शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति को महान् विघ्नों से भयभीत होकर अपने आरम्भ किए कार्य का परित्याग नहीं करना चाहिए। नचिकेता यमराज के द्वारपालों द्वारा डराये धमकाये जाने पर तथा देवताओं द्वारा विघ्न उपस्थित किए जाने पर भी अपने संकल्प से विरत नहीं होता है तथा आत्मज्ञान प्राप्त करने में सफल रहा है।[५१] एकांकी का शीर्षक अभिधा प्रधान तथा नायक के चरित्र गत वैशिष्ट्‌य का प्रतिपादक है।

महीयसी गार्गी की रचना के रूप में प्राचीन भारतीय नारी की ज्ञान-गुरुता, उदात्तता तथा तर्क-शक्ति के उदाहरण से आधुनिक नारी को वैसा बनने की प्रेरणा

देना है ।[५२] एकांकी का शीर्षक नायिका की महत्ता का परिचायक है । विदेहराज जनक द्वारा आयोजित ब्रह्म-ज्ञानियों की सभा में गार्गी ब्रह्मवेत्ता याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ करती है । जनक भी उसके वैदुष्य तथा तर्कशक्ति की श्रेष्ठता की उदघोषणा करते हैं ।

महान् व्यक्ति घोर विपत्ति में भी अपनी महत्ता, शूरता आदि के कारण पहचान लिए जाते हैं । **विराड्गृहम्** की रचना इसी उद्देश्य की पूर्ति करती है । युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव एवं द्रौपदी अज्ञातवास की अवधि में छद्म रूप से रहते हुए भी अपनी असामान्य विशेषताओं से पहचाने गए और राजा विराट् के सम्मान का पात्र बने ।[५३] यहाँ घटना के स्थल विशेष के आधार पर रूपक का नामकरण किया गया है ।

वीणापाणिपाटनी रचित **मधुराम्लम्** में पाँच एकांकियाँ संगृहीत हैं। **निम्बपत्राणि** की रचना व्यावहारिकता से रहित शास्त्रज्ञान की व्यर्थता प्रकट करने के उद्देश्य से की गई है। भोजन करने के सम्बन्ध में तीन स्नातकों को व्याकरण, न्याय एवं आयुर्वेद के सिद्धान्तों का प्रयोग एवं सिद्धि करने के चक्कर में नीम के पत्ते खाकर ही सन्तुष्ट होना पड़ता है ।[५४] निम्बपत्र के समान जीवन के इस कटु सत्य को निम्बपत्राणि शीर्षक से प्रदर्शित किया गया है ।

प्रतिबुद्धा एकांकी की रचना का उद्देश्य आधुनिक शिक्षिता नारी के गृहकार्यों एवं सेवाकार्यों में सामंजस्य न हो पाने से उत्पन्न चिन्ताओं का निराकरण कर दोनों कार्यों में सामंजस्य रखने की शिक्षा देता है । सुलेखा दोनों को करने में असमर्थ होकर नौकरी से त्यागपत्र दे दती है परन्तु अन्त में दोनों कार्यों में सम्यक् समायोजन का निर्णय कर त्यागपत्र फाड़ कर अपना प्रतिबुद्धत्व सिद्ध करती है ।[५५]

यथार्थ्यगरलम् एकांकी बिना श्रम के पैसा एकत्र करने वाली मानवीय वृत्ति का उपहास करने के उद्देश्य से रचा गया है । देवदत्त को पैसा बटोरने की इच्छा है। लाटरी का परिणाम अपने नाम खुलने का समाचार पाकर वह परम आनन्दित होता है, किन्तु बाद में प्रमादवश गलत परिणाम निकलने का समाचार जानकर बहुत दुःखी होता है ।[५६] विष के समान कष्टप्रद एवं दुःखप्रद जीवन की इस वास्तविकता का बोध कराने वाला शीर्षक 'यथार्थ्यगरलम्' है ।

नारददौत्यम् की रचना का प्रयोजन पाश्चात्यीकरण तथा भौतिकवाद की अन्धी दौड में प्राचीन भारतीय जीवन मूल्यों की ओर ध्यान आकृष्ट करना है । स्वर्गस्थ देवतागण भी भारतवर्ष के इस अन्धानुकरण पर चिन्तित हैं। अतः वास्तविक स्थिति ज्ञात करने के लिए नारद को भूमि पर दूत बनाकर भेजते हैं ।[५७] इसी आधार पर रूपक का शीर्षक 'नारददौत्यम्' रखा गया है ।

कविकालिदासीयम् की रचना का उद्देश्य नायक के जीवनोत्कर्ष के बताने के साथ सामाजिकों में तत्सदृश उदारता, सुजनता तथा स्वाभिमानिता

आदि गुणों को विकसित करना है । कालिदास के इन्हीं गुणों से प्रभावित राजा भोज अन्य कवियों द्वारा कालिदास के विरुद्ध भड़काये जाने पर उन्हें देश निकाला देने के बाद पश्चात्ताप से पीड़ित होकर उन्हें पुनः पूर्वपद पर प्रतिष्ठित करते हैं ।[५८] एकांकी का शीर्षक चरितनायक के नाम पर रखा गया है ।

ये पाँचो एकांकी जीवन के खट्टे-मीठे अनुभवों से युक्त हैं, अतः एकांकी संग्रह का नामकरण तदुनरूप 'मधुराम्लम्' किया गया है जो रोचक एवं कौतूहलवर्धक है ।

भूमिकन्या में **रत्नमयी देवी दीक्षित** ने समाज में सीता के रूप में पीड़ित नारी-जाति तथा शम्बूक के रूप में दलित शूद्रो की सामाजिक प्रतिष्ठा की स्थापना की है । भूमि की सेवा करने के कारण शम्बूक स्वयं को भूपुत्र कहकर सीता से अपना भ्रातृत्व प्रकट करता है । इसी सम्बन्ध के आधार पर सीता भी शोषितों का पक्ष लेती है । नाटक की समाप्ति पर भूमिकन्या सीता नारी-जाति की प्रतिष्ठा के लिए भूमि में ही समा जाती है । इसी आधार पर नाटक का नामकरण 'भूमिकन्या' किया गया है ।

नलिनी शुक्ला द्वारा रचित **राधानुनयः** अलौकिक उद्देश्य पूर्ति में सहायक हैं । कृष्ण परब्रह्म का प्रतीक हैं तथा राधा जीव का स्वरूप हैं । अहं - शून्य होने पर ही राधा का कृष्ण से मिलन होता है तथा द्वैत समाप्त होकर अद्वैतभाव प्रतिष्ठित होता है । मान युक्त राधा का कृष्ण द्वारा किया गया अनुनय चतुर्थ दृश्य में प्रदर्शित है । इसी घटना के आधार पर संगीतिका का शीर्षक 'राधानुनयः' किया गया है ।

पार्वतीतपश्चर्या तपस्या द्वारा काम-शुद्धि को लक्ष्य करके लिखी गई संगीतिका है । रूप द्वारा शिव को पति रूप में प्राप्त करने में असमर्थ पार्वती तप द्वारा शिव को वशीभूत करती हैं । इसी प्रधान क्रिया के आधार पर संगीतिका का नामकरण किया गया है ।

मुक्तिमहोत्सवः नारी स्वातन्त्र्य के समर्थन की दृष्टि से लिखा गया रूपक है । जब तक नारी परतन्त्रता की बेड़ी से जकड़ी हुई है उसका शोषण हो रहा है, तब तक राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता । रूपक का शीर्षक इसी भाव को अभिव्यक्त कर रहा है ।

सुधा सहाय विरचित **परशुरामप्रतिज्ञा** रचना का उद्देश्य आततातियों के संहार तथा धर्म की स्थापना के लिए दृढ़ संकल्प की आवश्यकता प्रकट करना है । एकांकी का शीर्षक नायक की उस भीषण प्रतिज्ञा की ओर संकेत है, जिसके कारण क्रोध वश परशुराम क्षत्रियों के वध में प्रवृत्त हुए । उनकी भीषण प्रतिज्ञा थी कि जिस प्रकार एक क्षत्रिय ने मेरे समाधिस्थ पिता का वध किया, उसी प्रकार मैं भी पृथिवी को हैहय क्षत्रियों से विहीन कर दूँगा ।

मिथिलेश कुमारी मिश्रा द्वारा प्रणीत **आम्रपाली** की रचना का उद्देश्य दृढ़ इच्छा शक्ति द्वारा काम एवं गर्व पर विजय पाने की प्रेरणा देना है।[५९] आम्रपाली अपना समस्त वैभव त्याग कर बौद्ध भिक्षुणी बन जाती है। उसकी दृढ़ इच्छा शक्ति के समय अहंकारी मगध सम्राट भी नत मस्तक हो जाता है। चरित प्रधान रचना होने से नायिका के नाम पर ही रूपक का नामकरण 'आम्रपाली' किया गया है।

अलक्ष्यं दूरदर्शनम् की रचना द्वारा नाट्यकर्त्री बताना चाहती है। कि मूर्ख सेवक की सेवा उसके स्वामी को भी उपहासास्पद बना देती है।[६०] महेश का सेवक कंचन स्वामी के मात्र शिरोवेदना से पीड़ित होने पर भी उसकी मृत्यु की कल्पना कर अन्त्येष्टि का प्रबन्ध करता है जिससे वह स्वयं के साथ स्वामी को भी उपहासास्पद बनाता है। उसकी इसी मूर्खता को शीर्षक में लाक्षणिक रूप से प्रकट किया गया है।

उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम की रचना द्वारा नाट्यकर्त्री शिक्षा देना चाहती है कि सौभाग्य से उच्च पद प्राप्त होने पर व्यक्ति को अधिकाधिक परमार्थ के काम करने चाहिए। एकांकी का शीर्षक भी इसी उद्देश्य को स्पष्टतः प्रकट कर रहा है। एकांकी का नायक एक ग्रामीण नन्दन वन में पहुँच कर भी जन-हित के विषय में न सोच कर पत्नी द्वारा स्वयं की पिटाई की कल्पना ही करता है और उसकी कल्पना सत्य हो जाती है। विद्रूप कल्पना के फलस्वरूप स्वर्ग में वह उपहास का पात्र बनता है।

चराचरं सञ्चितकर्मयन्त्रितम् रचना का उद्देश्य निष्काम भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित करना है। सुव्रत नामक भक्त अपनी निश्चल एवं निष्काम भक्ति से तत्काल ईश्वर दर्शन में समर्थ हुआ, जबकि तपोधन मुनि दीर्घकालिक प्रतीक्षा का सन्देश सुनकर भक्ति से ही विरत हो जाता है। शीर्षक कथावस्तु के मूलभाव को स्पष्ट करने में समर्थ है। यद्यपि लोक में सभी जड़-चेतन अपने-अपने कर्मों से नियन्त्रित हैं लेकिन भक्त के वशीभूत भगवान् को बाध्य होकर इस नियम को तोड़ना पड़ता है। कर्मानुसार सुव्रत को हरिदर्शन के लिए अनन्तवर्षों तक प्रतीक्षा करनी थी किन्तु उसकी भक्ति से प्रसन्न हुए विष्णु को उसे तत्काल दर्शन देना पड़ा।

न मुनिः पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः नामक रूपक भारतीय नारी की सहनशीलता तथा पतिभक्ति को प्रकट करता है। एकांकी की नायिका पार्वती सत्याग्रह में बन्दी बनाए गए अपने पति की , यह जानते हुए भी कि न तो देश स्वतन्त्र होगा, न ही उसका पति मुक्त हो पायेगा, प्रतीक्षा करती रहती है। उसकी सास उसे दूसरा विवाह करने को प्रेरित करती है, लेकिन पार्वती इस चिरप्रतीक्षा से ही सन्तुष्ट होकर भारतीय नारी का उच्चादर्श प्रस्तुत करती है। प्रसिद्ध सूक्ति

के रूप में निबद्ध एकांकी का शीर्षक मनोरम होने के साथ नाट्य के मूलभाव 'चिरप्रतीक्षा' को व्यक्त करने में पूर्ण समर्थ है ।

दशमस्त्वमसि व्यंग्य-प्रधान एकांकी है। इसकी रचना का प्रयोजन उन लोगों पर कटाक्ष करना है जो सैद्धान्तिक ज्ञान से युक्त होने पर भी व्यावहारिक ज्ञान से रहित है । दस मुनि वेदान्तादि शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित हैं लेकिन स्वयं की गणना करने में असमर्थ हैं । प्रत्येक मुनि स्वयं को छोड़कर अन्य नौ को गिन लेता है तथा दसवें मुनि के खो जाने से दुःखी होता है। नाविक उसे गिनाकर दस संख्या पूरी करता है । एकांकी का शीर्षक नाविक के वाक्य के रूप में रोचक तथा कथावस्तु के उद्देश्य का प्रतिपादक है ।

भक्तराजः की रचना का प्रयोजन भगवद्भक्ति की महत्ता प्रतिपादित करना है । भगवान अपने भक्त के योग-क्षेम की चिन्ता स्वयं करते हैं । इस एकांकी से यह भी शिक्षा मिलती है कि विविध आपत्तियों में डालकर भगवान् अपने भक्त की परीक्षा लेते हैं अतः उन्हें धैर्य रखना चाहिए। एकांकी का शीर्षक भगवद् भक्त की श्रेष्ठता का बोधक है ।

माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः का उद्देश्य स्वदेश तथा मातृभूमि के लिए सर्वस्व त्याग की भावना को सामाजिक में विकसित करना है। एकांकी के नायक सत्याग्रही देवव्रत को कर्तव्य मार्ग से विचलित होने पर अथर्ववेदीय मंत्र ही कर्तव्य-बोध कराता है । उसी मंत्र से एकांकी का शीर्षक रचा गया है ।

स चाप्यस्ति रजक एव एकांकी की रचना का उद्देश्य भगवान् के प्रति विश्वास को दृढ़ करना है । एकांकी का प्रधान पात्र साधक रजकों को मारने के लिए आता देखकर भगवद्-विश्वास छोडकर आत्म-रक्षार्थ रजकों के समान ही व्यवहार करने लगता है। फलतः भगवान् उसकी रक्षा से विरत हो जाते हैं। एकांकी का शीर्षक उपचार से एकांकी के उद्देश्य का प्रतिपादन कर रहा है ।

सत्यमेव जयते एकांकी सत्य की महिमा प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से रचित है। सत्य समझ कर गान्धी जी ने नमक कानून तोड़ा था। बन्दी बनाए जाने पर सत्य के प्रति उनके आग्रह व निष्ठा को देखकर उन्हें मुक्त किया गया। शीर्षक सत्य की इसी महिमा को प्रतिपादित करता है ।

ज्ञानेनहीनाः पशुभिः समानाः द्वारा ज्ञान की महिमा प्रदर्शित की गई है। मूर्ख व्यक्ति पशु तुल्य दण्डनीय होता है। गोपाल उसके भाई तथा पिता गृह-प्रवेश के शुभ अवसर पर जमींदार की मृत्यु की कल्पना कर अपनी-अपनी बुद्धि के अनुरूप ऊपर की मंजिल से शवातरण की विधि सुझाते हैं। क्रुद्ध जमींदार उन चारों को दण्डित कर बन्दी बना लेता है। वृद्धा उन चारों को खोजती हुई जमीदार से वृषभ एवं तीन बछड़े खोने का उल्लेख करती है जिससे

यही संकेत मिलता हैं कि मूर्ख व्यक्ति पशु तुल्य होता है। एकांकी का शीर्षक उचित तथा उद्देश्य को सुस्पष्ट करने वाला है।

मिथिलेश कुमारी मिश्रा के उपर्युक्त रूपकों की विवेचना से निष्कर्ष निकलता है कि उनके रूपकों के उद्देश्य सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक एवं राष्ट्रिय हैं। इन रूपकों से उन्होंने यह सन्देश देने का भी प्रयास किया है कि व्यक्ति को लक्ष्य-प्राप्ति में अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ सकता है लेकिन उसे विचलित नहीं होना चाहिए। मिथिलेश कुमारी मिश्रा की शीर्षक योजना आकर्षक है। उन्होंने दो प्रकार से शीर्षक रचे हैं। कुछ रूपकों के शीर्षक व्यक्तिपरक हैं, जैसे - 'आम्रपाली', 'भक्तराजः' आदि। अन्य कुछ रूपकों के शीर्षक उपचार द्वारा उद्देश्य को प्रकट करने वाले हैं, यथा–'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः', 'दशमस्त्वमसि' आदि। वाक्य या वाक्यांश द्वारा अथवा प्रसिद्ध सूक्तियों द्वारा शीर्षक रचना करना मिथिलेश कुमारी मिश्रा की अपनी विशिष्ट शैली है, यथा–'चराचरसंचितकर्मयन्त्रिम्', 'उच्चासनस्थस्य विकल्पना फलम्', 'दशमस्त्वमसि', 'ज्ञानेन हीनाः पशुभिस्समानाः', 'स चाप्यस्ति रजक एव,' 'सत्यमेव जयते,' 'न मुनिः पुनरायातों न चासौ वर्धते गिरिः तथा अलक्ष्यं दूरदर्शनम्।'

विजयलक्ष्मी त्रिवेदी विरचित **नचिकेतः कुत्र गतोऽसि** के माध्यम से आधुनिक शिक्षण संस्थाओं के गिरते स्तर, विद्यार्थियों में जिज्ञासा का अभाव तथा शिक्षाधिकारियों की लोभी वृत्ति पर कटाक्ष किया गया है। शीर्षक प्रश्न वाचक एवं कुतूहल जनक हैं। नचिकेता यहाँ ज्ञान पिपासु विद्यार्थी का प्रतीक है, जो आज समाज और विश्वविद्यालय की भ्रष्ट व्यवस्था से अपने उद्देश्य में असफल हुआ अन्धकार में कहीं खो गया है।

निर्मला शुक्ला द्वारा रचित **यौतुकं पातकं परम्** समाज में फैली दहेज प्रथा के दुष्परिणाम का प्रदर्शन करने के उद्देश्य से लिखा गया है। दहेज लोभी क्षेमकरण के परिवार को अन्ततः आजीवन कारावास का दण्ड भोगना पड़ता है। एकांकी का शीर्षक दहेज के प्रति घृणा को व्यक्त कर रहा है।

भक्ति सुधा मुखोपाध्याय द्वारा प्रणीत **सुकन्या** की रचना का उद्देश्य पातिव्रत धर्म के प्रभाव को परिलक्षित करना है। नायिका सुकन्या के पातिव्रत धर्म से प्रसन्न होकर अश्विनी कुमार उसके पति च्यवन को स्वस्थ, सुन्दर व युवा बना देते हैं। रूपक का नामकरण कथा नायिका के नाम के आधार पर किया गया है।

इसके द्वारा **मदनदहनम्** की रचना इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए की गई हैं कि लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग में आने वाली समस्त बाधाओं को प्रयासपूर्वक रोकना चाहिए। शिव तपस्या के मार्ग में विघ्न स्वरूप काम को भस्मीभूत कर देते हैं। रूपक का शीर्षक बीज का प्रतिपादक है।

सुश्री अर्चना विरचित **कोभेदः** की रचना का प्रयोजन निःस्वार्थभाव तथा उदारता आदि मूल्यों की शिक्षा देना है। असुर स्वार्थी है तथा देवता स्वार्थहीन एवं उदार हैं। यही दोनों में अन्तर है। रूपक की इसी संवेदना को शीर्षक अभिव्यक्त करता है।

सुश्री आशा विरचित **महामुनिः दधीचिः** की रचना का उद्देश्य भी परार्थ के लिए स्वार्थ त्याग की शिक्षा प्रदान करना है। महात्मा दधीचि देवताओं को विजय लाभ कराने के लिए अपने प्राणों का स्वेच्छा से त्याग कर देते हैं। देवता उनके शरीर की अस्थियों से अमोघ शस्त्रों का निर्माण कर विजय प्राप्त करते हैं। रूपक का शीर्षक चरितनायक का उत्कर्षक है।

शठेशाठ्यं समाचरेत् दुष्ट के साथ दुष्टता का व्यवहार करने की शिक्षा देता है। पिंजरे से स्वयं को मुक्त कराने वाले उपकारी ब्राह्मण का ही व्याघ्र भक्षण करने को तत्पर हो जाता है। चतुराई से शृगाल उसे पुनः पिंजरे में बन्द कर देता है। शीर्षक से रूपक का मूलभाव व्यक्त होने से सार्थक भी है।

चिन्मयी माहेश्वरी रचित **सखा सुदामा** सन्मित्रता की **चौरस्य चातुर्यम्** सत्यवादिता एवं प्रत्युत्पन्नमतित्व की तथा **भारविः** पितृभक्ति की शिक्षा प्रदान करने की दृष्टि से रचे गए रूपक हैं। तीनों ही शीर्षक सीधे-साधे चरितनायक एवं कथा के मूलभाव को इंगित करते हैं।

भारती वरखेडकर रचित **वनदेवता** रूपक के माध्यम से शरणागत की रक्षा तथा पथभ्रष्ट को मार्गदर्शन कराने की प्रेरणा मिलती है। मार्ग-च्युत मृदुला की वनदेवता, राक्षसी से रक्षा करती है। रूपक का शीर्षक एकांकी के प्रधानपात्र वनदेवता की चारित्रिक विशेषता का बोधक है।

इस प्रकार अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के रूपक एक ओर भरत आदि प्राचीन नाट्याचार्यों के द्वारा स्वीकृत पुरुषार्थ-चतुष्टय रूप उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं, तो दूसरी ओर आधुनिकतम समस्याओं का निरूपण तथा उनका समाधान भी प्रस्तुत कर समाजोत्थान का मार्ग प्रशस्त करते हैं। शीर्षकों की दृष्टि से अधिकतर सरल रूप में वस्तु या उसके उद्देश्य अथवा पात्रों को प्रकट करते हैं। कहीं-कहीं पल्लीकमलम्, निम्बपत्राणि, पाददण्डः आदि लक्षणागर्भित शीर्षकों से इन महिला नाट्यकारों की कवित्व शक्ति को भी प्रदर्शित करते हैं।

संदर्भ

१. धर्म्यं यशस्यमायुष्यं हितबुद्धिविवर्धनम्।
लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति॥
दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रान्तिजननं काले नाट्यमेतद् भविष्यति॥ – नाट्यशास्त्र, १/११४-१५.

२. त्रिवर्ग साधनं नाट्यम्– अग्निपुराण,७/३३८.
३. अभिनव भारती,पृ० २८२-८३.
४. आनन्दनिस्यन्दिषु रूपकेषु व्युत्पत्तिमात्रं फलमल्पबुद्धिः।
योऽपीतिहासादिवदाह साधुस्तस्मै नमः स्वादुपराङ्मुखाय ॥ –दशरूपकम्,१/६.
५. धर्मादिसाधनं नाट्यं सर्वदुःखापनोदकृत्।
अनुसेवध्वमृषयस्तरस्योत्थानन्तु नाटकम् ॥
–नाटकलक्षणरत्नकोश,३.
६. नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्। –मालविकाग्निमित्रम्,१/४.
७. भावप्रकाशनम्, १/४.
८. चतुर्वर्गफलां नित्यं जैनी वाचमुपास्महे।
रूपैर्द्वादशभिर्विश्वं यया न्याय्ये धृतं पथि ॥ –नाट्यदर्पणः,१/१.
९. अथाभिनेयं वाक्यपरतया श्लोकोऽयं व्याख्यायते। यद्यपि साक्षात्धर्मार्थकामफलान्येव नाटकादीनि तथापि रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणवद् इति हेयोपादेयहानोपादानपरतया, धर्मस्य च मोक्ष हेतुतया मोक्षोऽपि पारम्पर्येण फलम्।
–वही, वृत्ति १/१.
१०. काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ॥–काव्यप्रकाशः,१/२.
११. समीक्षाशास्त्र,पृ० ४४७.
१२. वही।
१३. समीक्षाशास्त्र,पृ० ४४७.
१४. आस्तां वस्तुषु वैदग्ध्यं काव्ये कमपिवक्रताम्।
प्रधानसंविधानाङ्क नाम्नापि कुरुते कविः ॥– वक्रोक्ति जीवितम्,४/२४.
१५. समीक्षाशास्त्र,पृ० ९४९,५०.
१६. कालिदासः–(आश्चर्यान्वितः) कविकुलकोकिलः ? किं तन्मातः ? सरस्वती–(विहस्य) भव विश्वकाव्यकुञ्जस्य मधुरतमो गायकः। पृथिव्याः सकलसौन्दर्यमाधुर्यैश्वर्याणि सादरं समाहृत्य तानि विश्वब्रह्माण्डे सानन्दं प्रकाशय काव्यमाध्यमेन x x x ।
–कविकुलकोकिलम्,पृ० ६३.
१७. सूत्रधारः– x x x देशसेवकाः देशस्य दीपा इति सुनिश्चितमेव। दुर्योगतमिस्रायां ते एव सर्वेषां अनिर्वाणा आलोकरश्मयः।–देशदीपम्,पृ० ३४.
१८. अबला– x x x भारतवर्षाय सर्वस्वं निवेदितवति निवेदिते! विश्वकल्याणार्थं स्वजीवनं निवेदितवति निवेदिते! स्वात्मानं अर्घ्यरूपेण निवेदितवति निवेदिते!
–निवेदितनिवेदितम्,पृ० १०३.
१९. पल्लीकमलम्,पृ० ६३.
२०. ऊषाललना पल्लीलसना कमलनयनकामिनी।
विशति सत्वरा पूजार्घ्यकरा कमलकलिकारूपिणी ॥ –वही,पृ० ४.
२१. कुबेरः–सत्यं पूर्ण सत्यम्। राजाहं न क्षन्तुमर्हामि कर्तव्यकर्मावहेलनम्। विशेषतः अरुणकिरणो मम विशेषप्रियपात्रम्। ततो यद्यहं तस्येदृशगुरुतरापराधमपिक्षमे तदा मम प्रजापुञ्जो वा किं वदिष्यति।
–मेघदुरमेदुनीयम्,पृ० ४२,४३.

२२. यतीन्द्रः–(समाधिस्तरादवरुह्य) x x x मातः यातत्कालपर्यन्तमहं स्थास्यामि धरातले तावत्कालपर्यन्तमहं पूजयिष्यामि त्वां, पूजयिष्यामि देशजननीं च। यतो जगज्जननी, देशजननी, गृहजननी न त्रिधा, किन्त्वेकैव केवलं एकतत्वस्य केवलमेकसत्यस्य x x x त्रिविधरूपम्...।

–यतीन्द्रयतीन्द्रम्, पाटलश्रीः, ५ : १, पृ० ३५.

२३. सूत्रधारः–(सानन्दम्) सत्यं प्रजाप्रसन्ने! चिरसत्यं ततो युगजीवनं अस्माकं प्राणमनोधनं श्रीरामकृष्णपरमहंसदेवं प्रणम्य x x x प्रारभामहे विश्वस्य आश्चर्यतमां जीवनगाथाम्।

–युगजीवनम्, पृ० ३-४.

२४. उग्रभैरवः–प्रभो! भवान् जगतो हितार्थं शंकररूपेण मंगलकररूपेण भूतले अवतीर्णः। भवतो गुणराशिः वारिधिवत् अनन्तः असीम अतुलश्च।

–शंकरशंकरम्, पृ० ६२.

२५. कञ्चना–(क्रन्दन्ती) हा! वस्त्रखण्डमपि नावशिष्टम्। हा सर्वस्वं लुण्ठितं विहाय कपोतालयमेतम्। मन्ये चौराणामप्यप्रिय एषः। रत्नः–मुग्धे! मास्म चिन्तय। सर्वेषां प्रनष्टवस्तूनां मूल्यं प्राप्स्यते बीमाकार्यालयात्।

–कपोतालयः–मंजूषा, जून १९५६, पृ० २३२.

२६. ग्रामाधिपः –(निश्वस्यात्मगतम्) त्यक्तोऽस्मि सर्वैः साम्प्रतम्। न कोऽपि बान्धवोऽस्मिञ्जगति। कटुर्विपाकः खलु जीवनयात्रायाः।

–कटुविपाकः–मंजूषा, दिसम्बर १९५५, पृ० ८५.

२७. (क) हलायुधः, पृ० ६१८.

(ख) शब्दकल्पद्रुम, ४/पृ० ४१४.

(ग) वाचस्पत्यम्, ६/४९१६.

२८. धन्यासि कृतपुण्यासि कल्याणि प्रियमस्तु ते।
क्लिष्टापि सुजातस्य सौजन्यं नापगच्छति॥

–गिरिजायाः प्रतिज्ञा–मंजूषा, मई १९५५, पृ० १४७.

२९. स्वदेशरक्षार्थमवश्यमेव संरक्षणीयं प्रथमं स्वराज्यम्।
तनैव पारत्रिकमैहिकं च सुखं भवेदेतदबाधसत्यम्॥

–जयन्तुकुमाउनीयाः–विश्वसंस्कृतम्, ४ : ४, पृ० ३४६.

३०. पथिकः–शान्तंपापम्! कथं अमरपर्वतः जेतुं शक्यते मर्त्यैः। भवद्दर्शनाय पूजायै चांगीकृतमधिरोहणमिदम्।

–तुलाचलाधिरोहणम–विश्वसंस्कृतम्, मई-अगस्त १९७२, पृ० २४४.

३१. अस्त्युत्तरस्यां दिशिदेवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥ –कुमारसम्भवम्, १/१

३२. शुश्रूषस्व गुरुन्कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः॥

–नारकण्डाश्रमः–दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९८०, पृ० १३.

३३. दृश्यम्–हिमाद्रेरूपकण्ठे नारकण्डस्थः कस्यचित् काश्यपनाम्नोभिषजः सुरम्याश्रमः।
–वही, पृ० १०.

३४. पतङ्गो रसमासाद्य चतुस्सुमनसां पृथक् ।
मायाजाले गृहीतः सन् विमुक्तोऽपि तिरोऽभवत् ॥
—मायाजालम्—विश्वसंस्कृतम्, फरवरी-अगस्त १९७४, पृ० ७३.

३५. अमीना—(क्रंदन्ती) हा, दुर्भाग्यं मे दग्धभाग्यायाः यया मिथ्याग्रहणेनावधीरिता प्रियसखी ।—मिथ्याग्रहणम्—मंजूषा, फरवरी १९५६, पृ० १३९.

३६. अनूपः—किं भणसि ? कथं वा युज्यते आजीवनं वैधव्यं युवतीनाम् ?
सुहृत्—प्रायो प्रथारूढः संकीर्णजनो न सहते विधवोद्वाह प्रथाम् । क्रूरश्च तद्बन्धुवर्गः ।
—बालविधवा—मंजूषा, जून १९५५, पृ० १७०.

३७. नेपथ्ये—सतीनां पादरजसा सद्यः पूता वसुन्धरा ।
—वृत्तशंसिच्छत्रम्—मंजूषा, अप्रैल १९५७, पृ० २२४.

३८. इन्द्रिरा—(छत्रमादाय) मंगलं खल्विदं छत्रं येनशंसितं शुभागमनं जामातुर्मे, संयोजिताश्चाष्टादशभ्योवर्षेभ्यो विश्लिष्टाः ।
—वृत्तशंसिच्छत्रम्—मंजूषा, अप्रैल, १९५७, पृ० २२३.

३९. सम्पूर्णचक्रचतुरागणनां विधातुं संपूज्य शून्यमुदपादिधियः सुधीनाम् ।
ते भारतप्रियसुता गणयन्नारीयान् छागानुकारिगणनानिपुणा भवेयुः ॥
—गणयञ्छागः—दिव्यज्योति, जुलाई १९७६, पृ० १३.

४०. तस्य वैशिष्ट्यमिदं यत् स गवेषणाधारमन्तर्मुखीमकार्षीत् । यदर्थं स साक्षात् मृत्युमभ्यगच्छत् । मृत्युदेवेन यमेन उपायनीकृतानि सर्वाणि अपि भौतिकप्रलोभनानि तृणवत् तत्याज, केवलं स स्वजिज्ञासासमाधानवाप्तुमेव दृढव्रतो बभूव, अथ तावच्च न विरराम प्रयत्नतः, यावन्मृत्युदेवमुखात् जीवनाऽस्तित्वं रहस्यं नाऽजानात् .. ।
—नचिकेतोयमसंवादम्—पारिजातम्, अगस्त-सितम्बर, १९८४, पृ० १०.

४१. प्रथमोवाचकः—नौमि गुरुविवेकानन्दम् । भो भो श्रोतारः । अद्य स्वामिविवेकानन्दपूज्यपादान् वयं सविशेषं स्मरामः । स एवाविस्मरणीयो दिवसः अद्य पुनरायातः यदा स्वामिविवेकानन्दः स्वकीयं भौतिकं देहमत्यजत् ।
—विवेकानन्दस्मृतिः—संविद्, १५ नवम्बर, १९८९, पृ० २६.

४२. इदं सत्यमद्यापि श्वोऽपि भविता सदा ।
सर्वबलेषु श्रेष्ठं प्रभवेद् बाहोर्बलम् ॥
—विक्रमवेतालनाटिका—पारिजातम्, अप्रैल, १९८३, पृ० १६.

४३. ललिता— x x x अथ चातः परं न जपनीयं पंगुः पंगुरिति । अहमस्मि द्वितीयः पादः एक चरणस्य ते । भवामि तव सजीवः पाददण्डः ।
—पाददण्डः—सागरिका २ : ३, पृ० २८०-८१.

४४. पार्वत्यां परमेश्वरोऽप्यधिगतः श्रद्धातपस्तेजसा ।
तद्वत् त्वं पति संगतैव तपसा लक्ष्यं स्वयं प्राप्नुयः ॥
—पार्वतीपरमेश्वरीयम् (समर्पण अंश)

४५. रामवनगमनम्, पृ० ७.

४६. अन्नदेवता, हस्तलिखित, पृ० ८.

४७. सीताहरणम्, हस्तलिखित, श्लोक ५५/पृ० १४.

४८. कालीदर्शनम्, (संस्कृतप्रतिभा १२ : २), पृ० १६२-६३.

४९. अच्युतस्यान्तिकं गत्वा भार्योक्तं विस्मृतं मया ।

किं नु वक्ष्याम्यहं जायामाशाशतजिताशयाम् ॥

–कुचेलवृत्तम (संस्कृत प्रतिभा, ३ : २), पृ० २३८.

५०. सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् (संस्कृत प्रतिभा ५ : २), पृ० २०९.

५१. नचिकेतश्चरितम्, पृ० १२.

५२. सूत्रधारः–प्राचीने भारतीये समाजमध्ये भारतीयनारीणां कीदृशी महनीया मर्यादा आसीत्, तदेवास्मिन विंशशताब्दीये नारीसमाजे महदुपकाराय सुष्टु आलोच्य इति कृत्वा विश्वनारीवर्षेऽस्मिन् क्षुद्रेयं नाटिका समुपस्थापिता।

–महीयसीगार्गी, पृ० २३.

५३. विराड्गृहम्, पृ० ४९.

५४. निम्बपत्राणि, पृ० ९.

५५. आशुतोषः–यदि प्रतिबुद्धामात्मानं मन्यते भवती तर्हि जगृतनार्युचितमात्मना व्यक्तित्वस्वातन्त्र्यमधिगत्य तत्रकर्मणः समन्वयः समाचरितव्यः। मन्ये बहु प्रयासस्तत्र परन्तु किं नैतन्नारी प्रतिबोध मूल्यम्? सुलेखा– x x x (पत्रं विदार्य क्षिपति) अद्यतः प्रतिबुद्धास्मि।

–प्रतिबुद्धा, पृ० २४.

५६. याथार्थ्यगरलम्, पृ० ३६.

५७. इन्द्रः–धन्या भारतभूमिः। श्रीहरिश्चन्द्ररामकृष्णादिभिरियं पाविताभवत्। कस्तत्र समाचारः। नारदः–(विषादं नाट्यन्) दारुणास्थितिः। अलं पिपृच्छया x x x अद्यन्तनीयं भारतं न पुरातनभारतसदृशं वरीवर्ति x x x सम्प्रति भारतवर्षे सर्वमपि वैपरीत्यं भजति। तुमुल वाद्यध्वनौपुरुषाः नार्यश्च पॉपनृत्यं समाचरन्तः परम् मोदमाप्नुवन्ति।

–नारददौत्यम्, पृ० ४८.

५८. कविकालिदासीयम्, पृ० ६४.

५९. जाटिकेयं भारतस्यैकां विचित्रा गौरवगाथां समादधाति x x x आम्रपाली वीरांगनासीत् तथा च निजात्मबलेन प्रज्ञया चैव सा वृज्जिसंघस्य कीर्तिपताकां सर्वत्र प्रसारयामास। 'कामस्याविजयो नित्यं नित्यं गर्वस्य संक्षयः' इति नीतिवचनेन सर्वथा बर्बरो भूत्वाऽपि स मगधराजस्तथाकृतवान् यथा सा कृतवती पूर्वम्।

– आम्रपाली, प्राक्कथनम्

६०. सेवकस्य मूर्खत्वं न कल्याणाय प्रवर्तते।
अन्यथार्थं स गृहणाति सर्वथा नाशहेतवे ॥

– अलक्ष्यं दूरदर्शनम्–दशमस्त्वमसि, पृ० ३०.

उपसंहार

संस्कृत साहित्य की धारा वैदिककाल से लेकर आधुनिक काल तक अनवच्छिन्न रूप से प्रवाहित है। संस्कृत कवियों के समान कवयित्रियों की भी परम्परा अति प्राचीन काल से ही गद्य, पद्य चम्पू तथा नाट्य आदि की सर्जना में अपना योगदान देती रही है। वैदिक काल में रोमशा, अपाला, घोषा, विश्वावरा, सूर्यासावित्री, वागाम्भृणी, लोपामुद्रा, उर्वशी आदि अनेक ऋषिकाएँ मन्त्र-द्रष्ट्री हुई हैं। लौकिक संस्कृत साहित्य में भी शीला, विज्जका, मारुला, मोरिका आदि प्राचीन एवं गंगादेवी, रामभद्राम्बा, तिरुमलाम्बा आदि मध्यकालिक कवयित्रियाँ हुई हैं। साहित्य की समस्त विधाओं में मानव-मन को विमुग्ध करने तथा उसका रंजन करने की दृष्टि से नाट्यविधा सर्वाधिक उपादेय है। भारतीय संस्कृत नाट्य परम्परा भी अत्यन्त प्राचीन है। इसी श्रेणी में भास, शूद्रक, कालिदास, अश्वघोष, हर्ष, विशाखदत्त, भवभूति, भट्टनारायण, राजशेखर, कृष्णमित्र, जयदेव आदि नाट्यकारों के नाम उल्लेखनीय हैं। नाट्यकारों की इस परम्परा को आधुनिक युग में नारायण शास्त्री, कालीपद तर्काचार्य, जीवन्यायतीर्थ, मथुराप्रसाद दीक्षित, वी०राघवन्, यतीन्द्रविमल चौधुरी, महालिंग शास्त्री, श्रीरामवेलणकर, ऑगेटिपरीक्षित शर्मा आदि नाट्यकारों ने आगे बढ़ाया है। आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के रूप में भी यह परम्परा अक्षुण्ण एवं समृद्ध दिखाई पड़ती है। आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाटय-रचनाएँ ही प्रबन्ध का विषय है। इनमें से अनेक कृतियाँ तो ग्रन्थ रूप से प्रकाशित हैं किन्तु कुछ विविध संस्कृत-पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, तथा अप्रकाशित पाण्डुलिपि अथवा उनकी जीरोक्स प्रति को नाट्यकर्त्रियों से प्राप्त कर अध्ययन का विषय बनाया गया है। आधुनिक संस्कृत साहित्य जितना विपुल और विविध है, उसका उतनी मात्रा में अनुसन्धान, अध्ययन व मूल्यांकन नहीं हो सका है। आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों की समस्त नाट्यकृतियाँ तो संस्कृत-साहित्य-मर्मज्ञों को भी प्रायः अज्ञात हैं क्योंकि उन्हें पृथक् रूप से देखने या परखने का अवसर ही नहीं मिला है। इस विषय में अनुसन्धान की महती आवश्यकता को देखकर ही यह शोध-कार्य किया गया है। 'आधुनिक संस्कृतनाट्यकर्त्रियों का नाट्य साहित्य में अवदान' विषय से मेरा तात्पर्य उनकी नाट्य-कृतियों का परिचय देना एवं उनके नाट्य नैपुण्य का आकलन करना है।

यह शोध-प्रबन्ध दस प्रकाशों में विभक्त है। आरम्भ में विषय की सीमा, प्रयोजन, मौलिकता और उपादेयता को प्रदर्शित करने वाला आमुख है। शोध-प्रबन्ध के प्रत्येक प्रकाश की उपलब्धियों का विवरण इस प्रकार है—

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों एवं उनकी रचनाओं का परिचय के अन्तर्गत साहित्य की विविध विधाओं में नाट्य की दृश्यता, रसाश्रयता, सार्वजनीनता, स्वाभाविकता एवं मनोमोहकता आदि विशेषताओं से महत्व का प्रतिपादन किया गया है तथा प्राचीन काल से आधुनिक समय तक की गौरवपूर्ण नाट्यपरम्परा का दिग्दर्शन कराते हुए महिला नाट्यकर्त्रियों के चिरन्तन योगदान को स्पष्ट किया गया है। सातवीं-आठवीं शताब्दी की कौमुदी महोत्सव-नाटक की रचयित्री कर्णाटक की राज्ञी विज्जा, १७वीं शती के दुर्गादास चक्रवर्ती के सुपुत्र विद्वान् कृष्णनाथ के साथ आनन्दलतिका रूपक की कर्त्री उनकी सहधर्मिणी वैजयन्ती, १८वीं शती की अठारह रूपकों की रचना करने वाली शारदा, १९वीं शती की प्रतीक नाटकों की प्रणेत्री अनन्ताचार्य की पुत्री त्रिवेणी, नैषधनाटकम् की लेखिका श्रीदेवीकुट्टितम्बुराटी एवं कन्यादानम् की कर्त्री माणिक पाटिल का उल्लेख किया गया है। वर्तमान शताब्दी की अठारह नाट्यकर्त्रियों—रमा चौधुरी, लीलारावदयाल, कमलारत्नम्, वनमालाभवालकर, देवकीमेनन् वीणापाणिपाटनी, नलिनीशुक्ला, मिथिलेश कुमारी मिश्रा, ब्रह्मचारिणी वेलादेवी, रत्नमयी देवी दीक्षित, चिन्मयी, आशा, अर्चना, सुधासहाय, निर्मला शुक्ला, विजयलक्ष्मी त्रिवेदी, भक्तिसुधामुखोपाध्याय एवं भारतीवरखेडकर के व्यक्तित्व एवं उनकी नाट्यकृतियों का विस्तृत परिचय दिया गया है। ये नाट्यकर्त्रियाँ पश्चिमी-बंगाल, महाराष्ट्र, मद्रास, मध्यप्रदेश, केरल, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, बिहार, पाण्डिचेरी व कर्नाटक को अपने निवास से अलंकृत करती हैं। इन नाट्यकर्त्रियों की एक विशेषता यह भी है कि अधिकांश अध्यापन-कार्य से जुड़ी हैं तथा सभी उच्च शिक्षा प्राप्त, अनेक भाषाओं की वेत्ता तथा उच्चशिक्षा विभाग के श्रेष्ठ पदों पर प्रतिष्ठित रही हैं। डॉ० रमा चौधुरी तो कुलपति एवं विदेशों में आमन्त्रित प्रोफेसर भी रह चुकी हैं। इनमें कुछ नाट्यकर्त्रियाँ-देवकीमेनन्, कमलारत्नम्, रत्नमयी देवी दीक्षित, विजयलक्ष्मी त्रिवेदी आदि अपने विभाग की अध्यक्षा रही हैं। अनेक ऐसी नाट्यकृर्त्रियाँ हैं, जिनके परिवार आधुनिक सुखसुविधा व ऐश्वर्य से समृद्ध हैं किन्तु संस्कृत के प्रति इनकी निष्ठा एवं उसके प्रचार-प्रसार की इच्छा ने ही उन्हें संस्कृत-साहित्य सर्जना में लगाया। इनमें से वेलादेवी आश्रम की संचालिका के रूप में प्रसिद्ध हैं। इन नाट्यकर्त्रियों में से रमा चौधुरी एवं लीलाराव ने तो स्वयं के संस्कृत-रूपकों में अभिनय भी किया है तथा वनमाला भवालकर, नलिनी शुक्ला, वेलादेवी आदि ने दूसरों को अभिनय करने की प्रेरणा व शिक्षा दी है। इन नाट्यकर्त्रियों द्वारा पर्याप्त संख्या में लगभग ९७ श्रेष्ठ नाट्यकत्रियों की रचना की गई है। डॉ० रमा चौधुरी ने पच्चीस, लीलाराव ने

चौबीस, वनमाला भवालकर ने पाँच, कमलारत्नम् ने पाँच, देवकी मेनन् ने पाँच, नलिनी शुक्ला ने तीन, वीणापाणि ने पाँच, मिथिलेश कुमारी मिश्रा ने एक नाटिका तथा दस लघुरूपक, वेलादेवी ने तीन रूपकों की रचना की है। रत्नमयी देवी दीक्षित ने मामा वरेरकर के मराठी नाटक का संस्कृत रूपान्तरण 'भूमिकन्या' के रूप में किया है। इनके अतिरिक्त चिन्मयी माहेश्वरी के तीन, आशा के दो, अर्चना का एक, विजयलक्ष्मी त्रिवेदी विरचित एक, सुधासहाय द्वारा एक, निर्मला शुक्ला द्वारा प्रणीत एक, भक्ति सुधामुखोपाध्याय के दो तथा भारती वरखेडकर विरचित 'वनदेवता' नामक एकमात्र संस्कृत लघु नाट्य उपलब्ध होता है।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं की कथावस्तु का वर्गीकरण व विवरण में विषयगत विशेषताओं के आधार पर महिलानाट्यकर्त्रियों की सर्वाधिक नाट्य रचनाएँ स्रोत की दृष्टि से उत्पाद्यकोटि की हैं : जिनकी संख्या लगभग ४६ है। इनमें अनूपः, असूयिनी, को भेदः, कटुविपाकः, कपोतालयः, कृपाणिका, क्षणिकविभ्रमः, गणयज्छागः, गणेशचतुर्थी, गिरिजायाः प्रतिज्ञा, चौरस्य चातुर्यम्, जयन्तुकुमाउनीयाः, तुलाचलाधिरोहणम्, सत्यमेव जयते को छोड़कर दशमस्त्वमसि संग्रह के नौ रूपक, नगरनूपुरम्, नचिकेतः कुत्रगतोऽसि, नारकाण्डाश्रमः, पल्लीकमलम्, पाददण्डः, पृथङ्मुष्टिः, कविकालिदासीयम्, निम्बपत्राणि के अतिरिक्त मधुराम्लम् संग्रह के तीन रूपक, मायाजालम्, मिथ्याग्रहणम्, मेघमेदुरमेदनीयम्, यौतुकं पातकं परम्, बालविधवा, वीरभा, वृत्तशंसिच्छत्रम्, हरिसिंहः, होलिकोत्सवः, शठेशाठ्यं समाचरेत्, स्वर्णपुरकृषीवलाः, संसारामृतम्, अन्नदेवता, वनदेवता तथा मुक्तिमहोत्सवः उत्पाद्य रूपक रचनाएँ हैं ।

प्रख्यात कोटि की ऐतिहासिक कथावस्तु को आधार बनाकर प्रणीत २८ नाट्य रचनाएँ हैं। अग्निवीणा, अभेदानन्दम्, आम्रपाली गणदेवता, चैतन्य-चैतन्यम्, ज्ञानेश्वरचरितम्, तानतनुः, तुकारामचरितम्, सत्यमेव जयते, देशजनकम्, निवेदित-निवेदतम्, परमभक्तशिवाजिराट् प्रसन्नप्रसादम्, भारततातम्, भारतविरामम्, भारतपथिकम्, भारताचार्यम्, भारतवीरम्, मीराचरितम्, यतीन्द्र-यतीन्द्रम्, युगजीवनम्, रसमय-रासमणिः, रामचरितमानसम्, विठालाचरितम्, लेनिनविजयम्, विवेकानन्दविजयम्, विवेकानन्दस्मृतिः, शंकरशंकरम् ऐतिहासिक नाट्य हैं।

पौराणिक कथावस्तु को आधार बनाकर १६ रूपकों की रचना की गई हैं। कुचेलवृत्तम्, महीयसीगार्गी, नचिकेतश्चरितम्, नचिकेतो यम-संवादम्, परशुरामप्रतिज्ञा, पार्वतीतपश्चर्या, पार्वतीपरमेश्वरीयम्, महामुनिः दधीचिः,

मदनदहनम्, रामवनगमनम्, राधानुनयः विराड्गृहम्, सखासुदामा, सीताहरणम्, सुकन्या, सैरन्ध्री प्रेक्षणकम् पौराणिक रूपक हैं। इनकी कथावस्तु का आहरण कठोपनिषद्, वृहदारण्यकोपनिषद् , बाल्मीकि रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवतमहापुराण तथा शिवपुराण से किया गया है।

स्रोत की दृष्टि से दन्तकथा परक रूपकों की संख्या सात है। कालीदर्शनम्, निम्बपत्राणि, विक्रमवेतालनाटिका, कविकुलकमलम्, कविकुल-कोकिलम्, भारविः तथा कविकालिदासीयम् दन्तकथापरक रूपक हैं। लीलाराव की रूपक रचनाओं का स्रोत उनकी माँ की काव्य-कथाएँ हैं।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यकृतियों की कथावस्तु की समीक्षा से ज्ञात है कि नाट्यकर्त्रियों ने भारतीय पारम्परिक विधानों -नान्दी प्रस्तावना, भरतवाक्य, भारतीवृत्ति आदि को अंशतः अपनाया है। रमा चौधुरी के रूपकों में इनका नियमतः सन्निवेश हुआ है। अर्थोपक्षेपकों मे चूलिका एवं अंकावतार का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। कुछ रूपकों में विष्कम्भक के उल्लेख के बिना ही दो पात्रों के वार्तालाप से वृत्त-वर्तिष्यमाण कथांश की सूचना दी गई है। प्रवेशक का अभाव है। नाट्यधर्म के रूप में अपवारित की अपेक्षा जनान्तिक का प्रयोग अधिक किया गया है। 'असूयिनी', 'पल्लीकमलम्' तथा 'शंकरशंकरम्' में आधुनिक पश्चावर्तन तकनीक (फ्लैश बैक) का प्रयोग भी किया गया है। प्रायः नाट्यकर्त्रियाँ संक्षिप्त कथावस्तु को लेकर उसी के विकास में दत्तचित्त रही हैं। यही कारण है कि अधिकांश रूपकों में बीज एवं कार्य अर्थ-प्रकृति तो सर्वत्र है किन्तु, बिन्दु पताका एवं प्रकरी का प्रयोग कहीं-कहीं हुआ है। पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व एवं मनोवैज्ञानिकता का निर्वहण करने में लीलारावदयाल सर्वाधिक सफल रही हैं। इन नाट्यकर्त्रियों की अधिकांशतः नाट्यरचनाएँ चरित्रप्रधान हैं। दूसरे स्थान पर घटनाप्रधान, तीसरे स्थान पर समस्याप्रधान तथा चतुर्थ स्थान पर संगीत प्रधान रूपक हैं। नाट्यविधा की दृष्टि से एकांकियों की संख्या सर्वाधिक है। नाटक-विधा की सर्वश्रेष्ठ रचनाकार रमा चौधुरी हैं। कमलारत्नम् ने ध्वनि-नाट्य के प्रणयन में अपना वैशिष्ट्य प्रकट किया है। अम्बाडी देवकी मेनन् ने भाण व संगीतनाट्य, वनमाला भवालकर ने संगीतनाट्य एवं नृत्यनाट्य एवं नलिनी शुक्ला ने मनोमोहक संगीतिकाओं (ऑपेरा) की सर्जना की है। इस प्रकार आधुनिक महिला-नाट्यकारों ने आधुनिक एवं पारम्परिक दोनों ही शैलियों में नाट्य रचनाएँ की हैं।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यकृतियों की कथावस्तु पर आधुनिक जीवन का प्रभाव का पर्यालोचन से स्पष्ट होता है कि इन्होंने अपनी रचनाओं में याथार्थ्यप्रतीति के लिए स्थानानुरूप एवं पात्रानुरूप वेशभूषा सम्बन्धी सर्वाधिक

वैविध्य लीलारावदयाल के रूपकों में मिलता है। 'कटुविपाकः' 'वीरभा' एवं 'स्वर्णपुरकृषीवलाः' के पात्र जहाँ खादी के वस्त्रों को धारण करते हैं, वहीं कपोतालयः का नायक पूर्णतः आधुनिक वेशभूषा (पैण्ट, शर्ट व टाई) से सुसज्जित बताया गया है। 'मिथ्याग्रहणम्' की अमीना 'बुरखा' पहनने से अपनी सखी को ही नहीं पहचान पाती है तथा सरला घुड़सवारी के समय तदनुकूल एवं रात्रि में रात्रिवस्त्र (गाउन) में दिखाई पड़ती है। असूयिनी का सुपर्ण मछुआरे के अनुरूप गीली चप्पल, कन्धे पर मछली पकड़ने का जाल तथा बजते हुए कंगन पहनकर रंगमंच पर प्रविष्ट होता है। 'होलिकोत्सवम्' का नन्हा गोपाल होली के दिन नई पगड़ी तथा उसका पिता नया कन्था धारण करता है। आंचलिकता के कारण भी विविधता इनके रूपकों में सर्वाधिक है। 'अनूपः' 'गणेशचतुर्थी' तथा 'होलिकोत्सवम्' में नारिकेलपूर्णिमा-महोत्सव, गणेशपूजन के अवसर पर महाराष्ट्रीय वातावरण को सजीव किया गया है। 'गणपति वाप्पा मोर्या' आदि मराठी ध्वनियों का प्रयोग एवं रंगु, गुणे, विट्ठल, शंकरराव आदि मराठी नामों का प्रयोग हुआ है। 'क्षणिकविभ्रमः' में रंगमंच के बीचो-बीच झूले का होना महाराष्ट्रीय जीवन-शैली का परिचायक है। 'असूयिनी' में नरबलि एवं कालीमाता के प्रभाव से बंगाली जीवन परिलक्षित होता है। 'कटुविपाकः,' 'असूयिनी ' आदि कुछ रूपकों में ग्राम्य-परिवेश के अनुरूप पूये, मट्ठे, दूध आदि का प्रयोग बताया गया है। 'मिथ्याग्रहणम्' में नगरीय जीवन से प्रभावित अतिथि-गण चाय तथा कॉफी पान करते हैं। जयन्तुकुमाऊँनीयाः कुमाऊँ परिवेश से प्रभावित है, जहाँ सैनिक अवकाश के क्षणों में 'छानी बिलौरी' तथा 'वेडुपाको बारामासो' आदि स्थानीय लोकगीत गाकर अपना मनोरंजन करते हैं। रमाचौधुरी के भी अधिकांश रूपकों में बंग-प्रभाव दिखाई पड़ता है। इनमें अधिकांशतः बंगाल के महापुरुष, राजनेता, कवि तथा गायक आदि को नायक बनाया गया है और तदनुरूप उनकी प्रवृत्तियाँ दृग्गोचर होती हैं। नाट्यकर्त्रियों के रूपक आधुनिकता से भी प्रभावित हैं। 'सत्यमेव जयते', 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः', 'वीरभा,' 'देशदीपम्' देशजनकम् 'भारततातम्' आदि रूपक भारतीय-स्वतन्त्रता-आनदोलन में गान्धी, जवाहरलाल, पटेल आदि राजनायकों के विचारों और कार्यों से प्रभावित हैं। राष्ट्रिय साक्षरता मिशन के प्रभाव को 'गणयज्छागाः' के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इन नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में बालविवाह, अनमेल-विवाह, विधवा-विवाह, किराये के आवासों की समस्या, पर्दाप्रथा, महिलाओं के सेवाकार्यों एवं गृहकार्यों में सामञ्जस्य की आधुनिक समस्याएँ भी उठाई गई हैं। 'नारददौत्यम्' में भारत के पाश्चात्यीकरण तथा बढ़ती

जनसंख्या की समस्या पर चिन्ता प्रकट की गई है। कुछ रूपकों में आधुनिक देशी-विदेशी स्थान, व्यक्ति व संस्कृति की झलक मिलती है। 'विवेकानन्द-विजयम्' में तथा 'नारददौत्यम्' में क्रमशः छात्र एवं युवकयुवतियाँ पाश्चात्य नृत्य एवं पॉप संगीत पर थिरकते दिखाई पड़ते हैं। शिक्षाव्यवस्था, संचारव्यवस्था (टेलीफोन, तारपत्र) न्याय, दण्ड-व्यवस्था एवं सुखसामग्रियों के प्रयोग में आधुनिकता से युक्त ये रूपक रचनाएँ देखी जाती हैं। 'यौतुकं पातकं परम्' में क्षेमकरण अपने पुत्र के विवाह में फ्रिज, टी०वी०, स्कूटर आदि वस्तुओं की माँग करता है। दहेज के कारण पुत्रवधू की हत्या के अभियोग में क्षेमकरण, सरला व उसका पुत्र आजीवन कारावास का दण्ड प्राप्त करते हैं। १९६१ में हुए भारत-चीन युद्ध की विभीषिका पाददण्डः में तथा तज्जन्य उत्साह जयन्तुकुमाउँनीयाः में द्रष्टव्य है। इस प्रकार आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों की रूपक-रचनाओं में युग व प्रदेश के अनुरूप प्रवृत्तियाँ, आधुनिक समस्याएँ एवं आधुनिकता का प्रभाव दृष्टिगत हुआ है।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं में संवादतत्त्व एवं भाषा के पर्यालोचन से प्रतीत होता है कि इनके रूपकों में संवाद प्राचीन रूपकों की अपेक्षा सरल व लोकबोध्य है। छोटे-छोटे चुस्त संवाद अपनी क्रियाशीलता, यथार्थता एवं सहजता से पाठकों एवं दर्शकों के हृदय का स्पर्श करते हैं। वे संक्षिप्तता, सरलता, पात्रानुकूलता, व्यंग्यात्मकता आदि विशेषताओं से युक्त हैं। संवादों में प्रयुक्त छोटे-छोटे वाक्य भी व्यापार-प्रधान, होने से नाटकीय प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ हैं। संवादों के पूर्व प्रचुर नाट्यनिर्देशों से रूपकों में अभिनेयता व गति आ गई है। इस दृष्टि से लीलाराव, वीणापाणिपाटनी, वेलादेवी, वनमालाभवालकर के रूपक उल्लेखनीय हैं। अर्धोक्तियों के रूप में सर्वाधिक संवाद सौन्दर्य मिथिलेशकुमारी के रूपकों में दृग्गोचर होता है। प्रायः सभी नाट्यकर्त्रियों के रूपकों की भाषा सरल व सर्वजनसुलभ है। आवश्यकतानुरूप लोकोक्ति, मुहावरे, सूक्तियों एवं लौकिक न्यायों के प्रयोग से भाषा में प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयास किया गया है। रमा चौधुरी ने कतिपय बंगीय कहावतों का भी सुन्दर संस्कृत-रूपान्तरण किया है। वनमाला भवालकर, वीणापाणि, रमा चौधुरी के रूपकों में साहित्यिक प्रयोगों से भी भाषा में क्लिष्टता नहीं आई है। भाषा पात्रों के चरित्र एवं भावों की अभिव्यंजना करने में पूर्णतः सफल रही है। बहुप्रचलित विदेशी भाषा के शब्दों को कहीं यथावत् ग्रहण कर लिया गया है, कहीं उनका संस्कृतीकरण किया है। सर्वाधिक आधुनिक शब्दराशि वीणा पाणि, लीलाराव व रमाचौधुरी ने अपनाई है। पद्यों का प्रयोग

सामान्यतया रसात्मकता, तीव्र भावातिरेक की अभिव्यक्ति तथा उपदेश देने अथवा कथ्य समर्थन के लिए किया गया है। पारम्परिक एवं आधुनिक दोनों ही प्रकार के छन्दों में पद्यों की रचना की गई है। सर्वाधिक छन्द-वैविध्य रमा चौधुरी के रूपकों में दिखाई पड़ता है। वनमाला भवालकर ने रामवनगमनम्, पार्वतीपरमेश्वरीयम् तथा सीताहरणम् में यमन, विलावल, काफी, सारंग, कान्हड़ा, पीलू जयजयवन्ती, बसन्त, बहार आदि लगभग पैंसठ राग-रागिनियों एवं आदिताल, सूलताल, चौताल, तीनताल, कहरवा आदि लगभग बारह तालों में विविध छन्दों को लयबद्ध करके अपने सांगीतिक ज्ञान का परिचय दिया है। नलिनी शुक्ला ने रागों एवं तालों के साथ-साथ ऋतु, काल एवं विरह आदि अवस्था के अनुरूप छन्दों मे रागों का चयन करके राधानुनयः, एवं पार्वतीतपश्चर्या में कत्थक नृत्य के बोलों को भी छन्दोबद्ध करके अपने नैपुण्य का परिचय दिया है। देवकीमेनन् ने कुचेलवृत्तम् तथा सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम् में कापिराग, यमुनाकल्याणी आरभि, हुसेनि आदि दक्षिण-भारतीय संगीत के रागों का प्रयोग छन्दों में किया है। इन संगीतिकाओं में पद्यों या पद्यांशों को संवाद रूप में रखा है। स्वरचित पद्यों के अतिरिक्त अन्य पद्यों को वेद, रामायण, महाभारत, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कुमारसम्भवम्, उत्तररामचरितम्, दुर्गासप्तशती आदि प्रतिष्ठित ग्रन्थों से उद्धृत किया गया है। सर्वाधिक पद्यों का आहरण लीलाराव ने रामायण महाभारत व पं० क्षमाराव की रचनाओं से किया है। समीक्ष्य रूपकों के स्वगत कथनों को भी प्रायः ऐसे स्थलों पर किया गया है जहाँ सर्वश्राव्य संवादों से पात्र के चरित्र एवं कथावस्तु के औदात्य का ह्रास हो सकता था। वस्तुतः आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में संवाद एवं भाषा रंगमंच को सफल एवं प्रभावशाली बनाने में समर्थ है।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों का आकार मंच सज्जा और अन्वितित्रय के विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि लीलाराव, वनमालाभवालकर, वीणापाणिपाटनी, वेलादेवी चिन्मयी, आशा, विजयलक्ष्मी त्रिवेदी आदि नाट्यकर्त्रियों की अधिकांश रूपक रचनाओं में मंच सज्जा सरल, सादा एवं श्रम-द्रव्य निरपेक्ष है। इनकी रूपक रचनाएँ व्यावसायिक मंचों पर तो खेली ही जा सकती हैं : अव्यावसायिक मंचों यथा—विद्यालय, महाविद्यालय के मंचों, उद्यानों व नगर चतुष्पथों पर भी खेली जा सकती हैं। लीलाराव के सभी रूपक, वनमाला भवालकर का पाददण्डः तथा कमलारत्नम् के सभी रूपक प्रचुर ध्वनि-निर्देशों तथा संगीत-योजना से आकाशवाणी द्वारा भी इनका सफल प्रसारण सम्भव है। अधिकतर रूपक एकांक अथवा लघुरूपक हैं। इनमें

अन्वितित्रय का सर्वत्र निर्वाह देखा जाता है। रमा चौधुरी के रूपक दृश्यों एवं पट परिवर्तनों में विभक्त हाने पर भी आकार में बड़े हैं, ये अवश्य श्रग-द्रव्य सापेक्ष हैं तथा संकलन-त्रय के पालन में भी शिथिलता आ गई है। मंच-सज्जा में प्रकाश की व्यवस्था एवं नवीन उपकरणों के प्रयोग से नाट्य-सौन्दर्य व प्रभाव बढ़ा है। 'विक्रमवेतालनाटिका' में शमशान का दृश्य 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' में विविध ऋतुओं की प्रस्तुति 'नचिकेतश्चरितम्' तथा 'सखा सुदामा' में हवा, पानी तथा अन्धड़ आदि के दृश्य इसी प्रकार उपस्थापित किये गये हैं। दृश्य-समाप्ति एवं दृश्यारम्भ में गीत, वाद्य एवं नृत्य की योजना तथा कहीं-कहीं मध्य में नेपथ्य वाद्य की योजना से रूपकों में मनोमोहकता बढ़ी है। रमा चौधुरी, कमलारत्नम् तथा चिन्मयी के अधिकांश रूपक संगीत विधान के साथ आरम्भ हुए हैं। वस्तुतः ये रूपक मंच सज्जा, तथा संगीत नृत्य के प्रयोग से आद्यन्त प्रेक्षकों को बाँधे रखने में सफल हैं।

आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में पुरुष पात्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नेता के संस्कृत नाट्यशास्त्रीय धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित एवं धीर प्रशान्त भेद एवं उत्तम, मध्यम, अधम उपभेद यहाँ दृष्टिगोचर नहीं होते। यही स्थिति नायक के सहायकों तथा प्रतिनायकों के सम्बन्ध में है। प्रतिनायक अथवा प्रतियोगी पुरुष पात्र रमा चौधुरी के ही कुछ रूपकों-'देशदीपम्, ' 'पल्लीकमलम्' तथा 'मेघमेदुरमेदनीयम्' आदि में दिखाई पड़ते हैं। अधिकांश रूपकों के नायक पाश्चात्य रूपकों के अनुरूप आदर्शवादी, यथार्थवादी तथा समाज के विलासी, उत्पीड़क, सामन्ती वर्ग के रूप में इन रूपकों में अवतरित हुए हैं। 'बाल विधवा' का अनूप, 'देशदीपम्' का चम्पकवदन तथा 'पाददण्डः' का सुधीर आदि आदर्शवादी पात्र हैं। 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' का अनुपम, 'असूयिनी' का सुपर्ण, 'कपोतालयः' का रत्न, 'यौतुकं पातकं परम्' का क्षेमकरण यथार्थवादी पात्र हैं। 'हरिसिंहः' का मानसिंह विलासी, उत्पीड़क राजवर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। 'भूमिकन्या' का शम्बूक (टाइप करेक्टर) वर्गीय पात्र हैं, जो अनार्य एवं दस्युओं का प्रतिनिधि है। 'गणयज्छागः' के छाग, गौ, वत्स, गर्दभ आदि प्रतीक पात्र हैं जो असाक्षरों के प्रतिनिधि हैं। रमा चौधुरी के रूपकों के अधिकांश नायक आधुनिक अथवा मध्यकालिक युग पुरुष हैं। इन नायकों के आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा समाजसुधारक रूप दृष्टिगत होते हैं। वस्तुतः वर्ग, सम्प्रदाय, जाति, समूह के प्रतिनिधि पात्र मानव-जीवन की प्रवृत्तियों को सजीव बनाते हैं। पात्र चाहें पुरातन पौराणिक अथवा आधुनिक हों , वे किसी न किसी रूप में समसामयिक सन्दर्भों से जुड़े होते हैं और दर्शकों के भीतर उतर

कर गहराई से अपनी छाप छोड़ते हैं। इस क्रम में 'उच्चासनस्थस्य विकल्पनाफलम्' 'नारददौत्यम्' तथा 'कोभेदः' के नारद, 'सचाप्यस्तिरजकः एव' का विष्णु, 'नचिकेतः कुत्रोगतोऽसि' का ज्ञान पिपासु नचिकेता तथा भूमिकन्या के शम्बूक, राजगुरु आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। लीलाराव ने 'होलिकोत्सवम्' तथा असूयिनी में मत्स्यजीवी गणु व सुपर्ण 'गणेश चतुर्थी' तथा बालविधवा में कृषक हरि व अनूप आदि निम्न वर्ग के पात्रों को भी नायक के रूप में उतारा है। नायक सम्बन्धी एक और परिवर्तन अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में दृष्टिगत होता है—प्राचीन संस्कृत नाट्यशास्त्र में रंगमंच पर अधिकारी का वध दिखाया जाना निषिद्ध था। इस नियम की अनुपालना अनेक रूपकों में नहीं दिखाई पड़ती है। अनूप, चम्पकवदन, रामकृष्ण परमहंस आदि नायकों की रंगमंच पर ही मृत्यु दिखाई गई है। स्त्री पात्र प्रधान वीरभा कृपाणिका निवेदित-निवेदितम्, 'गार्गी महीयसी' आदि में नायक का अभाव है। 'दशमस्त्वमसि,' 'विराड्गृहम्' 'निम्बपत्राणि' आदि में एक प्रमुख नायक का अभाव है।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों के नाट्यों में स्त्री पात्रों के चारित्रिक विश्लेषण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वर्तमान समय में प्राचीन नाट्यशास्त्रीय नायिका भेद उपयोगी नहीं रहा है। स्वीया, परकीया, साधारण स्त्री, मुग्धा, मध्या प्रगल्भा आदि नायिका भेदों को आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों ने कोई महत्त्व नहीं दिया है। अपने प्राचीन शृंगारी रूप को छोड़कर नारी सामाजिक कार्यों में भी सक्रिय हो गई है। निवेदित-निवेदितम् की नायिका निवेदिता अपना देश छोड़कर भारतसेवा में सर्वस्व अर्पित कर देती है। 'देशदीपम्' की नायिका पंकजनयना नर्स बनकर घायल सैनिकों की शुश्रुषा में स्वयं को धन्य मानती है। भौतिक उन्नति के इस युग में नारी और पुरुष की उपलब्धियों की प्रतिद्वन्द्विता प्रतिबुद्धा एकांकी-नायिका सुलेखा में देखी जा सकती है। नारी-स्वातन्त्र्य की छटपटाहट का स्वर 'मुक्तिमहोत्सवः' की विशाखा एवं अनुराधा में देखा जा सकता है। राजकुल की नायिकाओं का तो पूर्णतः अभाव है। लीलाराव के कुछ रूपकों—'अनूपः' 'कृपाणिका' 'वृत्तशंसिच्छत्रम्' आदि की नायिकाएँ पति के प्रति भावुकता एवं सुकोमल भावों से युक्त अनुगामिनी रूप में दिखाई पड़ती हैं। 'असूयिनी' की रेवा सन्तान प्राप्ति के लिए तीव्र मार्मिक वेदना से सहृदयों पर अपनी छाप छोड़ती है। पौराणिक इतिवृत्त प्रधान रूपक जैसे—'सुकन्या' 'पार्वतीपरमेश्वरीयम्' 'राधानुनयः' 'सीताहरणम्' आदि की नायिकाएँ अवश्य अपने पारम्परिक रूप में दिखाई पड़ती हैंः परन्तु इसी प्रकार के रूपक 'भूमिकन्या' की नायिका सीता व उर्मिला सर्वथा आधुनिक ओजस्विनी नारी के

रूप में प्रस्तुत की गई हैं। इसीलिए सीता अन्त में राम की प्रतिष्ठा के लिए शपथ नहीं लेती प्रत्युत नारी जाति की प्रतिष्ठा के लिए शपथ लेती है। कई रूपकों–'सखा सुदामा' 'चौरस्य चातुर्यम्' 'दशमस्त्वमसि,' 'भक्तराजः' 'चराचरसञ्चितकर्मयन्त्रितम्' आदि में तो नायिकाओं का अभाव है। संख्या की दृष्टि से नारीपात्र पुरुष पात्रों की अपेक्षा कम होते हुए भी सभी वर्गों एवं स्तरों से सम्बद्ध होने के करण नाट्य-प्रभाव को बढ़ाने में समर्थ हैं। सप्तम एवं अष्टम प्रकाश में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं में चरित्रों की विकास परम्परा का अवलोकन करने से एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी प्राप्त होता है कि अपवाद स्वरूप रमा चौधुरी के कुछ रूपकों को छोड़कर अन्य नाट्यकर्त्रियों के रूपकों में पात्रों की संख्या प्राचीन रूपकों की अपेक्षा कम है। विशेष रूप से पात्र अपने परिवेश का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा अपनी मनोविश्लेषणात्मक पहचान भी रखते हैं। इन रूपकों में पात्रों की निजी पहचान के साथ उनके मनोवैज्ञानिक प्रतिस्थापन की पद्धति प्रमुख है। नाट्यकर्त्रियों की प्रवृत्ति अधिक पात्रों को मंच पर प्रस्तुत करने की अपेक्षा कुछ ठोस चरित्रों में पूर्णता एवं प्रभावशालिता उत्पन्न करने की अधिकता रही है।

आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की रचनाओं में रस एवं वृत्तितत्त्व का समीक्षण से स्पष्ट होता है कि प्रायः नाट्यकर्त्रियों की रुचि परिस्थितियों के यथावत् निरूपण में रही है। इनका रसतत्त्व के प्रति आदर तो है किन्तु उसे सदा वे अलंकार्य रूप में नहीं मानती हैं। प्राचीन रूपक प्रमुखतः रसाश्रित ही होते थे। आधुनिक संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के रूपक एकांकी, संगीतनाट्य तथा रेडियो रूपक आदि हैं, जिनमें यथार्थ परिस्थितियों के निवेश पर बल देने से चमत्कृति की प्रधानता है। नाट्यकर्त्रियों ने अधिकतर करुण रस प्रधान रूपक रचनाएँ लिखी हैं। अधिकांश रूपकों में करूण रस या तो अंगी है या अंग रूप में होकर अंगीरस का पोषण करता है। करुण रस के पश्चात् दूसरा स्थान शान्तरस का और तीसरा स्थान वीर रस का है। वीररस प्रधान रूपकों की विशेषता है कि यहाँ धर्मवीर प्रधानतः अभिव्यंग्य है। तत्पश्चात् क्रमिक रूप से भक्ति रस, शृंगार रस तथा हास्य रस अनुभूति-गम्य हैं। शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, भयानक व शान्त रस गौण रूप से आस्वादनीय हैं। वीभत्स रस की ओर इन नाट्यकर्त्रियों का पूर्णतया उपेक्षा भाव दिखाई पड़ता है। 'अनूपः' 'असूयिनी' 'कृपाणिका' 'क्षणिक विभ्रमः,' 'बालविधवा,' 'होलिकोत्सवम्' 'भूमिकन्या' आदि करुण रस प्रधान रचनाएँ हैं। अंग रूप में 'पार्वतीतपश्चर्या,' 'देशदीपम्,' 'मदनदहनम्,' आदि में करुणरस अभिव्यंग्य है। करुणरस की सर्वाधिक सिद्धहस्त नाट्यकर्त्री

लीलाराव हैं. वीररस प्रधान रूपकों में 'देशजनकम्,' 'यतीन्द्रयतीन्द्रम्,' 'लेनिनविजयम्,' 'विक्रमवेतालनाटिका,' 'भारतविरामम्' आदि रूपक अवलोकनीय हैं। वीर-रस के प्रयोग में सर्वाधिक वैशिष्ट्य रमा चौधुरी ने प्रकट किया है। शान्तरस प्रधान रचनाओं में आम्रपाली सर्वाधिक मधुर रचना है। शृंगाररस कविकुलकोकिलम्, पल्लीकमलम् तथा मेघमेदुरमेदनीयम् आदि में आस्वाद्य है। प्रायः अधिकांश रूपकों की समाप्ति अद्भुत रस से की गई है। इन नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं में रस एवं वृत्तितत्त्व के सम्बन्ध का भी पूर्णतः निर्वाह नहीं हुआ हैं। आधुनिक वर्गीकरण के अनुसार संगीत प्रधान रूपकों में कैशिकी, संवाद प्रधान रूपकों में भारती, व्यक्तित्व प्रधान रूपकों में सात्त्वती तथा संघर्ष प्रधान रूपकों में आरभटी वृत्ति देखी जा सकती है। प्राचीन रूपकों में दर्शक रस में डूबा हुआ सद्भावों का उपदेश प्राप्त करता था लेकिन अर्वाचीन नाट्यों में सदसद् के तात्विक उपदेश द्वारा वह आनन्द प्राप्त करता है। इन रूपकों में 'सद्यः पर निर्वृत्ति' के स्थान पर प्रमुख रूप से 'व्यवहारविद्' प्रयोजन ही है।

'अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की नाट्य-रचनाओं के लेखन का उद्देश्य व शीर्षक-वैशिष्ट्य' के समालोचन से स्पष्ट होता है कि ये रूपक भरत आदि प्राचीन नाट्याचार्यों द्वारा स्वीकृत पुरुषार्थ-चतुष्ट्य रूप उद्देश्यों की पूर्ति तो करते ही हैं, वहीं आधुनिकतम् समस्याओं जैसे—बाल-विवाह, विधवा-विवाह, अनमेल-विवाह, दहेज-प्रथा आदि समस्याओं का निरूपण तथा उसका समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। लीलाराव के रूपक स्वार्थ-त्याग, स्वदेश-प्रेम, लोभहीनता पातिव्रत की महिमा, धार्मिक अन्धविश्वास का निराकरण, शरणागतवत्सलता, एवं महापुरुषों के प्रति भक्ति रूप प्रयोजन की सिद्धि करते हैं। रमा चौधुरी तथा अन्य नाट्यकर्त्रियों के भी चरित्र प्रधान रूपक नायक के गुणों, कार्यनिष्ठा, राष्ट्रप्रेम, विश्वबन्धुत्व, प्रेम के सात्विक स्वरूप के स्वीकरण, गीर्वाण भाषा के महत्व का प्रसारण आदि उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हैं। इनके अतिरिक्त मिथिलेशकुमारी मिश्रा, देवकीमेनन् वनमाला भवालकर आदि के रूपक भी सामाजिक, नैतिक, पारिवारिक मूल्यों का सम्प्रेषण, धर्म और आध्यात्म के प्रतिनिष्ठा की शिक्षा देने की दृष्टि से रचे गये हैं। नाट्य विधा के लोक-सम्बद्ध होने से शीर्षकों की रचना अधिकतर वृत्तपरक या पात्र परक सीधे-सादे ढंग से की गई है। एक ओर यौतुकं पातकं परम्, बालविधवा, असूयिनी, कपोतालयः, अनूपः, ज्ञानेश्वरचरितम्, स चाप्यस्ति रजक एव, दशमस्त्वमसि व निम्बपत्राणि आदि अविचित्र शीर्षकों की रचना की गई है, तो दूसरी ओर पल्लीकमलम्,

वृत्तशंसिच्छत्रम्, पाददण्डः, न मुनि पुनरायातो न चासौ वर्धते गिरिः जैसे लाक्षणिक पदों में विचित्र शीर्षकों की रचना द्वारा नाट्यकर्त्रियों ने वक्रोक्ति एवं कवित्व शक्ति को भी प्रकट किया है ।

इस प्रकार अर्वाचीन संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विश्लेषण व मूल्यांकन के साथ ही प्रस्तुत ग्रन्थ की उपलब्धि अधोलिखित विशिष्ट बिन्दुओं में भी समाहित है—

१. आधुनिक नाट्य-साहित्य की समृद्धि में संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के इस सतत व प्रशस्त योगदान के प्रकाशन से नारी-गौरव में वृद्धि हुई है ।
२. प्राचीन व समसामयिक नाट्यकारों की तुलना में आधुनिक नाट्यकर्त्रियों की सर्जनात्मक प्रतिभा की समकक्षता सिद्ध हुई है ।
३. बीसवीं शती के नवम दशक तक की संस्कृत नाट्यकर्त्रियों के कर्तृत्व की एकत्र समीक्षा की गई है ।
४. अर्वाचीन महिला नाट्यकार अपनी रूपक रचनाओं में विविध सामयिक सन्दर्भों एवं समस्याओं का निरूपण कर प्रेक्षकों का ध्यान आकृष्ट करने में सफल रही हैं ।
५. अर्वाचीन नाट्यकर्त्रियों की नाट्यरचनाओं का समय-समय पर मंचन तथा आकाशवाणी से प्रसारण हुआ है, जिससे उनके नाट्य-प्रयोग की सफलता प्रकट हुई और सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है ।
६. नाट्य की विविध-विधाओं -नाटक, एकांकी, प्रहसन, भाण, संगीत-नाट्य (ऑपेरा), नृत्यनाट्य (बैले) आदि की रचना से महिला नाट्यकारों की बहुज्ञता प्रकाशित हुई है ।
७. आज की महिला साहित्यकार समसामयिक समस्याओं के प्रति संवेदनशील एवं जागरूक हैं—यह तथ्य स्फुट हुआ है ।
८. भारत के विभिन्न-प्रदेशों में फैली हुई ये नाट्यरचयित्रियाँ संस्कृत की जीवन्तता के साथ संस्कृत की भारतीय आत्मरूपता को भी सिद्ध करती हैं ।
९. आशा है कि इस शोध-कार्य से अन्य महिलाएँ भी नाट्य रचना एवं अन्य साहित्यिक विधाओं की रचना में प्रवृत्त होंगी ।
१० कालान्तर में अनुसन्धित्सुओं को इस क्षेत्र में अध्ययन-समालोचन की अभिलाषा प्रकट होगी तथा अन्य नाट्यकर्त्रियों की अप्रकाशित नाट्यरचनाओं को प्रकाश में लाने तथा प्रकाशित कराने की रुचि उत्पन्न होगी ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

मूल संस्कृत नाट्य ग्रन्थ

१. अग्निवीणा — रमा चौधुरी, प्राच्यवाणीप्रकाशन, ३ फेडरेशन, स्ट्रीट, कलकत्ता— ७००००९.

२. अन्नदेवता — वनमाला भवालकर.

३. अनूपः — लीलारावदयाल, दिव्यज्योति.

४. असूयिनी — लीलारावदयाल, मंजूषा, जुलाई १९५८, वर्ष १२, अंक ११.

५. अभेदानन्दम् — रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्टीट, कलकत्ता-७००००९.

६. आम्रपाली — मिथिलेशकुमारी मिश्रा, वाणीवाटिका प्रकाशन, पटना, १९८४.

७. कटुविपाकः — लीलारावदयाल, मंजूषा, दिसम्बर १९५५, वर्ष १०, अंक ४.

८. कपोतालयः — लीलरावदयाल, मंजूषा, जून १९५६, वर्ष १०, अकं १०.

९. कविकुलकमलम् — रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.

१०. कविकुलकोकिलम् — रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता

११. कालीदर्शनम् — देवकीमेनन्, संस्कृतप्रतिभा, अक्टूबर १९६१, वर्ष ३, अंक २.

१२. कुचेलवृत्तम् — देवकीमेनन्, संस्कृतप्रतिभा, अक्टूबर १९६१, वर्ष ३, अंक २.

१३. कृपाणिका — लीलारावदयाल, दिव्यज्योति, अक्टूबर, १९७६.

१४. को भेदः — अर्चना, लोकसंस्कृतम्, कार्तिक वि० सं० २०४२.

१५. क्षणिकविभ्रमः — लीलारावदयाल, मंजूषा, फरवरी १९५६, वर्ष १०, अंक ६.

१६.	गणदेवतानाटकम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
१७.	गणयज्छागः	कमलारत्नम्, दिव्यज्योति, जुलाई १९७६.
१८.	गणेशचतुर्थी	लीलारावदयाल, मंजूषा, अप्रैल १९५६, वर्ष १०, अंक ८.
१९.	गिरिजायाः प्रतिज्ञा	लीलारावदयाल, मंजूषा, मई १९५५, वर्ष ९, अंक ९.
२०.	चैतन्यचैतन्यम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
२१.	चौरस्य चातुर्यम्	चिन्मयीमाहेश्वरी, लोकसंस्कृतम्, कार्तिक वि० सं० २०४२.
२२.	जयन्तुकुमाउनीयाः	लीलारावदयाल, विश्वसंस्कृतम्, १९६७-६८, वर्ष, ४, ५, अंक ४, १.
२३.	ज्ञानेश्वरचरितम् (बालयोगी)	लीलारावदयाल, मंजूषा, दिसम्बर १९६१.
२४.	तानतनुः	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
२५.	तुकारामचरितम्	लीलारावदयाल, मंजूषा, फरवरी १९५६, वर्ष १०, अंक ६.
२६.	तुलाचलाधिरोहणम्	लीलारावदयाल, विश्वसंस्कृतम् मई-अगस्त १९७२, वर्ष ९, अंक ३, ४.
२७.	दशमस्त्वमसि	मिथिलेशकुमारी मिश्रा, शिक्षक प्रकाशन, कानपुर, १९९०.
२८.	देशजनकम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
२९.	देशदीपम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
३०.	नगरनूपुरम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.

३१.	नचिकेतःकुत्रगतोऽसि	विजयलक्ष्मी त्रिवेदी, पारिजातम्, अगस्त-सितम्बर १९८४, वर्ष ३, अंक १, २.
३२.	नचिकेतश्चरितम्	ब्रह्मचारिणी वेला देवी, ब्रह्मचारी निरंजन भाई, दक्षिणेश्वर रामकृष्ण संघ सभापति, आद्यापीठ, कलकत्ता, रामनवमी, १३८३ बंग वर्ष.
३३.	नचिकेतोयमसंवादम्	कमलारत्नम्, पारिजातम्, अगस्त-सितम्बर १९८४, वर्ष ३, अंक १, २.
३४.	नारकण्डाश्रमः	लीलारावदयाल, दिव्यज्योतिः, अक्टूबर १९८०.
३५.	निवेदितनिवेदितम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता
३६.	परमभक्त शिवाजिराट् (रामदासचरितम्)	लीलारावदयाल, विश्वसंस्कृतम्, दिसम्बर १९९०, वर्ष २७, अंक ४.
३७.	परशुरामप्रतिज्ञा	सुधासहाय, भारतोदयः, फरवरी १९८६.
३८.	पल्लीकमलम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट कलकत्ता
३९.	प्रसन्नप्रसादम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता- ७०००००९.
४०.	पाददण्डः	वनमाला भवालकर, सागरिका, सं० २०२०, वर्ष २, अंक ३.
४१.	पार्वतीतपश्चर्या	नलिनी शुक्ला
४२.	पार्वतीपरमेश्वरीयम्	वनमाला भवालकार, संस्कृत परिषद, सागर विश्वविद्यालय, सं० २०२३.
४३.	बालविधवा	लीलारावदयाल, मंजूषा, जून १९५५, वर्ष ९, अंक १०.
४४.	पृथङ्मुष्टिः	देवकीमेनन्
४५.	भारततातम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००००९
४६.	भारतविरामम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००००९.

४७.	भारतपथिकम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट कलकत्ता-७००००९.
४८.	भारताचार्यम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, ३ फेडरेशन स्ट्रीट, कलकत्ता-७००००९.
४९.	भारविः	चिन्मयी माहेश्वरी, लोकसंस्कृतम्, श्रावण २०४६, वि० सं०
५०.	भूमिकन्या	रत्नमयी देवी दीक्षित, सी० १/१०, माडल टाउन, दिल्ली-१/१९६६.
५१.	मदनदहनम्	भक्तिसुधामुखोपाध्याय, विश्वभाषा, वर्ष ५, अंक ३, वर्ष ६, अंक १-२.
५२.	मधुराम्लम्	वीणापाणि पाटनी, नाग पब्लिशर्स, जवाहर नगर, दिल्ली १९८६.
५३.	महीयसी गार्गी	ब्रह्मचारिणी वेला देवी, ब्रह्मचारी निरंजन भाई दक्षिणेश्वर रामकृष्ण संघ सभापति, आद्यापीठ, कलकत्ता, रामनवमी १३८३ बंगवर्ष
५४.	महामुनिः दधीचिः	आशा, लोक संस्कृतम् श्रावण २०४५ वि० सं०
५५.	मायाजालम्	लीलारावदयाल, विश्व संस्कृतम्, फरवरी-मई- अगस्त १९३४, वर्ष ११, अंक १-४.
५६.	मिथ्याग्रहणम्	लीलारावदयाल, मंजूषा, फरवरी १९५६, वर्ष १०, अंक ६.
५७.	मीराचरितम्	लीलारावदयाल, मंजूषा, अगस्त १९६०, वर्ष १४, अंक १२.
५८.	मुक्तिमहोत्सवः	नलिनीशुक्ला
५९.	मेघमेदुरमेदनीयम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
६०.	यतीन्द्रयतीन्द्रम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
६१.	युगजीवनम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
६२.	यौतुकं पातकं परम्	निर्मला शुक्ला, पारिजातम्, अक्टूबर १९८४, वर्ष ३, अंक ३.
६३.	रसमयरासमणिः	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता

६४.	रामचरितमानसम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
६५.	रामवनगमनम्	वनमाला भवालकर, संस्कृत परिषद, सागर विश्वविद्यालय, सं० २०२३.
६६.	राधानुनयः	नलिनी शुक्ला, शारदा पत्रिका, अक्टूबर, १९८२.
६७.	लेनिनविजयम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
६८.	वनदेवता	भारती वरखेडकर, संस्कृत साकेत, ३० जून १९८५.
६९.	विक्रमवेतालनाटिका	कमलारत्नम्, पारिजातम्, दिसम्बर, १९८२, जनवरी-मार्च-अप्रैल १९८३, वर्ष १, अंक ६-९.
७०.	विराड्गृहम्	ब्रह्मचारिणी वेलादेवी, ब्रह्मचारी निरंजनभाई, दक्षिणेश्वर रामकृष्ण संघ सभापति आद्यापीठ, कलकत्ता-१६,रामनवमी १३८३ बंगवर्ष
७१.	विठालाचरितम्	लीलारावदयाल
७२.	विवेकानन्दविजयम्	कमलारत्नम्, पारिजातम्, जुलाई, १९८६, वर्ष ४, अंक १२.
७३.	विवेकानन्दस्मृतिः	कमलारत्नम् संविद्, १५ नवम्बर, १९८४.
७४.	वीरभा	लीलारावदयाल, मंजूषा, नवम्बर १९५६, वर्ष ११, अंक ३.
७५.	वृत्तशंशिच्छत्रम्	लीलारावदयाल, मंजूषा, अप्रैल १९५७, वर्ष ११, अंक ८.
७६.	शठे शाठ्यं समाचरेत्	आशा, लोकसंस्कृतम्, मार्गशीर्ष २०४३, वि० सं०
७७.	शंकरशंकरम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
७८.	सखासुदामा	चिन्मयी, लोकसंस्कृतम्, फाल्गुन २०४५ वि० सं०
७९.	सीताहरणम्	वनमाला भवालकर
८०.	सुकन्या	भक्ति सुधा मुखोपाध्याय, विश्वभाषा, वर्ष ५, अंक १-३.

८१.	सैरन्ध्रीप्रेक्षणकम्	देवकी मेनन्, संस्कृत प्रतिभा, अक्टूबर १९६३, वर्ष ५, अंक २.
८२.	स्वर्णपुरकृषीवलाः	लीलारावदयाल, मंजूषा, फरवरी १९५८, वर्ष १२, अंक २.
८३.	संसारामृतम्	रमा चौधुरी, प्राच्यवाणी प्रकाशन, कलकत्ता
८४.	हरिसिंहः	लीलारावदयाल, विश्वसंस्कृतम्, सितम्बर १९८१, वर्ष १८, अंक ३.
८५.	होलिकोत्सवम्	लीलारावदयाल, मंजूषा अक्टूबर १९५५, वर्ष १०, अंक २

सन्दर्भ ग्रन्थ (संस्कृत एवं हिन्दी)

१.	अग्निपुराण	महर्षि व्यास, आनन्द आश्रम ग्रन्थावली, १९५७.
२.	अरस्तु का काव्यशास्त्र	नगेन्द्र, भारती भण्डार, इलाहाबाद, २०१४ वि० सं०
३.	अभिनव नाट्यशास्त्र	सीताराम चतुर्वेदी, किताब महल प्रा० लिमिटेड, १९६४.
४.	अभिज्ञानशाकुन्तलम्	कालिदास, महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा, १९६२.
५.	असामान्य मनोविज्ञान	लाभसिंह,विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, १९८२.
६a.	आधुनिक संस्कृत नाटक, भाग १-२	रामजी उपाध्याय, संस्कृत परिषद सागर विश्वविद्यालय, सागर, प्रथम संस्करण
६b.	अर्वाचीन संस्कृत साहित्य	डॉ० श्री भा० वर्णेकर, पुणे।
७.	आधुनिक संस्कृत साहित्य	हीरालाल शुक्ल, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, १९७१.
८.	आनन्दलतिका	संस्कृत साहित्य परिषद, पत्रिका, कलकत्ता, मई १९४०, जून १९४२.
९.	उज्ज्वलनीलमणिः	रूप गोस्वामी, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, १९८२

१०a	संस्कृत कवियित्रियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व	डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी, लखनऊ १९९४.
१०b.	उपरूपकों का उद्‌भव एवं विकास	इन्द्रा चक्रवाल, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी, १९३६.
११	ऋग्वेद	संपा० मैक्समूलर, काशी संस्कृत ग्रन्थमाला, १६७ वाराणसी, १९६५
१२.	कठोपनिषद्	वाणी पुस्तक माला, संख्या ७, १९८९ वि० सं०
१३.	कथापञ्चकम्	पं० क्षमाराव, कर्नाटक हाउस, चित्रा बाजार, बम्बई १९६३.
१४.	कथासरित्सागरः	सोमदेवः, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, १९७३.
१५.	क्रमिक पुस्तक मालिका	पं० विष्णु नारायण भातखण्डे, संगीत कार्यालय, हाथरस, १९७०.
१६.	काव्यानुशासनम्	हेमचन्द्र, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, १९७४.
१७.	काव्यप्रकाशः	मम्मट आचार्य शिवराज, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, १९८०.
१८.	काव्यमीमांसा	राजशेखर, सा० सी० डी० दत्त दलाल व अन्य, बड़ौदा, १९३४.
१९.	कुमारसम्भवम्	कालिदास, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, १९८४.
२०.	कौमुदीमहोत्सवम्	विजय भट्टारिका, भारती भवन पुस्तकालय, प्रयाग, २००८ वि० सं०
२१.	क्षेमेन्द्र लघु काव्य संग्रह	संपा० आयेन्द्र शर्मा, उस्मानियाबाद विश्वविद्यालय, संस्कृत परिषद, हैदराबाद, १९६१.
२२.	ग्रामज्योतिः	पं० क्षमाराव, ८ भूपेन्द्र वसु एवेन्यू, कलकत्ता, १९५४.
२३.	गीतगोविन्दम्	जयदेव, वी० रमा स्वामी शास्त्रालु एण्ड सन्स, मद्रास, १९५६.

२४.	गीति नाट्यः शिल्प और विवेचन	शिवशंकर कटारे, प्रगति प्रकाशन, आगरा, १९७९.
२५.	दशरूपकम्	धन जय, संपा० रामजी उपाध्याय, भारतीय संस्कृत संस्थान, इलाहाबाद, २०२६ वि० सं०
२६.	ध्वन्यालोकः	आनन्दवर्धन, व्या० विश्वेश्वर, वाराणसी, २०२८ वि० सं०
२७.	नाटकलक्षणरत्नकोशः	सागरनन्दी, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, १९७२.
२८.	नाट्यकला	रघुवंश, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, १९६१.
२९.	नाट्यकला मीमांसा	गोविन्ददास, शा० सा० पा० मध्य प्रदेश, १९६०.
३०.	नाट्यदर्पणः	रामचन्द्र गुणचन्द्र, संपा० नगेन्द्र, प्रकाशन हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, १९६१.
३१.	नाट्यदर्शन	शान्ति गोपाल पुरोहित, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, १९७०.
३२a.	नाट्य प्रस्तुतिः एक परिचय	रमेश राजहंस, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, १९८९.
३२ b.	कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र	डॉ० कैलाशनाथ द्विवेदी, कानपुर, १९९४.
३३.	नाट्यसमीक्षा	दशरथ ओझा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, २०७६ वि० सं०
३४.	नाट्यशास्त्र (अभिनव भारती सहित चार भाग)	गायकवाड़ ऑरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १९६४.
३५.	भक्तिरसामृतसिन्धु	रूप गोस्वामी, सपां० नगेन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, १९६३.
३६.	भक्तिरसविमर्शः	कपिल देव ब्रह्मचारी, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली, १९८९.
३७.	भरत और अरस्तु के नाट्य तत्वों की तुलना	गोरधन सिंह, चिन्मय प्रकाशन, जयपुर, १९७०.

३८.	भरत और भारतीय नाट्यकला	सुरेन्द्र नाथ दीक्षित, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, १९८५.
३९.	भारतीय नाट्य साहित्य	सम्पा० नगेन्द्र, एस० चन्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली, १९६८.
४०.	भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच	सीताराम चतुर्वेदी, समिति ग्रन्थ माला, लखनऊ, १९६४.
४१.	भारतीय नाट्यशास्त्र और रंगमंच	रामसागर त्रिपाठी, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, १९७८.
४२.	भावप्रकाशनम्	शारदा तनय, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १९६८.
४३.	भोजप्रबन्ध	बल्लालकवि, संपा० देवेन्द्र मिश्र, रामनारायण लाल, वेनी प्रसाद, इलाहाबाद, १९६२.
४४.	मनुस्मृतिः	मनु मेघतिथिभाष्य, सपा० गंगानाथ झा, कलकत्ता, १९६७.
४५.	महाभारत—१-१९ भाग	बी० एस० सुकथनकर, एस० के० वेलणकर भण्डारकर, ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, १९५८.
४६.	शिवपुराण	महर्षि व्यास, पण्डित पुस्तकालय, काशी
४७.	माताजी एक झलक	रवीन्द्र, श्री अरविन्दाश्रम पाण्डिचेरी, १९७२.
४८.	मालविकाग्निमित्रम्	कालिदास, सनातन धर्म कॉलेज, लाहौर, १९४४.
४९.	मीरा लहरी	पं० क्षमाराव, न्यू मैरिनलेन, मुम्बई, १९४४.
५०.	रस सिद्धान्त	नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९६४.
५१.	रसार्णवसुधाकरः	शिङ्गभूपाल, सागर विश्वविद्यालय, सागर, १९६४.
५२.	रामायण भाग १ से ७—वाल्मीकि	संपा० जी० एच० भट्ट, ओरिण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ौदा, १९६०.
५३.	रूपकरहस्य	श्यामसुन्दरदास, इण्डियन प्रेस लिमिटेड, २००६ वि० सं०

५४.	वक्रोक्तिजीवितम्	कुन्तक, संपा० नगेन्द्र, आत्माराम एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, २०१२ वि० सं०
५५.	विवेकानन्दविजयम्	श्रीधर भास्कर वर्णेकर, विवेकानन्द शिलास्मारक समिति, मद्रास, १९७२.
५६.	शार्ङ्गधरपद्धतिः	संपा० डॉ० पी० पीटर्सन, बॉम्बे संस्कृत सीरीज, नं० ३७, १८८८.
५७.	शुक्ल यजुर्वेद	भाष्यकार ज्वाला प्रसाद मिश्र, श्री वेंकटेश्वर मुद्रणालय, बम्बई, १९६९, वि० सं०
५८.	शृंगारप्रकाशः १-४ भाग	भोजराज संपा० जी० आर० जोश्येर, मैसूर, १९५५.
५९.	श्रीतुकारामचरितम्	पं० क्षमाराव, वी० कुलकर्णी हिन्द किताब लि०, बम्बई, १९५०.
६०.	श्रीमद्भागवत महापुराण	महर्षि व्यास, गीता प्रेस गोरखपुर, प्रथम संस्करण, २०२१ वि० सं०
६१.	श्रीरामदासचरितम्	पं० क्षमाराव, एन० एम० त्रिपाठी लिमिटेड, बम्बई, १९५३.
६२.	सत्याग्रह गीता	पं० क्षमाराव, न० मा० त्रिपाठी प्रा० लिमिटेड, बम्बई, १९५८.
६३.	समीक्षाशास्त्र	सीताराम चतुर्वेदी, उत्तरवेनिया बाग, काशी, १९५४.
६४.	साहित्यदर्पणः	विश्वनाथ, भारतीय विद्याभवन, दिल्ली, १९८८.
६५.	साहित्यशास्त्र के सिद्धान्त	सरोजिनी मिश्रा, यंगमैन एण्ड कम्पनी, पुस्तक प्रकाशन, दिल्ली, १९७०.
६६.	सिस्टर निवेदिता	वसुधा चक्रवर्ती, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, दिल्ली, १९७२.
६७.	संगीत दामोदरः	श्री शुभंकर संस्कृत कॉलेज, कलकत्ता, १९६०.
६८.	संस्कृत के ऐतिहासिक नाटक	श्याम शर्मा, शिव सागर प्रकाशन, जयपुर, १९७४.

६९. संस्कृत नाटक — ए० बी० कीथ, अनु० उदयभानु सिंह, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, १९६५.

७०. संस्कृत नाटिका विमर्श — जय श्री सिन्हा, कैपिटल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९८६.

७१. संस्कृत नाट्य सिद्धान्त — रमाकान्त त्रिपाठी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, १९६९.

७२. संस्कृत में एकांकी रूपक — वीर बाला शर्मा, मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, १९७२.

७३. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना — हरिनारायण दीक्षित, देववाणी परिषद, दिल्ली, १९८३.

सन्दर्भ ग्रन्थ (अंग्रेजी)

1. A Critical History of English Literature — David Diacher. Secker & Warburg. London, 1969.

2. A Handbook for the study of Drama — Lynn Alterbernd, the Macmillan Co., London, 1966.

3. Ancient Indian theater — D.R. Mankad, Anand W. Rly. 1960

4. Bengal's Contribution to Sanskrit Literature — Kali Kumar Dutta Shastri, Calcutta Sanskrit College research series No. C III, 1974.

5. Comedy — L.J. Potts, Hutchrison's University library, London, 1949.

6. Contribution of Andhra to Sanskrit literature — Sri. P. Ram Murti, Andhra University, Waltair, 1972.

7. Contribution of Orrisa to Sanskrit Literature — P.K. Panda, Pratibha Prakashan, Delhi, 1987.

8. Contribution of women to Sanskrit Literature, Vol. I to VII — J.B. Choudhary, Calcutta, 1940.

9. Cultural heritage of Kashmir Literature — Suresh Chandra Banerji, Sanskrit Pustak Bhandar, 38 Bidhan Sarani, Calcutta-6, 1965.

10.	Encyclopaedia of Britanica	Encyclopaedia of Britanica Ltd. London, 1964.
11.	Great women of India	Swami Madhavanand and K.C. Mazumdar, Almorah, 1982.
12.	History of Classical Sanskrit Literature	M. Krishnamachariar, Motilal Banarsidas, Delhi, 1982.
13.	Laws and Practice of Sanskrit Drama	Surendra Nath Shashtri, Chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi, 1961.
14.	Sanskrit Drama	A.B. Keith, Oxford University, Press, 1959.
15.	Sanskrit Drama; It's Origin and Decline	Indu Shekhar, Leiden E.J. Brill, 1960.
16.	Sanskrit and Maharashtra	Ed. R.N. Dandekar, University of Poona, 1972.
17.	Sanskrit Dramas	S. Subramonia iyer, Sandeep Prakashan, Delhi, 1984.
18.	Sanskrit theory of Drama and Dramaturgy	T.G. Mainkar, Ajanta Prakashan, 1984.
19.	The Classical Drama of India	Henery W. Wells, Asia Publishing House, 1963.
20.	The Contribution of Bihar to Sanskrit Literature	S.C. Benarji, Patna, 1973.
21.	The Contribution of Kerala to Sanskrit Literature	Kunjanni Raja, University of Madras, 1958.
22.	The Theory of Rasa in Sanskriti Drama	H.R. Mishra Vindhyachal Prakashan. Chhatarpur, 1965.
23.	The Theory of Samdhis and Samdhyangas	T.G. Mainker, Ajanta Prakashan, 1978.
24.	The Tragedy and Sanskrit Drama	G.K. Bhatt, Papular Prakashan, Bombay, 1974.

व्याकरण एवं कोश ग्रन्थः

१.	अर्वाचीन संस्कृतम् (त्रैमासिकम्)	देववाणी परिषद्, दिल्ली
२.	दिव्य ज्योतिः (मासिक)	संस्कृत शोध संस्थान, भारती विहार, मशोबरा, शिमला (हि० प्र०)
३.	पाटलश्रीः (त्रैमासिक)	संस्कृत नाट्य परिषद्, बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन भवन, कदम कुआ, पटना-३ (बिहार)
४.	पारिजातम् (मासिक)	प्रेम नगर, कानपुर (उ० प्र०)
५.	भारतोदयः (मासिक)	ज्वालापुरी गुरुकुल महाविद्यालय, हरिद्वार (उ० प्र०)
६.	मंजूषा पत्रिका (मासिक)	भूपेन्द्र वसु, एवेन्यू कलकत्ता (पं० बंगाल)
७.	लोक संस्कृतम् (मासिक)	संस्कृत कार्यालय, श्री अरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी
८.	विश्वभाषा (त्रैमासिक)	विश्व संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी (उ० प्र०)
९.	विश्वसंस्कृतम् (मासिक)	विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियापुर (पंजाब)
१०.	साकेत (पाक्षिक)	अखिल भारतीय विद्वत्समिति, अयोध्या (उ० प्र०)
११.	सागरिका (त्रैमासिक)	सागरिका समिति, महामनापुरी, वाराणसी (उ० प्र०)
१२.	संविद् (त्रैमासिक)	भारतीय विद्या भवन, बम्बई०७.
१३.	संस्कृत प्रतिभा (अर्धवार्षिक)	साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, नई दिल्ली
१४.	संस्कृत साहित्य परिषद् पत्रिका (मासिक)	राजा दीनेन्द्र स्ट्रीट, कलकत्ता (पं० बंगाल)
15.	India Who's Who-1989-90	INPA Publication, New Delhi, 20th Edition.
16.	Indian Literature	Sahitya Akademi Journal, May-June, 1992

PARIMAL PUBLICATIONS
A HOUSE OF INDOLOGICAL BOOKS
27/28, SHAKTI NAGAR, DELHI 110007